अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका/Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Study On Aggressive Behaviour Of Elephant Insurguja District (C.G.) 12
(Priyanka Singh, Dr. Shweta Sao, Dr. R. K. Singh)

06. Fixd Foint Theorm For Continuous Mapping In Hausdorff Space (Ganesh Kumar Soni) 16

07. An Analysis About Manet (Rekha Sharma) 17

(Home Science / गृह विज्ञान)

08. विद्यालयीन बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक संरचना के प्रभाव का अध्ययन 20
(कानपुर शहर, उ.प्र. के विशेष संदर्भ में) (पारूल सारस्वत, कंचन दुबे, डॉ. मंजु दुबे)

09. किशोरावस्था में चिंता एवं कुंठा से उत्पन्न तनाव के स्तर का अध्ययन (प्रीति मालवीय) 22

10. सुल्तानपुर जिले के स्वंय सहायता समूहों का अध्ययन (स्वर्णिमा सिंह, कंचन दुबे, डॉ. मंजु दुबे) 26

11. विशिष्ट बालकों के व्यक्तित्व का अध्ययन (उषा कटियार) 29

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

12. An Analytical Study Of Customer Satisfaction Towards Mcdonald's In Indore District 31
(Prof. Rajesh Jain)

13. Surgical Strike On Black Money - How Much It Is Success? (Special reference to 36
impact of note band on Indian economy and Common people) (Prof. Rajesh Jain, Dr. Anup Vyas, Dr. D.N. Purohit, Dr. Ashish Pathak)

14. Self Managed Teams - The Future Of Bussiness (Dr. Praveen Ojha) 39

15. Significance Of Sixth Brics Summit 2014 (Dr. Anu Mehta) 43

16. ग्रामीण क्षेत्रों में संगठित तथा असंगठित रोजगार में परिवर्तन का अध्ययन (श्रद्धा सोनी) 45

17. देवास की औद्योगिक संरचना (मनीषा जैन) 49

18. अर्थव्यवस्था में कोयला खान विधेयक - 2015 का उपयोग (दीपिका यादव, डॉ. धीरज शर्मा) 52

19. इन्दिरा आवास योजना के क्रियान्वयन में जिला पंचायतों की भूमिका का विश्लेषण - खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में ... 54
(डॉ. पुष्पेन्द्र चौरे)

20. भारत में विकास एवं रोजगार (डॉ. धीरज शर्मा) 56

21. जी.एस.टी- कर एक फायदे अनेक (डॉ. अनिल तौहेल) 58

(Economics / अर्थशास्त्र)

22. Role Of Media In Development Of Rural Society (Dr. Rashmi Gupta) 60

23. ब्रिटिश कालीन भारत में उद्योगों का विकास (डॉ. वसुधा अग्रवाल) 62

24. महिलाओं के विकास मैं योजनाओं का मूल्यांकन (कमलराज सिंह उइके) 66

25. आर्थिक व्यवहार में परिवर्तन का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव (डॉ. उषा कुमठ) 69

26. उदारीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रभाव (नितेश मिश्रा) 71

27. जनजातीय श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन (शहडोल जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. शाहीन परवीन) 73

28. कृषि विपणन में कृषि उपज मण्डियों तथा संगठित बाजारों की भूमिका - खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में 75
(डॉ. सपना भालेकर)

29. म. प्र. - छत्तीसगढ़ के जनजातियों की संस्कृति एंव कला (डॉ. किरण अग्रवाल, डॉ. बी.एस. धुर्वे) 77

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

30. मध्यप्रदेश में अनुसूचित जनजाति में उभरते राजनीतिक नेतृत्व का स्वरूप (डॉ. दीवान सिंह बारिया) 78

31. मानव अधिकार संरक्षण के अंतर्गत पुलिस की भूमिका (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) (डॉ. प्रविता सिंह) 82

32. 1885-1905 मध्य के सामाजिक एवं राजनीतिक आंदोलन (डॉ. संदीप श्रीवास्तव) 85

33. ग्रामीण विकास में पंचायती राजव्यवस्था का योगदान एवं मूल्यांकन (विनोद कुमार शेण्डे) 88

34. भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद- एक विश्लेषण (डॉ. वसुधा आवले) 91

35. भारत में जातिवाद और राजनीति (डॉ. समीना खटक) 93

36. पंचायतीराज में अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की बढ़ती भूमिका (आशीष कुमार मेश्राम) 95

(History / इतिहास)

37. मध्ययुग में ग्वालियर क्षेत्र में हिन्दी साहित्य सृजन (डॉ. शुक्ला ओझा) 97

38. पूर्व मध्यकालीन साहित्य में गणपति (डॉ. मनीषा पाण्डेय) 100

39. रीवा राज्य के कलचुरि (सुभाष कुमार तिवारी) 103

(Sociology / समाजशास्त्र)

40. A Sociological Study On Increasing Juvenile Crimes Rates In Kashmir (Jammu And Kashmir).. 105
(Saima Mehraj, Dr. J.K. Patel)

41. महार जाति की महिलाए एवं सामाजिक परिवर्तन(भोपाल नगर के विशेष संदर्भ में) (डॉ. पिंकी सोमकुवर) 108

42. नोटबंदी बनाम भ्रष्टाचारबंदी – एक सामाजिक विश्लेषण (डॉ. उमा लवानिया) 111

43. 45 एवं अधिक उम्र की महिलाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन (प्रो. ऋचा एस. मेहता) 113

44. भारतीय संस्कृति और जल संरक्षण (डॉ. ज्योति मेहता) 116

(Geography / भूगोल)

45. अनूपपुर जिले की अनुसूचित जाति का मानव संसाधन के रूप में विश्लेषण (डॉ. राजकुमार विश्वकर्मा) 118

46. बहुस्तरीय नियोजन एवं ग्रामीण विकास बलरामपुर – रामानुजगंज जिला (छ.ग.) के विशेष संदर्भ में 125
(प्रेमचन्द यादव, डॉ. काजल मोईत्रा)

47. रायगढ़ जिले में अनुसूचित जनजातीय जीवन पर शिक्षा का प्रभाव (डॉ. काजल मोइत्रा, सत्यप्रकाश खडबन्धें) 129

48. स्वस्थ मृदा से स्वस्थ भारत का विकल्प – जैविक कृषि (डॉ. सुखचैन सिंह धुर्वे) 132

49. कबीर धाम जिले के पण्डरिया तहसील में कृषि भूमि उपयोग का वितरण प्रतिरुप 136
(डॉ. काजल मोइत्रा, बद्री सिंह चौहान)

(Psychology / मनोविज्ञान)

50. अपराधी बालकों की आर्थिक स्थिति तथा शिक्षा की समस्याओं का अध्ययन (अंतिमबाला पाण्ड्ेय) 138

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

51. The Tribals of India (Dr. Mahipal Singh Rao, Dr. Mehzbeen Sadriwala) 140

52. Cultural Clashes In The Novels Of Arun Joshi (Dr. Ajay Bhargava, Batul Attarwala) 143

53. The Socio Psychological Crisis Of Eunuchs In Seven Steps Around The Fire 146
(Dr. Shweta Singh Baghel)

54. Fostering Inquisitiveness Amongst Students - A Research Attitude (Vinay Dubey) 149

55. Women Empowerment At The Grassroots Level (Dr. Rashmi Nagwanshi) 150

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

56. मालवी लोक साहित्य की प्रमुख कवयित्री – रानी रूपमती (डॉ. वन्दना जैन, कादम्बिनी जोशी) 151

57. रामेश्वर शुक्ल अंचल के काव्य में मानवतावादी एवं जीवनमूल्य का दृष्टिकोण 154
(डॉ. संगीता मरावी, डॉ. दीपक कुमार गुप्ता)

58. हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का योगदान 157
(डॉ. पी. एस. परमार, सुशीला देवी परमार)

59. मालवी बोली का तुलनात्मक व्याकरण (अशोक बैरागी) 160

60. नक्षत्रों के साथ खेती (डॉ. अनुसुईया अग्रवाल)... 162

61. जीवनानुभूतियों से जुड़े त्रिलोचन जी (डॉ. सरोज जैन) 164

62. हिन्दी समकालीन कहानी – भारतीय समाज का विभिन्न स्वरूप (डॉ. रागनी चौहान) 166

63. सामाजिक परिवर्तन में मीडिया की भूमिका (डॉ. एस. एस. राठौर) 168

(Drawing / चित्रकला)

64. Works Of Sushen Ghosh - Through The Eyes Of A Viewer (Dr. Pinak Pani Nath) 170

65. किरन सोनी गुप्ता की कला यात्रा (डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला, कोमल लुहाच) 173

66. डॉ. मणि भारतीय की रचनात्मक अभिव्यक्ति – एक दृष्टि (प्रो. पुष्पा दुल्लर, अमिता देवी) 175

67. ललित कला में लोककला की भूमिका (चित्रकला के संबंध में) (डॉ. यतीन्द्र महोबे) 177

(Law/ विधि)

68. Women's Rights In India - Problems And Prospects (Chirag Banthiya) 179

69. Adolescent and Child Labour under Organised and Unorganised sector 182
(Dr. Deepika Bhatnagar)

70. Judicial Review - Tool To Balance The Suoremacy Of The Constitution (Aprajita Bhargava) ... 185

71. सुलह सम्बन्धी विधियाँ और उनका मूल्यांकन (डॉ. सीमा राजपूत)

(Education / शिक्षा)

72. बिलासपुर जिले के एम. एड. के प्रशिक्षणार्थियों के शोध अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन 191
(डॉ. प्रज्ञा यादव, अजय सिंह ठाकुर)

73. जीवन कौशल शिक्षा – उद्देश्य एवं आवश्यकता (पूजा राघव) 194

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

74. A Comparative Study Of 100 Meter Racers And 100 Meter Swimmers On The Basis Of Determination And Motivation (Dr. Gajender Singh Saroha, Ashish Kumar) 196

75. शारीरिक शिक्षा एवं चिकित्सा के नये आयाम (संजय कुमार) 199

(Others / अन्य)

76. संयुक्त परिवार : समय की माँग (रागिनी सिंह, अनिता सिंह) 202

77. गांधीचे औद्योगिक – आर्थीक विचार : सम्यक विकासाची हमी (राहूल बावगे) 204

78. Democracy And Human Rights In India (Rachna Mathur) 206

79. Role of Infrastructure in the Development Process in India (Dr. Meenakshi Panchal) 209

80. Impact of Corporate Social Responsibility in Indian Perspective (Dr. Sangeeta Gupta) 211

81. नयी कविता और हिमविद्ध काव्य संकलन (डॉ. जगमोहन सिंह गुर्जर) 220

82. वैश्विक तापमान का बढ़ता खतरा : समस्या और समाधान (डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) 222

83. भारत में राज्यपाल पद की गरिमा पर प्रश्नचिह्न : समस्या और निदान (डॉ. भरत लाल मीणा) 225

84. Photochemical Reactions of Coordination Compounds (Mukesh Kumar Mehta) 227

85. विजयदान देथा : व्यक्तित्व परिचय (डॉ. राजकुमार चौधरी) 230

86. रीति कविता में नीति का स्वरूप और स्थिति (डॉ. अनुपमा सक्सेना) 232

87. The Anatomy Of Women's Empowerment (Dr. Panchali Sharma) 234

88. व्यक्तित्व और शैली: शैली ही शैलीकार है- विश्लेषण (डॉ. कविता आचार्य) 238

89. Photo catalytic decomposition of acid violet 19 over ZnO semiconductor powder (Dr. Pratibha Rao) 240

90. Free Radical Effect On The Human Body: A Comprehensive Analysis (Dr. Anjul Singh) 243

91. Effective Tools and Techniques for Academic Libraries to Promote Teaching, Learning and Research in India (Dr. Raj Boria) 247

92. Enhancing Knowledge Through Training of Women for Protected Cultivation (Dr. Govind Prakash Acharya) 250

93. Transboundary Pollution (Dr. Shikha Yadav) 253

94. Renewable Energy: A Brief Overview (Ashok Kumar Verma) 256

95. Talent Management (Dr. Monika Jain, Juned Nagori) 261

96. Tourism Industry In Rajasthan: An Overview (Dr. Rishi Kumar Sharma) 263

97. Violence Against Women in India (Dr. Anjali Jaipal) 267

98. The Rise of the Middle Class in India (Dr. Sandhya Jaipal) 271

99. हमारी राष्ट्रीय अस्मिता और भविष्य का नारी साहित्य (डॉ. सिद्धि जोशी) 274

100. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता चुनौतियाँ एवं समाधान (डॉ. आराधना सक्सेना) 276

101. Environment and Society (Dr. Laxmi Gupta) 279

102. A Critical Analysis of Themes of Humanity in Mulkrajanand's Novels (Dr. Sitaram) 282

103. छत्तीसगढ़ में कलचुरि शासन की स्थापना-एक अध्ययन (डॉ. महेश कुमार शुक्ला) 285

104. संत शिरोमणि बाबा गुरूघासीदास जी का जीवन परिचय एवं कार्य (डॉ. रीता बाजपेयी) 287

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर .... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका

(02) श्री अशोककुमार .... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम

(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू .... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया

(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी .... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल

(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा .... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. .... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. .... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे .... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. .... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत

(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम .... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत

(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा .... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत

(14) प्रो. डॉ. संजय खरे .... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय........ परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत

(17) प्रो. अखिलेश जाधव .... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत

(18) प्रो. डॉ. कमल जैन .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से .... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत

(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी............. सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव .... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत

(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया .... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत

(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत

(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी .... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम .... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत

(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे .... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत

(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता .... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़.............. अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा .... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत

(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू................ प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन .... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित............ एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ....पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ....प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ....प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ......प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ....पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड...............संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी...........अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल...........अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ....संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा............. प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन.............प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. किशन यादव ....एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(24) प्रो. डॉ. नत्थरलाल गुप्ता ....अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम ....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत

(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता...........प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

****** विज्ञान संकाय ******

गणित:- .... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. नीरज दुबे, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:- .... **(1) अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

****** वाणिज्य संकाय ******

वाणिज्य :-...................... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल , शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

****** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ******

प्रबंध :- .... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी , शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

****** विधि संकाय ******

विधि:- .... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

****** कला संकाय ******

अर्थशास्त्र:-...................... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:-...................... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- .... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:- .... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- .... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:- .... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- .... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. काजल मोइत्रा , डॉ. सी वी रामन् विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

मनोविज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- .... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- .... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

✱✱✱ गृह विज्ञान संकाय ✱✱✱

आहार एवं पोषण विज्ञान:- .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:- .... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✱✱✱ शिक्षा संकाय ✱✱✱

शिक्षा .... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

✱✱✱ आर्किटेक्चर संकाय ✱✱✱

शारीरिक शिक्षा .... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

✱✱✱ शारीरिक शिक्षा संकाय ✱✱✱

शारीरिक शिक्षा .... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✱✱✱ ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ✱✱✱

ग्रन्थालय विज्ञान .... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ....ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ....शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ....शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ....शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ....कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ....जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ....शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ....शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ....शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ....शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ....शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ....शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ....शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ....शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ....शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ....शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ....स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ....शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ....शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ....पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ....आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ....शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ....शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ....सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ....शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ....शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ....शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी ....महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ....श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ....शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ....शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ....शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ....शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ....शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश............................शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ....सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ....शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ....शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ....शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ....शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ....शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ....शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर...............................शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा..................................शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ....शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ....शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ....शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ....शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ....शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ....शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा...............................शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ....शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ....शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ....शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी............................शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ....शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ....पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ....शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ....छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ....एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ....सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला.........................शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव..............................अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ....शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ....वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ...............................राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ....एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ....पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ....हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ....केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ....शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Study On Aggressive Behaviour Of Elephant Insurguja District (C.G.)

Priyanka Singh * Dr. Shweta Sao ** Dr. R. K. Singh ***

Abstract - The scientific study of animal behaviour is also called ethology, to term first by 19th century zoologist Isidore Geoffroy Saint Hilaire used to modern meaning by the American zoologist wheeler.Animal behaviour is the scientific study of the wild life and wonderful natural ways in which animals interact with each other with other living beings, and with the environment ant earth. It explores how animals relate to their physical environment and social environment as well as to author organisms and includes topics such as how animals find and defend resources, avoid predators, choose mates, reproduce, Human and animal relationship. Behaviour is motion action movement not necessarily movement of the whole animal muscular contractions and whole function of the nervous system behaviour is all observe and measure muscular or secretory responses and relation in phenomena response to changes I an animal's internal or external environment and their group environment. Behaviour is characterised by entropic animal energetic and active transductions by an organism. Elephants variety of behaviours, including those associate with grief, learning mimicry, play, altruism, use of tools, compassion, cooperation, entertainment, memory power, reasoning solve game. Further, evidence suggests elephants may understand pointing. Greek philosopher, Aristotle, once said that elephants were "the animal which surpasses all others in wit and mind.

Key words - Animal behaviour, zoologist. Earth environment, organism, characterised, phenomenia.

Introduction - Elephant region is biggest area in Surguja District. This Elephant region has spread over about 15, 732 km^2 (6074 sq mi). Therefore the study on the aggressive behaviour of Elephant study.

The study has different behaviour of Elephant are found in Surguja District for the study of behaviour.Elephants were classified into two species, the African (Loxodonta africana) and Asian elephants(Elephas maximus).Asian Elephant (Elephas maximus) species is found in India and we will study in Chhattisgarh Asian Elephant (Indian Elephants).

Wildlife elephant behaviour of various shows, but the cause of aggressive behaviour reflect the harmony between man and elephants and the extraordinary situation is not due to happen for many reasons, chief of which is the destruction of forests.

Human – elephant conflict in 1988, 18 elephant from Jharkhand and Odisha migrated into what is now Chhattisgarh for the first time. They caused extensive damage in Sarguja, Jashpur, Korba and Raigrh district. Madhya Pradesh government though it was an isolated incident and captured 10 elephants to prevent further entry into the area. This incidence of elephants straying in to Chhattisgrah has increased.

In 2001, acting on the request of the state government, the wildlife trust of India (WTI) conducted a rapid assessment to evaluate the elephant conflict situation in Chhattisgarh, at that time five districts Korba, Raigarh, Dharamjaigarh, Jashpur, and Sarguja were facing problems due to human- elephant conflict. The assignment report suggested that the elephants in this area had come in from the neighbouring forests of Sundargarh and Sambalpur forest division in Odisha. The esteemed elephant population that entered into Chhattisgarh at that point was around 24" the report went on to suggest that forest patches in Dharamjaigarh and Korba forests divisions can provide a good habitat for elephants, which will ultimately help in reducing human – elephant conflict cases. (Nandikesh Sivalingam, October 2014).

Mining Vs Biodiversity in Surguja (Chhattisgarh) - Chhattisgarh has 55,674 Sq. Km. of forests,covering 41.18% of its geographical area. It has the third largest area under forest cover after Madhya Pradesh and Arunachal Pradesh o this, Three percent is very dense forestsand 25.82% is moderately dense. 12.28% is open forest and 0.09% is Sarub. The forest ecosystem comprises of tropical moist drop of forest and tropical by deciduous forest.

Wildlife elephant conflict in the coal block -

- May 2013, elephants had come to the area adjoining the mining site.

* Deptt. of Zoology, Dr. C.V. Raman University, Kargi Road Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Deptt. of Zoology, Dr. C.V. Raman University, Kargi Road Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
*** Deptt. of Zoology, Dr. C.V. Raman University, Kargi Road Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

- According to the villagers, Kete to Parobia via Basen is a migratory route for elephants.
- Sloth bears are frequently sighted in the forest around in these villages.
- Leopards sightings were also frequently reported in Kete village till 2011, but no cattle lifting incidents occurred.
- In August 2008, a herd of seven elephants stayed near Basen Village for more than a week, damaging 35 houses there According to Villagers, elephants have been visiting the since 2001.

(Affected villages: -Kete, Basen, Parsa, Ghatbarra, Hariharpur, Salhei.)

Aggressive Behaviour - The behaviour that falls into the aggressive category is often that which is relation to affectand is directed at a single individual. Elephants are eligible of denunciatory an opposing(elephant, human, or other) by simply turning to face the other head on with head high and earslifted (Kahl and Armstrong, 2000). An elephant may also purposefully walk towards anindividual and sometimes only one step is enough to elicit a reaction (Poole 1987a, 1989a). Thismay also be considered a non-physical displacement if the receiving elephant moves away fromthe acting elephant. (Anna Ree, April 18, 2012).

Figure 1 - Matriarch of orphan herd shows alert behaviour and ear folding.

In addition to standing tall oradvancing forward, an elephant may also spread its ears and fold back the bottom so that a prominent ridge appears (Moss, 1988). It should be noted that Poole and Granli (2011) report that ear folding may be an affiliative behaviour if it is accompanied with head-raising, ear raising or rapid ear flapping. Head-shaking expresses anelephant's irritation at an individual or circumstance and causes the ears to flap sharply and thedust to fly (Figure 1) (Langbauer, 2000). A sharp sound can also accompany the ear flap whichcontributes to the display. (Payne and Langbauer, 1992).

To frighten potential predators such aslions or human, or a rival elephant, elephants may sing the trunk while stepping or lungingforward while blowing air through the trunk (Poole,1987a). The trunk swing can be escalated to throwing debris such as large shrubs and small trees in the general direction of an opponent; an elephant's aim can be quite accurate even from a distance away (Poole, 1987a; Kahl and Armstrong, 2000).

Figure 2 - Head Shake by Musth bull, Shayisa

Materials and Method - For the present study elephant's data were collected from elephants reserve forest department Ambikapur, Surguja Chhattisgarh. Elephant zone is a Tamor pingla, Khode, Badal khole, and there elephant alert Village are Jajwal, Bhelkhha, Duigai,, Ramkola, Keshar, Bodarpara, Panchgade, Injani, Sutari, Dumarpani, Bend and nearest Villages are Sampling Site. The study of elephant in aggressive nature, we interviewed, discussionadopting the method as well as the movement of elephants from binocular seen his kind go to the forest to study helped.

Result - Sarguja are wandering in Migrant elephants in the last 5 years, 82 people killed, while more than two thousand houses, crops damaged. There are no measures to save jobs. As pressure is growing in the forest, is a growing problem. The elephant entered the houses in the settlements, which are breaking the loss of life and property. Elephants, many dating to the homes and many people forest the stamp killed. Surguja division more than 100 elephants are roaming. Surguja, Udaipur, Lundra, Mainpat and three teams are wandering. According to forest officials from neighboring states of Jharkhand and Orissa the elephant's sometimes permanent camp in the forests of Surguja are scored. Surguja an area not protected by elephants.

Forests destruction of elephants to live enough space and food shortages are getting the elephants groups of human settlements and attacking the forests due to a loss of food and lack of space the elephants aggressively, making this thus elephants aggressive by nature public funding losses is as follows.

Elephants downed house in the village, causing damage to crops (30 April 2015 e-paper Naidunia)

A team of 18 elephants in villages adjoining the city Gangri Thursday raised the fiercely. The village has been

home to some of the elephantsdamaged and harmed the standing crops. Elephants were in panic rural violence. Soon all the villagers in the village of elephants fled their homes.

Devastation caused by 32 elephants entered the village near Ambikapur (15 Dec. 2015 e-paper Naidunia)

Ambikapur. 32 wild elephants came Bandiachuwa mountain town along the Mahamaya causing heavy damage. Elephants eat cereal three houses were shattered and placed there. Trampling ruined belongings are kept at home.

Villagers fled their homes for fear of elephants and spent the night in severe cold. Rakesh Gupta district panchayat member area on Tuesday morning, the ranger G.B. RAM and Ambikapur Lundra deputy forest ranger staff rushed to the spot, including Rakesh Rawat. The villagers demanded compensation from the authorities.

Fig. 1 - Devastation caused by 32 elephants entered the village & broken houses.(Dated – 11.03.2016 e-paper Patrika)

The team reached the village adjacent to the elephant in Ambikapur Khairbar, Ahmiapara and Lohngapani turmoil raised fiercely. This group of 12 elephants from Ambikapur-Raigarh way arrived Raghunathpur. The elephants smashed home the 4 villagers and caused widespread damage to crops. Seeing elephants enter the village, close to the village, sub health centre left. Elephant stood overnight near theBanki Dam. Villager's fear of elephants are forced out of the house a night owl.

Elephant stood overnight neaar the Banki Dam (Dated: 17.04.2016 newspaper Patrika)

The team is variance in Block Lundra in 13 elephants. The team Separating Village Dorna a Dntal elephant village resident Mr. Beejan Ram 45 year's old bang bang executed in the field. The Dntal elephant of many houses in the region Lundra had two month destroy the crops.

Fig. 3 - Dantal Elephant

Mainpat violence in the Lowland region of 11 elephant's team has created. Thursday night Mainpat-Raigarh Chhapra village located on the border village of returning to his home village Lalia Elephants killed bang-bang. Alarmed forest staff rushed to the spot and sent the body for post-mortem. The team still has dug elephants in the jungle. Residents of the village Lalia Mainpat Epicure Majhwar Chhapra village situated in the valley 60 years was the work of the transaction. At night he was returning on foot back to his village during the same period was confronted by his elephants. Given that the elephants on the run, but the crew of an elephant holding his trunk, slammed to the ground then bang-bang elephants killed him. Villagers informed the forest department in the morning and the next of kin of the deceased. Meanwhile, a team of elephants stand in the woods bordering the village, sparking panic among the villagers. The elephants in Mainpat team broke up into individual pieces is making mischief.

Knock and took the lives of 33 of 2 - In the last 20 days Mainpat Elephants put the 2 villagers killed while 33 houses were also destroyed. Some villagers in the shelter does not save the home is. Last week, the rural villages dependent Kanderaja Bagapara, Sarnapara and made a nuisance Chorkeepani elephants fiercely. Kanderaja Ramdni called in a team of elephants killed villager.

Overnight violence in the Chattani team Duppi Village corn and sugar cane crop waste

Duppi Village violence Chattani team ruin and destruction overnight maize and paddy crops were levels. Dogged morning were the Forest Again Dhaknipani vent the Area of heat from Pratappur Tamor Katani team Tukupani Gaon Came toward Duppi Vill Tuesday. Jangle Adjoining Area Vill Mnjadand Amatikara wealth and Maze and Ruined crops. The team five males and seven females 10 Child.

Fig. 3 - Dantal Elephant 33 houses distroy

Acknowledgement - Grateful thanks are due to the Asst. professor and Head Smt. Jermina TirkeyDepartment of Zoology & Dr. Rajkishor Singh Baghel Asst. Professor of Zoology,Rajeev Gandhi Govt. P.G. College, Ambikapur (C.G.), Elephant Reserve forest department Ambikapur &My husband Narersh Kujur for his kind interest and support during the present instigation.

References :-

1. Nandikesh Shivlingam Oct. 2014 Elephant in the room.
2. Anna Ree April 18, 2012,African elephant social structure visual, tactile, and acoustic communication that underlies social behaviour.
3. Parsell, D.L. (2003-02-21). "In Africa, Decoding the "Language" of Elephants". National Geographic News. Retrieved 2007-10-30.
4. Poole JH, Granli PK. 2011. Signals, gestures, and behaviour of African elephants. In: The Amboseli elephants: A long-term perspective on a long-lived mammal. Editors: Moss CJ, Croze H, Lee PC. University of Chicago Press.
5. Langbauer WR. 2000. Elephant communication. Zoo Biology 19(5):425-45.
6. Kahl MP, Armstrong BD. 2000. Visual and tactile displays in African elephants, Loxodontaafricana: A progress report (1991-1997). Elephant 2: 19-21.
7. e-newspaper Naiduniya 2015.
8. e-newspaper Patrika 2016.
9. e-newspaper Dainik Bhaskar 2016.
10. Elephant reserve, forest Dep. Surguja 2016.

****

Fixd Foint Theorm For Continuous Mapping In Hausdorff Space

Ganesh Kumar Soni *

Abstract - The aim of this paper we prove the fixed point theorem in Hausdorff space.
Keywords - Fixed Point, Hausdorff space, Continuous mapping.

Introduction - In the past few years,several mathematician have obtained more general results.In recent past many authors generalized and extend the Banach contraction principal principle. A number of authors such as Singh and Zarzitto[1] Ray and Chatterjee [2] Chatterjee and Ghoshal [3] Fisher and Khan [4] and Popa [5] etc. have established several interesting results on different types in Hausdorff Space.

Main Result - In this paper we prove the following theorem in Hausdorff Space.

Theorem - Let T be a continuous mapping of a Hausdorff space X into itself and let F : XxX $\rightarrow$ $[0,\alpha)$ be a continuous mapping such that for each pair of distinct points x,y ε X satisfies following inequality

$$F(Tx,Ty) \leq c\frac{F(x,y)\left[1+2\{\sqrt{F(x,y)+F(y,Ty)}\}^2\right]}{[1+\{\sqrt{F(x,Ty)+F(y,Tx)}\}^2+\{\sqrt{F(x,Tx)+F(y,Ty)}\}^2]}$$

where $c \geq 0$ are constant such that $c < 1$. If for some x_0 ε X , the sequence of iterates $\{T^n_k x_0\}$ covering to z ε X then z is a fixed point of T.

Proof - We have the monotonic sequence of non negative real numbers.

$F(x,Tx_0) > F(Tx, T^2x_0) >$———$> F(T^nx_0,T^{n+1}x_0)$ ———

which must converge along with all its subsequences to some real number k .

Now from the continuity of F and T we have

$$F(z,Tz) = F(\lim_{k\to\infty} T^n_k x_0, T \lim_{k\to\infty} T^n_k x_0)$$

$$= F(\lim_{k\to\infty} T^n_k x_0, \lim_{k\to\infty} T^{n+1}_k x_0)$$

$$= \lim_{k\to\infty} F(T^n_k x_0, T^{n+1}_k x_0)$$

$$= \lim_{k\to\infty} F(T^{n+1}_k x_0, T^{n+2}_k x_0)$$

$$= F(\lim_{k\to\infty} T^{n+1}_k x_0, \lim_{k\to\infty} T^{n+2}_k x_0)$$

$$= F(Tz, T^2z)$$

If $z \neq Tz$ then form (1) we have,

$$F(Tz,T^2z)$$

$$\leq c\frac{F(x,y)\left[1+2\{\sqrt{F(x,y)+F(y,Ty)}\}^2\right]}{[1+\{\sqrt{F(x,Ty)+F(y,Tx)}\}^2+\{\sqrt{F(x,Tx)+F(y,Ty)}\}^2]}$$

$$\leq c\frac{F(z,Tz)\left[1+2\{\sqrt{F(z,Tz)+F(Tz,T^2z)}\}^2\right]}{[1+\{\sqrt{F(z,T^2z)+F(Tz,Tz)}\}^2+\{\sqrt{F(z,Tz)+F(Tz,T^2z)}\}^2]}$$

$$\leq c\frac{F(z,Tz)\left[1+2\{\sqrt{F(z,Tz)+F(Tz,T^2z)}\}^2\right]}{[1+\{\sqrt{F(z,T^2z)}\}^2+\{\sqrt{F(z,T^2z)}\}^2]}$$

$$\leq c\frac{F(z,Tz)\left[1+2\{\sqrt{F(z,T^2z)}\}^2\right]}{[1+\{\sqrt{F(z,T^2z)}\}^2+\{\sqrt{F(z,T^2z)}\}^2]}$$

$$\leq c\frac{F(z,Tz)\left[1+2\{\sqrt{F(z,T^2z)}\}^2\right]}{[1+2\{\sqrt{F(z,T^2z)}\}^2]}$$

$$F(Tz,T^2z) \leq c\,F(z,Tz)$$

$$F(,T^2z) \leq cF(z,)$$

which gives $F(z,) = F(,T^2z) < F(z,Tz)$ where $c < 1$.

Which is contradiction.Thus z is α fixed point of F.

References :-

1. Singh, S.P. and Zorzitte, F. - "On fixed point theorems in metric spaces". Ann.Soc. Sci. Bruxelles 85(1971) 117-123.
2. Ray, B.K and chatterjee, H.(1977) - "On some results on fixed points in Metric and Banach spaces". Indian J. Pure appl. Math. 8(8), 955-960.
3. Chatterjee, M. and Ghoshal, S.K. (1980) "some fixed points theorems in Hausdorff spaces and consequences" Indian Jour. Math . Vol. 22(2).
4. Fisher, B. and khan, M.S. (1981) " Pairwise contractive mapping on Hausdorff spaces" Bull. Math.dela.Soc. Sci. Math. dela. R.S. 25(73),37-40.
5. Popa, V.(1983) "some unique fixed point theorem in Hausdorffspaces" Indian J. pure appl. Math. 14(6)713-717.

*Deptt.of Mathematics, Govt. P.G.College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

An Analysis About Manet

Raksha Sharma *

Abstract - Mobile ad hoc network (MANET) is a type of ad hoc network that can change locations and configure itself on the fly. MANETs use wireless connections to connect various networks. There are number of issues and challenges in a MANET. Congestion control is a challenging task in MANET. Congestion occurs when the demand is greater than available resources. Different types of mechanisms have been proposed to overcome the congestion in the mobile ad hoc network. Congestion control mechanisms control congestion either before congestion occur or after congestion actually occurred. In this paper we give an overview of WLAN, WMN and MANET over existing methods. The purpose of this paper is to discuss different proposed congestion control mechanisms in MANET.
Keywords - MANET, Congestion control, Congestion control in MANET, Congestion control algorithm.

Introduction - The increased demands for mobility and flexibility in our daily life are demand that lead the development from wired LANs to wireless LANs (WLANs). Today a wired LAN can offer users high bit rates to meet the requirements of bandwidth consuming services like video conferences, streaming video etc. With this in mind a user of a WLAN will have high demands on the system and will not accept too much degradation in performance to achieve mobility and flexibility. This will in turn put high demands on the design of WLANs of the future. During the last few years Wireless mesh networking has become increasingly ubiquitous and the preferred mechanism to provide coverage to campuses, small towns, etc. In Wireless mesh networks a subset of the wireless nodes are connected to the wired backbone and provide connectivity to the other nodes in the network through multi hopping over the wireless links. As a natural extension to WLANs, the medium access mechanism of choice for these networks is the CSMA/CA based IEEE 802.11 distributed MAC protocol [1] [27] [28]. While IEEE 802.11 MAC protocol was designed for and provides a reasonable performance in a single hop network, it results in severe performance degradation in a multi-hop setting. In a single hop 802.11 network, all nodes contend for the channel with equal opportunity and act as greedy as possible to increase their one hop throughput which directly results in increase of the network aggregate throughput. In a multi-hop network, however, the greedy behavior of the nodes may result in service degradation as the packets transmitted by a source might not reach their final destination due to network congestion . Some applications of MANET technology could include industrial and commercial applications involving cooperative mobile data exchange. In addition, mesh-based mobile networks can be operated as robust, inexpensive alternatives or enhancements to cell-based mobile network infrastructures. There are also existing and future military networking requirements for robust, IP-compliant data services within mobile wireless communication networks many of these networks consist of highly-dynamic autonomous topology segments. Also, the developing technologies of “wearable” computing and communications may provide applications for MANET technology. When properly combined with satellite-based information delivery, MANET technology can provide an extremely flexible method for establishing communications for fire/safety/ rescue operations or other scenarios requiring rapidly-deployable communications with survivable, efficient dynamic networking [3] [12] [13] [14] [15]. There are likely other applications for MANET technology which are not presently realized or envisioned by the authors. It is simply put, improved IP-based networking technology for dynamic, autonomous wireless networks.

Wireless Local Area Network (WLAN) - A wireless local area network (WLAN) links two or more devices using some wireless distribution method (typically spread-spectrum or OFDM radio), and usually providing a connection through an access point to the wider internet. This gives users the mobility to move around within a local coverage area and still be connected to the network. A wireless LAN is based on a cellular architecture where the system is subdivided into cells, where each cell (called Base Service Set or BSS*) is controlled by a Base station (called Access point or AP) [1] [5].

Wireless LAN Standards - Those are currently being explored in the field of communications technology [2] [3] [4] are:

*Guest Faculty (Computer Science) Vivekanand College, Maihar (M.P.) INDIA

1. IEEE 802.11 a. 802.11a
   b. 802.11b c. 802.11g
   d. 802.11 e etc.
2. HiperLAN/2.
3. Bluetooth.
4. HomeRF.

Wireless Mesh Network (WMN) - WMNs, generally described, consist of two types of nodes: mesh routers and mesh clients. The difference between a conventional router and a mesh router, apart from the mesh functionality, is that the latter can achieve the same coverage with lower transmission power through multi-hop communications. As regards to mesh clients, they also have necessary mesh functions and can thus behave as a router. On the other hand, gateway or bridge functions do not exist in these nodes. Additionally, mesh clients have only one wireless interface [3] [8] [9] [10].

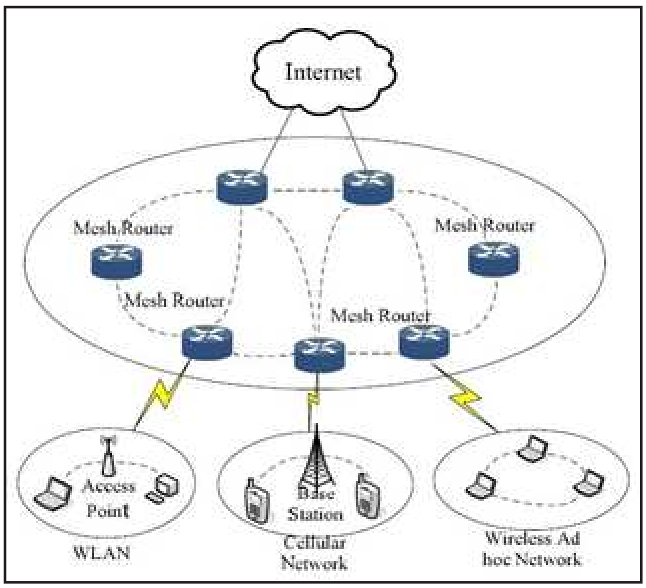

Figure 1 - Architecture of Wireless Mesh Networks

MANET - Wireless Ad Hoc network, with shared wireless channel to transmit messages, faces complicated wireless transmission environment, which will bring in a series of new problems, especially with routing, congestion being one of the problems. Generally speaking, for wireless Ad Hoc network, the calculation of the congestion control of one certain link should not just be based on the congestion of the link itself, instead, it should respond according to the general congestion message that interrupts the link. Therefore, to solve the routing congestion which might come up with the Ad Hoc network, the following issues should be taken into consideration:

1. The intrinsic properties of wireless multiple-hop links;
2. The time varying of network topology;
3. Dynamic end users. [6] [11]

Limitations of MANET - Limitations of the Wireless Networks are:

1. Packet loss due to transmission errors
2. Variable capacity links
3. Frequent disconnections/partitions
4. Limited communication bandwidth
5. Broadcast nature of the communications
6. Limitations Imposed by Mobility
7. Dynamically changing topologies/routes
8. Lack of mobility awareness by system/applications
9. Limitations of the Mobile Computer
10. Short battery lifetime
11. Limited capacities

Effect of Mobility on the Protocol Stack -

1. Application - New applications and adaptations
2. Transport - Congestion and flow control
3. Network - Addressing and routing
4. Link - Media access and handoff
4. Physical - Transmission errors and interference

Security of Nodes on Mobile Ad-hoc Network - Security is a major problem in MANET and therefore it is being addressed regularly by the researchers. Security algorithms offered for the MANET are addressing this problem in multiple ways and is applied using following -

1. Symmetric Key Cryptography
2. Public Key Cryptography
3. Authentication and Digital Signatures.
4. Hash and Message Authentication Codes (MAC)

MANETs are much more vulnerable to attack than wired network. This is because of the following reasons:

1. **Open Medium -** Eavesdropping is easier than in wired network.
2. **Dynamically Changing Network Topology –** Mobile Nodes comes and goes from the network, thereby allowing any malicious node to join the network without being detected.
3. **Cooperative Algorithms -** The routing algorithm of MANETs requires mutual trust between nodes which violates the principles of Network Security.
4. **Lack of Centralized Monitoring -** Absence of any centralized infrastructure prohibits any monitoring agent in the system.

Lack of Clear Line of Defence - The only use of I line of defence - attack prevention may not suffice. Experience of security research in wired world has taught us that we need to deploy layered security mechanisms because security is a process that is as secure as its weakest link. In addition to prevention, we need II line of defence - detection and response.

Congestion in MANET - Congestion is a situation in communication networks in which too many packets are present in a part of the subnet. Congestion may occurs when the load on the network (number of packets send to the network) is greater than the capacity of the network (number of packets a network can handle). Congestion leads to packet losses and bandwidth degradation and waste time and energy on congestion recovery [5] .In Internet when congestion occurs it is normally concentrated on a single router, whereas, due to the shared medium of the MANET congestion will not overload the mobile nodes

but has an effect on the entire coverage area [16].When the routing protocols in MANET are not conscious about the congestion, it results in the following issues**.**

1. Long delay
2. High overhead
3. Many packet losses

Congestion Control Algorithms - Congestion control mechanisms have improved over time. In this section we will give an overview over congestion control mechanisms. Many researchers performed valuable research in the field of congestion control. First we will discuss TCP variants for congestion control after that we will give an overview over existing congestion control algorithms.

1. TCP TAHOE
2. TCP RENO
3. TCP NEW RENO

Conclusion - In this Survey paper gives an overview over different congestion control algorithms. We can conclude that there is no single algorithm for congestion control in mobile ad hoc network. Nodes in MANET have limited bandwidth, buffer space, queue etc. So it is essential to distribute the traffic among the mobile nodes. In MANET, to improve the performance, it is very essential to balance the traffic congestion. Main objective of any congestion control algorithm is to balance the traffic to increase throughput of the network. Also it is possible to maximize nodes transfer, packet delivery ratio, and minimizes traffic congestion, end-to-end packet delay and network performance can be improved. In our future work we will propose dynamic queue management concept for the MANET to solve the problem of congestion in MANET.

References :-

1. Soundararajan**, S.** and R.S. Bhuvaneswaran "Multipath Load Balancing & Rate Based Congestion Control for Mobile Ad Hoc Networks (MANET)" 978-1-4673-0734-5/12/$31.00 ©2012 IEEE.
2. TuanAnhLe,ChoongSeonHong,Md. AbdurRazzaque, "ecMTCP: An Energy-Aware Congestion Control Algorithm for Multipath TCP" IEEE COMMUNICATIONS LETTERS, VOL. 16, NO. 2, FEBRUARY 2012.
3. Jingyuan Wang, Jiangtao Wen, Jun Zhang and Yuxing Han "TCP-FIT: An Improved TCP Congestion Control Algorithm and its Performance"978-1-4244-9921, 2011 IEEE.
4. OussamaHabachi, Yusuo Hu, Mihaela Van Der Schaar, YezekaelHayel, And Feng Wu "Mos-Based Congestion Control For Conversational Services In Wireless Environments" IEEE Journal On Selected Areas In Communications, Vol. 30, No. 7, August 2012.
5. Xiaoqin Chen, Hakey, M. Jones, A .D .S Jayalath"Congestion-Aware Routing Protocol for Mobile Ad Hoc Networks" 1-4244-0264-6/07/$25.00 ©2012 IEEE.
6. Makoto Ikeda, Elis Kulla, Masahiro Hiyama, Leonard Barolli, Rozeta Mihoand Makoto Takizawa"Congestion Control for Mul i-flow Traffic in Wireless Mobile Ad-hoc Networks" Sixth International Conference on Complex, Intelligent, and Software Intensive Systems 2012.
7. M.Ali,B.G.Stewart,AShahrabi,AVallavaraj"Congestion adaptive multipath routing for load balancing in mobile adhoc network", 978-1-4673-1101-4/12/$31.00 ©2012 IEEE
8. S.Santhoshbaboo and B.Narasimhan,"A Hop-by-Hop Congestion-Aware Routing Protocol for Heterogeneous Mobile Ad-hoc Networks",International Journal of Computer Science and Information Security (IJCSIS), Vol. 3, No. 1, 2009.
9. V. Thilagavath, Dr. K. Duraiswamy,"Cross Layer based Congestion Control Technique for Reliable and Energy Aware Routing in MANET", International Journal of Computer Applications, Volume 36–No.12, December 2011.
10. S. Choi, D. Kim, D. Lee, J. Jung"WAP: Wormhole Attack Prevention Algorithm in Mobile Ad Hoc Networks" International Conference on Sensor Networks, Ubiquitous and Trustworthy Computing, pp. 343- 348, 2008.
11. ShashankBharadwaj, Vipin Kumar, and AnkitVerma," A Review of Load Balanced Routing Protocols in Mobile Adhoc Networks", International Journal of Engineering Trends and Technology, 2011.
12. S.Sheeja,Dr.Ramachandra.V.Pujeri,"Effective Congestion Avoidance Scheme for Mobile Ad Hoc Networks", I. J. Computer Network and Information Security, 2013, 1, 33-40 Published Online January 2013.
13. Hariom Soni, Pradeep Kumar Mishra "Congestion Control Using Predictive Approach in Mobile Ad Hoc Network", International Journal of Soft Computing and Engineering (IJSCE) ISSN: 2231-2307, Volume-3, Issue-4, September 2013
14. Vishnu Kumar Sharma and Dr.Sarita Singh Bhadauria "Mobile Agent Based Congestion Control Using Aodv Routing Protocol Technique for Mobile Ad-Hoc Network" International Journal of Wireless & Mobile Networks (IJWMN) Vol. 4, No. 2, April 2012
15. reeta bourasi1, prof sandeep sahu"detection and removal of packet dropper nodes for congestion control over the manet", international journal of innovative research in electrical, electronics, instrumentation and control engineering vol. 1, issue 2, may 2013.

****

विद्यालयीन बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक संरचना के प्रभाव का अध्ययन (कानपुर शहर, उ.प्र. के विशेष संदर्भ में)

पारूल सारस्वत * कंचन दुबे ** डॉ. मंजु दुबे ***

प्रस्तावना - शिक्षा बालक की जन्मजात शक्तियों का विकास है, जिसमें बालकों का सर्वागीर्ण विकास होता है। बालकों को शिक्षा अपने परिवार एवं विद्यालय के साथ साथ पास-पड़ोस तथा जीवन के अनुभवों से भी मिलती है। विद्यालयों में बालक के पाठयक्रम के साथ साथ पाठयेत्तर गतिविधियों के माध्यम से भी शिक्षण प्रदान किया जाता है। बालकों को गृहकार्य एवं परियोजना कार्य नियमित रूप से दिये जाते हैं। परिवार में बालकों की शिक्षण सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं का समाधान किया जाता है। बालकों को उनके दादा-दादी, माता-पिता, भाई-बहन एवं अन्य सभी सदस्यों से सहयोग एवं प्रेरणा मिलती है। जो बालकों की शैक्षिक उपलब्धियों को प्रभावित करती है। एकांकी एवं संयुक्त परिवारों में सदस्य संख्या भिन्न भिन्न होती है। परिवार की स्वंय की समस्याएं तथा बालकों के प्रति सहयोग एवं प्रेरणा में भिन्नता होती है। क्या बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर परिवार की संरचना प्रभाव डालती है? यह ज्ञात करने के लिए शोधार्थी ने अपने शोध का विषय 'विद्यालयीन बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर परिवारिक संरचना के प्रभाव का अध्ययन' चुना है।

उद्देश्य :

- बालकों की परिवारिक संरचना का अध्ययन करना।
- बालकों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
- बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर परिवारिक संरचना का प्रभाव ज्ञात करना।

परिकल्पना :

- बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर परिवारिक संरचना का प्रभाव नहीं पाया जाता

शोधप्रविधि - शोध अध्ययन हेतु, कानपुर शहर के विद्यालयों में अध्ययन रू 300 विद्याथियों का देव दर्शन विधि से चयन किया गया तथ्यों के संकलन हेतु प्रश्नावली का उपयोग किया गया। परिकल्पनाओं की सार्थकता ज्ञात करते हेतु टी-परीक्षण - (T - Test) का उपयोग किया गया।

वर्गीकरण एवं विश्लेषण - प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण तालिका क्रमांक 1, 2, 3 एवं 4 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका क्रमांक - 1 - बालकों की परिवारिक - संरचना

परिवारिक संरचना	संख्या	प्रतिशत
एकांकी परिवार	154	51.33
संयुक्त परिवार	146	48.66
योग	**300**	**100%**

तालिका क्रमांक-1 में बालकों की पारिवारिक संरचना प्रदर्शित की गई है, तालिका दर्शाती है कि **154 (51.33%)** बालक एकांकी परिवार के तथा **146 (48.66%)** संयुक्त परिवार के पाए गए।

तालिका क्रमांक - 2 - बालकों की शैक्षिक उपलब्धि

शैक्षिक उपलब्धि	संख्या	प्रतिशत
प्रथम श्रेणी	58	19.33
द्वितीय श्रेणी	153	51.00
तृतीय श्रेणी	89	29.66
योग	**300**	**100%**

तालिका क्रमांक-2 में सर्वेक्षित बालकों की शैक्षिक उपलब्धि प्रदर्शित की गई है। तालिका दर्शाती है कि सर्वाधिक बालक **153 (51%)** द्वितीय श्रेणी से उतीर्ण हैं। प्रथम श्रेणी से उतीर्ण बालकों की संख्या **58 (19.33%)** न्यूनतम है तथा तृतीय श्रेणी से उतीर्ण बालकों की संख्या 89 (29.66%) पाई गई।

तालिका क्रमांक - 3 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक - 3 में पारिवारिक संरचना के अनुसार बालकों की शैक्षिक उपलब्धि प्रदर्शित की गई है। तालिका दर्शाती है। कि प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण बालकों में एकांकी परिवारों के बालकों की संख्या 46 (15.33%) पाई गई, जो कि संयुक्त परिवार के प्रथम श्रेणी उत्तीर्ण बालकों की संख्या 12 (4%) की तुलना में अधिक है। इस प्रकार प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण बालक एकांकी परिवारों में अधिक पाए गए। द्वितीय श्रेणी से उत्तीर्ण बालकों में संयुक्त परिवार के बालकों की संख्या 87 (29%) एकांकी परिवार के बालकों की संख्या 66 (22%) की तुलना में अधिक है। अत: द्वितीय श्रेणी से उत्तीर्ण बालकों का प्रतिशत संयुक्त परिवार के बालकों में अधिक पाया गया तृतीय श्रेणी से उत्तीर्ण बालकों में संयुक्त परिवार के बालकों की संख्या 47 (15.66%) पाई गई जो कि एकांकी परिवार के तृतीय श्रेणी उत्तीर्ण बालकों की संख्या 42 (14%) की तुलना में अधिक है। अत: तृतीय श्रेणी उत्तीर्ण बालकों का प्रतिशत भी संयुक्त परिवार के बालकों का अधिक पाया गया। (ग्राफ क्रमांक 1) **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक - 4 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक - 5 दर्शाती है कि एकांकी परिवारों के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि का माध्य 2.03 है जो कि संयुक्त परिवार के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि के माध्य 1.76 की तुलना में अधिक है। तालिकानुसार टी-परीक्षण का परिगणित मूल्य 298 स्वातंत्र्यांश पर 3.3740 है जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना - 'बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक संरचना का प्रभाव नहीं पाया जाता' अस्वीकृत

* शोधार्थी (गृह विज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृह विज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
*** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

होती है। इससे स्पष्ट होता है कि बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक संरचना का प्रभाव पाया गया। अत: कहा जा सकता है कि एकांकी और संयुक्त परिवार के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर पाया जाता है। एकांकी परिवार के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि संयुक्त परिवार के बालकों की तुलना में अधिक पाई गई।

निष्कर्ष – कानपुर शहर के विद्यालयीन बालकों में 154(51.33%) बालक एकांकी परिवार के तथा 146(48.66%) संयुक्त परिवार के पाए गए। सर्वेक्षित विद्यार्थियों में 58(19.33%) बालक प्रथम श्रेणी से 154(51%), द्वितीय श्रेणी से तथा 89(29.66%) तृतीय श्रेणी से उत्तीर्ण पाए गए। एकांकी एवं संयुक्त परिवारों के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना करने पर प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण बालकों का प्रतिशत (15.33%) संयुक्त परिवार के बालकों के प्रतिशत (4.0%) की तुलना में अधिक पाया गया। द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी से उत्तीर्ण विद्यार्थियों में संयुक्त परिवार के बालकों का प्रतिशत क्रमश: 29%, 15.66% एकांकी परिवार के बालकों के प्रतिशत क्रमश: 22% तथा 14% की तुलना में अधिक पाया गया। बालकों की शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक संरचना का प्रभाव पाया गया। एकांकी परिवार के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि संयुक्त परिवार के बालकों की तुलना में अधिक पाई गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पाठक, पी.डी. 'शिक्षा मानो विज्ञान' अग्रवाल पब्लिकेशन्स आगरा 2012.
2. सिंह, एस.डी. 'सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व' कमल प्रकाशन इन्दौर 1995
3. श्रीवास्तव, डी.एन., वर्मा, प्रीति, 'बाल मनोविज्ञान एवं बाल विकास'
4. राय, पारसनाथ 'अनुसंधान परिचय' अग्रवाल प्रकाशन, आगरा
5. श्रीवास्तव, डी.एन. अनुसंधान विधियाँ साहित्य प्रकाशन आगरा 1992

तालिका क्रमांक – 3 – पारिवारिक संरचना के अनुसार बालकों की शैक्षिक उपलब्धि

पारिवारिक संरचना	शैक्षिक उपलब्धि						योग	
	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी		तृतीय श्रेणी		संख्या	प्रति.
	सं.	प्रति.	सं.	प्रति.	सं.	प्रति.		
एकांकी परिवार	46	15.33	66	22.00	42	14.00	154	51.33
संयुक्त परविार	12	04.00	87	29.00	47	15.66	146	48.66
योग	**58**	**19.33**	**153**	**51.00**	**89**	**29.66**	**300**	**100%**

ग्राफ क्रमांक –1 एकांकी एवं संयुक्त परिवार के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि

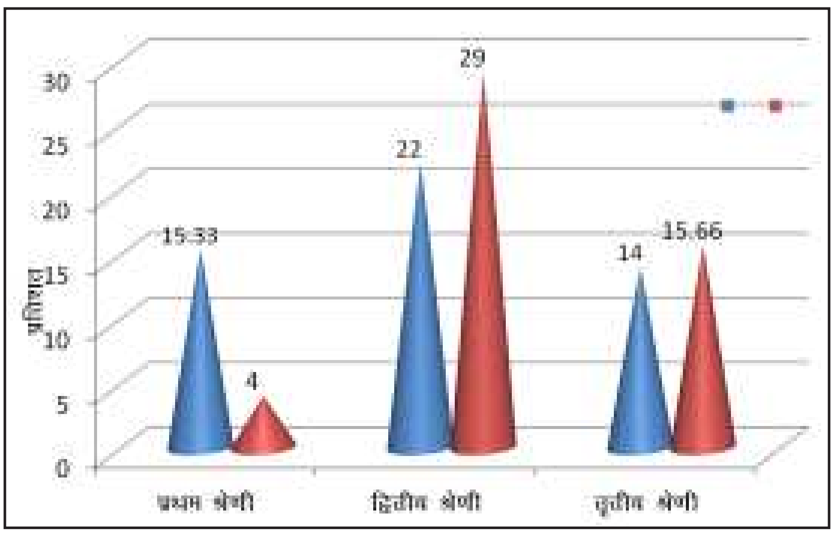

तालिका क्रमांक – 4

एकांकी एवं संयुक्त पारिवारों के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि का माध्य, मानक विचलन एवं टी – परीक्षण

पारिवारिक संरचना	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि	स्वांतत्र्यांश	टी–परीक्षण का मूल्य	रिमार्क
एकांकी परिवार	2.03	0.76	006	298	3.3740	P<0.05 (P=0.0008)
संयुक्त परिवार	1.76	0.59	0.05			
0.05 स्तर पर सार्थक						

****

किशोरावस्था में चिंता एवं कुंठा से उत्पन्न तनाव के स्तर का अध्ययन

प्रीति मालवीय *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में किशोरावस्था में कुंठा एवं चिंता से उत्पन्न विद्यार्थियों तनाव के स्तरो का पता लगाने का अध्ययन किया गया है। अध्ययन हेतु कोटा कोचिंग के 500 विद्यार्थीयों को लिया गया है। इनमें सर्वप्रथम तनावग्रस्त विद्यार्थियों का पता लगाने के लिये स्ट्रेस स्केल – डॉ. (श्रीमती) विजय लक्ष्मी और डॉ श्रुति नरेन, मनोवैज्ञानिक उपकरण की प्रश्नोत्तरी 500 विद्यार्थीयों से भरवाकर निष्कर्ष प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। निष्कर्षो से ज्ञात हुआ की कोटा कोचिंग के विद्यार्थियों पर चिंता से उच्च तनाव का स्तर 86% मध्यम 11% देखा गया जो अत्यधिक चौकाने वाले है, इसी प्रकार कुंठा से उच्च तनाव का स्तर 59% मध्यम 36% देखा गया जो चिंता से कम लेकिन तनाव से स्तर को बढ़ाते है।

प्रस्तावना – मानव जीवन में किशोरावस्था सर्वाधिक विचलन वाली अवस्था है। यह अवस्था 'आंधी और तुफानो वाली अवस्था है। इस अवस्था में किशोर सफलताओं और असफलताओं के भंवर में घूमता रहता है, यह अवस्था भावनात्मक अस्थिरता की अवस्था होती है।

पूर्व किशोरावस्था की स्थिति अस्पष्ट होती है। उसे समाज और परिवार, ना बालक और ना वयस्क समझते है। इस अवस्था के बालक को न बालक कह सकते है और ना युवावस्था कह सकते है। इस अवस्था में बालक के शारीरिक और मनोवैज्ञानिक गुणो में परिवर्तन युवा की दिशा में होते है। इस अस्पष्ट स्थिति के कारण उसे समायोजन करने में असुविधा होती है उसे मनोवैज्ञानिक परेशानियों का सामना भी करना पड़ता है।

विपरीत लिंग के प्रति आर्कषण, तीव्र शारीरिक/संवेगात्मक परिवर्तन, परिवार और समाज का सहयोग ना मिलना, अभिभावक बालक सम्बन्ध मधुर ना होना, जरूरत से ज्यादा अपेक्षाए भी किशोरावस्था में तनाव उत्पन्न करने का कारक होती है। तनाव जब तीव्र और उग्र हो जाता है, तो अवसाद (**Depression**) का रुप ले लेता है। कोटा शहर के कोचिंग के युवाओं में तनाव के बढ़ते दबाव से अवसाद की अधिकता देखी जा रही है। किशोरावस्था के सम्बन्ध में यह परम्परागत विश्वास रहा है कि किशोरावस्था विकास की क्रान्तिक और संक्रमण काल की अवस्था है। इसे समस्या की अवस्था और तनाव की अवस्था भी कहा जाता है। आज के वर्तमान समय में किशोरों में बढ़ता तनाव चिंता का विषय है। विकसित और विकासशील दोनों प्रकार के समाजों में इसकी बढ़ती संख्या सरकार, परिवार और समाज के लिए चिंता का विषय है।

यही कारण है कि शिक्षाविद, दार्शनिक, समाजशास्त्री, मनोवैज्ञानिक और कोचिंग संस्थानों के प्रमुख विद्वानों ने भी इस समस्या को अपने अपने दृष्टिकोण से समझने और समझाने का प्रयास किया है। हालांकि ऐसा नहीं है कि किशोरों में तनाव, अवसाद, समस्याएं केवल आधुनिक समाज की ही देन है।

किशोरो में तनाव और उससे होने वाली समस्याएं या समस्याओं से होने वाला तनाव (दोनों एक दूसरे के पूरक है) इस काल और हर समाज में मौजूद रहे है, लेकिन आधुनिक परिवर्तनशील समाज में किशोरों में होने वाले तनाव और उत्पन्न होने वाली समस्याओं के कारण, सामाजिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक असमायोजन में तेजी से बढ़ोतरी देखी जा रही है। किशोरावस्था भावात्मक अवस्था। परिवार और समाज की जरुरत से ज्यादा अपेक्षाएं, शिक्षा का अत्यधिक दबाव, आधुनिकरण, पाश्चात्यीकरण, आर्थिक तंगी, बढ़ती बेरोजगारी, शिक्षा (विषय) के चुनाव में समस्या का होना, एकल परिवार इकलोता बालक, घर के बाहर परिवार के जैसा वातावरण ना मिल पाना (भोजन, स्नेह) आदि के कारण किशोरों में तनाव और समस्याओं में वृद्धि देखने को मिलती है। कई बार किशोरों को रुचि के अनुसार कार्य न करने देने के कारण (विषय/कोर्स का चुनाव) भी किशोरों में चिंता उत्पन्न कर समस्या बढ़ाता है, जिससे वह तनाव में आ जाता है।

किशोरावस्था में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक एवं भावात्मक परिवर्तन होते है। परम्परागत जीवन मूल्यों में तेजी से बदलाव आए है। आधुनिक युग में विकासात्मक अवस्थाओं में तनाव का देखा जाना सामान्य हो गया है लेकिन सीमा से अधिक तनाव बालक के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती है। मानसिक तनाव से किशोरों के जीवन स्तर में स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं व दोष आते है।

आज के युग में वैज्ञानिक उपलब्धियों ने हर क्षेत्र में विकास को चमोत्कर्ष की सीमा पर पहुंचा दिया है। तीव्र गति से हो रहे औद्योगिरकरण, नगरीकरण, वैश्वीकरण की प्रक्रिया में विकसित और विकासशील देशों की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक मूल्यों को भी काफी तेजी से बदला है।

विद्यार्थी तनाव में आकर आत्महत्या जैसी विकृत मनोदशा/मनोविकार को अंजाम देने लगे है। आधुनिक सूचना तकनीकी से बाल–अपराध तेजी से बढ़ रहा है जिससे चोरी, लूट जैसी वारदातों को अंजाम दिया रहा है।

1.1 किशोरावस्था – किशोरावस्था अंग्रेजी भाषा के '**Adolescere**' शब्द का हिन्दी रुपांतरण है जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के "**Adolescere**' (एडोलेसियर) शब्द से हुई। "**Adolescere**' का अर्थ होता है – 'परिपक्वता की ओर बढ़ना' (**To grow to maturity**)। जब बालक का शारीरिक, मानसिक, मनौवेज्ञानिक, संवेगात्मक विकास/परिवर्तन तीव्र गति से होता है, तब इन्हीं परिवर्तनों के कारण किशोर के

* शोधार्थी, कॅरियर पॉइंटविश्वविद्यालय (राजस्थान) भारत

व्यवहार में असामान्यता उत्पन्न होने लगती है। उसमें अस्थिरता, सांवेगिकता, अनिश्चितता, आदि की अधिकता होती है।

तनाव/प्रतिबल (Stress) – प्रतिबल/तनाव वह अवस्था है, जो व्यक्ति पर इतना दबाव डालती है कि उसे समायोजन की आवश्यकता पड़ती है या उसे समायोजन करना पड़ता है। प्रत्येक व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य उस अवस्था में तीव्रगति से विकसित होता है, जब वह इन प्रतिबल परिस्थितियों के प्रति संतोषजनक ढंग से प्रतिक्रिया करता है।

तनाव मन: स्थिति का उपजा विकार है। मन: स्थिति एवं परिस्थितियों के बीच असंतुलन एवं असामंजस्य के कारण तनाव उत्पन्न होता है। तनाव एक द्वंद्व है, जो मन एवं भावनाओं में गहरी दरार उत्पन्न करता है। तनाव अन्य मनोविकारों का प्रवेश द्वार है। उससे मन अशांत भावना अस्थिर एवं शरीर अस्वस्थता का अनुभव करता है। ऐसी स्थिति में किशोरों की कार्यक्षमता प्रभावित होती है और शारीरिक व मानसिक विकास में व्यवधान आता है परिणामस्वरुप तनाव उत्पन्न होता है।

सामाजिक तनाव – धुर्ये के अनुसार तनाव सामाजिक जीवन की सार्वभौमिक घटना है। धुर्ये ने स्पष्ट किया की तनाव जीवो का एक गुण, क्षमता अथवा लक्षण है। यह स्वायत्त तंत्रिक यन्त्र के विभिन्न खंडो में उत्पन्न होता है। जब इनमें से कोई एक क्रियाशील हो जाता है तो तनाव व्यवस्था के निश्चित खंड में एकत्र हो जाता है और वह अशांति और अनियंत्रित क्रियाओं को उत्पन्न करती रहती है।

धुर्ये ने लिखा है कि जापान के समाजशास्त्रियों आदि ने अपने समाज के विशिष्ट तनाव के समूहों में 'युवा लोगों में तनाव' को बताया है।

मनोवैज्ञानिक तनाव – सी.एन. कॉफर तथा एन.ए.एपली 1964 ने प्रतिबल को परिभाषित करते हुए लिखा है।

'Stress is the state of the organism when he perceives that his well being (or integrity) is endangered and he must elevate all of his energies to his protection'

जे.सी.कोलमैन (1976) के अनुसार 'कोई भी परिस्थिति जो व्यक्ति पर दबाव डालती है तथा जिसके कारण व्यक्ति को समायोजन करना पड़ता है, यही प्रतिबल है (**stress**) है।'

अध्ययन के उद्देश्य –

1. 13–21 वर्ष के विद्यार्थियों में चिंता से होने वाले तनाव के स्तर की जानकारी प्राप्त करना एवं किशोरों पर इसके प्रभाव का पता लगाना।
2. 13–21 वर्ष के विद्यार्थियों में कुंठा से होने वाले तनाव के स्तर की जानकारी प्राप्त करना एवं किशोरों पर इसके प्रभाव का पता लगाना।

उपकल्पना – प्राक्कल्पना एक अस्थाई अनुमान है।

1. कोटा कोचिंग संस्थानों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को शैक्षणिक दबाव, तनाव की अधिकता और उभरती हुई प्रवृतियों प्रभावित करती है।

समग्र – प्रस्तुत अध्ययन में कोटा में रह रहे सम्पूर्ण कोचिंग के विद्यार्थीयों को एक समग्र के रुप में लिया गया है।

निदर्शन का चयन (Selection of Sample**)** - शोध कार्य के लिये 500 कोचिंग के विद्यार्थियों का देव निदर्शन से अंकल प्रणाली विधि का प्रयोग करते हुए चयन किया गया। इसमें ऐसे विद्यार्थियों को शामिल किया गया जो कोटा में रहकर एवं कोटा के बाहर से आकर आई.टी.आई., मेडिकल व इंजीनियरिंग व अन्य विषय की कोचिंग प्राप्त कर कहे है।

अनुसन्धान तकनीक – कोटा कोचिंग के विद्यार्थियों में तनाव व विचलनकारी प्रवृतियों को जानने हेतु प्रश्नावली शोध तकनीक को प्रयोग किया गया है।

इनमें सर्वप्रथम तनावग्रस्त विद्यार्थियों का पता लगाने के लिए स्ट्रेस स्केल– डॉ. (श्रीमती) विजय लक्ष्मी और डॉ. श्रुति नरेन, मनोवैज्ञानिक उपकरण की प्रश्नोतरी 500 विद्यार्थियों से भरवाई गई।

चिंता और कुंठा का कोटा कोचिंग के विद्यार्थीयों पर तनाव जानने हेतु दोनों आयामों का मापन किया गया है। सांख्यिकीय विश्लेषण आंकडों को ज्ञात कर निष्कर्ष प्राप्त किए।

चिन्ता – चिन्ता एक प्रकार का नकारात्मक और अस्वस्थ संवेग है, चिंता के कारण विद्यार्थीयों में सोचने समझने, तर्क करने, स्मरण करने, विचार प्रक्रिया की क्षमता का ह्यास देखा जाता है और वह अपनी समस्याओं का समुचित समाधान नही ढूंढ पाता है। चिंता एक प्रकार की अस्वस्था मानसिक स्थिति है। किशोरावस्था में काल्पनिक भय के कारण चिंता देखी जाती है, चिंता का सम्बन्ध ऐसी घटनाओं से होता है जो भविष्य में घटित होने वाली है।

आज के आधुनिक और शिक्षा की दौड़ में भागते हुए युग में प्रत्येक किशोर चिंता से ग्रस्त है, प्रत्येक के सम्मुख संघर्ष व तनाव है। चिंता का सीधा सम्बन्ध मानसिक विकास से होता है, मानसिक विकास पूर्ण होने पर चिंता की अधिकता देखी जाती है।

सारणी क्रमांक 01

क्र.सं.	अंक (प्रशनावली के उत्तर के अनुसार)	किशोर की संख्या	प्रतिशत
1.	0	5	1 %
2.	1	5	1 %
3.	2	5	1 %
4.	4	10	2 %
5.	5	10	2 %
6.	6	35	7 %
7.	7	50	10 %
8.	8	95	19 %
9.	9	95	19 %
10.	10	100	20 %
11.	11	45	9 %
12.	12	35	7 %
13.	13	10	2 %
14.	कुल	500	100 %

प्रस्तुत सारणी में प्रत्येक प्रश्न को कितने विद्यार्थियों ने हां या ना में उत्तर दिया है उसके अनुसार प्रतिशत निकाला गया है। इससे पता चला की 500 में से मात्र 5 विद्यार्थी ही ऐसे है। जिन्हें बिलकुल भी चिंता नही है क्योकि उन्होने सभी प्रश्नों का उत्तर ना में दिया है।

टेबल संख्या 01

किशोरावस्था में तनाव के स्तर की गुणात्मक व्याख्या

आयाम	तनाव का स्तर		
	उच्च	मध्यम	निम्न
चिन्ता	7 और उससे अधिक	4 से 6	0 से 3

प्रस्तुत टेबल में बताया गया है कि यदि किसी किशोर विद्यार्थी ने 13 प्रश्न में से 7 या उससे अधिक प्रश्न सही है, तो उसमें चिंता का स्तर उच्च है तथा 4 – 6 होने पर मध्यम व 0 से 3 होने पर निम्न चिंता का स्तर देखा

जायेगा।

इस टेबल को कोटा कोचिंग के 13-21 वर्ष तक के 500 विद्यार्थियों पर देखा गया और हमें नीचे दिए गए टेबल के अनुसार आंकड़े प्राप्त हुए।

सारणी क्रमांक 02

चिन्ता			
तनाव का स्तर			
क्र.सं.	स्तर	कुल किशोरों की संख्या	प्रतिशत
01	उच्च	430	86 %
02	मध्यम	55	11 %
03	निम्न	15	3 %
04	योग	500	100 %

उपर्युक्त आंकड़े चौकाने वाले है। 500 विद्यार्थियों में से 430 विद्यार्थियों ने इस बात को प्रश्नों का उत्तर देकर स्वीकारा कि उन्हे उच्च स्तर की चिन्ता है। मात्र 55 विद्यार्थियों को मध्यम व 15 विद्यार्थीयों को निम्न स्तर की चिंता होती है।

डार्की, ऐमेन आदि मनोवैज्ञानिकों ने चिंता तथा शीलगुणों के सम्बन्धों में अध्ययन किया। चिंता करने वाले विद्यार्थियों में आक्रामक, अकेलापन, असामाजिकता, कम बोलना, चिड़चिड़ापन, भूख ना लगना, ह्वदय गति बढ़ जाना, पाचन क्रिया का कमजोर हो जाना देखा जाता है।

किशोरों में चिंता के अनेक कारण हो सकते है, परिवार सम्बन्धी, विद्यालय सम्बन्धी अधिक होती है। परिवार सम्बन्धी चिन्ताओं में वे चिंताए सम्मिलित है, जो परिवार की समस्याओं, कठिनाइयों आदि से सम्बंधित होती है। पारिवारिक कलहपूर्ण वातावरण, परिवार की निम्न आर्थिक स्थिति, कही संयुक्त परिवार तो कह एकाकी परिवार, बीमारी, टूटे या विकृत परिवार, तलाक, लड़ाई झगड़े आदि चिंताएं परिवार सम्बन्धी चिन्ताओं में सम्मिलित है।

विद्यालय सम्बन्धी चिंताएं वे चिंताएं होती है, जो बालक के विद्यालय, शिक्षकों का डर, मित्रों, पाठ्यपुस्तकों, वातावरण, परीक्षा आदि से सम्बन्धित होती है।

लम्बे समय तक उच्च स्तर की चिंता करते रहने से किशोरो में चिंता रोग (ANXIETY NEUROSIS) नामक मानसिक रोग से ग्रसित हो सकता है।

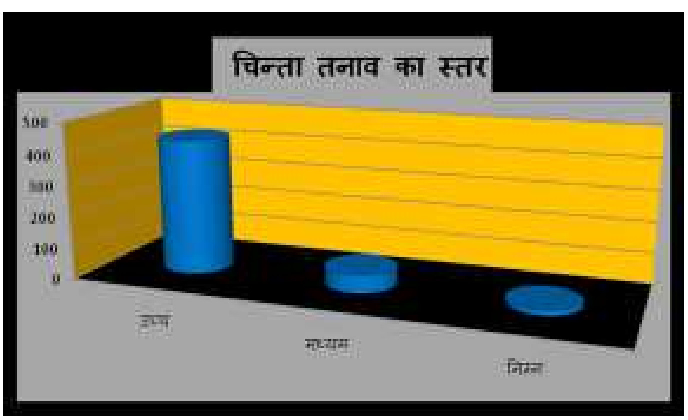

कुण्ठा (FRUSTRATION) - कुंठा शब्द के अर्थ में सभी मनोवैज्ञानिक का एक मत नही है। इसके मुख्यत: 3 अर्थ लगाए जाते है।

1. **Frustrating situation (कुण्ठा उत्पन्न करने वाली परिस्थिति)**-Brown Farber, 1951; Lawason Marx, 1958; Amsel 1958, 1962; मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि कुंठा उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों में ये परिस्थितियां सम्मिलित है, जैसे - जिनमें आंशिक या पूर्ण भौतिक बाधाएं हों जिनमें पुरस्कार कम या समाप्त किया गया हों, प्रत्युत्तर क्रम के प्रारम्भ होने या पूर्ण होने में देर की जाए, जब असफलता की आशा हो, जब असफलता अथवा दण्ड प्राप्त हो।

2. **Frustrating state (कुण्ठा की दशा)** - व्यक्ति में कितनी कुठा उत्पन्न होगी, यह इस बात पर निर्भर करता है कि कुंठा परिस्थिति कितनी शक्तिशाली है। अधिक शक्तिशाली परिस्थितिया अधिक मात्रा में कुण्ठा उत्पन्न करती है। कुंठा की दशा का मापन प्रत्यक्ष और मात्रात्मक रुप में संभव है।

3. **Reaction of Frustration (कुण्ठा के प्रति प्रतिक्रिया)** - विस्तार में जिन कुण्ठा प्रतिक्रियाओं का अध्ययनकिया है वो निम्नानुसार है-

1. Aggression
2. Regration
3. Fixation

चतुर्थ मद कुण्ठा का मूल्यांकन - SS-LVNS टेबल न. 1 की प्रश्नावली के अनुसार प्रश्न संख्या 4,5,7,10,11,12,13,24 व 26 कुल 09 प्रश्नों, के जवाब प्राप्त कर कुण्ठा के स्तर का पता लगाने का प्रयास किया गया है। टेबल न. 2 के अनुसार कुण्ठा मद के कुल 9 प्रश्न धनात्मक है। scoring table के अनुसार धनात्मक प्रश्न का जवाब हाँ होने पर 1 अंक देकर संख्या प्राप्त की गई है।

सारणी क्रमांक 03

क्र.सं.	अंक (प्रशनावली के उत्तर के अनुसार)	किशोर की संख्या	प्रतिशत
1.	9	5	1 %
2.	8	10	2 %
3.	1	0	2 %
4.	6	30	6 %
5.	5	85	17 %
6.	4	65	13 %
7.	3	85	17 %
8.	2	95	19 %
9.	1	40	8 %
10.	0	75	15 %
कुल	13	500	100 %

उपरोक्त सारणी में दर्शाया गया है कि 0 से 9 अंक प्राप्त करने वाले किशोरों की संख्या कितनी है। जैसे क्र. स. 1 से 9 प्रश्नों के पूरे 9 अंक पाने वाले किशोरों की संख्या 5 है, 500 विद्यार्थियों में से मात्र 5 विद्यार्थियों इसका तात्पर्य है की 1 % विद्यार्थी में कुण्ठा का स्तर तीव्र है। यह आंकड़े प्रत्येक विद्यार्थी के 9 प्रश्नों में प्राप्त अंकों के अनुसार निकाला गया है।

सारणी संख्या 04

किशोरावस्था में तनाव के स्तर की गुणात्मक व्याख्या

आयाम	तनाव का स्तर		
	उच्च	मध्यम	निम्न
दबाव	6 और उससे अधिक	3 से 5	0 से 2

सारणी के अध्ययन से ज्ञात होता है कि 6 या इससे अधिक अंक प्राप्त

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

करने वाले किशोर उच्च तनाव के स्तर की श्रेणी के अंतर्गत आते है। 3 से 5 अंक प्राप्त करने वाले किशोर मध्यम श्रेणी के अंतर्गत तथा 0 से 2 अंक प्राप्त करने वाले किशोर निम्न श्रेणी के अंतर्गत आते है।

इसके बाद कुण्ठा के कारण होने वाले तनाव के स्तर का अध्ययन किया गया।

सारणी क्रमांक 05

कुण्ठा			
तनाव का स्तर			
क्र.सं.	स्तर	कुल किशोरों की संख्या	प्रतिशत
01	उच्च	295	59 %
02	मध्यम	180	36 %
03	निम्न	25	5 %
04	योग	500	100 %

सारणी क्रमांक 3 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ की किशोरावस्था में कुंठा से होने वाले तनाव के स्तर में उच्च स्तर के तनाव का प्रतिशत 59 है तो आधे से ज्यादा है, परन्तु चिन्ता, शारीरिक तनाव व दबाव के उच्च स्तर से कम पाया गया है। मध्यम स्तर 36 % व निम्न स्तर 5 % पाया गया है। यह आंकड़े इस बात की पुष्टि करते है कि कोटा कोचिंग के विद्यार्थियों में कुंठा के कारण तनाव का स्तर 59 % पाया जाता है, जिसके कारण किशोरों में अस्थिरता देखने को मिलती है।

किशोरावस्था में यह कुंठा उच्च आकांक्षा स्तर, माता-पिता की अपेक्षाऐं, प्रतिस्पर्धा, हीनता की भावना, लगातार असफलता, सामाजिक बाधायें, आर्थिक मंदी की जरुरत से ज्यादा अधिकता के कारण देखी जाती है। उपरोक्त तथ्यों को आंकड़ो के रुप में वृत चित्र के माध्यम से दर्शाया गया है।

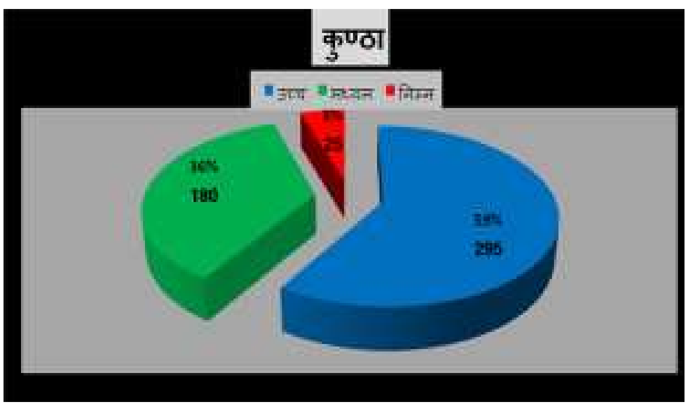

वृत चित्र संख्या - 01

अत: माता-पिता एवं शिक्षकों को चाहिए कि किशोरों की परेशानी, समस्याओं, जिज्ञासाओं को समझे, सुनें और दूर करने का प्रयत्न करें। व्यक्तिगत निर्देशन, प्यार, दुलार से उसकी परेशानी को दूर करें।

निष्कर्ष - उपरोक्त आंकड़ों का आंकलन करने से निष्कर्ष निकलता है की कोटा कोचिंग के किशोर विद्यार्थीयों में चिंता और कुंठा का स्तर अधिक देखा गया है, अत्यधिक तनाव उत्पन्न होने के कारण मनौवैज्ञानिक समस्यायें उत्पन्न होती है जिसका विद्यार्थियों के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव देखने को मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आशा पारीक - मानव विकास एवं बाल विकास
2. बच एम. वी संपादक - सर्वे ऑफ रिसर्च इन 1990 एजुकेशन ए. एस. आई. बडोदा।
3. हॉर्लोक एलिजाबेथ बी - एडोलेसेंट डेवलपमेंट, मेकग्राहिक बुक क.।
4. हॉर्लोक एलिजाबेथ बी - डेवलप्मेंटल साइकोलॉजी (TMH EDITION)
5. हॉर्लोक एलिजाबेथ बी - चाइल्ड डेवलप्मेंट (SIXTH EDITION)
6. वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा - सामाजिक विचारक।
7. Jayashree Nayak - Department of family resource management Dharwad 2008
8. डॉ. वृन्दा सिंह - मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बन्ध।
9. डॉ. डी. एन. श्रीवास्तव - बाल मनोविज्ञान, बाल विकास।
10. डॉ. प्रीति वर्मा -
11. डॉ. वन्दना जैन - मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बन्ध।
12. पाठक पी. डी. - शिक्षा मनोविज्ञान।
13. ओंकार सिंह जनोशी - काम के दबाव में मानसिक बीमारियाँ रिपोर्ट एस. ऍफ. 2014
14. विकास पीडिया - तनाव तथा मनोचिकित्सा।
15. गैरिसन सी. - साइकोलॉजी ऑफ एडोलेसेंट।
16. हाल. जी. एस.- एडोलेसेंट इट्स साइकोलॉजी एंड इट्स रिलेशन टू फिजियोलॉजी।
17. एन्थ्रोलॉजी, सोसिओलॉजी -
18. जर्सिल्ड ऑथेरिटी - द साइकॉलोजी ऑफ एडोलेसेंट।
19. जायसवाल सीजाराम- शिक्षा के निर्देशन एवं परामर्श।
20. जेफ्री जेंसन अरनेट - किशोरावस्था तूफान और तनाव की अवस्था है।
21. कुमारी मंजू - भारत में बाल अपराध।
22. K. P. Neeraja - Essentials of Mealth Health and Psychiatric Nursing (Jaypee)

****

सुल्तानपुर जिले के स्वंय सहायता समूहों का अध्ययन

स्वर्णिमा सिंह * कंचन दुबे ** डॉ. मंजु दुबे *

प्रस्तावना – स्वंय सहायता समूह ग्रामीण निर्धनों का समूह है, जो स्वेच्छा से एक समूह के रुप में संगठित होते है और एक निश्चित धनराशि सम्मिलित निधि के रुप में एकत्रित करते हैं। समूह के निर्णयानुसार समूह के जरुरतमंद सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु परस्पर सहमत होकर कार्य करते हैं। स्वंय सहायता समूह के सदस्यों की नियमित बचत होते रहने से उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार आता है। समूह के सदस्यों को आवश्यकता पड़ने पर ऋण सुविधापूर्वक उपलब्ध हो जाता है। स्वंय सहायता समूहों को बैंक से ऋण आसानी से मिल जाता है। समूहों द्वारा सदस्यों को उनकी आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं के निराकरण में मार्गदर्शन भी मिलता है। स्वंय सहायता समूह एक प्रकार से गरीबों द्वारा बनाया गया स्वंय का छोटा सा बैंक है, जिसके नियम समूह के सदस्य आपस में मिलकर स्वंय बनाते हैं। स्वंय सहायता समूहों को सरकारी रूप में मान्यता है क्योंकि शारतीय रिजर्व बैंक तथा अन्य बैंकों द्वारा इस कार्यक्रम को विशेष मंजूरी दी गई है। स्वंय सहायता समूह में सदस्य संख्या 10 से 20 तक हो सकती है, समूह का एक अध्यक्ष, एक कोषाध्यक्ष बनाया जाता है। शेष सदस्य होते हैं। समूह की बैठक प्रतिमाह होती है तथा सम्बन्धित रिकॉर्ड रजिस्टर में रखा जाता है। समूह की बैठक में समूह की गतिविधियों की समीक्षा की जाती है तथा ऋण की वसूली पर निगरानी रखी जाती है। समूह आवश्यकतानुसार बैंकों से ऋण प्राप्त कर सकते हैं किंतु उन्हें नियमानुसार लौटाना होता है। स्वंय सहायता समूह इस प्रकार समूह के समस्त सदस्यों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता है। शोधार्थी सुल्तानपुर जिले की निवासी है तथा स्वंय सहायता समूहों के अध्ययन के लिये इच्छुक व जिज्ञासु है अत: उसने अपने शोध का विषय – 'सुल्तानपुर जिले के स्वंय सहायता समूहों का अध्ययन' चुना है।

उद्देश्य –

1. स्वंय सहायता समूहों की स्थिति का अध्ययन करना।
2. स्वंय सहायता समूहों में सदस्यों की सहभागिता का अध्ययनकरना।
3. स्वंय सहायता समूहों में सदस्यों की जातिगत सहभागिता का अध्ययन करना।
4. स्वंय सहा समूहों में बी.पी एल सदस्यों की सहभागिता का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – अध्ययन हेतु सुल्तानपुर जिले के प्रत्येक विकास खण्ड से 40 स्वंय सहायता समूहों का दैव निदर्शन विधि से चयन करते हुये चारों विकास खण्डों से कुल 160 स्वंय सहायता समूहों का चयन किया गया। तथ्यों के संकलन हेतु पूर्व परीक्षित प्रश्नावली का उपयोग किया गया। संकलित तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया गया। (तालिका क्रमांक-1 से 4 तक)

तालिका क्रमांक-1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक-1 में स्वंय सहायता समूहों की स्थापना के वर्ष प्रदार्शित किए गए हैं। तालिका दर्शाती हैं कि 2000 से 2014 के मध्य स्वंय सहायता समूहों की स्थापना की सर्वाधिक संख्या 42 (26.25%) वर्ष 2008 में पाई गई तथा वर्ष 2006 में समूहों की संख्या 28 (17.5%) द्वितीय स्थान पर रही। समूहों की स्थापना की न्यूनतम संख्या 1 (0.62%) वर्ष 2000 से 2002 तक तथा वर्ष 2014 में पाई गई।

तालिका क्रमांक-2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 2 में स्वंय सहायता समूहों का सदस्य संख्यानुसार वर्गीकरण किया गया है तालिका दर्शाती है कि समूहों की सर्वाधिक संख्या 71 (44.37%) 10-11 सदस्य संख्या वाले समूहों की पाई गई। जिसमें अमेठी विकास खण्ड 10 (10%) भादर में 13 (8.12%) भेटुआ में 16 (10%) तथा संग्रामपुर में 26 (16.25%) पाई गई। द्वितीय स्थान पर 12-13 सदस्य संख्या वाले 65 (40.62%) समूह पाए गए जिनमें अमेठी विकास खण्ड के 20 (12.5%) भादर के 18 (11.25%) भेटुआ के 16 (10%) तथा संग्रामपुर के 11 (6.87%) सम्मिलित हैं न्यूनतम सदस्य संख्या 8-9 सदस्यों वाला केवल 01 (0.62%) समूह अमेठी में पाया गया।

तालिका क्रमांक-3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तलिक क्रमांक-3 में स्वंय सहायता समूहों का जाति के आधार पर वर्गीकरण किया गया है। तालिका दर्शाती है कि 293 (15.46%) सदस्य सामान्य जाति के पाए गए जिनमें 94 (4.96%) अमेठी विकास खण्ड में, 72 (3.79%) भादर विकास खण्ड में, 68 (3.58%) भेटुआ विकास खण्ड में तथा 59 (3.11%) संग्रामपुर विकासखण्ड में पाये गये। सामान्य जाति के सदस्यों की सर्वाधिक संख्या अमेठी में तथा न्यूनतम संग्रामपुर में पाई गई। अनुसूचित जाति के सदस्यों में 10 (5.32%) अमेठी में, 130 (6.86%) भादर में 129 (6.80%) भेटुआ में तथा 109 (57.5%) संग्रामपुर विकासखण्ड में कुल 469 (24.74%) सदस्य सुल्तानपुर जिले में पाये गये अनुजाति के सदसयों की सर्वाधिक संख्या भेटुआ में तथा न्यूनतम अमेठी में पाई गई। अनुसूचित जनजाति के सदस्यों में अमेठी विकास खण्ड में 20 (1.05%) भादर 11 (0.58%) भेटुआ (0.026%) तथा संग्रामपुर में 02 (0.10%) कुल 38 (2.0%) सदस्य पाए गए।

*शोधार्थी (गृहविज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर(म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृहविज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
***प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृहविज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

अनु.जनजाति के सदस्यों का सर्वाधिक प्रतिशत अमेठी में तथा न्यूनतम संग्रामपुर में पाया गया। पिछडे वर्ग की जाति के सदस्यों में अमेठी विकास खण्ड में 252 (13.29%), भादर में 278 (14.67%) भेटुआ में 286 (15.09%) तथा संग्रामपुर में 279 (14.72%) पाए गए। पिछडे वर्ग के अंतर्गत आने वाले सदस्यों में सर्वाधिक संख्या भेटुआ तथा न्यूनतम संख्या अमेठी में पाई गई।

तालिका क्रमांक-4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक-4 में स्वंय सहायता समूहों में बी.पी एल सदस्यों की स्थिति प्रदार्शित की गई है। तालिका दर्शाती है कि जिले के विभिन्न विकास खण्डों से स्वंय सहायता समूहों में बी.पी एल सदस्यों की कुल संख्या 937 (49.45%) है। जिसमें 261 (13.77%) अमेठी विकासखण्ड में 366 (19.31%) भादर विकासखण्ड में 151 (7.96%) भेटुआ विकासखण्ड में तथा 159 (8.39%) संग्रामपुर विकासखण्ड के समूहों के सदस्य है। बी.पी एल सदस्यों की सर्वाधिक संख्या भादर विकासखण्ड में संचालित स्वंय सहायता समूहों के सदस्यों की तथा न्यूनतम संख्या भेटुआ विकासखण्ड में संचालित स्वंय सहायता समूहों के सदस्यों की पाई गई।

निष्कर्ष – सुल्तानपुर जिले के विभिन्न विकासखण्डों से प्राप्त तथ्यों से निम्नानुसार निष्कर्ष प्राप्त हुए-

1. सर्वेक्षित 160 स्वयं सहायता समूहों की स्थापना वर्ष 2000 से 2014 के मध्य प्रतिवर्ष हुई है, किंतु सर्वाधिक समूहों 42(26.25%) की स्थापना वर्ष 2008 में हुई।
2. सर्वेक्षित स्वयं सहायता समूहों में 10-11 सदस्य संख्या वाले समूह सर्वाधिक 71 (44.37%) पाए गए जिसमें अमेठी विकासखण्ड में 16(10%), भादर में 13(8.12%), भेटुआ में 16(10%) तथा संग्रामपुर में 26(16.25%) थे।
3. सर्वेक्षित स्वयं सहायता समूहों के सदस्यों में 293 (15.46%) सदस्य सामान्य जाति के, 469(24.74%) अनुसूचित जाति के, 38(2.0%) अनुसूचित जनजाति के तथा 1095(57.78%) पिछड़े वर्ग की जातियों के पाए गए। इस प्रकार पिछड़े वर्ग के सदयों का समूहों में बाहुल्य पाया गया।
4. सर्वेक्षित 160 स्वयं सहायता समूहों में सदस्य संख्या 1895 पाई गयी। जिनमें बी.पी.एल. सदस्यों की संख्या 937(49.45%) पाई गई।

सीमाए-

1. प्रस्तुत शोध सुल्तानपुर जिले के अमेठी, भादर, भेटुआ एवं संग्रामपुर विकास खण्डों के गाँवों तक सीमित है।
2. शोध अध्ययनसर्वेक्षित 160 समूहों एवं उनके 1895 सदस्यों तक सीमित है।

तालिका क्रमांक-1
सर्वेक्षित स्वंय सहायता समूहों के स्थापना वर्ष

क्र.	स्थापना वर्ष	विकास खण्ड									
		अमेठी		भादई		भेदुआ		संग्रामपुर		योग	
		सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.
1	2000	0	0	0	0	0	0	1	0.62	1	0.62
2	2001	1	0.62	0	0	0	0	0	0	1	0.62
3	2002	1	0.62	0	0	0	0	0	0	1	0.62
4	2003	1	0.62	1	0.62	1	0.62	0	0	3	1.88
5	2004	2	1.25	2	1.25	3	1.88	2	1.25	9	5.63
6	2005	4	2.5	5	3.13	2	1.25	1	0.62	12	7.5
7	2006	3	1.88	13	8.13	8	5	4	2.5	28	17.5
8	2007	2	1.25	1	0.62	2	1.25	3	1.88	8	5.0
9	2008	10	6.25	9	5.63	4	2.5	19	11.87	42	26.25
10	2009	2	12.5	6	3.76	0	0	2	1.25	10	6.25
11	2010	1	0.62	1	0.62	2	1.25	2	1.25	6	3.75
12	2011	3	1.89	0	0	3	1.88	3	1.88	9	5.63
13	2012	7	4.38	1	0.62	11	6.87	3	1.88	22	13.75
14	2013	2	1.25	1	0.62	4	2.5	0	0	7	4.38
15	2014	1	0.62	0	0	0	0	0	0	1	0.62
	योग	40	25	40	25	40	25	40	25	160	100

तालिका क्रमांक–2
सर्वेक्षित सहायता समूहों की सदस्य संख्या

क्र.	सदस्य संख्या	विकास खण्ड								योग	
		अमेठी		भादर		भेदुआ		संग्रामपुर			
		सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.
1	8.9	01	0.62	0	0	0	0	0	0	1	0.62
2	10.11	16	10	13	8.12	16	10	26	16.25	71	44.37
3	12.13	20	12.5	18	11.25	16	10	11	6.87	65	40.62
4	14.15	02	1.25	8	5	06	3.75	01	0.62	17	10.62
5	16.17	01	0.62	1	0.62	02	1.25	02	1.25	6	3.74
योग		40	25	40	25	40	25	40	25	160	100

तालिका क्रमांक–3
स्वयं सहायता समूहों की जाति

क्र.	समूह सदस्यों की जाति	विकास खण्ड								योग	
		अमेठी		भादर		भेदुआ		संग्रामपुर			
		सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.
1	सामान्य	94	4.96	72	3.79	68	3.58	59	3.11	293	15.46
2	अनुसूचित जाति	101	5.32	130	6.86	129	6.80	109	5.75	469	24.74
3	अनु. जनजाति	20	1.05	11	0.58	5	0.26	02	0.10	38	2.0
4	पिछड़ा वर्ग	252	13.29	278	14.67	286	15.09	279	14.72	1095	57.78
	योग	467	24.65	491	25.9	488	25.75	449	23.07	1895	100

तालिका क्रमांक–4
स्वयं सहायता समूहों में बी.पी.एल. सदस्यों की स्थिति

क्र.		विकास खण्ड								योग	
		अमेठी		भादर		भेदुआ		संग्रामपुर			
		सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.	सं	प्र.
1	बी.पी.एल सदस्य हैं	261	13.77	366	19.31	151	7.96	159	8.39	937	49.45
2	बी.पी.एल. सदस्य नहीं है	206	10.87	125	6.59	337	17.78	290	15.30	958	50.55
	योग									1895	100

****

विशिष्ट बालकों के व्यक्तित्व का अध्ययन

उषा कटियार *

प्रस्तावना – बच्चे किसी भी राष्ट्र के भविष्य के निर्माता और आधार स्तम्भ होते है किसी भी राष्ट्र का भविष्य बच्चों की शिक्षा–दीक्षा एवं उनके व्यक्तित्व विकास पर निर्भर करता है क्योंकि बालक भावी राष्ट्र के निर्माता होते है। बालक ही किसी देश के विकास बिन्दु होते हैं। इसीलिए यदि बालकों के व्यक्तित्व विकास पर ध्यान केन्द्रित नहीं किया गया तो इसका परिणाम बड़ा ही भयंकर दु:खद सिद्ध हो सकता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह अपने चारों ओर के वातावरण को स्वयं सुव्यवस्थित करता है इस सुव्यवस्थापन कार्य में उनके व्यवहारों का अध्ययन कर व्यक्तित्व को समझा जा सकता है। व्यक्तित्व कोई विशिष्ट गुण या लक्षण नहीं है, जो किसी एक या कुछ ही मनुष्यों में पाया जाता है यह मनुष्य के व्यवहार का दर्पण होता है। यह उसके गुण अवगुण, अनुभव, चिन्तन, प्रक्रिया आदि का संगठित रूप है। प्रत्येक मनुष्य का अपना एक विशिष्ट व्यक्तित्व होता है। व्यक्ति का व्यक्तित्व व्यवहारों के वैभिन्य के अनुसार एक दूसरे से भिन्न समझा जाता है। जन्मत: प्रत्येक शिशु अपने साथ कुछ जन्मजात प्रवृत्तियाँ लेकर पैदा होता है। विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों से आशय जिस प्रकार से पौधों के विकास हेतु बीज की अनुवांशिक क्षमता के साथ ही साथ उचित मात्रा में जल, वायु, प्रकाश एवं भूमि की उर्वरा शक्ति की आवश्यकता होती है तथा इन तत्वों में किसी भी तत्व की अनुपस्थिति या कमी की दिशा में पौधों का विकास सामान्य ढंग से नहीं हो पाता है, उसी प्रकार से बच्चे के स्वस्थ, सन्तुलित एवं समुचित विकास के लिए उसमें अन्तनिर्हित योग्यताओं के साथ ही साथ उचित वातावरणीय स्थितियों दशाओं की आवश्यकता होती है। इनमें से किसी तत्व की कमी या अनुपस्थिति की दशा में बालक का सन्तुलित विकास नहीं हो पाता है और इस अवस्था में बालक का विकास सामान्य बालकों से भिन्न हो जाता है।

विशिष्ट बालक उन बालकों को कहा जाता है, जो अपनी योग्यताओं, क्षमताओं, व्यवहार तथा व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताओं की दृष्टि से अपनी आयु के अन्य औसत अथवा सामान्य बालकों से बहुत अधिक भिन्न होते है।

1. **किर्क (1962) के शब्दों में –** 'एक विशिष्ट बालक वह है जो कि शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विशेषताओं में से किसी सामान्य बालक से उस सीमा तक विचलित होता है, जब वह अपनी क्षमताओं के अधिकतम विकास हेतु सहायता, निर्देशन, विद्यालयों कार्यक्रमों में परिमार्जन तथा विशिष्ट सेवाओं की आवश्यकता रखता है।'

2. **क्रो एवं क्रो के शब्दों में –** 'विशिष्ट प्रकार या विशिष्ट शब्द किसी एक ऐसे लक्षण या उस लक्षण को रखने वाले व्यक्ति पर लागू किया जाता है जबकि लक्षण को सामान्य रूप से रखने से प्रत्यय की सीमा इतनी अधिक होती है कि उसके कारण व्यक्ति अपने साथियों का विशिष्ट ध्यान प्राप्त करता है और इससे उसकी व्यवहार की अनुक्रियाएँ और क्रियाएँ प्रभावित होती हैं।' विशेष आवश्यकता वाले बच्चे मुख्य रूप से छ: प्रकार के होते हैं –

(i) दृष्टि बाधित
(ii) श्रवण बाधित
(iii) अस्थित बाधित
(iv) मानसिक पक्षाधाती
(v) मानसिक पिछड़े
(vi) अधिगम नि:शक्त

विशिष्ट बालकों के व्यक्तित्व के विकास में आयोगों का योगदान –

कोठारी आयोग – नि:शक्तों के लिए शिक्षा की सुविधाओं की पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् इस परिणाम पर पहुँचा – 'नि:शक्तों के लिए शिक्षा की वर्तमान सुविधाएँ अत्यन्त अपर्याप्त है। इसलिए उनके लिए शिक्षा सेवाओं के विकास की सावधानी से तैयार की गई योजना के महत्व पर जितना बल दिया जाए कम है।'

राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में असमानताओं को दूर करने एवं अब तक समानता से वंचित रहे वर्गो की विशेष आवश्यकताओं पर ध्यान देकर उनके लिए शिक्षा के समान अवसर प्रदान करने पर विशेष बल दिया गया है। गम्भीर रूप से नि:शक्त लगभग 20 लाख बच्चों की जरूरतों को पूरा करने हेतु 150 से 200 बच्चों तक प्रति स्कूल दाखिले वाले 10,000 विशेष स्कूलों की आवश्यकता होगी। इस नीति की धारा 4.9 को स्पष्ट रूप से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की आवश्यकता पर केन्द्रित है।

डॉ. मुखर्जी के अनुसार – नि:शक्तों की शिक्षा में मुख्य उद्देश्य है उनके मार्ग में आने वाली बाधाओं की उग्रता को कम करना और बच्चे को अपनी योग्यता के अनुसार सीखने की प्रेरणा देना ताकि उसे निराशा पर विजय प्राप्त करने और स्वस्थ स्वतन्त्रता एवं आत्म सम्मानपूर्वक व्यक्तित्व का विकास करने में सहायता दी जा सके।'

डॉ. श्रीमाली के शब्दों में – 'नि:शक्तता अपनी सीमाओं के कारण किसी एक क्षेत्र में हममे से अनेक व्यक्तियों के समान भले ही कार्य न कर सकें पर कुछ क्षेत्र ऐसे है जिनमें वे हमारे जैसी योग्यता से और सम्भवत् हमसे अधिक योग्यतापूर्वक कार्य कर सकते है। अत: स्वस्थ नागरिकों की शिक्षा के समान उनकी शिक्षा की भी व्यवस्था की जानी आवश्यक है। उन्होंने मानव अधिकार की माँग बताते हुए उन्होंने लिखा है – 'यह मौलिक मानवाधिकार है और जनतन्त्रीय समाज नि:शक्तों के इस अधिकार को अस्वीकार नहीं कर सकता

* शोधार्थी , विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

है।' उनके अनुसार नि:शक्त नागरिक में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के योगदान की वही क्षमता होती है जो सामान्य नागरिकों की होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Aaron, P.G., Phillips, S., & Larsen, S. (1988). Specific Reading Disability in Historically Famous Persons. Journal of Learning Disabilities, 21(9), 521-584.
2. Abeson, A., & Wintraub F. (1979). Understanding the Individualized Education Program: A Primer on Individualized Education Program. In S. Torres (Ed.), Handicapped Children (pp. 3-8). Reston, VA: The Foundation for Exceptional Children.
3. Adelman, H.S., & Taylor, L. (1983). Learning Disabilities in Perspectives. Glenview. IL: Scott, Foreman.
4. Adelman, H.S., & Taylor, L. (1986). An Introduction to Learning Disabilities. Glenview, IL: Scott, Foreman.
5. Alberto, P.A. & Troutman, A.C. (1986). Applied Behaviour Analysis for Teachers (2nd ed.) Columbus, OH" Merrill/Macmillan.
6. Amabukem, T. (1983) The Social Psychology of Creativity. New York. Springer-Verlag.
7. Aman, G.M. (1984). Hyperactivity: Nature of the Syndrome and its Natural History. Journal of Autism and Developmental Disorders, 14, 39-53.
8. Anand, M.R. (1961) The Place of Gifted in Indian society. In G.Z. Bereday and J... Lauwerys (Eds.) The Year Book of Education. London: Evans Brothers.
9. Ariel, A. (1971). Behavior Therapy for Self-Direction. Unpublished Doctoral Dissertation. University of Southern California, Los Angeles.
10. Ariel, A. (1985). Parents Perception of Learning Disabilities and the Helping Professionals-Ten Years Later. CEC 63rd Annual Convention, Anaheim, CA.
11. Apton, A.A. : Handicapped : A Challenge to the Non-handicapped, New York, Citadel Press, 1959.
12. Abraham, W. : Common Sense about Gifted Children, New York. Harper & Brothers. 1958.
13. American Association for Gifted Children : The Gifted Child, Boston, D.C. Heath & Company. 1951.
14. Anderson, M.L. : Education of the Defectives in the Public School, New York, World Book Company, 1917.
15. Avondino, J. : The Babbling Method, A System of Syllable Drills for Natural Development of Speech, Washington, Volta Bureau, 1924.
16. Abel, G.L. (Compiler) : Concerning the Education of Blind Children, AFB Publications, Educational Series, No. 12. N.Y., American Foundation for the Blind, 1959.
17. American Speech and Hearing Association : Public School Speech and Hearing Services, Journal of Speech and Hearing Disorders, Monograph Supplement 8. Danville, III., Interstate Printers and Publishers, Inc., 1961.
18. Alt, H. : Residential Treatment for the Disturbed Child, N.Y., International Universities Press, 1960.
19. Barker, H.J. : Introduction to Exceptional Children, N.Y., The Macmillan Company, 3rd ed., 1959.
20. Barbe, W.B. : Exceptional Child, The Centre For Applied Research in Education, Washington, 1963.
21. Bhatt, C.C. : Gifted Children : A Psychological, Sociological and Educational Study, United Publishers, Allahabad, 1973.
22. Blogett, H.E. : Mentally Retarded Children, Minnesota University Press of Minneapolis, 1971.
23. Boseell, D.M. and Others : Handicapped Identity, Milton, Keynes. The Open University Press, 1977.
24. Buckholdt, D.R. : Caretakers, Treating Emotionally.
25. Burt, C. : Gifted Child, Hodder and Stoughten Ltd., London, 1975.
26. Burt, C. : The Backward Child, London University Press, 1950.

****

An Analytical Study Of Customer Satisfaction Towards Mcdonald's In Indore District

Prof. Rajesh Jain *

Abstract - McDonald's, or simply McD, is an American hamburger and fast food restaurant chain. The main object of research to identify the factors that influences the decisions of consumers Preference towards McDonald's. The research is based on primary and secondary data collection methods and sample size is 350 respondents. From the study majority of people are male who visit to McDonald's ,and mostly are youngster , their qualification are post graduate income level of respondent is good they mostly visited in McDonald's in a week and from the data majority of people like to vegetarian and around 67% are go for dinner its show the majority of people who visit have to take dinner Quality and taste are the two major factor consider by the respondent in selecting McDonald's, so the McDonald's owner, should not compromise on these aspect at any cost.
Keywords - influences, respondent, compromise, consumers, youngster.

Introduction - McDonald's, or simply McD, is an American hamburger and fastfood restaurant chain. It was founded in 1940 as a barbecue restaurant operated by Richard and Maurice McDonald. In 1948, they reorganized their business as a hamburger stand, using production line principles. Today, McDonald's is the world's largest restaurant chain, serving approximately 68 million customers daily in 119 countries across approximately 36,615 outlets.

Research Objectives -

1. To identify the factors that influences the decisions of consumers Preference towards McDonald's.
2. To determine the most important factors that affect consumers' choice and satisfaction towards McDonald's.
3. To examine the consumption pattern in McDonald's
4. Choice factors based on their demographic characteristics and dinning occasion.
5. To study the opinion about the service in McDonald's.

Research Methodology - The research is based on primary and secondary data collection methods and the research type is descriptive. A structured questionnaire will be designed to gather information for primary data. A five point multi item liker t scale (1- strongly agree and 5- strongly disagree.) will be used for the study the research will be conducted in Indore. It will involve gathering of information from the customers who visit at McDonald's. Convenience sampling method will be used to get the responses from target population. Sample size of 350 (working and non working) respondents in the age group 18 to 25 year and more than 40 year above will be taken for the survey. To do the research following statistical tools will be used: percentage analysis, Rank analysis, Chi-square analysis, ANOVA-test T-test.

Hypothesis -

1. H1- HA: There is association between Items preferred in McDonald's across Gender.
2. H2- HA: There is association between Items preferred in McDonald's across Education.
3. H3- HA: There is no association between Items preferred in McDonald's across Income.
4. H4- HA: There is no association between Customer satisfactions across the Gender
5. H5- HA: There is no association between Customer satisfactions across the Education.
6. H6- HA: There is no association between Customer satisfactions across the Income.

Research Contribution - This research aims to provide a better understanding of the consumer decision-making process for McDonald's in India. Understanding McDonald's choice behavior can assist McDonald's marketers and practitioners when they develop marketing strategies and enable them to select the most salient attributes to attract and retain customers. Furthermore, a theoretical model of McDonald's selection behavior in India developed in this study will help to provide a useful framework for future research regarding consumer behavior in the McDonald's industry.

Review of Literature- Previous studies on consumer behavior in the McDonald's context have identified a number of factors that consumers consider important in their McDonald's selection. Auty (2010) identified the choice factors in the McDonald's decision process based on four occasions: a celebration, social occasion, convenience/

*Asst. Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

quick meal, and business Meal. Food type, food quality and value for money were found as the most important Choice variables for consumers when choosing a McDonald's. The Kevel's (2006) results Showed that the relative importance of the McDonald's choice factors differed considerably by McDonald's type, dining occasion, age, and occupation.

Analysis and Discussion - In the data analysis there is classification and Frequency of different demographic profile like as "Gender, Education, and Income statement. Chi-square test, T- test, ANOVAs help to understand the relation between different demographic factors, customer preference and satisfaction. from the cross tabulation of different factors I make the relation then apply the chi-square test on the basis of the test result we come to know the Association or No association among different factors.

Table 1 - (See in the last page)

Interpretation - From above Table, it is being Interpreted that the : •

- Mean value for food is served hot and fresh is 1.34 •
- Mean value for the menu has a good variety of item is 1.84 •
- Mean value for the quality of food is excellent is 1.64•
- Mean value for the food is tasty according to my taste is 1.82 •
- Mean value for the order is taken correctly and there were no discrepancies while serving the item is 11.73
- Mean value for Employees are patient when taking order is 1.52

(A) Chi-Square Test Item Preferred In McDonald's Across The Demographical Factor -

Hypothesis 1

Ho - There is no association between Gender and Item preferred in McDonald's

HA - There is association between Gender and Item preferred in McDonald's.

Table 2

Chi-Square Tests	**Value**	**df**	**Asymp. Sig. (2-sided)**
Pearson ChiSquare	15.44	2	0.0004
Likelihood Ratio	16.47	2	0.0002
Linear-by-Linear Association	15.02	1	0.0001
N of Valid Cases	89		

(Graph See in the last page)

Inference - The above HO : is Rejected (chi-square with 4 degree of freedom=15.44, p=.0004). There is no association Item preferred in McDonald's across the Gender.

Hypothesis 2

Ho - There is no association between Education and Item preferred in McDonald's

HA - There is association between Education and Item preferred in McDonald's.

Table 3 (See in the last page)

Inference - The above HO : is Rejected (chi-square with 4 degree of freedom=9.56, p=.048) There is no association Item preferred in McDonald's across the Education.

Hypothesis 3

Ho - There is association between Income and Item preferred in McDonald's

HA - There is no association between Income and Item preferred in McDonald's

Table 4

Chi-Square Tests	**Value**	**df**	**Asymp. Sig. (2-sided)**
Pearson ChiSquare	7.88	4	0.095
Likelihood Ratio	8.46	4	0.075
Linear-by-Linear Associations	2.83	1	0.092
N of Valid Cases	89		

Inference : The above HO : is accepted. (Chi Square with 4 degree of freedom=7.88, p= 0.095). There is association Item preferred in McDonald's across the Income

(B) Ranking of factor for preferring a particular restaurant -

Table 5 (See in the last page)

Inference : The Table 5 gives the distribution of the respondent according to the ranking of the factor for preference towards a particular McDonald's ….The food quality was ranked 1st ,2nd for rates, 3rd for good taste, 4th for location, 5th for cleanliness, 6th for variety in the menu, s 7th for efficiency, and 8th ranked given by the respondent for ambience .

(C) **T-Test For Analyzing The Customer Satisfaction Across The Gender -**

Hypothesis 4

Ho - There is association between Customer satisfactions across the Gender

HA - There is no association between Customer satisfactions across the Gender

Table 6 (See in the last page)

(D) Anova Test For Analyzing The Customer Satisfaction Across The (Education, Income)

Hypothesis 5

Ho - There is association between Customer Satisfactions across the Education

HA - There is no association between Customer Satisfactions across the Education

Table 7 (See in the last page)

Inference - The above HO : is Accepted (p=0.85 p>.05, f=.065) There is association Customer Satisfaction across the Education.

Hypothesis 6

Ho - There is association between Customer Satisfactions across the Income

HA - There is no association between Customer Satisfaction across the Income

Table 8 (See in the last page)

Inference - The above HO : is Accepted (p=0.88 p>.05, f=.608) There is association Customer Satisfaction across the Income

Results and Findings -

- Out of all the respondent 73% are male and 27% are

female •

- Out of all the respondent 31.5% are comes under up to Graduate, 59.6% are post Graduate and 9% are doctorate
- Out of all the respondent 68.53% comes under less than 30000 Rs., 19.1% are 30000-40000 and 12.35 % comes under over 40000 Rs.•
- Out of all the respondent 46.1% are comes under once a week, 22.5% are more than once a week, 16.9% once a month, and 14.6 % comes in very rare • •
- There is no association item preferred in McDonald's across the gender • •
- There is no association item preferred in McDonald's across the education •
- There is association item preferred in McDonald's across the income •

Conclusion - It is evident from the study that majority of the consumer have visited different McDonald's at different times. Majority of respondent came to know about the McDonald's through their friends .and McDonald's advertise in local media news paper, magazines to attract more customer. From the study majority of people are male who visit to McDonald's ,and mostly are youngster , their qualification are post graduate income level of respondent is good they mostly visited in McDonald's in a week and from the data majority of people like to vegetarian and around 67% are go for dinner its show the majority of people who visit have to take dinner Quality and taste are the two major factor consider by the respondent in selecting McDonald's, so the McDonald's owner, should not compromise on these aspect at any cost.

References :-

1. Bailey,R., & Earle, M (2011). Home cooking to takeaways: Changes in food consumption in India during 1880-1990. Palmerston North, India : Massey University.
2. https://www.b2binternational.com/publications/customer-satisfaction-survey
3. www.**mcdonalds**india.com/
4. https://www.getfeedback.com/examples/**customer-satisfaction.**
5. www.indiacom.com/yellow-pages/**restaurants**/**indore**
6. https://www.zomato.com › Indore.

Table 1 - Mean value among different measures

Statement	SA	A	N	D	SD	M	St. D
Food is served hot and fresh	61	25	3			1.34	0.55
The menu has a good variety of item	26	55	5	2	1	1.84	0.72
The quality of food is excellent	42	39	6	2		1.64	0.71
The food is testy and according to my test	28	53	6		2	1.82	0.75
The order is taken correctly and there were no discrepancies while serving the item	38	40	8	3		1.73	0.77
Employees are patient when taking order	54	27	4	4		1.52	0.78

SA(1)= Strongly agree, A (2) =Agree, N (3) = Neutral, D(4) Disagree, SD (5) Strongly disagree, St. D = Standard deviation

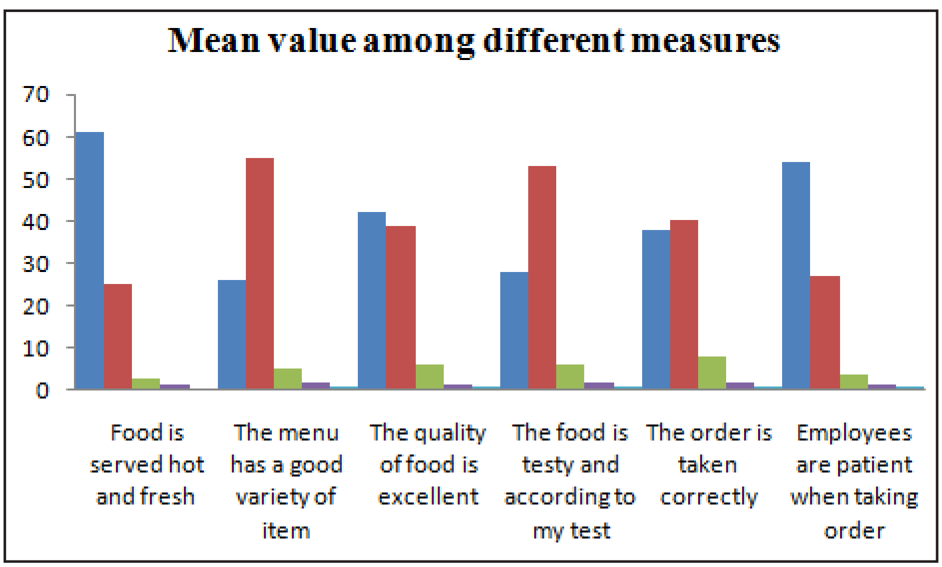

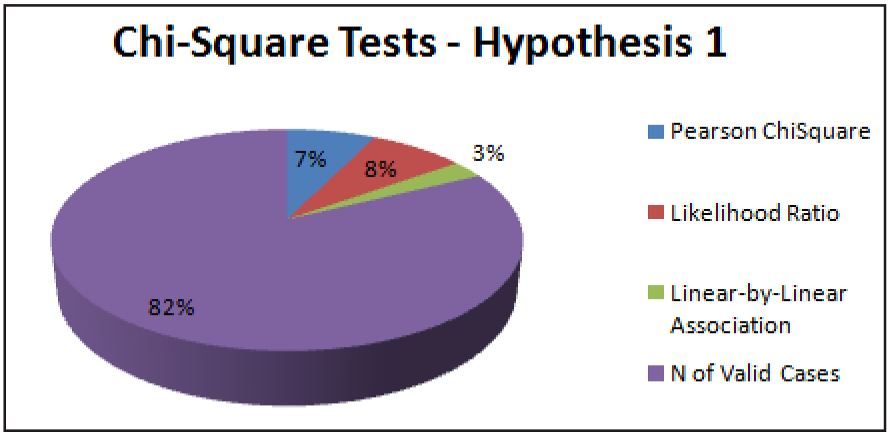

Table 3

Chi-Square Tests	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson ChiSquare	9.5653311	4	0.048
Likelihood Ratio	9.90164516.47	4	0.042
Linear-by-Linear Association	5.1485956	1	0.023
N of Valid Cases	89		

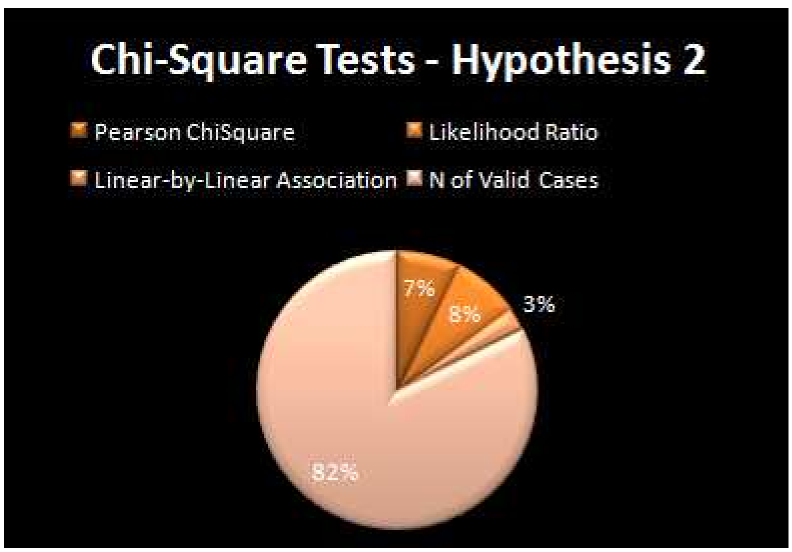

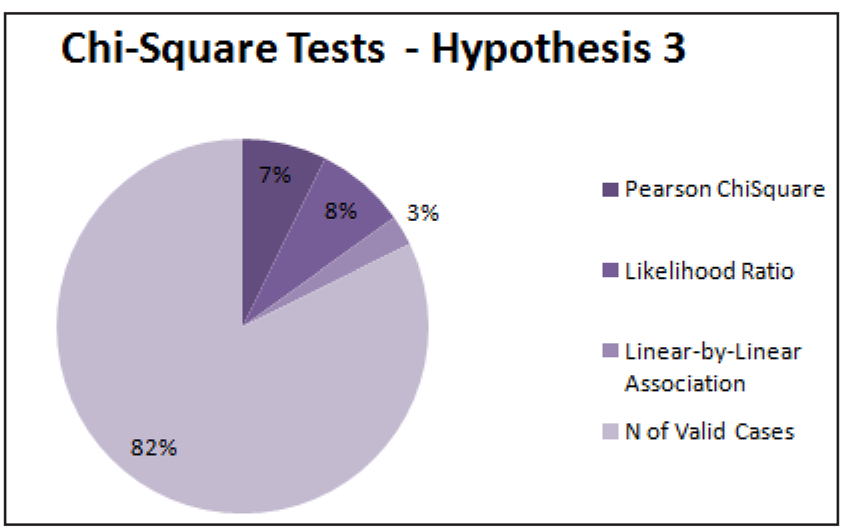

(B) Ranking of factor for preferring a particular restaurant

Table 5

Serial No	**1**	**2**	**3**	**4**	**5**	**6**	**7**	**8**	**WAS**	**Rank**
Factor	Count	Count	Count	Count	Count	Count	Count	Count		
Quality	46	10	8	6	11	2	1	5	6.44	1
Rates	6	26	16	21	9	3	5	3	5.49	2
Variety in the menu	2	6	16	4	9	24	12	16	3.61	6
Efficiency		1	7	8	7	14	40	12	2.82	7
Cleanliness	3	15	21	20	12	7	8	3	4.93	5
Location	13	13	10	19	18	8	6	2	5.16	4
Ambience		4	2	2	8	19	8	46	2.77	8
Good taste	19	15	8	10	14	12	9	2	5.25	3

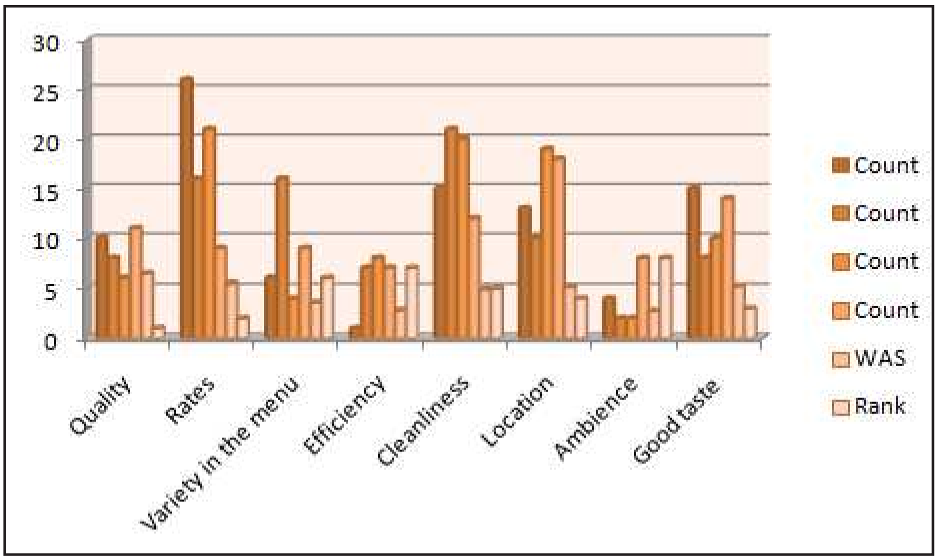

Table 6

Levine's Test for Equality of Variance s			**t-test for Equality of Means**		
	F	Sig.	t	df	Sig. (2-tailed)
Equal variances assumed	5.020.02	1.48	87	0.14	

Inference : The above HO : is Accepted, (p=.14> .05, t= 1.48).There is association Customer satisfaction across the Gender.

Table 7

	Sum of Squares	**df**	**Mean Square**	**F**	**Sig.**
Between Groups	4.5	18	0.25	0.65	0.85
Within Groups	27	70	0.38		
Total	31.5	88			

Table 8

	Sum of Squares	**df**	**Mean Square**	**F**	**Sig.**
Between Groups	5.94	18	0.33	0.608	0.88
Within Groups	37.97	70	0.54		
Total	43.91	88			

****

Surgical Strike On Black Money - How Much It Is Success? (Special reference to impact of note band on Indian economy and Common people)

Prof. Rajesh Jain * Dr. Anup Vyas ** Dr. D.N. Purohit * Dr. Ashish Pathak ****

Abstract - Prime Minister Modi's call for a 'celebration of integrity' through a sudden demonetization of Rs. 500 and Rs.1000 currency notes, much like his earlier schemes like the Jan Dhan Yojana, is yet another 'jumla'. The role of opaque instruments like Participatory Notes, used by FIIs operating in the Indian stock market, are more relevant for financing terrorism than Indian currency notes of high denomination. The real problems ailing the Indian economy lie elsewhere. The amount of stressed loans in the Indian banking system has crossed a whopping Rs. 9 lakh crore, a bulk of which is owed by domestic corporate to the public sector banks, causing a huge debt overhang. Despite doubtful claims of fast economic growth, revenue mobilization has not shown any signs of improvement and consequently, redistributive policies have been rolled back.
Key words - demonetization, financing terrorism, debt overhang, mobilization, redistributive.

Introduction - Indian Prime Minister Narendra Modi said Rs 500 and Rs 1,000 notes will cease to be legal tender at midnight in a late evening address to the nation on Tuesday, 8 Nov 2016, unleashing his government's latest attempt to root out black money, corruption and terror financing. The surprise move left fellow citizens flabbergasted as they sought to digest what this would mean to their daily lives but Modi exhorted them to look beyond any passing misery. "Let us ignore the temporary hardship," he urged. "Let us join this festival of integrity and credibility." Modi also said that new Rs 500 and Rs 2,000 notes will be issued by the Reserve Bank of India (RBI).

Prior steps taken against Black Money - Though PM pulled off a major coup in recent days to check black money, he had laid its foundation over two years ago, soon after coming to power in May 2014. Though today's unprecedented financial measure may have come as a rude shock to many, Modi also gave enough opportunities and threw enough hints in this regard. However, he waited for the festival season of Dussehra and Diwali to get over.

1. SC - monitored SIT on Black Money - The first such initiative came when the Narendra Modi Government, in its very first Cabinet meeting, constituted a Supreme Court-Monitored Special Investigation Team (SIT) on Black Money.

2. Jan Dhan Yojana - This was followed by the launch of the Pradhan Mantri Jan Dhan Yojaya (PMJDY) on August 28, 2014. PM took personal interest in the scheme. He made it a mission to ensure that the scheme was successful. The scheme will be of immense help in the present circumstances. Till date, 25.45 crore accounts have been opened so far and Rs 45,302.48 crore has been deposited in these accounts. A total of 20.28 crore accounts have been opened in the public sector banks - 11.39 crore accounts in the rural areas while 8.90 accounts in the urban areas. A total of 4.30 crore accounts have been opened in the Regional Rural Banks - 3.70 crore in the rural areas and 0.60 crore in the urban areas. As far as the private banks are concerned, a total of 0.86 crore banks a/c have been opened - 0.53 crore in the rural areas and 0.34 crore accounts in the urban areas. Hence, a whopping 15.62 crore accounts have been opened in the rural areas and 9.83 crore accounts have been opened in the urban areas. **(Graph See in the last page)**

3. Renegotiation of Tax Treaties and Automatic Information Exchange Agreements with Tax Havens - The government renegotiated the Double Tax Avoidance Agreement (DTAA) with Mauritius to impose Capital Gains Tax if such Capital Asset is situated in India. The Narendra Modi Government also negotiated an Automatic Information Exchange Agreement with Switzerland. Agreements are also being negotiated with other tax havens. From 2017, Organisation of Economic Cooperation and Development (OECD) countries have agreed to share information on foreign account holders with their home countries.

4. The Black Money (Undisclosed Foreign Income and Assets) and Imposition of Tax Act, 2015 for Foreign Black Money - The scheme was launched to bring back black money stashed in foreign countries and tax havens.

*Asst. Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA
** Professor & Head (Commerce) Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
*** Professor (Commerce) Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
**** Professor (Commerce) Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

The scheme ended on 30 September, 2015. The Act also had various stringent provisions for penalty and prosecution of foreign black money holders unearthed during future investigation by the tax department.

5. Income Disclosure Scheme, 2016 - The Income Declaration Scheme (IDS) which opened on June 1 gave a chance to black money holders to come clean by declaring the assets by September 30 and paying tax and penalty of 45 per cent on it. The Narendra Modi Government wanted to capture the entire parallel economy flowing in the system of Rs 7 lakh crore in India. The government was upset with the output of IDS scheme. Though the Income Tax department had identified 90 lakh high value transactions without PAN, the final disclosure of black money was to the tune of Rs 65,250 crore.

6. Penalty on Real Estate Transactions undertaken in Cash exceeding Rs 20,000 - The Narendra Modi Government imposed a penalty of 20 per cent on all cash transactions exceeding Rs 20,000 to purchase or sell a property (real estate). This was aimed at curbing the role of black money in real estate transactions.

7. Tax Collection at Source on Cash Sales exceeding Rs 2 lakh - Another important step to check high value cash transactions and create an audit trail was to impose Tax Collection at Source at a nominal rate of 1 per cent on cash purchases exceeding Rs 2 lakh.

8. Benami Transaction (Prohibition) Amendment Bill- The Parliament passed the Benami Transactions (Prohibition) Amendment Act, 2016 (BTP Amendment Act) in August. It came into force from November 1, 2016. The new law seeks to give more teeth to the authorities to curb benami transactions. The notification issued by the Income Tax department, stated that after coming into effect, the BTP Amendment Act, the existing Benami Transactions (Prohibition) Act, 1988, shall be renamed as Prohibition of Benami Property Transactions Act, 1988 (PBPT Act).

Impact of Note Band -

- In First ten Days near panic in local markets. Number of transactions drop by more than 50%. on November 9th, almost all businesses have reported more than 50% drop in transactions. I chatted with a Uber driver and a small coffee shop owner. Both reported the same. Uber driver was willing to give me 10% discount for cash payment in Rs 100 notes vs PayTM. Common people in cities will rush towards digital payments like PayTM.
- As for immediate impact, Deep Deflation. The amount of money in circulation will drop dramatically while supply of goods will remain stable - hence prices of goods will drop. Gold prices, stock prices, commodity prices will drop. People will congratulate government for making this bold move. BJP will win elections in UP and Punjab.
- Duration of 10 to 50 days People who have legally earned cash, will start depositing it in bank. This will help improve bank's Cash Reserve Ratios and increase bank deposits. This will lead to more lending. Increase lending activity will make it easier for legal businesses to raise capital and economy will grow.
- People who have earned their money illegally, such as bribes, smuggling, Narcotics etc. will have a big problem on their hands. These people will be afraid to deposit it in a bank. Some of them will find ways to deposit this money into a bank, and will declare it as income and pay taxes on it.**(See in the last page)**
- Deflation will ease out, and inflation will return. Inflation will happen slowly because lending activities will not happen overnight and will take time. Lending will broaden money supply, creating demand for raw materials and capital goods. This leads to a steady growth of Indian economy.
- Real Estate prices will crash. Builders & developers who were eager to sell for cash can no longer sell. They will be forced to lower the price by 10-20%. Already by 1 PM on November 9th, Share prices of DLF are down 21%. Real estate developers will have to wait for demand from white economy to pick up. Once the economy picks up and with easy availability of bank loans, real estate prices will come back to pre Nov. 8th levels, and by end of 2017, the robust demand will ensure real estate prices to go up. Real estate developers will be forced to go with legal transactions and play in white economy. **(Graph See in the last page)**

Findings and Suggestions -

- The temporary proscription of currency notes of higher denomination is supposedly aimed at rendering the presently held stocks of black money and counterfeit currency worthless. What is noteworthy is that it neither makes any difference to the generation of black money through myriad channels, nor does it touch that part of the stock of black money held in other forms of assets like benami properties in land and real estate, gold, foreign currency, offshore bank accounts, etc.
- Nobody knows how much of illicit wealth in the country is stashed in wads of Rs. 500 and Rs.1000 currency notes. One can only guess that it would be the petty brokers, wheeler-dealers and thieves who store their ill-gotten wealth in that fashion, besides mainstream political parties and politicians like the ones seen in the Tehelka or Narada tapes. The big fish have long devised much more sophisticated ways of stashing or laundering their money. Hence the current demonetization is unlikely to touch anything more than a miniscule fraction of the present stock of black money in India.
- First, a disruptive shock has already been delivered to the cash-transactions based economy, which has particularly affected the lives of the rural and urban poor, who eke out a living in the vast informal economy, besides inconveniencing a significant section of the middle classes who are yet to get included in the world of cashless transactions. The impact of this is certainly short-term and transitory, but whether this shock was

necessary at all is questionable, given the elusive benefits.

- Second, the move may just end up increasing the proportion of other assets like benami property, gold, dollars etc. in which black money is held and diversify the market for money laundering instruments, making it even more difficult to detect. Third, given the fact that new Rs. 500 and Rs. 2000 currency notes will now be introduced to replace the proscribed currencies, the RBI will have to incur significant costs of printing a very large volume of currency notes. Moreover, if high denomination currencies are really the problem, why replace the Rs. 1000 denomination with Rs. 2000, which will make it even easier to build fresh stocks of black money?

Conclusion - Prime Minister Modi's call for a 'celebration of integrity' through a sudden demonetization of Rs. 500 and Rs.1000 currency notes, much like his earlier schemes like the Jan Dhan Yojana, is yet another 'jumla'. There is no guarantee that the high denomination currency notes won't be faked again, given that the agency and technology of counterfeit Indian currency notes remain unearthed.The amount of stressed loans in the Indian banking system has crossed a whopping Rs. 9 lakh crore, a bulk of which is owed by domestic corporates to the public sector banks, causing a huge debt overhang. Despite doubtful claims of fast economic growth, revenue mobilization has not shown any signs of improvement and consequently, redistributive policies have been rolled back.

References :-

1. Singh Ramesh 2015. Indian Economy. Fourth edition, New Deshna Publication.
2. www.ibef.org › Industry › Banking
3. https://www.economy.com/dismal/countries/IIND
4. www.timesofindia.indiatimes.com/pm-modis-address-to-the-nation/
5. https://annualreport.rbi.org.in/

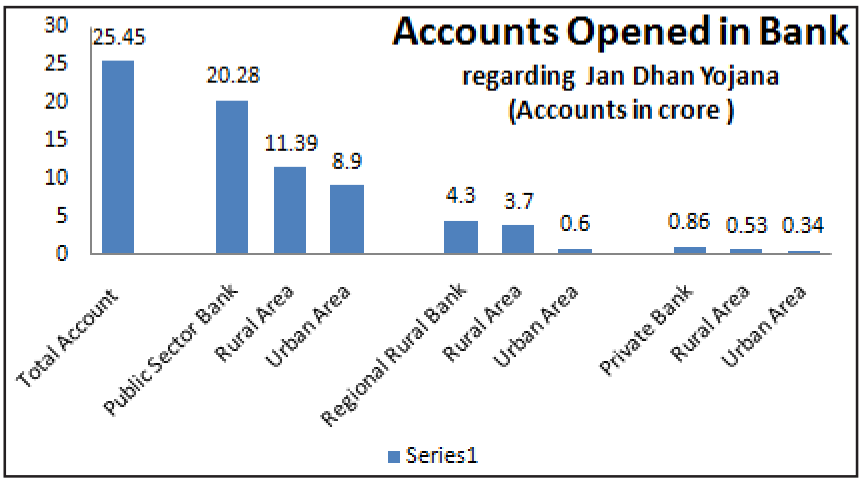

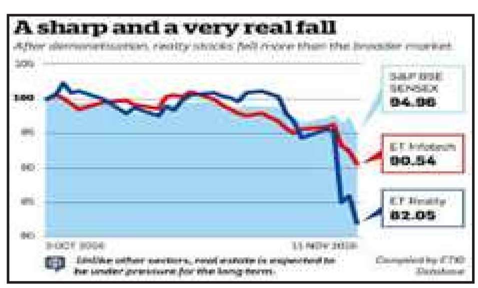

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Self Managed Teams - The Future Of Bussiness

Dr. Praveen Ojha *

Introduction - Worldwide, companies big and small face serious challenges from a dynamic and complex global economy—challenges that render traditional work methods ineffective. The use of teams has become the competitive weapon of choice for many business and nonbusiness organizations, with many of these companies opting for a new form of performing work called the self-managed team. In self-managed teams, decisionmaking authority is left up to the individual members who make up the team. Self-managed teams go by many different names: self-directed, self-leading, self- maintaining, and self-regulating teams, to name a few. The concept itself is not new. It has its roots in sociotechnical systems theory and design, developed by Eric Trist and his colleagues in England in the 1960s. Self-managed work teams are work groups that can do challenging work under reduced supervision. The general idea is that the group regulates much of its own members' behaviour. Critical to the success of self-managed teams are the nature of the task, the composition of the group, and various support mechanisms. Normally, a manager acts as the team leader and is responsible for defining the goals, methods, and functioning of the team. However, inter-dependencies and conflicts between different parts of an organisation may not be best addressed by hierarchical models of control. Self-managed teams use clear boundaries to create the freedom and responsibility to accomplish tasks in an efficient manner.

In 1990, Development Dimensions International, the Association for Quality and Participation, and Industry Week conducted a study on the current practice surrounding self-directed teams. The study defined a self-directed team as "a group of employees who have day-to-day responsibility for managing themselves and thework they do. Members of self-directed teams typically handle job assignments, plan and schedule work, make production-related decisions, and act on problems. Members of self-directed teams work with a minimum of direct supervision. As such, the teams are not quality circles or cross-functional task groups. These teams are characterized by:

- Face-to-face interaction in natural work groups
- Responsibility for producing a definable product
- Responsibility for a set of interdependent tasks
- Control over managing and executing tasks.

Tasks for self-managed teams should be complex and challenging and require high interdependence among team members for task accomplishment. Group members adopt roles that will make the group effective, not ones that are simply related to a narrow speciality. A fast answer to how organizations should design effective self-managed teams is that they should be stable, small and smart. The composition of self-managed teams needs to consider a number of factors.

- Stability. Self-managed teams require considerable interaction and high cohesiveness among their members. To achieve this, group membership must be fairly stable.
- Size. The team should be as small as is feasible. The goal is to keep coordination problems and social loafing to a minimum.
- Expertise. Team members should have a high level of expertise about the task at hand. The group as a whole should be very knowledgeable about the task. All members should possess some degree of social skills.
- Diversity. The team should have members who are similar enough to work well together with enough diversity to bring a variety of perspectives and skills to the task.

Self-managing teams are distinct from self-directed teams. While the latter define their own goals, the scope of a self-managing team's authority is limited by goals that are established by others.

This diagram illustrates the idea that virtual, management, and work teams can be empowered by being allowed to self-manage and monitor the quality of their own output.**(Diagram See in the last page)**

Stages of self managed teams - Zawacki and Norman (1994) suggest that successful self-managed teams evolve through five stages. These are -

Stage 1: The typical hierarchical structure where the leader provides one-on-one supervision;

Stage 2: The leader evolves into a group manager whose role is making the transition into team coordinator/coach

Stage 3: The group manager becomes the team coordinator and provides a structure for self-managed team members to receive the necessary training to take on more leadership tasks

*Professor & H.O.D (Commerce) Dr. Bhagwat Sahai Govt. College, Gwalior (M.P.) INDIA

Stage 4: The team assumes most of the duties previously reserved for the group manager, who now becomes a boundary interface

Stage 5: The group manager (i.e., the team coordinator) is a resource for the team.

Difference between self managed teams and traditional teams -

Characteristics	Self Managed	Traditional Teams
Leadership	With in the team	Outside the team
Team leader role	Interchangeable	Fixed
Accountability	Team	Individual
Work Effort	Cohesive	Divided
Task Design	Flexible	Fixed
Skills	Multiskilled	Specialized

Team member characteristics impact self-managed team effectiveness

An SMT is no better than the quality of the members that make up the team. Certain qualities associated with members of effective SMTs have been identified through research. They are

- a strong belief in personal accountability
- an internal locus of control coupled with emotional stability
- openness to new ideas/viewpoints
- effective communication
- good problem-solving skills
- ability to engender trust
- good conflict resolution skills.

The nature of SMTs is such that they are empowered to plan and schedule their own work, track performance, and do self-evaluations. This presumes that individual team members possess all these qualities in order for the above-mentioned activities to be successfully performed.

Self managed teams: Team Performance Models - Through a two-year Teamwork in Manufacturing project, the London-based Tavistock Institute developed a guide to teamwork in manufacturing called *"Change Everything at Once"*. This work was supported by the UK's Department of Trade and Industry. It defined a model to help describe the future state. It achieved this by classifying levels of self-regulation in self managed teams, identifying three basic performance dimensions and key areas of competence within these -

1. **Managing core shorts-term responsibilities within a self managed team's area of responsibility:**
- Basic job competence.
- Group and individual motivation.
- Personnel administration.
- Special competences.
2. **Managing wider short-term responsibilities jointly with others:**
- Co-ordination with like groups.
- Liaison with unlike groups.
- Setting targets for performance.
3. **Managing operational process and people development -**
- Develop organisational process.
- Develop the work organisation.
- Develop individual people.

The model develops to identify levels of competence and performance using a scale ranging from skeletal to advanced. Three stages of the model move self managed teams from being focused and competent on internal operations through to managing ever more complex interactions with the organisational environment.

Supporting Self-Managed Teams.

A number of support factors can assist self-managed teams in becoming and staying effective.

- Training. To insure the effectiveness of self-managed teams, organizations need to provide extensive training in areas such as technical skills, social skills, language skills, and business training.
- Rewards. The general rule here is to try to tie rewards to team accomplishment rather than to individual accomplishment while still providing team members with some individual performance feedback.
- Management. The most effective managers in a self-management environment encourage groups to observe, evaluate, and reinforce their own task behaviour.

Advantages and disadvantages of self managed teams

Self-managed teams enjoy several benefits and advantages. These advantages may continue for a long time. In all organization, of self managed teams work well. In the following point's advantages are mentioned:

Advantages of Self Managed Teams -

1. **Flexibility -** Self managed teams give more and improved flexibility of staff.
2. **Efficient operations -** More efficient operations take place through the reduced number of job classification.
3. **Lower absenteeism -** Organizations having self-managed teams experience lower absenteeism and turnover rates.
4. **High commitment -** Self-managed teams gain high level of commitment.
5. **Minimum supervision -** With minimum supervision organization can get better result and output.
6. **More discipline -** Members of self-managed teams ensure disciplined life during operations.
7. **Improve productivity -** Self-managed teams give high productivity by proper functioning.
8. **Less wastage -** As self managed teams work according to set methods. So they can ensure minimum wastage.

Disadvantages of Self Managed Teams - In contract, organizations having self managed teams face some disadvantage also. These disadvantages are discussed below -

1. **Extended time-** Sometimes self-managed teams require extended time to complement plans and policies.
2. **High investment -** High investment is required for skill

development.

3. **Inefficiency** - Due to job rotation organizations suffer from early inefficiencies.
4. **Employee inability -** Some employees become unable to adapt to a team structure.
5. **Demand for equal treatment -** Self-managed team members sometimes demand for equal treatment for their success.
6. **Recklessness -** Due to better performance, self managed teams become reckless and show insubordination.

Designing self managing teams : current state analysis - Current state analysis should involve an honest appraisal of an organisation's readiness for changing to self managed work teams. Ray and Bronstein identify several positive and negative indicators in *Teaming Up: Making the Transition to a Self-Directed Team-Based Organization*:

Positive indicators-

- A recent history of positive and improving labour relations.
- Management flexibility and willingness to implement empowerment processes.
- Management ability to stick with a process.
- A strong management team at local levels.
- An already functioning pay for performance or skill-based compensation system.
- A management group which has consistently involved the workforce in strategic planning, workplace training or multi-level problem solving.

Negative Indicators -

- A continuing history of management-labour strife.
- Recent downsizing.
- Top management inability to stay focused on a change process to see the results.
- Local top managers known by the workforce to be unsupportive of employee involvement.
- Strong objections by corporate headquarters to allocating full estimated resources.
- Weak or non-supportive human resource or labour relations departments.

Self-managed teams may be interdependent or independent. Of course, merely calling a group of people a self-managed team does not make them either a team or self-managed. As a self-managed team develops successfully, more and more areas of responsibility can be delegated, and the team members can come to rely on each other in a meaningful way. In self-managed teams it is vital that the manager sets expectations for his/her employees. Expectations allow individuals to understand the manager's evaluation process in addition to holding employees accountable to certain tasks. If it becomes routine that an employee's tasks are unfulfilled, the manager should replace that individual immediately.

Guidelines for improving selfmanaged team effectiveness - Senior management has the principal responsibility to create the right environment in which self-managed teams can grow and thrive. This involves undertaking activities to ensure that the whole organization has a changed culture, structure, and climate to support SMTs. This requires providing sufficient responses to questions such as whether the SMT has sufficient autonomy to perform its task and has access to information; whether conditions have been created in which authority can shift between members to appropriately match the demands of their task; and whether SMT participants are motivated, stimulated, and supported in a fashion that breaks down walls and creates unity of purpose and action. Management must have a well thought-out vision of the way in which SMTs will fit into the scheme of the entire organization; allow time after training for the team members to bond with one another and form team skills; provide adequate training, so team member skills and experiences match task requirements; provide objective goals, incentives, and appropriate infrastructure; ensure that the organization has the necessary resources to commit to this kind of change (not only in time but also in money and people); and create a sense of empowerment, so SMTs take ownership of what they are doing and how they are going to do it.

Challenges of implementing effective self-managed teams - Many of the challenges of implementing SMTs stem from the difficulties of transitioning from a traditional command-and-control work environment to self-managed teams. Team-building experts contend that managers who have become accustomed to traditional, autocratic management and jaded at management fads that come and go may resist or undermine a team approach. Even among members of the nonmanagerial ranks, the transition to SMTs has as much potential for frustrations and problems as it does for managers. This is usually due to unfamiliarity with the new structure and new routines, and adjusting to team responsibilities. Team members must learn new behaviors, like putting aside differences in order to make decisions that benefit the team. The need to adapt to a new working environment in which the definition of teamwork requires a personal, cultural, and behavioral adjustment may be too much for some members and thus lead to personality and behavior conflicts. Thus, the greatest challenge may lie in setting and enforcing new behavioral expectations, made necessary by the absence of a traditional leader and the presence of new employee rights and responsibilities.

References :-

1. Managing Teams – Robert Heller
2. Organizational behaviour – Stephen P. Robbins
3. Organizational behaviour – PK Ghosh
4. Organizational behaviour – K. Aswathappa
5. Succeeding as a Self-Managed Team: A Practical Guide to Operating as a Self-Managed Work Team- Richard Y. Chang, Mark J. Curtin
6. www.educationportal.com
7. www.open.edu/...management/management/...management/...teams.com

8. www.education-portal.com/.../self-directed-teams-definition
9. www2.uhv.edu/chapao/4305/PPT
10. www.smallbusiness.chron.com
11. www.russellconsultinginc.com/.../the-disciplines-of-self-managed-work-teams

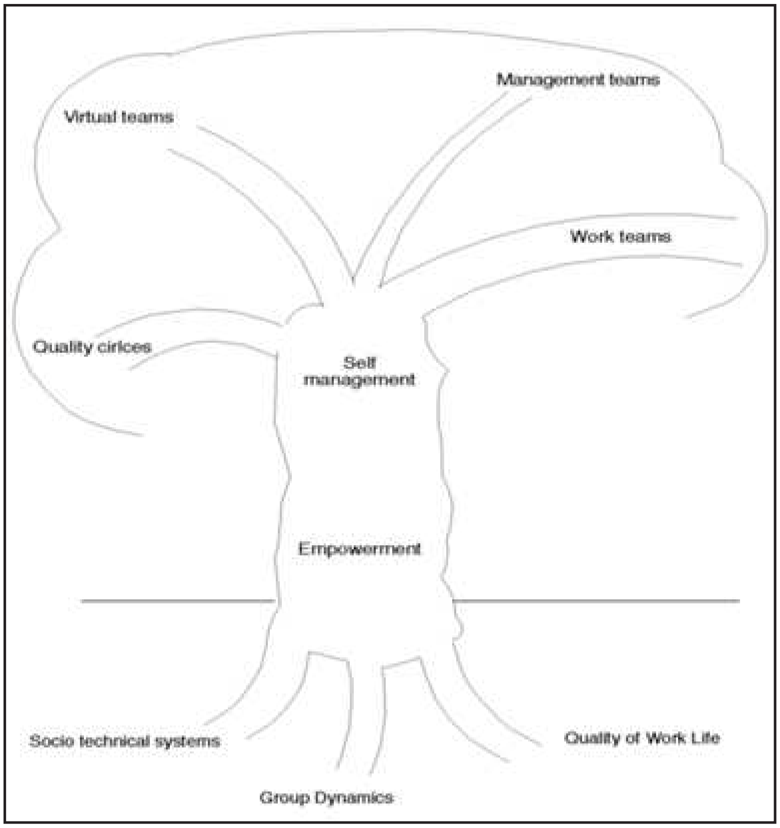

****

Significance Of Sixth Brics Summit 2014

Dr. Anu Mehta *

Introduction - The sixth BRICS summit in Fortaleza, Brazil, had discussed the increasing role of emerging countries in international affairs and their ability to share strategic interests and approaches while reaching for their development goals. The most important point was the formation of the new BRICS Development Bank, the headquarters of the same is situated in Shanghai China. The bank will contribute to the efforts to eliminate infrastructure gaps and meet sustainable development needs of the BRICS countries and other emerging markets. Creation of the Contingent Reserve Arrangement, or currency reserve pool of $100 billion, will help in protecting the BRICS countries against short-term liquidity pressures and international financial shocks.

The leaders of the Federative Republic of Brazil, the Russian Federation, the Republic of India, the People's Republic of China and the Republic of South Africa, met in Fortaleza, Brazil on 15 July 2014 at the Sixth BRICS Summit, to inaugurate the second cycle of BRICS Summits, the theme chosen for the discussion was "Inclusive Growth: Sustainable Solutions", to keep with the inclusive macro-economic and social policies carried out by the governments and the imperative to address challenges to humankind posed by the need to simultaneously achieve growth, protection and preservation. BRICS have been guided by the overarching objectives of peace, security, development and cooperation.

Prime Minister Narendra Modi attended his first multilateral meet in the form of sixth BRICS Summit held in Brazil. Narendra Modi in his two-day meet, met the International leaders President of Brazil DilmaRousseff, President of Russia Vladimir Putin, President of China Xi Jinpig and President of South Africa Jacob Zuma. In addition to the five BRICS leaders, Cristina Fernández de Kirchner, President of Argentina, was invited to join the proceedings.

The important points discussed in the summit are as follows -

- The BRICS openness is towards increasing engagement with other countries, particularly developing countries and emerging market economies, as well as with international and regional organizations, with a view to foster cooperation with all nations. To that effect, member countries held a joint session with the leaders of the South American nations, under the theme of the Sixth BRICS Summit, with a view to furthering cooperation between BRICS and South America. BRICS cooperation is expanding to encompass new areas, shared views and commitment to international law and to multilateralism, with the United Nations at its center and foundation, are widely recognized and constitute a major contribution to global peace, economic stability, social inclusion, equality, sustainable development and mutually beneficial cooperation with all countries.The Sixth Summit takes place at a crucial juncture, as the international community assesses to address the challenges of strong economic recovery from the global financial crises and sustainable development, including climate change, while also formulating the post-2015 Development Agenda. At the same time, BRICS are confronted with persistent political instability and conflict in various global hotspots and non-conventional emerging threats.
- BRICS and other Emerging market economies and developing countries (EMDCs) are facing financing constraints to address infrastructure gaps and sustainable development needs. To cope up with this BRICS have signed an agreement to establish a New Development Bank (NDB), with the purpose of mobilizing resources for infrastructure and sustainable development projects in BRICS and other emerging and developing economies. The Bank had an initial authorized capital of US$ 100 billion. The initial subscribed capital was US$ 50 billion, equally shared among founding members. The first chair of the Board of Governors was from Russia. The first chair of the Board of Directors was from Brazil. The first President of the Bank was from India. The headquarters of the Bank is located in Shanghai.
- BRICS signed a Treaty for the establishment of the BRICS Contingent Reserve Arrangement (CRA) with an initial size of US$ 100 billion. This arrangement have brought a positive precautionary effect, helping countries forestall short-term liquidity pressures, promote further BRICS cooperation, strengthen the global financial safety net and complement existing international arrangements.
- BRICS also signed a Memorandum of Understanding on Cooperation among BRICS Export Credit and Guarantees Agencies that will improve the support environment for increasing trade opportunities among these nations.
- BRICS are deeply concerned by the world drug problem, which is harmful for public health, safety and

*Assistant Professor, IPS Academy Indore (M.P.) INDIA

well-being and to undermine social, economic and political stability and sustainable development. BRICS committed to counter the world drug problem, which remains a common and shared responsibility, through an integrated, multidisciplinary, mutually reinforcing and balanced approach to supply and demand reduction strategies, in line with the three UN drug conventions and other relevant We reiterate our strong condemnation of terrorism in all its forms and manifestations and stress that there can be no justification, whatsoever, for any acts of terrorism, whether based upon ideological, religious, political, racial, ethnic, or any other justification. We call upon all entities to refrain from financing, encouraging, providing training for or otherwise supporting terrorist activities. We believe that the UN has a central role in coordinating international action against terrorism, which must be conducted in accordance with international law, including the UN Charter, and with respect to human rights and fundamental freedoms. In this context, we reaffirm our commitment to the implementation of the UN Global Counter-Terrorism Strategy. We express our concern at the increasing use, in a globalized society, by terrorists and their supporters, of information and communications technologies (ICTs), in particular the Internet and other media, and reiterate that such technologies can be powerful tools in countering the spread of terrorismnorms and principles of international law.

- BRICS reiterate strong condemnation of terrorism in all its forms and manifestations and stress that there can be no justification, whatsoever, for any acts of terrorism, whether based upon ideological, religious, political, racial, ethnic, or any other justification. BRICS have called upon all entities to refrain from financing, encouraging, providing training for or otherwise supporting terrorist activities. BRICS believe that the UN has a central role in coordinating international action against terrorism, which must be conducted in accordance with international law, including the UN Charter, and with respect to human rights and fundamental freedoms. In this context, BRICS havereaffirmedthe commitment to the implementation of the UN Global Counter-Terrorism Strategy. We express our concern at the increasing use, in a globalized society, by terrorists and their supporters, of information and communications technologies (ICTs), in particular the Internet and other media, and reiterate that such technologies have powerful tools in countering the spread of terrorism. BRICS stress the need to promote cooperation among member countries in preventing terrorism.

Prime Minister Narendra Modi attended the summit and accompanied by Minister of State for Finance Nirmala Sitharaman, National Security Advisor A K Doval, Foreign Secretary Sujatha Singh and Finance Secretary Arvind Mayaram. Few important points that were addressed by NarendraModi at BRICS are as follows -

- Narendra Modi on BRICS Development Bank said it is an important step towards a flexible international trading system for the economic growth.
- The prime minister on government policies said, the priority of my government will be to invest drastically in healthcare and affordable households, infrastructure, education and cleaner energy.
- In order to establish stronger and deeper relations with BRICS countries Narendra Modi stressed on more intra-trade among the member countries.

Advantages of the Summit -

- Many other documents, including Memorandum of Understanding on Cooperation among BRICS Export Credit and Guarantees Agencies and Cooperation Agreement on Innovation within the BRICS Interbank Cooperation Mechanism, will offer new channels of support for trade and financial ties between the five countries.
- The BRICS includes 20 equally important cooperation formats, including the BRICS Business Council, the BRICS Banking Forum, the BRICS Exchanges Alliance and more, embracing such areas as information security, healthcare, agriculture, science and technology, and others.
- We believe that ICTs should provide instruments to foster sustainable economic progress and social inclusion, working together with the ICT industry, civil society and academia. Particular attention should be given to young people and to small and medium-sized enterprises, with a view to promoting international exchange and cooperation, as well as to fostering innovation.
- BRICS have managed to explore cooperation on combating cybercrimes and also recommit to the negotiation of a universal legally binding instrument in that field.
- BRICS members have also shown their concern towards climate change.
- BRICS members have also shown concern towards an inclusive, transparent and participative intergovernmental process for building a universal and integrated development agenda with poverty eradication as the central and overarching objective.

Conclusion - The 40 minutes side-line from the BRICS Summit the two leaders President of Russia Vladimir Putin and Indian Prime minister Narendra Modi talked about to strengthen Russia-India ties in nuclear, defence and energy sectors. China also regarded India support as a major boost to the bank's formation which was largely seen as an effort to enlarge funding for the Asian countries reducing the dependence on Asian Development Bank and other western dominated global financial institution.

We can conclude the Brazil Summit witnessed increased diplomatic activity and expanded avenues of cooperation with the world and this will definitely help the people of India in the coming years.

Reference :-

1. Personal survery.

ग्रामीण क्षेत्रों में संगठित तथा असंगठित रोजगार में परिवर्तन का अध्ययन

श्रद्धा सोनी *

प्रस्तावना – भारत की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होने के कारण औद्योगिकरण का महत्व अधिक बढ़ जाता है। भारत की कुल जनसंख्या का 72 प्रतिशत भाग गांवों में निवासीत है जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर आश्रित है। कृषि के अतिरिक्त अन्य रोजगार स्त्रोत नहीं होने के कारण कृषि के उपरान्त बेरोजगार रहना पड़ता है। कृषि अर्थव्यवस्था में अदृश्य बेरोजगारी की व्यापकता, निरक्षरता, निर्धनता एवं बेरोजगारी की समस्या गम्भींर है। भारत की सामाजिक–आर्थिक, भौगोलिक भिन्नता को औद्योगिकरण के बिना आर्थिक विकास में सक्षम नहीं बन सकेगें। औद्योगिकरण का सर्वाधिक प्रभाव आंतरिक संरचना पर पड़ता है। औद्योगिक विकास आन्तरिक संरचना को प्रभावित करता है। औद्योगिक क्रियाओं के विस्तार से आन्तरिक व्यापार, व्यवसाय और आर्थिक संरचना अत्यन्त सुदृढ़ होने लगती है। औद्योगिकरण से कृषि निर्भरता का भार औद्योगिक क्षेत्रों पर हस्तान्तरित हो जाता है।

भारत में कुल कार्यशील श्रम शक्ति को रोजगार प्रदान करने में अंसंगठित क्षेत्र की भूमिका महत्वपूर्ण है। आर्थिक क्रियाओं का तीव्र विस्तार किए जाने, औद्योगिकरण को बढ़ावा दिए जाने तथा आधुनिकीकरण को प्रोत्साहित किए जाने के उपरान्त भारत की 80 प्रतिशत जनसंख्या रोजगार के लिए अंसंगठित क्षेत्र पर निर्भर है।[1] आर्थिक विकास पर पियर्सन कमीशन ने लिखा है 'विकास की सबसे दुखदायी असफलता अर्थव्यवस्था में अर्थपूर्ण रोजगार अवसरों को सृजित करने में असफल रहना है।[2]

असंगठित क्षेत्र में रोजगार की अनियमितता बनी रहती है वहीं संगठित क्षेत्र में कार्यरत श्रमिकों की स्थिति असंगठित क्षेत्र में कार्यरत श्रमिकों की तुलना में श्रेष्ठ होती है। इसका मुख्य कारण संगठित क्षेत्र के श्रमिक अपना संगठन बनाकर सामूहिक सौदेबाजी के द्वारा अपनी कार्यदशा व वेतनमान में सुधार के प्रयास करते रहते है। किन्तु असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के बिखरावपन तथा संगठन के अभाव में अपनी मांगे प्रभावी रूप से प्रस्तुत नहीं कर पाते। परिणाम स्वरूप शोषण, असुरक्षा, कार्य की अनियमितता, बेरोजगारी, असमय रोजगार से निकालना आदि समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

भारत में बेरोजगारी यद्यपि एक गम्भीर समस्या है, लेकिन इसे समझने के लिए जितना प्रयास किया जाना चाहिए वह अभी भारत देश में नहीं किया गया है। सामान्यत: बेरोजगारी व्यक्ति की निजी समस्या मानी जाती है। परन्तु भारत में गैर कृषि क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षो में ग्रामीण आय, रोजगार बढ़ाने में सक्षम माना जा चुका है। गैर कृषि क्षेत्र की गतिविधियों में रोजगार की खपत एक महत्वपूर्ण और आसान उपाय है, ग्रामीण जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग या क्षेत्र इसमें संलग्न है। कृषि क्षेत्र गरीबी, बेरोजगारी निवारण नीतियों को ग्रामीण क्षेत्रों में विकसित कर रोजगार संवर्धन के सन्दर्भ में यह भारतीय अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी निवारण का एक उपयोगी माध्यम साबित हो सकता है।[3]

उद्देश्य –

- विभिन्न अवधियों में कृषि तथा गैर–कृषि रोजगार प्रवृत्ति में परिवर्तन का अध्ययन करना।
- आर्थिक नियोजन का ग्रामीण रोजगार पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – उक्त शोध पत्र में द्वितीयक समंकों पर आधारित है। अध्ययन हेतु विभिन्न मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, रोजगार नीतियां, शोध–पत्रिकाएँ, शोध आलेख, विषय से सम्बन्धित पूर्व शोध अध्ययन, जर्नल्स, अनुसंधान पत्र पत्रिका, अध्यादेश–अधिनियम आदि का प्रयोग किया गया हैं।

रोजगार में वृद्धि – भारत में निश्चय ही अधिकांश बेरोजगारी संरचनात्मक है। देश में पिछले तीन दशकों में जहाँ नियमित रूप से तेजी के साथ श्रम बाजार में भारी संख्या में लोग काम की खोज में आते रहे हैं, वहाँ अर्थव्यवस्था में अल्प विकास के कारण रोजगार के क्षेत्रों में पर्याप्त विस्तार नहीं हुआ है। वास्तव में यह एक ऐसी स्थिति है, जिसमें बेरोजगारी का रहना स्वाभाविक है। अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण संरचनात्मक परिवर्तनों के द्वारा इसे दूर करने का प्रयास किया जा सकता है। देश में संरचनात्मक बेरोजगारी के अलावा सन् 1965 से 1980 के बीच शहरी क्षेत्र में औद्योगिक मंदी की स्थिति के कारण बेरोजगारी उत्पन्न हुई। यह अतिरिक्त बेरोजगारी भारत में व्यापार चक्रीय बेरोजगारी है और इसे विकसित देशों की भाँति प्रभावित मांग को बढ़ाकर दूर किया जा सकता है।

विभिन्न नेशनल सेम्पल सर्वे रिपोर्ट के अनुसार भारत में ग्रामीण तथा शहरी रोजगार की स्थिति का अनुमान तालिका क्रमांक – 1 में किया गया है–

तालिका क्रमांक – 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका में सामान्यत: रोजगार प्राप्त व्यक्तियों (पी.एस.+एस.एस.) के व्यापक वर्तमान दैनिक कार्यकलाप की स्थिति के अनुसार प्रति 1000 व्यक्तियों पर सामान्यत: कृषि में रोजगार प्राप्त ग्रामीण महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में अधिक है। पुरूषों की कृषि रोजगार में कमी का मुख्य कारण गैर–कृषि रोजगार में वृद्धि होना है।

शहरी क्षेत्रों में कृषि में रोजगार प्राप्त महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में अधिक है। कृषि रोजगार में विभिन्न सर्वेक्षण अवधियों में महिलाओं की तुलना में पुरूषों के रोजगार में कमी दर्ज की गई। पुरूषों की कृषि रोजगार में कमी का मुख्य कारण गैर–कृषि रोजगार में वृद्धि होना है।

विनिर्माण क्षेत्र में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों (पी.एस.+एस.एस.) के व्यापक वर्तमान दैनिक कार्यकलाप की स्थिति के अनुसार प्रति 1000

* शोधार्थी (वाणिज्य) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

व्यक्तियों पर सामान्यत: ग्रामीण महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में कम है। विभिन्न अवधियों में ग्रामीण क्षेत्रों में विनिर्माण क्षेत्र में पुरूषों तथा महिलाओं के विनिर्माण क्षेत्र रोजगार में महत्वपूर्ण परिवर्तन नही आया है। शहरी क्षेत्रों में विनिर्माण क्षेत्र में रोजगार प्राप्त वर्तमान दैनिक कार्यकलाप की स्थिति के अनुसार प्रति 1000 व्यक्तियों पर सामान्यत: शहरी महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में अधिक है। विभिन्न अवधियों में शहरी क्षेत्रों में विनिर्माण क्षेत्र में महिलाओं के रोजगार में वृद्धि हुई है।

निर्माण क्षेत्र में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों (पी.एस.+एस.एस.) के व्यापक वर्तमान दैनिक कार्यकलाप की स्थिति के अनुसार प्रति 1000 व्यक्तियों पर सामान्यत: ग्रामीण महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में कम है। विभिन्न अवधियों में ग्रामीण क्षेत्रों में निर्माण क्षेत्र में पुरूषों तथा महिलाओं के विनिर्माण क्षेत्र रोजगार में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है।

शहरी क्षेत्रों में महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में कम है। विभिन्न अवधियों में शहरी क्षेत्रों में निर्माण क्षेत्र में पुरूषों तथा महिलाओं के विनिर्माण क्षेत्र रोजगार में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है।

व्यापार क्षेत्र में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों (पी.एस.+एस.एस.) के व्यापक वर्तमान दैनिक कार्यकलाप की स्थिति के अनुसार प्रति 1000 व्यक्तियों पर सामान्यत: ग्रामीण महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में कम है। विभिन्न अवधियों में ग्रामीण क्षेत्रों में निर्माण क्षेत्र में पुरूषों तथा महिलाओं के विनिर्माण क्षेत्र रोजगार में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है।

शहरी महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में कम है। विभिन्न अवधियों में ग्रामीण व्यापार, व्यवसाय क्षेत्र में रोजगार में महिलाओं की सहभागिता में 0.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि पुरूषों के रोजगार में 4.2 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई।

अन्य रोजगार प्राप्त व्यक्तियों (पी.एस.+एस.एस.) के व्यापक वर्तमान दैनिक कार्यकलाप की स्थिति के अनुसार प्रति 1000 व्यक्तियों पर सामान्यत: ग्रामीण महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में कम है।

संगठित व असंगठित क्षेत्र में रोजगार – जनसंख्या की दृष्टि से दुनिया के दूसरे सबसे बड़े देश के कामगारों अथवा कार्यशक्ति का आकार भी उतना ही बड़ा है। देश की इस बड़ी कार्यशक्ति को उसकी काम की प्रवृत्ति और कार्य की स्थिति के कारण दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।संगठित और असंगठित। पहले राष्ट्रीय श्रम आयोग ने आकस्मिक रोजगारशुदा उस कार्यशक्ति को जो अपनी आकस्मिक रोजगार प्रकृति के कारण, अशिक्षा और नकारे जाने के कारण अथवा अपने रोजगार संस्थान के छोटे या बेहद बिखरे रूपों के कारण एक समान हितों के लिए अपने आप को संगठित नहीं कर पाती है, उसे असंगठित श्रम शक्ति के रूप में रेखांकित किया था। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण की 1999–2000 की एक रिपोर्ट के अनुसार देश की कुल 39.7 करोड़ कार्यशक्ति का 92 प्रतिशत से अधिक हिस्सा असंगठित कार्यशक्ति की श्रेणी में आता है और यह असंगठित क्षेत्र देश की आर्थिक आय का 60 प्रतिशत भाग उत्पन्न करता है। असंगठित क्षेत्र में कार्यरत इन 36 करोड़ 90 लाख कामगारों को क्रमश: कृषि, विनिर्माण, भवन निर्माण और सेवा क्षेत्र में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है। संगठित तथा असंगठित रोजगार स्थिति को तालिका क्रमांक – 2 में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक – 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 1999–2000 में अनौपचारिक असंगठित क्षेत्र में 341.3 मिलियन रोजगार में संलग्न थे, वर्ष 2009–10 में वर्ष 2004–05 की तुलना में 8.42 मिलियन व्यक्तियों की कमी दर्ज की गई।

समस्याएं – असंगठित मजदूरों को संगठित करने की कोशिशों का आशानुकूल प्रतिफल न मिलना और स्थापित संगठनों द्वारा संगठित क्षेत्रों में काम को ही फोकस करना जहां एक ओर कल्याणकारी योजनाओं के लागू होने में बड़ी रुकावट है। वहीं दूसरी तरफ इनकी पहचान की व्यावहारिक परिभाषा का अभाव, पहचान प्रमाण की युक्तिसंगत नीति का न होना, सरल पंजीकरण नीति का अभाव, योजनाओं के बारे में जानकारी की कमी और उनके प्रति जागरुकता का अभाव असंगठित मजदूरों की मुख्य समस्याएं हैं।

निष्कर्ष – वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों की जनसंख्या की कृषि पर निर्भरता कम हुई हैं। राष्ट्रीय आय में कृषि का अंश गिरावट की प्रवृत्ति लिए हुए है। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी तथा अर्द्ध–बेरोजगारी की स्थिति अधिक गंभीर होती जा रही है, जो तीव्रदर से बढ़ने वाली श्रम समस्या का स्पष्ट संकेत है। आगामी वर्षो में रोजगार सन्तुलन को प्रभावित करेगा। कृषि भू–जोतो के घटते आकार के कारण तथा संगठित उद्योग आवश्यक रोजगार के अवसर सृजित करने में असमर्थ रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन के लिए रोजगार विविधीकरण की ओर अधिक प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। आर्थिक सुधारों के उपरान्त देश में कृषि उपेक्षित रहा तथा इसके विकास की दर धीमी और उतार चढावों से भरी रही हैं। कृषि क्षेत्र में रोजगार वृद्धि की दर लगभग शून्य रही, कृषि में उदारीकरण के दौर में कोई सुधार नहीं हुआ। कृषि अभी भी एक पिछड़ा क्षेत्र है तथा कृषक एवं अन्य कृषि मजदूर जिन्हें देश की नई आर्थिक नीति किसी तरह का लाभ नही पहुंचा सकी है। ग्रामीण गैर–कृषि रोजगार वाणिज्यिक केन्द्रो व बड़े शहरो में औद्योगिक कार्यो के लिए अनावश्यक पलायन को कम करने में सहायक हो सकता है। मानवीय, वित्तिय और भौतिक पूँजी उपलब्धता श्रमशक्ति को गैर–कृषि व्यवसाय में कुशल रोजगार व आवश्यक अवसर प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Michael p. Todaro, **“A model of labour migration and urban unemployment in less developed countries”,** American economics review, 59 march 1969.
2. Arnold C. Herberger, **“On measuring the Social Opportunity Cost of Labour”,** International Labour Review, March, 1970.
3. यादव, सुबह सिंह एवं यादव, मोहनलाल (2009) – कृषि अर्थव्यवस्था का उदारीकरण – संभावनाऍ एवं चुनौतियॉ, सबलाईम पब्लिकेशन्स जयपुर, पृ. 497
4. पटेल, सुधीर कुमार (2008) – कृषि में रोजगार के बढ़ते अवसर, कुरुक्षेत्र फरवरी, पृ. 5
5. चौरे, आई.पी. (2007) – भारतीय आर्थिक नीति, विद्या भवन, इन्दौर, पृ. 248
6. योजना सितम्बर 2011, पेज 29

तालिका क्रमांक – 1

प्रति 1000 जनसंख्या पर विभिन्न रोजगार में संलग्न व्यक्तियों की स्थिति

वर्ग	सर्वेक्षण दौर	वर्ष	ग्रामीण		शहरी	
			पुरूष	महिला	पुरूष	महिला
कृषि	66th	2009-10	628	794	60	139
	61th	2004-05	665	833	61	181
	55th	1999-00	714	854	66	177
	50th	1993-94	741	862	90	247
	43th	1987-88	745	847	91	294
	38th	1983	775	875	103	310
	32th	1977-78	806	881	106	319
विनिर्माण	66th	2009-10	70	75	218	279
	61th	2004-05	79	84	235	289
	55th	1999-00	73	76	224	240
	50th	1993-94	70	70	235	241
	43th	1987-88	74	69	257	270
	38th	1983	70	64	268	267
	32th	1977-78	64	59	276	296
निर्माण	66th	2009-10	113	52	114	47
	61th	2004-05	68	15	92	38
	55th	1999-00	45	11	87	48
	50th	1993-94	32	9	69	41
	43th	1987-88	37	27	58	37
	38th	1983	22	7	51	31
	32th	1977-78	17	6	42	22
व्यापार	66th	2009-10	82	28	270	121
	61th	2004-05	83	25	280	122
	55th	1999-00	68	20	294	169
	50th	1993-94	55	21	219	100
	43th	1987-88	51	21	215	98
	38th	1983	44	19	203	95
	32th	1977-78	40	20	216	87
अन्य	66th	2009-10	55	46	219	393
	61th	2004-05	59	39	208	359
	55th	1999-00	61	37	210	342
	50th	1993-94	70	34	264	350
	43th	1987-88	62	30	252	278
	38th	1983	61	28	248	266
	32th	1977-78	53	30	243	260

Source : NSS Report No. 537 : Employment and Unemployment Situation in India, 2009-10

तालिका क्रमांक - 2
संगठित व असंगठित क्षेत्र में रोजगार (मिलियन)

वर्ष	1999-2000			2004-05			2009-10		
क्षेत्र	अनौपचारिक	औपचारिक	कुल	अनौपचारिक	औपचारिक	कुल	अनौपचारिक	औपचारिक	कुल
असंगठित	341.3	1.4	342.6	393.5	1.4	394.9	385.08	2.26	387.34
संगठित	20.5	33.7	54.1	29.1	33.4	62.6	42.14	30.74	72.88
कुल	361.7	35	396.8	422.6	34.9	457.5	427.22	33.00	460.22

Source : NSS 66th Round and NCEUS 2007

****

देवास की औद्योगिक संरचना

मनीषा जैन *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश के अन्य जिलों की तुलना में इस जिले का औद्योगिक विकास द्रुतगति से हुआ हैं। जिले में औद्योगिक विकास होने का मुख्य कारण देवास की स्थिति औद्योगिक दृष्टि से उपयुक्त मानी जाती हैं। पूर्व में देवास में एक कपड़ा मिल स्थापित थी तथा बाद में पम्प बनाने के कारखाने भी स्थापित हुए। जिले में वर्तमान में 62 बड़े एवं मध्य श्रेणी के उद्योग स्थापित हो चुके हैं। केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र में बैंक नोट प्रेस की इकाई स्थापित हैं। शेष इकाईयाँ निजी एवं औद्योगिक क्षेत्र में स्थापित हैं। इन्दौर शहर के पास उद्योग इकाईयों में अधिकतम संख्या में देवास का ही नम्बर आता हैं। स्थापित उद्योग में सूती कपड़ा मिल, ऑटोमोबाइल गियर्स, साल्वेंट प्लांट, कॉटन सीड, सिगरेट फिल्टर, फिनिशड लेदर, स्टील टयूब, रोजिंग मिल, सिन्थेटीक्स क्लॉथ, सेनेटरी बियर्स एवं ग्लेज टाइल्स आदि। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य देवास जिले की वर्तमान औद्योगिक संरचना की स्थिति और विकास की सम्भावनाओं को पता लगाना, साथ ही औद्योगिक प्रादुर्भाव के कारणों की खोज करना हैं।

शोध विधि – इस शोध कार्य के लिए उददे्श्यपूर्ण विधि का प्रयोग किया गया हैं।

अध्ययन की इकाई– प्रस्तुत अध्ययन देवास जिले में वर्तमान औद्योगिक संरचना के विशेष संदर्भ में हैं। शोधकर्ता द्वारा शोधकार्य में देवास के वर्तमान औद्योगिक संरचना की स्थिति और विकास की सम्भावनाओं की गतिविधियों को शोध इकाई के रुप में लिया गया हैं।

निदर्षन का चुनाव– प्रस्तुत अध्ययन हेतु सर्वप्रथम देवास उद्योग क्रेन्द्र से उद्योगों की सूची प्राप्त की गई। रजिस्टर में उल्लेखित उद्योगों में से 158 अधिकारियों का चयन साक्षात्कार एवं प्रश्नावली हेतु याद्धिच्छिक रुप से विकास खण्डवार चयन किया गया ताकि सम्पूर्ण जिले का अध्ययन हेतु प्रतिनिधित्व हो सके। अत: अध्ययन में उद्योगों से संबंधित विस्तृत एवं सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिए 158 अधिकारियों का मूल्यांकन परक अध्ययन प्रस्तुत किया गया।

उपकरण – अनुसूची, प्रश्नावली, साक्षात्कार, निर्देशिका आदि उपकरण को शामिल किया और समंक संकलन में प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों को शामिल किया गया हैं।

परिकल्पनाएँ–

1. देवास का औद्योगिक विकास स्वतंत्रता के पश्चात् ही हुआ हैं।
2. देवास के औद्योगिक विकास में आधारभूत सुविधा ने प्रभावित किया हैं।
3. देवास के औद्योगिक विकास को यातायात सुविधा ने प्रभावित किया गया हैं।
4. देवास में भविष्य में नये उद्योग स्थापित होने की सम्भावना हैं।
5. संगठित क्षेत्र के उद्योगों में भी रूगणता व्याप्त है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य देवास के वर्तमान औद्योगिक संरचना की स्थिति और विकास की सम्भावनाओं का पता लगाना, साथ ही औद्योगिक प्रादुर्भाव के कारणों की खोज करना भी हैं। औद्योगिक विकास में शासन की भूमिका तथा देवास के औद्योगिक विकास हेतु शासन द्वारा प्रदान की गई संविधाओं के आधार पर प्राप्त सफलताओं का विश्लेषण करना भी प्रमुख उद्देश्य हैं।

जिले की औद्योगिक संरचना – स्वतंत्रता के पूर्व औद्योगिक विकास को अधिक महत्व नहीं दिया जाता था और राष्ट्रीय स्तर व क्षेत्रिय स्तर पर औद्योगीकरण के लिए कोई योजना नहीं हुआ करती थी। फलस्वरूप तात्कालीन देवास औद्योगिक परिपेक्ष्य के हिसाब से अन्य नगरों की भांति पिछड़ा हुआ था और छोटे–छोटे परम्परागत कुटीर उद्योगों की विद्यमानता ही यहा का औद्योगिक परिवेश थी। 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में यहॉ कुछ उद्योग स्थापित हुए जिनमें एक बिस्कुट फैक्ट्री, एक तेल मिल, हाथकरघा उद्योग, चर्म उद्योग आदि प्रमुख थे किन्तु राजकीय संरक्षण के अभाव में यह उद्योग अपना अस्तित्व नहीं बचा पाये और समाप्त हो गए।

वाणिज्यिक आधार पर देवास में सर्वप्रथम आधुनिक उद्योग स्थापित करने का सारा श्रेय जूनियर महाराजा नरेश साहब के प्रयत्नों को जाता हैं। जिनके द्वारा सन् 1930 में 'महारानी बाई कॉटन मिल्स' नामक एक सूती वस्त्र उद्योग स्थापित हुआ। इसके उपरान्त एक शासकीय लेदर फैक्ट्री भी यहाँ पर स्थापित हुई और एक लोहा फैक्ट्री जसपाल भाई नामक उद्योगपति ने स्थापित की। इस प्रकार स्वंतत्रता के समय देवास नगर में गिने चुने उद्योग स्थापित हो चुके थे।

सन् 1950 के आसपास इन्दौर के प्रसिद्ध उद्योगपति श्री नंदलाल भण्डारी ने देवास में 'भण्डारी क्रॉन फिल्ड कम्पनी' नामक एक वनस्पति उद्योग प्रारम्भ किया था। 18 जनवरी 1960 को 'न्यु प्रिसिशन इन्डिया लिमिटेड' नामक उद्योग की स्थापना के साथ देवास में पानी के पम्प व डीजल इन्जन उत्पादित होने लगे और देश के कई उद्योगपति देवास की ओर आकर्षित होने लगे। 6 अप्रैल 1962 को 'गजरा गियर्स प्रायवेट लिमिटेड' जोकि गियर्स का उत्पादन करती थी।, स्थापित हुआ और 19 अक्टूबर 1962 को 'किलोंस्कर ब्रदर्स लिमिटेड' उद्योग स्थापित हुआ। सन् 1970 तक देवास में स्थापित उद्योग अपनी ओर देवास की ख्याति बढ़ाते रहे तथा इस बीच गनकेस फैक्ट्री आदि लघु उद्योग देवास में प्रारम्भ हो चुके थे।

देवास की औद्योगिक क्रांति का श्रेय जिन बातों को जाता है वे अप्रैल 1972 में शासन द्वारा देवास जिले को औद्योगिक दृष्टि ये पिछडे हुए जिलों की 'क' सूची में स्थान देते हुए यहॉ के औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन देना और केन्द्र शासन द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र में 'बैंक नोट प्रेस' कारखाने की स्थापना करना। वास्तविक रूप से देवास के औद्योगीकरण का प्रारम्भ 1974 के लगभग हुआ और इतनी द्रुतगति से हुआ की आज भी देवास का

* शोधार्थी , विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

नाम न केवल भारत बल्कि दुनिया में प्रसिद्ध है, क्योंकि यहाँ की लगभग 15 इकाईयाँ दुनिया के विभिन्न देशों में जैसे- यू.के, जापान, अफ्रीका, मलेशिया, सिंगापुर, आस्ट्रेलिया तथा ईरान आदि देशों में उत्पादित माल का निर्यात प्रतिवर्ष करती हैं।

औद्योगिक विकास से उत्पन्न समस्याएँ - औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप देवास जिले में जो समस्याएँ दृष्टिगोचर हो रही है वह निम्न हैं-

1. **जनसंख्या का बढ़ता दबाव -** देवास का औद्योगिक विकास 1960 के बाद ही प्रारम्भ हुआ और बाहर के राज्यों से लोगों ने देवास में रोजगार के लिए आना शुरू किया। वर्तमान समय में जनवृद्धि के उपरान्त देवास जिले का जनसंख्या 15,63,107 हैं। देवास में जो उद्योगों का विकास हुआ है, वह देवास नगर में ज्यादा व देवास के आस-पास के गाँवों में कम जिसके कारण देवास नगर पर जनसंख्या का दबाव बढ़ा हैं।

2. **मूल्य वृद्धि -** औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप लोगों की जनसंख्या बढ़ जाने से देवास में मकान की कमी हो गयी है तथा नई कालोनियाँ विकसित करने की आवश्यकता होने लगी हैं। उन कॉलोनियों के विकास के लिए भी भूमि की आवश्यकता महसूस हुई है और देवास नगर की भूमि के मूल्यों में असाधारण रूप से मूल्य वृद्धि हो गयी हैं।

3. **गम्भीर आवासीय समस्या -** देवास में औद्योगिक निर्माण, भवन निर्माण, सहकारी प्रतिष्ठानों का निर्माण वाणिज्यिक भवनों का निर्माण द्रुत गति से हो रहा हैं। इसका प्रमुख कारण औद्योगिक विकास के फलस्वरूप जनाधिक्य में वृद्धि होना तथा जिसका परिणाम मकानों की लागत में वृद्धि होना हैं।

4. **दोषपूर्ण परिवहन सेवा -** देवास में यातायात सम्बन्धी समस्याएँ विगत लगभग 10 वर्षो से उत्पन्न हुई हैं। देवास शहर में बम्बई-आगरा राजमार्ग पर जो कि नगर के मध्य से होकर गुजरता है वहाँ बहुत अधिक यातायात रहता है। इसका मुख्य कारण यह है कि यह मार्ग राष्ट्रीय राजमार्ग होने से देश के उत्तरी राज्यों व दक्षिणी राज्यों के मध्य सम्पर्क बनाता है इसलिए इस पर यातायात अधिक रहता हैं।

5. **जल संकट एवं विद्युत संकट-** देवास में वर्तमान समय में जल समस्या बहुत बढ़ गई है क्योंकि औद्योगिक विकास होने से एक ओर तो जनसंख्या में वृद्धि हुई तथा दूसरा स्वयं उद्योगों को उनकी जल सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भारी मात्रा में जल प्रदान करना पड़ा। जल प्रदान के वृद्धि के अनुपात से जल स्त्रोत प्राप्त नहीं हो पाये हैं। इसलिए शहर में जल समस्या बहुत गम्भीरता लिए हुए हैं। औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप बड़ी मात्रा में उद्योगों को जल उपलब्ध करना पड़ता है। जिससे देवास में जल संकट पैदा हो गया हैं।

सुझाव-

1. **स्थानीय उद्यमियों को अवसर दिए जाए-** देवास में प्राय: अधिकांश उद्योगपति बाहरी स्थानों से आये है जो यहाँ की सुविधाओं का लाभ उठा रहे हैं। शासन ने यहाँ के स्थाई निवासियों को उद्योगों की स्थापना में प्राथमिकता देनी चाहिए तभी क्षेत्रिय विकास सार्थक होगा।

2. **ग्रामों में औद्योगिक विकास-** शासन को चाहिए कि सम्पूर्ण देवास जिले को समान रूप से उन्नत बनाते हुए ग्रामों में भी औद्योगिक विकास प्रारम्भ किया जाए। इसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों को अधिक सुविधाएँ दी जानी चाहिए।

3. **अन्य क्षेत्रों का विकास भी आवश्यक है-** केवल औद्योगिक विकाय ही पर्याप्त नहीं है बल्कि देवास में विकास सम्बधित अन्य क्षेत्र को भी विकसित करना होगा। ये क्षेत्र कृषि विकास का हो सकता है या सरकारी आंदोलन का संरचनात्मक सुविधाओं का हो सकता है या उच्च शिक्षण का।

4. **औद्योगिक रूग्णता को कम करने के प्रयास-** देवास नगर में औद्योगिक विकास के साथ-साथ औद्योगिक रूग्गणता भी बढ़ी हैं। जिसे रोकने के लिए शासन द्वारा सराहनीय प्रयास किए जा रहे हैं। किंतु शासन के अतिरिक्त उद्योगपतियों को भी रूग्गणता कम करने के लिए पहल करनी चाहिए एवं नवीन योजनाएँ औद्योगिक विकास के लिए बनाई जानी चाहिए।

5. **व्यावसायिक शिक्षा एवं तकनीकी संस्थाओं में वृद्धि-** वर्तमान शिक्षा प्रणाली प्रायौगिक रूप से सफल नहीं हैं अत: व्यावसायिक शिक्षा में वृद्धि करनी होगी, जिससे आज के युवाओं में रोजगार के प्रति अभिरूचि जाग्रत हो, साथ ही नवीन तकनीकी संस्थाएँ भी खुलनी चाहिए जिससे लघु स्तरीय उद्योग लगाने में आसानी रहे तथा उत्पादन स्तर उच्चकोटि का हो।

6. **समस्याओं के निवारण हेतु उपाय-** देवास का औद्योगिक विकास जब उन्नत अवस्था को प्राप्त कर लेगा तो उस समय देवास में कई समस्याएँ बढ़ जाएगी। जब औद्योगिक विकास के लिए सुनियोजित कदम उटाये जाए तो इसके दुष्परिणामों के निवारण के लिए भी शासन एवं उद्योगपतियों को सचेत रहना चाहिए। नगर में पर्यावरण, यातायात, आवास, जलपूर्ति, शिक्षा, चिकित्सा, जनसंख्या आदि से सम्बन्धित नीतियों का निर्माण भावी दुष्परिणामों से देवास को बचाये रखने में सफल होगा। ऐसी आशा की जा सकती हैं।

7. **देवास का औद्योगिक विकास और होना चाहि**ए- देवास के उद्योगों में कार्यालयीन स्टाफ के अंतर्गत बाहरी स्थानों से आए लोग अधिक संख्या में हैं। जब शासन यहाँ के निवासियों का पिछड़ापन दूर करना चाहता है, तो उद्योगपतियों ने भी यहाँ के युवाओं तथा विद्यार्थियों को रोजगार के अधिक अवसर देने चाहिए।

निष्कर्ष-

1. **उद्योगों का विकास तीव्र गति से हुआ -** वर्तमान में देवास में 62 वृहत् एवं मध्यम स्तर के उद्योग का स्थापित होना इस बात को स्पष्टत: प्रमाणित करता है। उद्योगपतियों को अधिकाधिक उद्योग स्थापित करने के लिए मध्यप्रदेश शासन एवं स्थानीय सत्ता निरंतर आकर्षक सुविधाएँ प्रदान कर रही हैं।

2. **योजनाओं का पूर्ण क्रियान्वयन नहीं हुआ है-** देवास नगर एवं उसके औद्योगिक विकास से संबंधित कई योजनाएँ मध्यप्रदेश शासन एवं यहाँ की स्थानीय सत्ता द्वारा कागजी स्वरूप में बंद हैं। जिसका उचित क्रियान्वयन अभिशेष हैं। उद्योगों की बुनियादी आवश्यकताएँ एवं वित्त से संबंधित सुविधाएँ देने की योजना भी पूर्णत: परिणित नहीं हो पायी हैं। विशेष रूप से लघु स्तरीय उद्योगों को अधिक सहयोग एवं सुविधाएँ मिलनी चाहिए जो नहीं मिल पा रही हैं।

3. **देवास नगर पूर्ण औद्योगीकरण के लिए प्रयत्नशील-** राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में देंवास के उद्योगों ने उत्पादन वृद्धि, पूंजी विनियोग में वृद्धि, रोजगार में वृद्धि तथा निर्यात में वृद्धि करते हुए अपनी उपस्थिति का पूरा-पूरा मूल्य चुकाया हैं। इसी प्रकार यहाँ की वाणिज्यिक सुविधाओं में वृद्धि का श्रेय भी देवास के औद्योगिक विकास को ही जाता हैं। वैसे भी औद्योगिक विकास एक लम्बी प्रक्रिया है, जिसे पूर्ण होने में समय लगता हैं, तभी देवास विगत दशक में औद्योगिक विकास में असाधारण उन्नति के उपरांत भी पूर्ण विकसित नहीं हो पाया हैं तथा विकास प्रक्रिया अभी जारी हैं।

4. औद्योगिक विकास के साथ औद्योगिक रुग्गणता– देवास के औद्योगिक विकास से न केवल रोजगार प्राप्ति के अवसरों की दृष्टि से अपितु नये उद्यमियों को अपने उद्योग स्थापित करने तथा व्यवसाय प्रारम्भ करने के अवसरों व सुविधाओं में वृद्धि हुई हैं। देवास के औद्योगिक विकास ने यहाँ पर जनसंख्या को बढ़ाते हुए इस नगर का महत्व बढ़ा दिया हैं। जिसके परिणामस्वरूप शासन को देवास में नगर निगम की स्थापना, देवास विकास प्राधिकरण की स्थापना आदि का निर्णय लेना पड़ा। इसी के साथ नित्य कई वाणिज्यिक संस्थाएँ, व्यापारिक प्रतिष्ठान तथा सेवा सम्बन्धी इकाईयाँ यहाँ स्थापित हो रही हैं। किंतु इसके साथ–साथ औद्योगिक रूग्णता में भी वृद्धि हो रही हैं। औद्योगिक विकास के फलस्वरूप यहाँ एक साथ कई औद्योगिक इकाईयाँ स्थापित हो गयी। अत: इन इकाईयों को जितनी सुविधाएँ मिलनी चाहिए थी वह नहीं मिली साथ ही लघु स्तरीय उद्योगों में आपसी प्रतिस्पर्धा एक ही प्रकार के उत्पाद निर्मित करने के कारण बढ़ बई। कमजोर स्थिति वाले उद्योगों को अपनी इकाईयाँ बन्द करनी पड़ी। अत: हम कह सकते है कि औद्योगिक रूग्णता में विशेष रूप से लघु स्तरीय उद्योगों में वृद्धि हुई हैं।

5. विविध प्रकार के व्यवस्थित दस्तावेज एवं सूचकांक का अभाव– औद्योगिक विकास एवं रूग्णता का अध्ययन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकला है, कि देवास में कई महत्वपूर्ण समंकों का संकलन नहीं किया जा सकता है, जैसे– म.प्र. वित्त में रूग्ण हुए उद्योग के बारे में पूर्ण जानकारियाँ उपलब्ध नहीं हैं। वर्तमान में देवास उभरता हुआ नगर हैं तथा इस समय यहाँ पर तेजी से हो रहे आर्थिक व सामान्य परिवर्तन का पूरा–पूरा रिकार्ड रखना अति आवश्यक है, ताकि भविष्य में तुलनात्मक अध्ययन की सुविधा रहे। साथ ही जिला उद्योग केन्द्र में पूर्णत: अव्यवस्था व्याप्त हैं। वार्षिक प्रतिवेदन भी प्रतिवर्ष नियमानुसार प्रकाशित नहीं किया जा सकता हैं। जिला सांख्यिकी कार्यालय में भी इसी तरह व्यवस्थित समंकों का अभाव हैं। देवास षहर में एसोशिएशन ऑफ इण्डस्ट्रीज कार्यालय है परन्तु उनके पास भी देवास के उद्योगों के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध नहीं हैं तथा जिला रोजगार कार्यालय एवं श्रम न्यायालय में भी व्यवस्थित समंकों का अभाव हैं।

6. औद्योगिक विकास में बाधाएँ– प्रस्तुत अध्ययन में एक उल्लेखित बात यह हैं कि देवास में औद्योगिक विकास की कुछ बाधाएँ है जिनके परिणाम स्वरूप देवास का औद्योगिक विकास अपना पर्याप्त प्रभाव नहीं छोड़ पा रहा हैं। देवास में उद्योगों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं। विद्युत प्रदाय संबंधी अनियमितताओं के कारण उत्पादन में कई बार व्यवधान उत्पन्न होते हैं तथा श्रमिकों को स–वेतन अवकाश लेना पड़ता हैं। इसी प्रकार देवास जिले के अन्य नगरों व ग्रामों में उद्योगपति अपना उपक्रम स्थापित करने में रूचि नहीं रखते है, जिसके परिणामस्वरूप असंतुलित विकास की समस्या उत्पन्न हुई हैं।

7. सरकारी नीतियाँ दोषपूर्ण– वर्तमान में औद्योगिक रूग्णता का एक प्रमुख कारण सरकार की दोषपूर्ण नीतियाँ भी हैं। आज सरकार ने अधिकतर नीतियाँ कृषि प्रधान तथा श्रमिकों के लाभ के लिए बनाई है जिससे लघु स्तरीय एवं मध्यम स्तरीय उद्योगों पर अधिक दबाव पड़ता हैं। शासन जहाँ बिजली की कटौती करके कृषकों को रियायती दर पर बिजली दे रहा है वही उद्योगों को सिर्फ 20 प्रतिशत बिजली देकर उनसे 80 प्रतिशत बिजली खर्च ले रही हैं।

8 असामाजिक तत्वों एवं अपराधिक गतिविधियों में वृद्धि– उद्योगों के अचानक बन्द हो जाने से कई लोग बेरोजगार हो गये है उन्हें अपनी बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने में मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है या फिर अपनी योग्यता का दमन करके कम वेतन पर कार्य करना पड़ रहा है जिससे उनमें कुंठा एवं हीन भावना प्रबल होती है। लिन लोगों को रोजगार नहीं मिला व अपना एवं अपने परिवार के जीवन यापन के लिए असामाजिक कार्यों में लिप्त हो गए या बड़े उद्योगपतियों या राजनितिज्ञों के शोषण का शिकार हुए। इसी कारण पिछले कुछ वर्षों से देवास में हिंसात्मक वारदातों में वृद्धि हुई हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ वी. के. जोशी, मैनेजमेन्ट ऑफ इण्डस्ट्रीज सिकनेस।
2. प्रो. उमा कपीला, इण्डियन इकोनामिक्स मिक्स सिन्स इनडिपेन्डेंस।
3. जिला सांख्यिकी पुस्तिका।
4. जिला उद्योग क्रेन्द्र देवास के वार्षिक प्रतिवेदन।
5. एसोसिएशन ऑफ इण्डस्ट्रीज कार्यालय– देवास।

****

अर्थव्यवस्था में कोयला खान विधेयक - 2015 का उपयोग

दीपिका यादव * डॉ. धीरज शर्मा **

प्रस्तावना – भारत में उपलब्ध शक्ति के साधनों में कोयला उद्योग का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। भारतीय कोयला उद्योग एक आधारभूत उद्योग है जिस पर अन्य उद्योगों का विकास निर्भर करता है। हमारे देश में कोयले का अंश 67 प्रतिशत है। देश के कोयला उद्योग में लगभग 800 करोड. रूपए कि पूँजी विनियोजित है तथा 7 लाख से अधिक लोगों को रोजगार मिला है। अर्थव्यवस्था में कोयले की मांग बढ़ने के साथ-साथ कई घोटालों का नाम भी जुड़ता रहा है, भारतीय अर्थव्यवस्था के ऐतिहासिक घोटालों के क्रम में कोलगेट घोटाला अब तक के सबसे बड़े घोटाले के रूप में सामने आया। कैग सीएजी द्वारा मार्च 2012 में संसद को सौपे गए प्रतिवेदन में निजी कंपनियों को स्वंय के उपयोग हेतु कोयला ब्लॉक आवंटन अदक्षतापूर्वक तथा मनमाने ढंग़ से किए जाने से राजकोष को कुल 1,85,559 करोड़ रूपये की क्षति पहुंचने का आंकलन लगाया था।

अत: सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 1993 से 2011 तक आबंटित 204 कोयला खदानों के पट्टों को निरस्त कर दिए जाने कि परिस्थितियों के बीच भारत सरकार ने कोयला ब्लॉकों का आबंटन पूर्ण पारदर्शी तरीके से करने की नियत से कोयला खान अध्यादेश 2014, 21 एवं 26 अक्टूबर 2014 जारी किया था। इसके स्थान पर सरकार ने कोयला खान विधेयक संसद में पेश किया। इस विधेयक को लोकसभा ने 4 मार्च 2015 को तथा राज्य सभा में 20 मार्च 2015 को पारित कर दिया गया।

कोयला खान विधेयक के प्रमुख बिंदु– इस विधेयक के प्रमुख बिंदु निम्न प्रकार है–

1. कोयला खदानों को तीन अनुसूचियों में वर्गीकृत किया है– 1. अनुसूची प्रथम : सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रद्द किए गए सभी 204 कोयला ब्लॉक। 2. अनुसूची द्वितीय : प्रथम अनुसूची की उपसूची में ऐसी कोयला खदानें हैं, जिनमें उत्पादन प्रारम्भ हो चुका है 42 कोयला ब्लॉक। 3. अनुसूची तृतीय : प्रथम अनुसूची की उप सूची में ऐसी कोयला खदानें हैं, जिनमें सरकार ने विशिष्ट उद्देश्य से अंतिम उपयोग के रूप में चिन्हिंत किया है 32 कोयला ब्लॉक।
2. आंवटन किसी एक कम्पनी या संयुक्त उपक्रम के नाम किया जाएगा।
3. सरकारी कम्पनी या उसके किसी संयुक्त उपक्रम को बिना नीलामी के भी कोयला ब्लॉक आवंटित किया जा सकता है।
4. आबंटन हेतु किसी अधिकारी को सरकार द्वारा नामित किया जाएगा।
5. आबंटन से प्राप्त समस्त धन राशि सरकार द्वारा नामित अधिकरण द्वारा प्राप्त किए जाएगें तथा संबंधित राज्य सरकारों में वितरित किए जाएगें।
6. कोयला ब्लॉक के पूर्व आवंटी को क्षतिपूरक भुगतान उसके ऊपर बकाया समस्त ऋणों को चुका कर किया जाएगा, इसके लिए **'क्षतिपूर्वक आयुक्त'** की नियुक्ति की जाएगी।
7. विवादों का निपटारा कोयला सघन क्षेत्रों में अधिग्रहण एवं विकास अधिनियम 1957 के अधीन गठित न्यायाधिकरण द्वारा किया जाएगा।

कोयला खान विधेयक 2015 से सरकार को संभावित लाभ– सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 1993 से 2011 के बीच मनमाने तरीके से आबंटित 218 कोयला ब्लॉकों में से 214 कोयला ब्लॉकों का आबंटन रद्द कर दिए जाने से उत्पन्न परिस्थितियों के बीच 2015 में इन्हीं का आवंटन पूर्णतया पारदर्शी एवं निष्पक्ष नीलामी प्रक्रिया द्वारा किए जाने से मात्र 29 ब्लॉकों की नीलामी से सरकार को रूपए 1.93 करोड़ का राजस्व अगले तीस वर्षो के दौरान प्राप्त होगा। यह धनराशि भारत के महालेखा नियंत्रक द्वारा नीलामी के बिना 206 कोयला ब्लॉकों के आबंटन से राजकोष को हुई 1.86 करोड़ की हानि से भी अधिक है। यह भी आंकलन है कि कोयला ब्लॉकों के रिवर्स आवंटन के द्वारा बिजली उपभोक्ताओं से रू. 69300 करोड़ की अतिरिक्त प्राप्ति और होगी।

विशेषज्ञों का आकलन है कि रद्द किए गए सभी ब्लॉकों के आवंटन से कुल रू. 3.35 करोड़ का राजस्व राज्यों को प्राप्त होगा। झारखण्ड एवं छत्तीसगढ़ राज्यों को अगले तीस वर्षो तक मिलने वाली रॉयल्टी से रू. 1.10 - 1.10 लाख करोड़ की प्राप्ति होगी।

नीलाम किए गए ब्लॉक दो प्रकार के हैं प्रथम 19 ब्लॉक वे है, जिनमें से कोयला निकाला जा रहा है, द्वितीय 14 ब्लॉक वे है, जिनमें से कोयला तत्काल निकाला जा सकता हैं। हाल की नीलामी से बिजली उत्पादित करने वाली कम्पनियां नीची दर पर बिजली बेचेगी। जिससे कोयला उत्पादक राज्यों ओडिशा, पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, छत्तीसगढ, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र को अनुमानित रूपए 69300 करोड़ की बचत होगी।

कोयला खान विधेयक 2015 के पश्चात् देश में कोयला उत्पादन की स्थिति – इस विधेयक के पारित होने के पश्चात् देश में कोयला उत्पादन संतोषजनक रहा है। वर्ष 2015-16 के दौरान कच्चे कोयले का उत्पादन पिछले वर्ष की इसी अवधि के 609.18 मिलियन टन की तुलना में 638.18 मिलियन टन आंका गया था। वर्ष 2015-16 के दौरान कोयला उत्पाद में कुल वृद्धि 4.8 प्रतिशत दर्ज की गई थी। इसके परिणाम स्वरूप 2014-15 के दौरान कोल इण्डिया ने दो साल की अवधि के मुकाबले कोयला उत्पादन में 7.4 करोड़ टन की सर्वाधिक वृद्धि दर्ज की गई है। सरकार कीमतों को कम करने और कोयला माफिया का मुकाबला करने के लिए घरेलू कोयले की आपूर्ति बढ़ाने पर अपना ध्यान केंद्रित कर रही है।

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कोयला उत्पादन में वृद्धि होने से कोयला आयात में कमी हुई है। कोयला आयात में 3.4 टन की कमी आई है। जिसके परिणामस्वरूप वित्त वर्ष 2015-16 के दौरान विदेशी मुद्रा में 24000 करोड़ रूपए की बचत हुई है। मंत्रालय ने चालू वित्त वर्ष के दौरान विदेशी मुद्रा में 40,000 करोड़ रूपए की बचत करने का लक्ष्य रखा है।

देश में कोयला उत्पादन के स्तर में वृद्धि होने से कोयला आधारित विद्युत केंद्रो पर कोयला स्टॉक भी संतोषजनक स्तर पर है। 31 मार्च 2016 को देश में किसी भी विद्युत केंद्र पर कोयले का स्टॉक संकटमय अथवा बेहद संकटमय नहीं है और ताप विद्युत केंद्रो पर कुल कोयला स्टॉक लगभग 39 मिलियन टन के संतोषजनक स्तर पर हैं जो 28 दिनों तक कोयले की जरूरत को पूरा करने में समर्थ है।

निष्कर्ष - इस प्रकार निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि पिछले वर्षो में कोयला क्षेत्र में अनेक घोटाले सामने आए है, जिनसे कोलगेट घोटाला सर्वाधिक भयावह रहा है। इस घोटाले से भारतीय अर्थव्यवस्था को बहुत बड़ी मात्रा में क्षति का सामना करना पड़ा हैं। जिसकी भरपाई हेतु संसद में एक नया विधेयक कोयला खान विधेयक 2015 पारित किया गया। इस विधेयक द्वारा कोयला क्षेत्र में तीन अनुसूचियों में विभाजित करके उनके आवंटन को पूर्ण पारदर्शी बनाने का प्रयास किया गया है।

इस विधेयक में सरकार को भविष्य में भारी मात्रा में राजस्व प्राप्ति की आशा है। जो ओड़िशा, पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र जैसे कोयला उत्पादक क्षेत्रों में ही 69300 करोड़ अनुमानित है। अत: कहा जा सकता है कि कोयला क्षेत्र में कोयला खान विधेयक 2015 मील का पत्थर साबित हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाचार पत्र- नई दुनिया, दैनिक भास्कर।
2. प्रतियोगिता दर्पण अर्थव्यवस्था।
3. इंटरनेट से प्राप्त जानकारी।

देश में कोयला उत्पादन में वृद्धि को निम्न तालिका से स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

अवधि-साल	कोयला उत्पादन (मिलियन टन में)	समग्र रूप से वृद्धि (मिलियन टन में)	वृद्धि (प्रतिशत में)
2010-11	481.32	0.06	0.01 प्रतिशत
2011-12	435.84	4.52	1.04 प्रतिशत
2012-13	452.21	16.37	3.75 प्रतिशत
2013-14	462.42	10.21	2.25 प्रतिशत
2014-15	494.23	31.82	6.88 प्रतिशत
2015-16	536.51	42.28	8.6 प्रतिशत

****

इन्दिरा आवास योजना के क्रियान्वयन में जिला पंचायतों की भूमिका का विश्लेषण - खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में

डॉ. पुष्पेन्द्र चौरे *

प्रस्तावना - रोटी एवं कपड़े के बाद मनुष्य की महती आवश्यकता है आवास। जनगणना 2011, के अनुसार हमारे देश की लगभग 1.9 मिलियन जनसंख्या आवासहीन है। केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा इस समस्या के निराकरण के लिए समय-समय पर विभिन्न योजनाओं के माध्यम से अनेक सार्थक प्रयास किए हैं, जिन्हें विभिन्न स्तरों पर क्रियान्वित करने हेतु निर्देश भी प्रदान किए हैं। इनमें ग्रामीण आवास योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए जिला पंचायतों को मुख्य एजेंसी का दर्जा देते हुए इन योजनाओं की सफलता का कार्यभार सौंपा है। इन ग्रामीण आवास योजनाओं में इन्दिरा आवास योजना एक प्रमुख योजना है, जिसका अध्ययन प्रस्तुत शोधपत्र में किया गया है तथा इस योजना के क्रियान्वयन में खरगोन जिला पंचायत की भूमिका का विश्लेषण किया गया है।

शोध का उद्देश्य - इस शोध-पत्र के द्वारा यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न ग्रामीण योजनाओं के सफल क्रियान्वयन में जिला पंचायतों की क्या भूमिका होती है तथा यह पंचायतें इन योजनाओं को क्रियान्वित करने हेतु किस प्रकार प्रयास करती है।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत शोध-पत्र के लिए खरगोन जिले में वित्तीय वर्ष 2015-16 में इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत आवासों के लक्ष्य निर्धारण, आवंटन, वर्गवार आवंटन आदि से संबंधित द्वितीयक समंकों का एकत्रीकरण कर पंचायतों की भूमिका का अध्ययन किया जाएगा।

परिचय - इन्दिरा आवास योजना भारत सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय की एक प्रमुख योजना है, इसके तहत ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों को आवास मुहैया कराए जाते हैं। इन्दिरा आवास योजना की उत्पत्ति ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों से हुई है, जो वर्ष 1980 के शुरू में प्रारम्भ हुई। इन्दिरा आवास योजना को जवाहर रोजगार से अलग कर 1 जनवरी, 1996 से एक स्वतंत्र योजना बना दी गई है।

उद्देश्य - इस योजना का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जाति, मुक्त बन्धुआ मजदूरों के सदस्य तथा गैर अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जाति के गरीबी रेखा से नीचे के ग्रामीणों को एक मुष्त वित्तीय सहायता देकर आवासहीन इकाईयों के निर्माण/उन्नयन में मदद करना है। इन्दिरा आवास योजनान्तर्गत प्रत्येक जिलें में बीपीएल सेन्सस 2002 के आधार पर आवासहीन चयनित बीपीएल परिवारों की स्थाई प्रतीक्षा सूची तैयार की गई है। जिसमें प्राप्तांकों के आधार पर सबसे गरीब परिवार को सबसे उपर रखा गया है। मकान का निर्माण लाभार्थियों द्वारा स्वयं ही किया जाता है, उचित निर्माण का उत्तरदायित्व स्वयं लाभार्थी का होगा। नियमानुसार मकान का आवंटन लाभार्थी परिवार की महिला सदस्य के नाम होगा। विकल्पत: इसे पत्नी के संयुक्त नाम से आवंटित किया जा सकता है। विशेष परिस्थितियों में जबकि उस परिवार में कोई महिला सदस्य नहीं हो, तो पुरूष के नाम आवास स्वीकृत किया जा सकता है। आवासीय ईकाईयां सामान्यत: गॉव की मुख्य बसावट में निजी प्लाटों पर बनाई जाती है।

वित्त पोषण प्रणाली - इन्दिरा आवास योजना केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित योजना है, जिसे भारत सरकार तथा राज्य सरकार के बीच क्रमश: 75:25 के अनुपात में अनुदान सहायता राशि को वहन करके वित्त पोषित किया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों के लिए यह अनुपात 90:10 है। आवासों के निर्माण तथा सुधार के लिए निर्धारित अनुदान सहायता राशि के अन्तर्गत मैदानी क्षेत्रों में नये आवास निर्माण हेतु रू. 70000/- जबकि पहाड़ी क्षेत्रों के लिए रू. 75000/- तथा बेकार/कच्चे आवासों का सुधार (क्रमोन्नत) के लिए रू. 15000/-स्वीकृत किए जाते हैं। जिनका भुगतान लाभार्थी को नियमानुसार तीन किश्तों में किया जाता है।

खरगोन जिले में योजना का क्रियान्वयन - इन्दिरा आवास योजना के दिशानिर्देशों के अनुरूप प्रत्येक जिले को इस योजना के अन्तर्गत एक निर्धारित लक्ष्य प्रदान किया जाता है जिसे संबंधित वित्तीय वर्ष में पूर्ण करना जिला पंचायतों के लिए आवश्यक है। वर्ष 2015-16 में खरगोन जिले को प्राप्त लक्ष्य एवं उसके आवंटन का विवरण निम्न तालिका में दर्शाया गया है-

विवरण	संख्या	प्रतिशत
विकासखण्डों की संख्या	09	
निर्धारित आवास लक्ष्य	4250	
आवंटन	3996	
वर्गवार आवंटन		
अनुसूचित जनजाति वर्ग	3071	76.85
अनुसूचित जाति वर्ग	380	9.51
अल्पसंख्यक वर्ग	81	2.03
अन्य वर्ग	545	13.64
निर्मित आवास	1349	33.76
वर्गवार निर्मित आवास		
अनुसूचित जनजाति वर्ग	884	65.53
अनुसूचित जाति वर्ग	194	14.38
अल्पसंख्यक वर्ग	47	3.48
अन्य वर्ग	271	20.09

Source - http://awaassoft.nic.in/netiay/Reports

इस प्रकार उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि खरगोन जिला पंचायत द्वारा अपने अधीन 9 विकासखण्डों के लिए 4250 इन्दिरा आवासों के निर्माण का लक्ष्य दिया गया था। जिसमें से जिला पंचायत द्वारा कुल 3996 हितग्राहियों को आवासों का आवंटन किया गया। आवंटन के समय जिला

* सहायक प्राध्यापक, प. म. ब. गुजराती वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

पंचायत द्वारा योजना के दिशानिर्देशों का पालन करते हुए वर्गवार आवंटन किया गया। तालिका अनुसार कुल आवंटित आवासों में से 76.85 प्रतिशत आवास अनुसूचित जनजाति वर्ग को, 9.51 प्रतिशत अनुसूचित जाति वर्ग को, अल्पसंख्यक वर्ग को 2.03 प्रतिशत तथा अन्य वर्गों को 13.64 प्रतिशत आवास आवंटित किए गए। तालिकानुसार वित्तीय वर्ष 2015-16 में निर्मित आवासों की संख्या 1349 थी, जिनमें से कुछ आवास गत वर्ष के निर्माणाधीन थे। निर्मित आवासों में से अजजा वर्ग के 65.53 प्रतिशत, अजा वर्ग के 14.38 प्रतिशत, अल्पसंख्यक वर्ग के 3.48 तथा शेष 20.09 प्रतिशत आवास अन्य वर्गों के निर्मित हुए।

योजना के क्रियान्वयन में जिला पंचायत, खरगोन की भूमिका –उक्त विवरण से स्पष्ट है कि खरगोन जिला पंचायत द्वारा अपने अधीन विकासखण्डों में इन्दिरा आवास योजना के माध्यम से आवास समस्या के निराकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए सफल क्रियान्वयन के प्रयास किए हैं। जिले को प्राप्त निर्धारित लक्ष्य में से 94.02 प्रतिशत का आवंटन कर इस योजना का सफलता की दिशा में विशेष कदम उठाए हैं। इसी प्रकार इस वित्तीय वर्ष में जिला पंचायत द्वारा उपलब्ध राशि में से राशि रू. 2469.96 लाख का उपयोग किया गया। साथ ही चालू वित्तीय वर्ष में 33.76 प्रतिशत आवासों के निर्माण पूर्ण करवाने में भी हितग्राहियों को सहायता देकर इस योजना के क्रियान्वयन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. www.iay.nic.in
2. www.khargone.nic.in
3. इंदिरा आवास योजना के दिशानिर्देश।

****

भारत में विकास एवं रोजगार

डॉ. धीरज शर्मा *

प्रस्तावना – संविधान लागू होने के बाद से ही देशभर में विशेषरूप से ग्रामीण क्षेत्रों व नगरीय मलिन बस्तियों में बसने वाले वंचितों, गरीबों, विकलांगों, महिलाओं, बच्चों और वृद्धों जैसे कमजोर तबको के लिए नई-नई कल्याणकारी योजनाओं और कार्यक्रमों को संचालित कर उन्हें समाज की मुख्य धारा में शामिल किए जाने हेतु विभिन्न प्रयास किए जाते रहे हैं। देशवासियों के सर्वांगीण विकास के उद्देश्य से सरकार द्वारा चलाई गई विभिन्न रोजगारपरक, कल्याणकारी एवं मूलभूत सुविधाओं के जुटाने वाली योजनाओं पर यदि नजर डाले तो पता चलता है कि शुरूआती तौर पर वर्ष 1952-53 में सामुदायिक विकास योजना, वर्ष 1953-54 से राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम, वर्ष 1957-58 से ग्रामीण आवासीय योजना, खादी ग्रामोद्योग कार्यक्रम आदि को संचालित कर ग्रामीण विकास पर ध्यान केन्द्रित करने की कोशिशे की गई।

11 वीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012) के लिए ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए अधिक-से-अधिक धन के आवंटन हेतु प्रतिस्पर्धा प्रदर्शित की गई थी। लोगों की आशाओं और आकांक्षाओं के अनुरूप विकास का लक्ष्य हासिल करने के लिए स्वयं सहायता समूहों और पंचायतीराज संस्थाओं के जरिए विकास प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी पर बल दिया था। प्रमुख विकास कार्यक्रम इस प्रकार है –

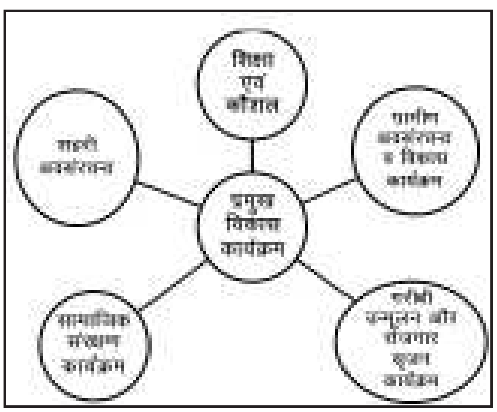

ग्रामीण क्षेत्रों और निर्बल वर्गों का समुचित और सर्वांगीण विकास सुनिश्चित करने हेतु पूँजी प्रधान उत्पादन प्रक्रिया को प्रधानता देने के स्थान पर श्रम प्रधान उत्पादन प्रक्रिया को बढ़ावा देना अपरिहार्य है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों और ऋण प्रदान करने वाली विदेशी संस्थाओं के प्रलोभन तथा दबाव में आकर आदि पश्चिमी माडल का अनुकरण करना हमारी विवशता हुई, तो इसके परिणाम ग्रामीण विकास के लिए विशेष रूप से नकारात्मक ही होंगे, ग्रामीण क्षेत्रों में श्रम प्रधान लघु तथा कुटीर उद्योगों की स्थापना को बढ़ावा देकर वहां के मूल उत्पादों में मूल्य अभिवृद्धि करना। तभी संभव हो पाएगा और इससे वहां आर्थिक विकास की प्रक्रिया भी तेज हो सकेगी।

विभिन्न कल्याणकारी और विकास योजनाओं के संचालन से संबंधित सरकारी ढांचे में बदली हुई,सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परिस्थितियों के मद्दे नजर आमूल-चूल परिवर्तन करना भी आज समय की जरूरत है। चूंकि ये सभी कार्यक्रम त्रिस्तरीय पंचायतों के माध्यम से चलाए जाने की व्यवस्था की जा रही है। अत: इनसे जुडे हुए सरकारी खर्चों में कटौती करनी होगी और इस प्रकार बचे हुए संसाधनों को अविकसित क्षेत्रों के लिए सभी आवश्यक जन सुविधाओं से आच्छादित करने हेतु प्रयोग में लाना होगा, इसके अतिरिक्त जिन सरकारी कर्मियों को इन योजनओं से सम्बद्ध किया जाए। वे संबंधित वातावरण एवं समस्याओं से पूर्णतया परिचित तथा विकास को समर्पित होने चाहिए। इसके लिए आवश्यक व्यवस्था भी सुनिश्चित करनी होगी। देश में वर्तमान में चलाए जा रहे विभिन्न रोजगार और विकास कार्यक्रमों का विवरण अग्रवत प्रकार से बताया जा सकता है –

विविध कार्यक्रम व योजनाएँ

A. गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार सृजन कार्यक्रम –

1. मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम)
2. राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन
3. स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना अथवा राष्ट्रीय शहरी आजीविका मिशन

B. समाजिक संरक्षण कार्यक्रम –

1. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम
2. अटल पेंशन योजना
3. प्रधानमंत्री जीवन सुरक्षा योजना
4. प्रधानमंत्री जन धन योजना
5. आम आदमी बीमा योजना
6. राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना
7. असंगठित कामगार सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 2008 एवं राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा निधि
8. प्रधानमंत्री जीवन ज्योति बीमा योजना

C. शहरी अवसंरचना कार्यक्रम –

1. जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण
2. राजीव आवास योजना

D शिक्षा और कौशल –

1. सर्व शिक्षा और अभियान
2. मध्यान्ह भोजन योजना
3. माडल स्कूल योजना
4. दीनदयाल ग्रामीण कौशल योजना

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

5. राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान
6. प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना

E. ग्रामीण अवसंरचना एवं विकास कार्यक्रम –

1. निर्मल भारत अभियान
2. राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम
3. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना
4. इंदिरा आवास योजना

योजनाओं के लाभ –

1. गरीबी उन्मूलन और रोजगार वृद्धि में सहायक
2. स्वास्थ्य और सामाजिक बीमा द्धारा आर्थिक लाभ
3. ग्रामीण सड़कों और पेयजल हेतु कार्यक्रमों से ग्रामीण विकास में वृद्धि
4. शहरों में परिवहन, सड़क और स्वास्थ्य सुविधाओं का विकास
5. ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का विस्तार

निष्कर्ष – उपरोक्त से स्पष्ट है कि विविध शासकीय योजनाओं के माध्यम से सरकार भारत में विकास की गति तेज करना चाहती है। विविध रोजगार कार्यक्रमों के माध्यमों से सरकार रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने जा रहे हैं। आवश्यकता इस संबंध में उपर्युक्त योजनाओं को ईमानदारी और कठोरता से लागू करना है। अत: योजनाओं का सही क्रियांवयन किया जाना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारत सरकार का नवीनतम बजट।
2. प्रतियोगिता दर्पण भारतीय अर्थव्यवस्था।
3. दैनिक भास्कर (समाचार पत्र)।
4. Wikipedia – Economic Development in India
5. www.tradingeconomics. com

****

जी.एस.टी- कर एक फायदे अनेक

डॉ. अनिल तौहेल *

प्रस्तावना – कराधान का मुख्य उद्देश्य सरकारी व्ययों की पूर्ति करना होता है। कर वह शुल्क की दर है, जो सरकार द्वारा व्यक्तियों, उत्पादों और सेवाओं पर लगाया जाता है। कर सरकार द्वारा सार्वजनिक हितो के लिए अनिवार्यत: खर्च किया जाने वाला कोश है, तथा यह सेवाओं के बदले किया जाने वाला भुगतान नहीं है। कर वह अनिवार्य शुल्क है, जो सरकार द्वारा अपने सामान्य व्ययो की पूर्ति के लिए नागरिकों पर लगाया जाता है, करदाता अपने द्वारा भुगतान किए गए करों के बदले में समान लाभों का दावा नहीं कर सकता। कर दो प्रकार के होते हैं–

1. प्रत्यक्ष कर
2. अप्रत्यक्ष कर

1. प्रत्यक्ष कर – प्रत्यक्ष वे कर होते है, जो जिस व्यक्ति की आय तथा संपत्ति पर लगाए जाते है, उसका व्ययभार उसे ही वहन करना पडता है इसके उदाहरण है– आयकर, धनकर आदि।

2. अप्रत्यक्ष कर – ये कर जिन व्यक्यिों पर लगाए जाते है, उन पर इसका भार नहीं पड़ता क्योंकि वे इसका व्यय भार दूसरे व्यक्यिों पर ढकेल देते है इसके उदाहरण है –

उत्पादन कर, बिक्री कर, सेवाकर , म.प्र. वेट, आयात निर्यात शुल्क आदि। मंहगाई को नियंत्रित करने और सम्पूर्ण देश में मूल्य में एकरुपता लाने के उद्देश्य से एक एसी कर कर प्रणाली की आवश्यकता कई वर्षो से थी। जो वस्तुओं के मूल्य को नियंत्रित करे और प्रत्येक राज्य में एक ही वस्तु के उपभोग पर अलग–अलग मूल्य का भुगतान न करके समान मूल्य देना पड़े। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु जी0एस0टी0 अर्थात् गुड्स एण्ड सर्विसेस टेक्स जिसे वस्तु एंव सेवा कर भी कहते है, लागू किया गया।

आज देश में अनेक करो के कारण अधिकांश वस्तुओं और सेवाओं की लागत पर प्रभाव पड़ता है, जी.एस.टी. के अधीन निर्यात् से लेकर उपभोक्ता तक केवल एक ही कर लगेगा जिससे अंतिम उपभोक्ता पर लगने वाले करो में पारदर्शिता को बढ़ावा मिलेगा।

केंद्र और राज्य स्तर पर जी.एस.टी. के अंतर्गत् निम्न करों को सम्मिलित किया जाएगा।

केंद्र स्तर पर –

A. केंद्रीय उत्पाद शुल्क
B. अतिरिक्त उत्पाद शुल्क
C. सेवा कर
D. अतिरिक्त सीमा शुल्क (काउंटर वेलिंग डयूटी)
E. सीमा शुल्क

राज्य स्तर पर–

A. राज्य मूल्य संवर्धन कर/बिक्री कर।
B. मनोरंजन कर।
C. चुंगी और प्रवेश कर।
D. खरीद कर।
E. विलासिता कर।
F. लॉटरी, सट्टा और जुआ पर कर।

भारत के संघीय ढांचे को ध्यान रखते हुये जी.एस.टी. के दो घटक होंगे।

1. केंद्रीय जी.एस.टी. (CGST)
2. राज्य जी.एस.टी. (SGST)

केंद्र और राज्य दोनों एक साथ मूल्य श्रृंखला पर वस्तु और सेवा कर (जी.एस.टी.) लगाएंगे। केंद्र अपना केंद्रीय वस्तु और सेवा कर लगाएगा और कर संग्रह करेगा और राज्य अपने राज्य के अंदर सभी सभी कारोबार पर राज्य वस्तु और सेवा कर लगाएगें। इस हेतु केन्द्र वा राज्य सरकारो ने मिलकर वस्तु और सेवा कर नेटवर्क (जी.एस.टी.एन.) बनाया है। यह लाभ रहित गैर सरकारी कम्पनी के रुप में पंजीकृत है। ताकि केन्द्र और राज्य सरकारों को टेक्स देने वालो के लिए साझा सूचना प्रौधोयोगिकी (आई टी) अवसंरचना उपलब्ध कराई जा सके।

जी एस टी एन साझा जी एस टी पोर्टल सहित अत्याधुनिक आई टी अवसंरचना के विकास का कार्य कर रही है। इससे पंजीकरण, रिटर्न तथा सभी करदाताओ का भुगतान और राज्यों के लिये बैंक एवं आई टी मौडयूल प्रदान करना है। इसमें रिटर्न प्रोसेसिंग पंजीकरण और आर्डर एसेसमेंण्ट अपील शामिल है।

जीएसटी के लाभ–

1. जीएसटी के अंर्तगत् पंजीकरण, रिटर्न, भुगतान, आदि जैसी सभी कर भुगतान सेवाएं करदाताओं को आनलाईन उपलब्ध होंगी। जिससे इसका अनुपालन बहुत सरल और पारदर्शी हो जायेगा।
2. कर की दरों और संरचनाओं में एकरुपता होगी।
3. टैक्स क्रेडिट की प्रणाली से यह सुनिश्चित होगा कि करो पर कम से कम कराधान (कैसकेडिंग) हो। इससे वस्तुओ की लागत कम होगी।
4. लेनदेन लागत घटने से व्यापार और उद्योग के लिए प्रतिस्पर्धा में सुधार होगा।
5. वस्तुओं और सेवाओं की लागत में कमी के कारण भारतीय वस्तुओं और सेवाओं की अंर्तर्राष्ट्रीय बाजार में होने वाली प्रतिस्पर्धा में बढोत्तरी

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय तिलक महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.) भारत

होगी और भारतीय और भरतीय निर्यात को बढावा मिलेगा।

6. केंद्र और राज्य स्तर पर बहुआयामी अप्रत्यक्ष करों को जी0एस0टी0 लागू करके हटाया जाएगा। जिससे प्रशासन
7. मजबूत सूचना प्रोद्यौगिकी बुनियादी ढाचे के कारण जी. एस. टी. से बेहतर अनुपालन परिणाम प्राप्त होंगे।
8. जी.एस.टी. से सरकार के कर राजस्व की वसूली की लागत में कमी आएगी।
9. निपुणता बढ़ने और कदाचार पर रोप के कारण अधिकांश उपभोक्ता वस्तुओं पर समग्र कर भार कम होगा।
10. सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि होगी।
11. रोजगार का सृजन होगा।
12. निवेश में बढोत्तरी होगी।

जी.एस.टी. 01 अप्रेल 2017 से सितम्बर 2017 के मध्य लागू होने की संभावना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर, दिनांक 21.10.2016
2. दैनिक भास्कर, दिनांक 18.12.2016
3. www.amarujala.com
4. hindi.bankersadda.com
5. aajtak.intoday.in

****

Role Of Media In Development Of Rural Society

Dr. Rashmi Gupta *

Introduction - Mass communication is "the process by which a person, group of person, or large organization creates a message and transmits it through some type of medium to a large, anonymous, heterogeneous audience. This implies that the audience of mass communication are mostly made up of different cultures, behavior and belief systems. Mass communication is regularly associated with media influence or media effects, and media studies.

The history of communication stretches from prehistoric forms of art and writing through modern communication methods such as the Internet. Mass communication began when humans could transmit messages from a single source to multiple receivers. Mass communication has moved from theories such as the hypodermic needle model (or magic bullet theory) through more modern theories such as computer-mediated communication.

Functions of Media in Rural development - Media can perform various functions in promoting consciousness for development of rural areas. Broadly, Media helps contribute in three spheres which will in turn makes our society cohesive and better organized.

The three areas are **(a) Economic (b) Social (c) Political -** We are one of the few countries in the developing world where right to information has been granted to people. Media has been in the forefront of the campaign for the right to information. The right to information gives a real teeth to democracy which will provide a sense of security and power to the beleaguered of society and give them confidence in system.This confidence is essential for national reconstruction. The media has a symbiotic relationship with democracy, which in rural terms means empowering the weak. The two cannot exist without each other. The essentials of democracy are well informed citizenry, an equal and effective right to every member of society to participate in the affairs of the state and accountability of all those who are exercising public power and utilizing public resources. Media is the fourth estate of a democratic polity and scrutiny of public affairs and ascertaining accountability of those who are in the power is its job. Besides, the media also provides intelligence it puts by initiating public debates and this improves the quality of governmental decisions. A real and participatory democracy in which decision -making is done in full public view is the best guarantee of achieving all round development.

(a) Economical - In the sphere of economic inputs media can help a person find alternative ways of making a living, which would reduce the pressure on land and raise a family's economic status. Media can help create demand for goods and motivate local initiatives to meet rising demands. It can also help sensitize people to broaden the entrepreneurial base, media's contribution to overall economic development has been fully realized and it has become a self- perpetuating process.

(b) Sociological - In the sociological sphere of activity media aids in the process of status change form heredity to achievement. In our feudal society with its sharp caste and class differences media can help shift influence from age and traditional status to knowledge and ability.To the traditional leaders to compete for status retention media motivates to acquire knowledge and adapt to changes. Media can also help bring about greater equality and a greater respect for human dignity and make cultural and social change a self- perpetuating process.

(c) Political - In the political sphere of its activity media helps in the process of power change from heredity to achievement. It motivates traditional leaders to defend their power by raising their information level and helps the masses recognize their own importance in the power structure and act as a stimulus to political participation. Media helps the government learn of the needs of the public and plan its programs and makes the public know of government plans and programs.Media also helps a community achieve power through mutual cooperation, something which is our concern at the moment and makes a political growth a self-perpetuating process. To sum up we can say that media bring about greater equality and respect for human dignity in the political arena.

Internet- The new media of development - computer could meet the needs of a large rural community. Although the Internet is not a solution for rural development problems, it can open new communication channels that bring new knowledge and information resources to rural communities

*Deptt. of Economics, Maharani Jijabai Govt. Girls P. G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) INDIA

Traditional communication channels have been used successfully but these have been monologist and have not allowed for much interaction with users. Radio for example has been very effective for disseminating information to all types of audiences, but broadcasting time are sometimes not appropriate for most people. But radio corould be linked to the internet, and a few initiatives have been started on this concept. Broadcasters could then disseminate the latest information promptly. Some examples of areas where Information and Communication Technologies(ICTs) could play a catalytic role in developing rural areas include -

Decision making process - Sound decision making is dependent upon availability of comprehensive, timely and up to date information.

Market outlook - Farmers could promote their products and handle simple transactions such as orders over the web while payment transactions for the goods can be handled offline. It has been shown to be cheaper and faster to trade online than on paper -based medium, telephone or fax. Electronic-commerce could, therefore, enable entrepreneurs to access global market information and open up new regional and global markets that fetch better prices and increase farmers earning.

Empowering rural communities – ICTs can empower rural communities and give them "a voice" that permits them to contribute to the development process. With new ICTs, rural communities can acquire the capacity to improve their living conditions and become motivated through training and dialogue with others to a level where they make decisions for their own development . Giving rural people a voice means giving them a seat at the table to express their views and opinions and become part of the decision making process. The approach should be participatory and could lead to improved policy formation and execution. improved policy formulation and strategies, however, require "an educated and informed populace to reduce poverty, excessive population growth, environmental degradation and other factors that are most often the direct causes of hunger". New ICTs have the potential to penetrate under-serviced areas and enhance education through distance learning, facilitate development of relevant local content and faster delivery of information on technical assistance and basic human needs such as food, agriculture, health and water. Farmers can interact with other farmers, their families, neighbors, suppliers, customers and intermediaries and this is a way of educating rural communities. The internet can also enable the remotest village to access regular and reliable information from global library (the web). Different media combinations may, however, be best in different cases- through radio, television, video cassettes, video conferencing, computer programs, and print, CD-ROM or the internet. Rural areas also get greater visibility by having the opportunity to disseminate information about their community to the whole world.

Targeting marginalized groups - Most rural poor people lack the power to access information. ICTs could benefit all stakeholders including the civil society, in particular youth and women .Other disadvantaged groups that could be targeted include the disabled and subsistence peasants. · Creating employment - Through the establishment of rural information centers, ICTs can create employment opportunities in rural areas by engaging telecentre managers, subject matter specialists, information managers, translators and information technology technicians. Such centers help bridge the gap between urban and rural communities and reduce the rural-urban migration problem. The centers can also provide training and those trained may become small scale entrepreneurs

Conclusion - Traditional media and new Information and Communication Technologies (ICTs) have played a major role in diffusing information to rural communities, and have much more potential. There is a need to connect rural communities, research and extension networks and provides access to much needed knowledge, technology and services. Studies on information systems serving rural communities have focused on specific sectors such as agriculture or health, instead of covering the rural community needs in a holistic manner. Rural information systems must involve rural communities and local content must be of prime importance. Traditional media have been used very successfully in developing countries, and rural radio in particular has played a major role in delivering agricultural messages. Print, video, television, films, slides, pictures, drama, dance, folklore, group discussions, meetings, exhibitions and demonstrations have also been used to speed up the flow of information. New ICTs, however, have the potential of getting vast amount of information to rural populations in a more timely, comprehensive and cost effective manner and could be used together with traditional media. New ICTs are becoming more accessible and users can obtain information from various sources.

References :-

1. Bhasha Kaushal Evam Sanchar Sansadhan
2. ICTs and Development in India by T.T. Shreekumar
3. Mass Media and Rural Development by Joseph, JoniC
4. Communication and Extension in Rural Development
5. Gram Vikas mein Sanchar Evam Vistar

****

ब्रिटिश कालीन भारत में उद्योगों का विकास

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति में अर्थ का महत्वपूर्ण स्थान है। अर्थ की वह महत्वपूर्ण पहलू है, जो किसी देश या राष्ट्र की समृद्धि व वैभव का द्योतक है। भारत प्राचीनकाल से ही सोने की चिड़िया कहलाता रहा है, कंपनी के शासनकाल में अपनायी गयी अर्थ नीतियों के कारण निर्धनता के द्वार पर खड़ा हो गया। क्राउनकाल में ब्रिटिश शासन का मूलभूत उद्देश्य भारत के आर्थिक हितों का शोषण करना ही था। क्राउनकाल में भारत में उत्पन्न राजनीतिक परिस्थितियों ने शासन को आर्थिक क्षेत्र में जिस थोड़ी बहुत उदारता का रूख अपनाने पर विवश कर दिया, उससे भारत ने आधुनिकता का बाना तो पहना, परंतु कुल मिलाकर भारत का आर्थिक दृष्टि से शोषण ही हुआ।

ग्राम समाज व्यवस्था का पतन – ग्राम समुदाय एक प्रकार के लघु गणतंत्र हैं। अपनी आवश्यकता की प्राय: सभी वस्तुओं का उत्पादन ये ग्राम समुदाय स्वत: ही कर लेते हैं। इनके विदेशी संबंधों से कोई सरोकार नहीं है, विभिन्न राजवंशों के शासनकाल में भी इनका अस्तित्व यथावत बना रहा है। ग्राम व्यवस्था 'आत्मनिर्वाही' थी। हस्तशिल्प एवं कृषि का सुंदर समन्वय था। मार्क्स ने इस जीवन को 'एशिया के समाजों की अपरिवर्तनशीलता' की संज्ञा से अभिहित किया गया। परंतु अंग्रेजों ने ग्राम समाज व्यवस्था के मूल आधार को ही नष्ट कर दिया। न्याय का जो कार्य पंचायतें करती थीं उनका स्थान अब अदालतों (न्यायालयों) ने ले लिया। इस प्रकार ग्राम्य समाज व्यवस्था का जो स्वरूप अबाध रूप से थपेड़ों को सहता चला आ रहा था परंतु अपने अस्तित्व को कायम किए हुए था, अब टूट गया। अत: भारतीय अर्थव्यवस्था का ढाँचा चरमरा गया।

प्राचीन लघु उद्योगों का पतन – प्राचीनकाल में जब रोम के निजी एवं सार्वजनिक उपक्रमों में भारतीय कपड़ा, दीवार दरी, तामचीनी, मोजके, हीरे जवाहरात आदि का उपयोग होता था, जब से औद्योगिक क्रांति के प्रारंभ तथा आकर्षक एंव उद्दीपक वस्तुओं के लिए सारा संसार भारत का मोहताज हो गया।

यूरोप में हुई औद्योगिक क्रांति से इंग्लैण्ड का तो मशीनीकरण के कारण कच्चे माल एवं तैयार माल के लिये मंडियों की नितांत आवश्यकता थी। अत: 1769 ई. में भारत में स्थित ब्रिटिश ऐजेन्टों को कंपनी के डायरेक्टरों ने आदेश दिए कि वे भारत में ऐसी नीतियों को अपनाएं जिससे भारत से निर्यात किए जाने वाले बुने हुए सिल्क के स्थान पर कच्चे रेशम का निर्यात हो। 1773 ई. तक कंपनी ने भारत को कच्चे माल का निर्यातक देश बनाने की योजनाओं पर विचार करना प्रारंभ कर दिया।

1833 ई. के पश्चात् कच्चे माल का निर्यात निम्न तालिका से स्पष्ट है

वर्ष	कपास	ऊन	खाद्यान्न
1833	लगभग 4 लाख मन लगभग	4,625 मन	–
1844	लगभग 11 लाख मन	लगभग 33750 मन	–
1845	–	–	लगभग 8.58 लाख पौंड का
1858	–	–	लगभग 38 लाख पौंड का
1877	–	–	लगभग 79 लाख पौंड का
1901	–	–	लगभग 93 लाख पौंड का

जहां एक ओर कच्चे माल का निर्यात बढ़ा वहीं दूसरी ओर भारतीय कपड़े का निर्यात दिन प्रतिदिन कम होता चला गया। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट्री पेपर्स (1814 – 1856) से प्राप्त आंकड़े इस कथन की पुष्टि करते हैं –

वर्ष	भारत में ब्रिटेन को निर्यात कपड़ा (गज में)	ब्रिटेन से भारत को निर्यात कपड़ा (गज में)
1814	1266608	8,18,208
1821	534495	1,91,38,726
1828	422504	4,28,22,077
1835	306068	5,17,77,277

ब्रिटिश साम्राज्ँयवादियों ने विश्व के अन्य देशों से भी भारतीय निर्यात के कपड़े के अवरूद्ध कर दिया। यह अंग्रेज घुसपैठिया था, जिसने भारतीय खड्डी व चरखे को तोड़ डाला, पहले इंग्लैण्ड ने भारतीय सूती माल को यूरोपीय मंडियों से बाहर निकाला और फिर भारत में जो सूती कपड़े की माँग थी, उसे अंग्रेजी माल को भेजकर सूती माल की बाढ़ ला कर रख दी। 1881 ई. से 1911 ई. के मध्य बीच उत्पादन निर्माण कार्य एवं खनिज उत्पादन निर्माण कार्य एवं खनिज कार्यो में लगे श्रमिकों की प्रतिशत दर 35 से घटकर 17 प्रतिशत रह गयी।

प्रथम विश्व युद्ध तक औद्योगिक विकास – उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से भारत में आधुनिक उद्योगों की स्थापना की गई। 1850 – 60 ई. के दशक में वस्त्र एवं पटसन उद्योग की स्थापना की गई। इसी बीच रेल निर्माण कार्य शुरू हुआ और कोयला खनन उद्योग भी विकसित स्थापित किया गया। इसके अतिरिक्त बागान उद्योग तथा रेशम से संबंधित मरम्मत में सुधार

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

कार्य के लिए छोटे मोटे इंजीनियरिंग कारखाने भी खोले गए। रेल निर्माण के कार्य को छोड़कर सरकार ने औद्योगिक क्षेत्र में कोई दिलचस्पी नहीं ली। देश के आधुनिक उद्योगों की स्थापना का कार्य मुख्य रूप से निजी ब्रिटिश पूंजी और उद्यम के सहारे किया गया। इसके लिए व्यवसाय संगठन की एक विशेष प्रणाली को अपनाया गया, जिसे मैनेजिंग ऐजेन्सी का नाम दिया गया। यह प्रणाली स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ समय बाद तक देश में बनी रही। मैनेजिंग ऐजेन्टों ने तकनीकी जानकारी, वित्त और प्रबंध आदि की आवश्यक सेवाऐं उपलब्ध कराके आधुनिक उद्योगों की स्थापना और संचालन में महत्वपूर्ण हाथ बंटाया। 1881 ई. के फैक्ट्री एक्ट के बाद 1914 ई. तक भारत का औद्योगीकरण जानकारी रहा, यद्यपि इसकी गति धीमी थी। भारत में विभिन्न उद्योग जिन क्षेत्रों में केन्द्रित थे, वे इस प्रकार थे बंगाल में जूट उत्पादन, बंबई में कपास, पंजाब में कपड़े के कारखाने, कराची में खेती, कागज उद्योग, माचिस भारी रासायनिक पदार्थ, काँच उद्योग आदि को साम्राज्यवादी सरकार का भारी विरोध तथा रूकावटों का सामना करना पड़ा।

देश में उन्नीसवीं शताब्दी में मध्ययुग में आधुनिक उद्योगों की शुरूआत हुई लेकिन विदेशी पूँजी और उद्यम ने ऐसे उद्योगों को चुना जिसमें कम से कम समय में अधिक से अधिक लाभ कमाया जा सके।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ में स्वदेशी आंदोलन से औद्योगिक विकास को थोड़ा बहुत बढ़ावा मिला। भारतीय पूँजी और उद्यमकर्ता विशेष रूप से पारसी, गुजराती और मारवाड़ी इस क्षेत्र में भाग लेने लगे। साबुन, दियासलाई, पेन्सिल, चमड़ा, एल्यूमिनियम आदि अनेक छोटे बड़े कारखाने देश में खुलने लगे। निसंदेह इस बीच सबसे बड़े महत्वपूर्ण और दूरदर्शी उद्यमी जमशेद जी टाटा रहे। इस प्रकार प्रथम विश्वयुद्ध के आरंभ में होने तक देश में मुख्य रूप से हल्के उद्योगों का विकास हुआ प्रगति बहुत धीमी और थोड़ी थी। सरकार की भारत विरोधी आर्थिक व औद्योगिक नीति, देश में पूँजी, तकनीकी श्रमिकों एवं कुशल व्यवस्थापकों की कमी आदि इसके लिए जिम्मेदार थे।

प्रथम विश्वयुद्ध काल (1914 से 1918 ई.) – प्रथम विश्वयुद्ध काल में उद्योगों को बढ़ाने के लिए कुछ अवसर मिला। युद्धकाल में औद्योगिक वस्तुओं का आयात बहुत कम हो गया। देश के उद्योगों को विदेशी प्रतियोगिता से बचकर पनपने का अच्छा अवसर मिला। इसके अतिरिक्त युद्धकाल में लोहा और इस्पात, सूती वस्त्र, पटसन के पदार्थ ऊनी व चमड़े के माल, साबुन आदि अनेक औद्योगिक वस्तुओं की मांग में भारी वृद्धि हुई। बाजार की इस तेजी से देश के उद्योगों को विशेष बढ़ावा मिला और फिर युद्धकाल के दौरान उद्योगों के प्रति सरकार के रूख व नीति में कुछ अनुकूल परिवर्तन आया। इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सुरक्षा की दृष्टि से भारत एक कमजोर कड़ी सिद्ध हुआ। सरकार ने इस गलती को महसूस किया और देश के उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए कुछ कदम उठाये। भारतीय उद्योगों ने उत्पादन मात्रा और उद्योगों के लाभ में भारी वृद्धि हुई। इस बीच रोजगार की मात्रा भी काफी तेजी से बढ़ी। विभिन्न कारखानों में लगे श्रमिकों की संख्या 1919 ई. में 11.7 लाख थी, जबकि 1909 ई. यह 7.9 लाख के लगभग थी। फिर भी देश में कल पुर्जो, मशीनों, रासायनिक वस्तुओं तथा अन्य आवश्यक साज सामान की कमी के कारण युद्ध जनित अवसरों से पूरा पूरा लाभ उठाया नहीं जा सका। इन सब चीजों के लिए हम विदेशों पर निर्भर थे। युद्धकाल में इनका आयात कठिन बन गया था, फलस्वरूप अवसर मिलने पर भी मूल व भारी उद्योगों के अभाव में देश के उद्योग पर्याप्त तेजी से आगे ने बढ़ सके।

आधुनिक उद्योगों का विकास – भारत में आधुनिक उद्योगों के विकास की दृष्टि से अत्यंत लाभकारी रहा है। 23 जुलाई 1853 ई. को मार्क्स ने कहा था कि एक बड़े देश में जहां लोहा और कोयला ही रेल का जाल बिना उसके उद्योग को बढ़ने का अवसर दिए बिना बनाए रखना असंभव है, इसलिये रेलवे व्यवस्था की भारत के आधुनिक युग का अग्रदूत बन जायेगी। रानाडे ने तो यहां तक कहा है कि कारखाने एवं मिले राष्ट्र की गतिविधियों को अधिक प्रभावशाली ढंग से प्रेरित करेंगी।

1. **कोयला उत्पादन –** कोयले के उत्पादन में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। 1869 से 1878 ई. तक कोयले के उत्पादन में दुगनी वृद्धि हुई। रानीगंज की खानें कोयले के लिये विख्यात थीं। बिहार, बंगाल, उड़ीसा में कोयला उद्योग को विकसित किया गया। फलस्वरूप 1894 – 95 ई. में कोयला खानों की संख्या 123 पहुँच गई। और 1936 तक भारत ने 2,50,00,000 टन प्रतिवर्ष कोयले का उत्पादन किया।

2. **कपड़ा उद्योग –** क्राउनकाल में कपड़ा उद्योग का भी विकास हुआ। 1854 ई. में पहली आधुनिक मिल बम्बई में बनी। 19 वीं सदी में इसका उत्तरोत्तर विकास होता चला गया। 1876 ई. से 1903 तक कपड़ा मिलों की प्राप्ति निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है–**(तालिका देखें अन्तिम पृष्ठ पर)**

3. **चटकल उद्योग –** चटकल उद्योग के विकास की गति 1880 से 1907 ई. तक जिस प्रकार थी वह भी निम्न तालिका से स्पष्ट है – **(तालिका देखें अन्तिम पृष्ठ पर)**

4. **चीनी उद्योग –** भारत में चीनी उद्योग का विकास प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् से ही प्रारंभ हो गया था।

वर्ष	चीनी मिलों की संख्या	चीनी का उत्पादन (टन में)
1931	30	1,58,000
1936	135	9,19,000
1940	161	25,03,000

5. **लोहा एवं इस्पात उद्योग –** लौह एवं इस्पात उद्योग का विकास द्रुत गति से हुआ। 1873 ई. में बिहार स्थित झरिया नामक स्थान पर बाराकार आइरन वर्क्स 1907 में जमषेदपुर में 'टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी' 1918 ई. में हीरापुर में 'इंडियन आइरन स्टील कंपनी' 1923 ई. में भद्रावती में मैसूर स्टेट आइरन नामक कारखाने की स्थापना इसका स्पष्ट प्रमाण है। 1939 ई. तक भारत अच्छी किस्म का 10 लाख टन से भी अधिक कच्चा लोहा तैयार करने लगा। 1947 ई. तक भारत ने 25 लाख टन से ऊपर इस्पात का उत्पादन किया।

6. **सीमेंट उद्योग –** ब्रिटिश शासनकाल में सीमेंट उद्योग का विकास 1914 ई. तक भारत में पोरबंदर स्थित इंडियन सीमेंट कंपनी कटनी स्थित कटनी सीमेंट एण्ड इंड्रस्ट्रियल कंपनी और बूँदी स्थित पोर्टलैंड सीमेंट कंपनी के उत्पादन में वृद्धि की स्थिति निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है।

वर्ष	प्रतिवर्ष सीमेंट का उत्पादन (टन में)
1914 तक	लगभग 1000 टन
1925 तक	लगभग 2,50,000 टन
1939 तक	लगभग 12,00,000 टन

7. **कागज उद्योग –** ब्रिटिश शासनकाल में कागज के उत्पादन के लिए 1879 ई. में लखनऊ में 1882 में टीटागढ़ में, 1885 में पूना में, 1889 में रानीगंज, 1939 में सूरत में तथा 1942 में हैदराबाद में कागज मिलें खुलीं।

8. **एल्यूमिनियम उद्योग –** ब्रिटिशकालीन भारत में एल्यूमिनियम की सामग्री के निर्माण हेतु 1937 ई. में कलकत्ता के समीप एल्यूमिनियम कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड एवं एल्यूमिनियम प्रोडेक्शन ने रोलिंग

मिलों की स्थापना की। 1944 ई. में एलवाम में खुले कारखाने में एल्यूमिनियम की चादरों का निर्माण वृहद मात्रा में किया गया।

9. **चर्म उद्योग –** चर्म उद्योग के विकास के लिये 1860 ई. में कानपुर में हार्नेस एंड सैडलरी फैक्ट्री का निर्माण हुआ। बम्बई एवं मद्रास में भी फैक्ट्रियों की स्थापना की गयी। उद्योगों के विकास हेतु 1930 ई. में 'हाईड्रस सेस इन्क्वारी कमेटी' गठित की गयी।

10. **कतिपय उद्योग –** उपर्युक्त उद्योगों के अतिरिक्त शीषा, जहाज एवं दवा से संबंधित उद्योगों का भी विस्तार हुआ। 1947 ई. तक भारत में 100 शीशा मिलों की स्थापना हुई। विशाखापट्नम जहाजों के निर्माण का प्रमुख केन्द्र था। सिन्धिया स्टीम नेवीगेशन कंपनी का गठन वास्तव में जहाज उद्योग के विकास को दृष्टिगत रखते हुए ही किया गया था। कलकत्ता, मद्रास, बिहार, एवं बंगलौर में दवा बनाने की कंपनियों की खुलना नि:संदेह अत्यंत महत्वपूर्ण था।

द्वितीय विश्वयुद्ध के काल में उद्योगों का विकास – द्वितीय विश्वयुद्ध के काल में भारतीय उद्योगों के विकास को और बढ़ावा मिला इस अवधि में इंगलैंड, जापान, जर्मनी आदि अनेक देशों से आयात बहुत कम हो गया। एक तो इन देशों के उद्योग युद्ध संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति में लगे हुए थे। इसी बीच जहाजरानी की बड़ी कमी हो चुकी थी। और माल भेजने में भी खतरा बढ़ गया था। आयात में भारी कमी होने से देश के उद्योगों को अतिरिक्त संरक्षण मिला, जिससे उसके विकास की गति तेज हो गयी। युद्धकाल के दौरान हमारे औद्योगिक माल की मांग में देश विदेश की मंडियों में भारी वृद्धि हुई। शीघ्र ही अनेक मध्यपूर्व और सुदूरपूर्व के देशों को माल भेजने का भारत मुख्य देश बन गया।

मांग में इस भारी वृद्धि से कीमतों और लाभ में वृद्धि हुई, जिससे उद्योगों के विस्तार में विशेष प्रोत्साहन व सहायता मिली। 1939 – 1945 ई. के बीच सूती वस्त्र का उत्पादन 411 करोड़ गज से बढ़कर 471 करोड़ गज तथा कागज का उत्पादन 67 हजार टन से बढ़कर 106 हजार टन हो गया। 1939 से 1943 ई. के बीच इस्पात का 38 प्रतिशत सीमेंट का 45 प्रतिशत तथा चीनी का 30 प्रतिशत उत्पादन बढ़ा। युद्ध का लघु एवं कुटीर तथा मध्यमाकार के उद्योगों पर विशेष अनुकूल प्रभाव पड़ा। देश में वस्तुओं की कमी और तेजी से बढ़ती हुई कीमतों से इन उद्योगों को बहुत प्रोत्साहन मिला। देश औद्योगिक विकास के पथ पर पहले की अपेक्षा अधिक तेजी से बढ़ने में सफल हुआ। औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार में 103 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

इस प्रकार युद्धकाल में देश में औद्योगिक विकास की गति तेज तो हुई लेकिन देश औद्योगिक क्षेत्र में उतनी तेजी से प्रगति नहीं कर सका जितना कि उसे अवसर मिला था। युद्धकाल में देश में अनेक समस्याऐं उठ खड़ी हुई जिनका आगे चलकर उद्योगों पर प्रतिकूल प्रभाव। पुरानी मशीनों के प्रतिस्थापन की समस्या, अविचारित एवं असम्बद्ध ढंग से उद्योगों का विस्तार, व्यवसाय के नैतिक आधार का कमजोर होना, देश के विभाजन से उत्पन्न समस्याऐं रहीं जिस कारण काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इसके कारण औद्योगिक क्षेत्र की कठिनाइयों में वृद्धि हुई।

भारत में औद्योगिक विकास की प्रक्रिया में दो नये वर्गों का उदय हुआ पहला पूँजीपति वर्ग और दूसरा औद्योगिक सर्वहारा वर्ग। ये दोनों ही वर्ग 1857 ई. के बाद के आधुनिक भारत की उपज हैं। और दोनों ही वर्गों ने भारत के राजनैतिक विकास में अपने – अपने स्थान पर भूमिका का निर्वाह किया। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान भारतीय पूँजीपतियों ने भारी मात्रा में उद्योगों में पूँजी लगायी इससे उद्योगों का विकास हुआ, रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई। स्वदेशी आंदोलन ने इनके विकास में विशेष योगदान दिया किंतु दूसरी ओर श्रमिकों के शोषण ने श्रमसंघों को जन्म दिया, इससे श्रम आंदोलन को बढ़ावा मिला।

इस प्रकार ब्रिटिश काल में भारत में बड़े उद्योगों की स्थापना एवं विकास का काल है। इस काल में जिस औद्योगिक संरचना का आधार मंच तैयार किया गया, उसी पर आगे चलकर स्वतंत्र भारत में औद्योगिक उन्नति की आधारषिला रखी गयी। किन्तु यह बड़े खेद का विषय है कि ब्रिटिश सरकार ने भारत के विकसित कुटीर एवं ग्रामोद्योगों के प्रति नकारात्मक रवैया अपनाया एवं उन्हे नष्ट कर अपना आर्थिक स्वार्थ पूर्ण करने के भरसक प्रयास किये। परिणामत: तत्कालीन भारत की ग्राम स्वावलम्बन पर आधारित अर्थव्यवस्था भी भंग हो गयी।

भारत कुटीर उद्योगों के पिछड़ेपन को लेकर स्वतंत्र हुआ। इसका मूल्य कारण यह था कि ब्रिटिश शासनकाल में न तो सरकार ने सक्रिय भाग लिया और न आवश्यक सुविधाऐं प्रदान की। इनमें तकनीकी जानकारी, पूँजी एवं आवश्यक साज समाज की कमी तथा विदेशी प्रतियोगिता के कारण विश्वयुद्ध के पश्चात् माँग में वृद्धि होने एवं भारतीय उद्योगों को आरक्षण मिलने के कारण आधुनिक उद्योगों के विकास के जिस चरण में तीव्रता लाई उसने भारत में पूँजीपति वर्ग की स्थिति को दृढ़कर दिया और स्वतंत्रता की पूर्व संध्या तक भारतीय पूँजीपति वर्ग भारत में अपनी स्थिति इतनी मजबूत कर सका था कि वह राष्ट्रीय राजनीतिक निर्णयों में आसानी से अपनी निर्णयात्मक भूमिका निभा लेता। इस प्रकार भारत में बड़े उद्योगों की स्थापना के दृष्टिकोंण से ब्रिटिश काल महत्वपूर्ण काल बन गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. द पावर्टी ऑफ इंडिया – दादाभाई नौरोजी पृ. 569
2. भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्‌भव एवं विकास विपिनचंद्र पृ. 131
3. द इंडूस्ट्रियल रिवोल्यूशन ऑफ इंडिया इन रीसेंट टाइम्स डी.आ. गाडगिल पृ. 34
4. इकॉनोमिक्स हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया – आर. सी. दत्त
5. ब्रिटिश इंपीरियलिज्म इन इंडिया – जोन वशेप पृ. 27–28
6. Ruin of Indian Trade and Industries - B. D. Basu P.P. 10-11

वर्ष	मिलों की संख्या	करघों की संख्या	तकुओं की संख्या	मजदूरों की औसत दैनिक संख्या	रूई की खपत लाख हंडर में
1876	47	9139	11.00	–	–
1883	67	15373	17.90	53476	16
1893	143	28164	35.70	121500	41
1903	192	44092	50.40	18139	61

वर्ष	मिलों की संख्या	तकुओं की संख्या	करघों की संख्या	मजदूरों की औसत दैनिक संख्या
1879–80	22	70,480	4964	27494
1889–90	27	1,64,245	8204	62737
1907–08	54	5,62,274	27244	187771

****

महिलाओं के विकास में योजनाओं का मूल्यांकन

कमलराज सिंह उइके *

प्रस्तावना – आज चारों तरफ महिला विकास एंव महिला सशक्तिकरण पर विश्व के सभी देश बल दे रहे है। क्योंकि यह सर्व विदित है कि महिलाओं के विकास से ही हम अपने परिवार समाज व राष्ट्र की उन्नति सम्भव हो सकता है, चाहे वह महिला शिक्षा की बात हो या महिला आत्मनिर्भिरता की हो । हमारे संविधान निर्माताओं ने भी इस बात की अहिमियत को समझा और उन्होंने महिला आरक्षण का भी प्रावधान किया। जिससे समय समय पर उसकी आवश्यकता के अनुसार बढ़ाकर महिलाओं को विकास पर जोर देने के लिए महिला आरक्षण पचास प्रतिशत कर दिया गया ताकि महिलाएं हर क्षेत्र के विकास में अपना योगदान दे सके आज का समय ऐसा है कि धन साधन नही अपितु साध्य हो गया है। लोग पैसे के पीछे भाग रहे है, ऐसी स्थिति मे हमे अपने परिवार की सभी भौतिक सुख सुविधा प्रदान करने के लिए आर्थिक रूप से मजबूत होना पड़ेगा। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर हमारी सरकार ने महिलाओं के आर्थिक विकास के लिए बहुत सारी योजनाएं चलाई है जिससे महिलाओं को इन योजनाओं का लाभ मिल सके और अपना आर्थिक विकास तथा घर, परिवार व समाज का साथ ही देश का विकास करने में अपनी अहम भूमिका निभा सके।

भारतीय योजना – स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त अखिल भारतीय कांग्रेस समिति ने वर्ष 1947 मे पण्डित जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में आर्थिक कार्यक्रम समिति का गठन किया । इस समिति ने 25 जनवरी 1948 को अपने एक प्रस्ताव में यह सिफारिश की कि देश मे एक स्थायी योजना आयोग की स्थापना होनी चाहिए। इसी के फलस्वरूप 15 मार्च 1950 को योजना आयोग (planning commission) का गठन किया गया। जिसकी अनुशंसा पर प्रथम पचंवर्षीय योजना 1 अप्रैल 1951 से लागू हुई ।

मध्यप्रदेश योजनाएँ – मध्य प्रदेश राज्य की स्थापना 1 नवम्बर 1956 को राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिश के आधार पर मध्य भारत, महाकौशल, भोपाल राज्य एंव विन्ध्य प्रदेश घटको को मिलाकर की गई थी अत: आर्थिक नियोजन का विधिवत आरंभ तीसरी पंचवर्षीय योजना से माना जाता है क्योंकि प्रथम पचंवर्षीय योजना 1951-56 के समय तक मध्य प्रदेश राज्य का जन्म ही नहीं हुआ था मध्य प्रदेश का जन्म दूसरी पचंवर्षीय योजना 1956-61 के दौरान हुआ, लेकिन तब तक राज्य के तत्कालीन घटक मध्य भारत, महाकौशल, भोपाल राज्य एंव विन्ध्य प्रदेश अपनी अपनी योजनाएँ योजना आयोग को दे चुके थे। राज्य की स्थापना के बाद इन योजनाओं को एकीकरण किया गया।

महिला सशक्तिकरण के नये आयाम – मध्य प्रदेश सरकार ने महिलाओं के कल्याण की दिशा में अनेक महत्वपूर्ण योजनाएँ और कार्यक्रम प्रारंभ किए हैं। जिसमें महिला पचांयत में महिलाओं के मौन स्वरो को मुखर होते पाया। उन्होंने निर्णय लिया कि स्त्रियों का अपने अस्तित्व के लिए किए जा रहे संघर्ष को अनदेखा किया जाना न्यायोचित नहीं। सरकार ने भी नारी सम्मान को बरकरार रखने के लिये कारगार पहल को जरूरी समझा। पहली बार किसी सरकार ने स्त्री जीवन के हर पड़ाव पर मददगार योजनाएँ बनाई। पुरजौर कोशिश यही हैं, कि महिला सशक्तिकरण की दिशा मे समाज की आंतरिक व्यवस्था समानता की पक्षधर हो।

लाड़ली लक्ष्मी योजना – मध्यप्रदेश सरकार ने 2006 से बेटी के जन्म को बोझ समझने की धारणा को ख़ुशिया मनाने के वक्त में बदल दिया है। लाडली लक्ष्मी योजना से मध्य प्रदेश में बेटी को जन्म से लखपति होने का वरदान मिला है। लाड़ली लक्ष्मी योजना में ऐसे माता पिता जिन्होंने दो जीवित बच्चो के रहते हुए परिवार नियोजन अपना लिया हो तथा जो आगँनवाडी केन्द्रो मे पंजीकृत हो और आयकरदाता न हो अपनी कन्या का नाम दर्ज करा सकते हैं। यह योजना आगँनवाडी केन्द्रो से संचालित हो रही है। सरकार की तरफ से तीस हजार रूपये का राष्ट्रीय बचत पत्र बेटियों के मां बाप को दिया जाता है। इस राशि से जो ब्याज मिलेगा। उससे बेटियों को पांचवी कक्षा तक पढ़ने पर दो हजार रूपये एकमुश्त मिलेंगे। फिर जब बिटिया आठवीं पास करेगी तो उसे चार हजार रूपये मिलेंगे। लाड़ली लक्ष्मी जब कक्षा 10वीं मे जायेगी तब उसे रूपये 7500 की नगद मदद मिलेगी 11वी और 12वीं कक्षा मे पंहुची लाडली को पढ़ने के लिये हर महीने 200 रूपये प्राप्त होगे । बालिग होने वाली इस लाडली लक्ष्मी को योजना मे बढी हुई रकम (जो एक लाख रूपये से भी अधिक हो जाएगी) मिलेगीं जो उसके विवाह के काम आयेगी। 60 हजार से अधिक लाड़ली लक्ष्मी योजना की हितग्राही बन चुकी हैं ।

अन्नप्राशन संस्कार – अन्नप्राशन अब घर परिवार की जिम्मेदारी नहीं है मध्यप्रदेश सरकार के महिला एंव बाल विकास विभाग द्वारा समारोह पूर्वक इस योजना में छ: माह की बालिका का अन्नप्राशन आगँनवाडी केन्द्र में कराया जाता है। जिसमें कटोरी,चम्मच और खाद्य पदार्थ उपहार स्वरूप दिये जाते हैं।

बालिका शिक्षा – एक शिक्षित बालिका अपने पूरे परिवार को शिक्षित करने मे सहयोगी है। प्रदेश सरकार ने अपनी योजनाओ में इस बात का पूरा ध्यान रखा है कि धन और साधन का अभाव बालिकाओं की शिक्षा में रूकावट न डाल सके। मध्य प्रदेश सरकार के विभिन्न विभाग अपनी-अपनी योजनाओं के जरिए बालिकाओं को पुस्तके, गणवेश, विद्यालय आवागमन के लिये सायकल और छात्रवृत्ति मुहैया करा रहे हैं। जून 08 से कक्षा 6 मे प्रवेश लेने वाली प्रत्येक छात्राओं के लिये पृथक छात्रावास भी है जिनके अच्छे वातावरण मे रहकर ये शिक्षा प्राप्त कर रही हैं ।

कन्या दान योजना – प्रदेश सरकार ने समाज के सभी तबकों के लोगों का आह्वान करते हुए आवाज दी कि आइये हम सब मिलकर बेटियों का कन्या दान संस्कार कर नारी जीवन को शक्ति और रक्षा प्रदान करें। आर्थिक

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) नवीन शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला - उमरिया (म.प्र.) भारत

तंगी से भरे जीवन में सयानी होती बिटिया के हाथ पीले करने की चितां अब सरकार कर रही है। हर वर्ग के जरूरतमंद माता–पिता को उनकी बिटिया के कन्यादान में मध्यप्रदेश सरकार कन्या दान योजना से पूरा सहयोग दे रही हैं । इस योजना मे गरीब जरूरतमंद नि:शुल्क निर्धन परिवार की विवाह योग्य कन्या/विधवा/परित्याक्ता के विवाह हेतु रूपये 5000/– और सामूहिक विवाह आयोजित करने वाले व्यक्ति अथवा संस्था को रूपये 1000/– प्रति कन्या विवाह के मान से शासन द्वारा सहायता राशि उपलब्ध कराई जाती है। मुख्यमंत्री कन्यादान योजना में सामूहिक कन्यादान कराने के लिये पंचायतें नगरीय निकाय और पंजीकृत स्वैच्छिक संस्थाएं अधिकृत हैं। योजना का लाभ लेने के लिये अपने जिले के पंचायत एंव सामाजिक न्याय कार्यालय अथवा जिला कलेक्टर को आवेदन दिया जाना होगा। अब तक 60 हजार विवाह इस योजना में सम्पन्न हो चुके हैं।

भ्रूण लिगं परीक्षण पर प्रतिबंध – बालिका भ्रूण की हत्या को रोकने के लिए सरकार ने भ्रूण का लिंग परीक्षण प्रतिबंधित किया है। परीक्षण करने वाले चिकित्सक अथवा संस्था को दण्ड दिए जाने साथ ही सूचना देने वाले को रूपये 10 हजार का इनाम भी दिया जाता है।

गोद–भराई – आँगनवाड़ी केन्द्रों मे गर्भवती महिलाओं को स्वास्थ्य के प्रति सचेत रखने के लिए गोद–भराई के आयोजन किए जाते हैं। इन्हें मातृ एंव शिशु रक्षा कार्ड आयरन फोलिक एसिड की गोलिया देकर स्वास्थ्य संबंधी समझाईश दी जाती है। गोद–भराई में नारियल,सिंदूर,चूड़ियाँ और अन्य उपहार भी गर्भवती महिला को दिए जाते हैं।

नारी निकेतन – विधवा परित्याक्ता,निराश्रित,कुंवारी माताओं एंव समाज से प्रताड़ित महिलाओं को आश्रय देने के उद्देश्य से नारी निकेतन स्थापित हैं।

स्वाधार योजना – यह योजना कठिन परिस्थितियों में जीवन यापन करने वाली महिलाओं को आश्रय,पोषण, कपड़े और अन्य आवश्यक सुविधाओं को उपलब्ध कराने उनके पुनर्वास के लिए भारत सरकार के द्वारा चलाई जा रही है। जमीन भवन निर्माण केन्द्र की व्यवस्था परामर्श सेवाओं पुनर्वास हेतु गतिविधियों के प्रशिक्षण और हेल्प लाइन सुविधा के लिए राशि दिए जाने का प्रावधान हैं।

सौभाग्यवती योजना – सरकार ने अनुसूचित जन जाति की कन्याओं के विवाह में सहयोग देने के लिए सौभाग्यवती योजना इस वर्ष लागू की है। योजना के तहत गरीब परिवारों की कन्याओं के विवाह के लिए 5000 रूपये की सहायता प्रदान की जा रही है पहले यह राशि एक हजार रूपये थी। उन्होंने कहा कि सहरिया,बैगा और भारिया जैसी विशेष पिछड़ी जन जातियों के शैक्षणिंक उत्थान के लिए उनके क्षेत्रों मे संचालित सौ प्राथमिक शालाओं को 50 सीट की क्षमता वाली आश्रम शालाओं में बदलने की योजना क्रियान्वित की जाएगी।

गाँव की बेटी योजना – योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों की प्रतिभावान बालिकाओं को उच्च शिक्षा प्राप्त करने की ओर प्रोत्साहित करने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान करना है। प्रत्येक गाँव में प्रति वर्ष 12वी कक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने वाली छात्राओं को हर वर्ष 500 रूपये प्रतिमाह की दर से 10 माह तक छात्रवृत्ति दी जाती है। अभी तक 60 हजार छात्राओं को छात्रवृत्ति का लाभ दिया गया हैं। हर गाँव में मेधावी बालिकाएँ होती हैं, बारहवी उत्तीर्ण करने के बाद वे कालेज में पढ़ना तो चाहती हैं। लेकिन कालेज शहरों कस्बों मे होते हैं। साथ ही अधिकतर परिवारों की स्थिति ऐसी नहीं होती की वे लड़कियों की पढाई का खर्च उठा सकें। यहाँ तक कि सक्षम परिवार भी यह खर्च उठाने से बचते हैं। इस योजना से बडी संख्या में गाँवों की मेधावी लड़कियाँ अब कालेज की पढ़ाई कर रही हैं।

जननी सुरक्षा योजना – इस योजना का उद्देश्य महिलाओं को संस्थागत प्रसव की सुविधा उपलब्ध कराकर मातृ मृत्युदर और शिशु मृत्युदर में कमी लाना है। योजना के तहत उन सभी गर्ववती महिलाओं को इसका लाभ प्राप्त करने की पात्रता है। जिनका प्रसव शासकीय अस्पताल के जनरल वार्ड में कराया गया हो। मान्यता प्राप्त निजी सस्थां में प्रसव कराने वाली गरीबी रेखा के नीचे परिवारों तथा अनुसूचित जाति और जनजाति की महिलाओं को भी इसका लाभ प्राप्त होता है। हितग्राही महिला को शासकीय अस्पताल मे प्रसव कराने पर ग्रामीण क्षेत्र में चौदह सौ रूपयें (1400रू.)तथा शहरी क्षेत्र मे (1000रू.) एक हजार रूपये की राशि दी जाती है। प्रसव के दौरान सभी सेवाएँ नि:शुल्क प्रदान की जाती है। साथ ही गर्भवती महिला को अस्पताल तक पहुँचाने वाली प्रेरक महिला को भी ग्रामीण क्षेत्र में छ: सौ रूपये तथा शहरी क्षेत्र में दो सो रूपये प्रोत्साहन राशि दी जाती है अभी तक इस योजना से 42 लाख महिलाएँ लाभांवित हो चुकी है। योजना के क्रियान्वयन के फलस्वरूप मध्यप्रदेश मे संस्था गत प्रसवों की संख्या 27 प्रतिशत से बढ़कर 81 प्रतिशत हो गई हैं।

यह एक तथ्य है कि ग्रामीण क्षेत्रों मे घरों मे जयकी कराए जाने और यह काम पारम्परिक दाईयों के हाथों होने के कारण बड़ी संख्या में माताओं और नवजात शिशुओं की मृत्यु हो जाती है। गरीब परिवारो के पास न तो साधन होता है कि वे गर्भवती स्त्री को जयकी के लिए अस्पताल ले जाएँ और न इसके प्रति उनमें पर्याप्त जागरूकता होती है। इस योजना के क्रियान्वयन से बड़ी संख्या मे प्रसव अब अस्पतालों मे होने लगे हैं।

स्वागत लक्ष्मी योजना – मुख्यमंत्री ने 24 जनवरी 2014 को भोपाल में स्वागत लक्ष्मी योजना का शुभारंभ किया। यह योजना महिला एंव बाल विकास के सशक्तिकरण हेतु मध्यप्रदेश महिला एंव बाल विकास द्वारा प्रारंभ की गई है। इससे महिलाओं की स्थिति में सुधार होगा ।

बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं कार्यक्रम – बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं (बी बी बी पी) कार्यक्रम का शुभारंम्भ 22 जनवरी 2015 को पानीपत हरियाणा में बालिका की उत्तर जीविता, संरक्षण और शिक्षा को बढावा देने के लिए किया गया था। इसका लक्ष्य सामाजिक सोच बदलने के लिए जन आंदोलन तथा इस समस्या की विकरालता के बारे में जागरूकता फैलाकर बालिकाओं के गिरते अनुपात की समस्या का समाधान करना है (बी बी बी पी) कार्यक्रम का समग्र लक्ष्य लिंग चयन द्वारा लिंग पक्षपात के रवैये को समाप्त करना। बालिका की उत्तर जीविता और उसका सरंक्षण सुनिष्चित करना तथा बालिका की शिक्षा एंव भागीदारी सुनिश्चित करना है ।

कस्तूरबा गाँधी शिक्षा योजना – जिन जिलों में विशेष रूप से महिला साक्षरता दर बहुत कम है। उन क्षेत्रों में बालिकाओं के लिए विशेष विद्यालयों की स्थापना हेतु प्रधानमंत्री द्वारा 15 अगस्त 1997 को कस्तूरबा गाँधी शिक्षा योजना नामक एक कार्यक्रम प्रांरभ करने हेतु 1997–98 के बजट में रू. 250 करोड़ का प्रावधान किया गया था। यह योजना स्वाधीनता की 50 वीं वर्षगाँठ के अवसर पर प्रांरभ की गई थी।

सबला योजना – किशोरियों के हितार्थ एक नई योजना राजीव गाँधी किशोरी अधिकारिता योजना (Rajeev Gandhi scheme for empowerment of adolescent girls) सबला का शुभारम्भ 19 नवम्बर 2010 से किया गया है। पूर्व प्रधानमंत्री स्व.श्रीमती इंदिरा गाँधी के जन्म दिवस पर शुरू की गई इस योजना से 11 से 18 वर्ष आयु वर्ग की किशोरियों के सही मानसिक व शारीरिक विकास में मदद मिलेगी इंटीग्रेटेड चाइल्ड

डेवलपमेंट सर्विसेज के तहत इस योजना को पायलट आधार पर 200 चुनिंदा जिलों में फिलहाल शुरू किया गया है। शीघ्र ही अन्य जिलों में भी इसे लागू किया जाएगा। जिन 200 जिलों में यह योजना पायलट आधार पर लागू की गई है। उनमें उत्तर प्रदेश के 22, मध्यप्रदेश के 15, बिहार के 12, राजस्थान के 10, झारखण्ड के 7, हरियाणा के 7, हिमाचल प्रदेश के 4 व दिल्ली के 3 जिले शामिल है। इस योजना के तहत लक्षित किशोरियों को जो सेवाएँ उपलब्ध कराई जाती है। उनमें रियायती दर पर पौष्टिक आहार शामिल है। वर्ष 2013-14 के बजट में इसके लिए रू. 650 करोड की व्यवास्था की गई हैं।

सदंर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राखी डॉ. माया , जमा डॉं नुजहत - (अर्थशास्त्र) मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
2. पाण्डेय आनंद कुमार , पाण्डेय श्रीमती अर्चना - (सामान्य ज्ञान) मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल म.प्र. 450.452
3. रोशन राकेश कुमार , सिन्हा अमित निरंजन - (अर्थशास्त्र) अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इण्डिया) लिमिटेड।
4. प्रतियोगिता दर्पण - (सामान्य अध्ययन) भारतीय अर्थव्यवस्था।
5. शुक्ला नीरज - राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद 2007

****

आर्थिक व्यवहार में परिवर्तन का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

डॉ. उषा कुमठ *

शोध सारांश – देश की मौद्रिक व्यवस्था में बड़ा बदलाव 8 नवम्बर 2016 को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदीजी के द्वारा पाँच सौ व हजार की मौजूदा करेन्सी नोटों को चलन से बाहर करने की घोषणा की। यह जो विमुद्रीकरण हुआ। उसका लक्ष्य कालाधन, भ्रष्टाचार, हवाला कारोबार, आतंकवाद में फंडिग, जाली नोटों से छुटकारा पाना, राष्ट्र विराधी ताकतों पर लगाम कसना और ज्यादा से ज्यादा नागरिकों को बैंकिग तथा कर के दायरे में लाते हुए केशलेस अर्थव्यवस्था की राह बनाना है।

प्रस्तावना – नोटबंदी के इस कठोर निर्णय से कुछ समय तक आम लोगों को परेशानी होगी। किन्तु लम्बी अवधि के हिसाब से यह चेलेन्ज फैसला साबित होगा। जो देश को एशिया ही नहीं विश्व की अग्रणी अर्थव्यवस्था के साथ विकास दर में वृद्धि होगी। साथ ही मंहगाई, आतंकवाद व काला बाजारी जैसी गम्भीर समस्या कम होगी। इस निर्णय से ब्याज दरों में गिरावट आयेगी। प्रापर्टी के भावों में कमी आने की संभावना बन रही है। सोने व बहुमूल्य धातुओं की खरीददारी पर भी लगाम लगेगी। देश में इन्वेस्टमेन्ट व व्यापार के तौर तरीकों में भी बदलाव आयेगा। शेयर बाजार, म्यूचल फण्ड, इन्श्योरेन्स व अन्य टैक्सफ्री बाण्ड की तरफ लोगों का रूझान बढेग़ा।

लोग करेन्सी लेनदेन के बजाय, ए.टी.एम. कार्ड द्वारा भुगतान तथा इन्टरनेट बैंकिंग की ओर प्रवृत्त होंगे। इससे नकली नोटों के चलन की संभावना कम होगी।

उद्देश्य–

1. आर्थिक व्यवहार व निवेश में परिवर्तन का अध्ययन करना।
2. विमुद्रीकरण 500 व 1000 के नोटों का चलन से बाहर होने पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

वर्ष 1978 में एक हजार, पाँच हजार व दस हजार रूपये के नोटों का चलन बंद कर दिया गया था। लेकिन उस समय इन बड़े ऩोटों का बहुत कम उपयोग किया जाता था। तब भारत में प्रति व्यक्ति आय 1942 रूपये थी। लेकिन वर्तमान में पाँच सौ व हजार के नोटों को चलन से बाहर 8 नवम्बर 2016 को किया गया है, इस समय भारत में प्रतिव्यक्ति आय 93000 रूपये है। इन नोटों का उपयोग लगभग 84 प्रतिशत तक किया जाता था। इतना अधिक इन नोटों के उपयोग के कारण अचानक चलन से बाहर होने पर इसका अर्थव्यवस्था पर बहुत ही गहरा प्रभाव पड़ेगा।

नोटबंदी के पहले एक कदम बैंकिंग सेवाओं को सुदृढ़ करने का होना चाहिए था। देश का बड़ा क्षेत्र अभी भी बैंकिंग सेवाओं के मामले में पिछड़ा हुआ है। इसका प्रमाण नोटबंदी के फेंसले के बाद मची अफरा-तफरी से मिलता है। बैंकिंग सेवाओं को बेहतर बनाने के साथ सरकार को उद्यमी, व्यापारियों को इस बात के लिये प्रेरित करना था कि वे अपना व्यापारिक लेनदेन नगद रूप में कम से कम करे। यदि यह काम कर लिया होता तो नोटबंदी के बार परेशानी भी कम होती तथा कारोबार की गति भी धीमी नहीं होती। समस्त सरकारी एवं गैर सरकारी विभागों में केशलेस तंत्र विकसित करने का अभियान चलाया होता तो हालात दूसरे दिखते। अधिक लोग ऐसे होते, जिन्हें नकदी की न्यूनतम प्रयोग करना पड़ता।

2014-15 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार 5-6 करोड उत्पादन या सेवा प्रदान करने वाले प्रतिष्ठान जहां पाँच या इससे कम लोग कार्यरत है। इस प्रकार नकदी पर निर्भर असंगठित क्षेत्र के प्रतिष्ठानों की संख्या करीब बीस करोड़ है। यदि इनमें से प्रत्येक प्रतिष्ठान में एक परिवार के पांच सदस्य भी अपनी जीविका के लिये नकदी पर निर्भर हैं, तो हम पाते हैं कि करीब सौ करोड़ जनता या हमारी कुल आबादी का करीब 80% प्रतिशत हिस्सा नोटबंदी से प्रभावित हुआ हैं।

कृषि – इस समय रबी फसल की बुआई प्रारम्भ हो गयी है। ऐसे में यह नकद आधारित कृषि अर्थव्यवस्था के लिये काफी चुनौतीपूर्ण हैं। बीजो से लेकर उर्वरको, कीटनाषकों की खरीददारी, कृषि श्रमिकों की मजदूरी का भुगतान और उत्पादन की बिक्री आदि सभी नकद में होता हैं। जिला सहकारी बैंक जो लाखों किसानों से सीधे जुड़े हैं, वे पुराने नोटों को नहीं बदल सकते। असंगठित क्षेत्र और कीमतों पर इसके प्रतिकूल प्रभाव को निंयत्रित नहीं किया गया तो यह कदम अल्पकालीन मंदी का कारण भी बन सकता है।

उद्योग – नोटबंदी का असर उद्योगों पर भी बहु अधिक पड़ा है। नोटों की कमी के कारण उद्योग पतियों के लेन-देन प्रभावित हो रहे है। इण्डस्ट्री के भुगतान अटकने से काम की गति वर्तमान से धीमी हो गई हैं, किन्तु भविष्य में उद्योगों में गति बढ़गी । करोबार बैंको के माध्यम से बढ़ेगा। जी.एस.टी. आने के बाद अन्तप्रान्तीय व्यापार की कई समस्याऐं दूर होगी। व्यवसाइयों छोटे उद्योग पतियों की मानसिकता टेक्स पेमेन्ट में बढ़ेगी इससे कालाधन बढ़ने पर रोक लगेगी।

हवाला कारोबार – देश में एक बड़ी संख्या में कारोबारी दो नम्बर के पैसे के जरिए कारोबार करने के आदि है। अभी तो उनकी स्थिती ठीक नहीं हैं। लेकिन कुछ समय बाद वे नये नोट के जरिए फिर से कालाधन जमा करने में सफल हो सकते हैं। अत: सरकार की ओर से संदिग्ध लेने देन पर कठोर कदम उठाया जाना आवश्यक हैं। पिछले दिनों में हवाला करोबार में लगभग 80% प्रतिशत की कमी आयी हैं।

ऑटोमोबाईल – नोटबंदी से टू-व्हीलर मार्केट में गिरावट आयी है। टू व्हीलर की ज्यादातर सेल ग्रामीण बाजारों में होती हैं और यहां ज्यादातर भुगतान कैश में होते हे। औसत दिनों की तुलना में करीब 20 से 25 प्रतिशत तक सेल कम हुआ हैं। ज्यादातर लोगों ने नये वाहनों को खरीदने का फैसला टाल दिया हैं। एक बार करंसी की स्थिती नार्मल होने के बाद लोग दोबारा खरीदेगें।

स्मगलिंग नशे का कारोबार एवं प्रापर्टी व्यवसाय – काला धन पैदा

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

करने का बहुत बड़ा स्त्रोत स्मगलिंग व नशे का करोबार हैं। साथ ही दो करोड़ की प्रापर्टी की रजिस्ट्री एक करोड़ में करायी जा रही हैं। भले ही सौदा दो करोड़ में हुआ हो। जमीन एवं सोने के सौदो में अघोषित आय का बड़ा हिस्सा जाता है। नकद आधारित अर्थव्यवस्था कालेधन की जननी हैं। कैश से क्राइम आता है। अत: अर्थव्यवस्था से बड़े नोट हटा दिये जाय तो अर्थव्यवस्था को काफी हद तक सुधारा जा सकता है।

सकारात्मक प्रभाव – अर्थव्यवस्था में नकदी की कमी रहने से बैंकिंग सेक्टर, क्रेडिट कार्ड और इलेक्ट्रानिक लेने–देन के विस्तार को गति मिल सकती हैं। यदि नये नोटों के जरिए अवैध लेन–देन को रोकने के लिये कड़े कदम उठाए जाते हैं तो अवैध सम्पत्ति और अनाप शनाप खर्चो पर अंकुश लगेगा अवैध लेन–देन आतंकवाद। उग्रवाद पर प्रहार से देश को दीर्घकाल में लाभ मिलेगा।

राजनीति में कालेधन की एक बड़ी भूमिका हैं। राजनीति में कालेधन के प्रवेश एवं प्रवाह को रोकने के लिए ठोस कदम उठाना चाहिए। सत्तारूढ़ राजनेता, उद्यमियों व व्यापारियों के हित में फैसले इसलिए करते हैं, ताकि एवज में उन्हें अपनी राजनीति चलाने के लिये पैसा मिल सके। राजनीति में कालेधन की भूमिका समाप्त करने की ठोस पहल हो।

छोटे–छोटे व्यपारियों, ऑटोरिक्शा किराना व्यापारी आदि का Paytmके द्वारा भुगतान लिया जा रहा है। इस प्रकार Paytm और इसी प्रकार अन्य ऐप के द्वारा भुगतान को प्रोत्साहन मिलेगा तथा नकदी का कम उपयोग किया जाएगा। लोग अभी तक जिस कालेधन को आँख मूंद कर खर्च करते थे। वे अब किफायत और बचत की राह पर चलेगें। देश भ्रष्टाचार के दल दल में गले तक डुबा हुआ हैं। भ्रष्टाचार को रोकने वाली एजेन्सियां और सरकारी आफिसर क्या भ्रष्टाचार को दबाने के लिए लेन देन नहीं कर रहे हैं ? सभी राज्यों में भ्रष्ट राजनेताओं से लेकर भ्रष्ट नौकरशाह हैं। सरकार के द्वारा सख्त कार्यवाही होने से अर्थव्यवस्था को बहुत लाभ होगा।

500 व 1000 के नोटों का चलन से बाहर होने पर अर्थव्यवस्था में विभिन्न क्षेत्रों में कितने प्रतिशत लाभ हो सकता है, इसे निम्न तालिका में माध्यम से सर्वे के आधार पर ज्ञात स्थिति को बताया जा सकता हैं–

नोटबंदी से क्या **फायदा होने की उम्मीद है** ? (रेखाचित्र **देखे**)

रेखाचित्र से स्पष्ट हैं कि पाँच सौ व हजार के नोटों को चलन से बाहर करने पर 28% गरीबी दूर होगी 71.5% कालेधन वाले डरेगें। इसी तरह भ्रष्टाचार कम होगा रोजगार के अवसर बढ़ेगें, महंगाई कम होगी, जाली नोट बन्द होगें आदि लाभ प्राप्त होगें।

नोटबंदी से मोबाईल वालेट बिजनेस में वृद्धि होगी। मोबाईल वालेट एक तरह का बटुआ हैं। जिसमें हम इलेक्ट्रानिक तरीके से खर्च कर सकते है। ग्राहक अपने बैंक अकाउंट से आनलाईन रकम ट्रांसफर कर सकते हैं। देश में मोबाईल वालेट कारोबार 2015–16 में यह बिजनेस 154 करोड़ का था और यह 2021–22 तक 30 हजार करोड़ रूपये तक पहुँचने का अनुमान हैं।

सरकार के द्वारा पाँच सौ व हजार के नोटो को चलन से बाहर करने के साथ ही यह भी अत्यधिक आवश्यक हैं कि विदेशी बैंकों में जमा कालाधन वापस देश में लाना। नोटबंदी के समय व उसके पहले कालेधन से खरीदे गये सोने पर नियंत्रण लगाना क्योंकि इससे इतनी अधिक नकद मात्रा चलन से बाहर हो जाती है, पैसा ब्लॉक हो जाता हैं उसे विकास कार्यो में नही लगाया जा सकता है। कालेधन से खरीदी सम्पत्ति विशेषकर बेनामी सम्पत्ति का पता लगाया जाए व उसके लिये योजना बनायी जाए।

RBI के पूर्व गर्वनर रघुराम राजन का मत हैं कि नोटबंदी से देश को हर दिन 80 हजार करोड़ रू. का नुकसान हो रहा हैं अर्थात 50 दिन में 40 लाख करोड़ रू. का अनुमान है। मोदीजी के इस फैसले से भारतीय अर्थव्यवस्था तीन साल पीछे चली जाएगी। जब भारत 7% की दर से आगे बढ़ रहा था तब इस तरह के फैसले की जरूरत नहीं थी। इस प्रकार का फैसला सामान्यत: तब लिया जाता हैं, जबकि अर्थव्यवस्था की हालत बहुत खराब हो और कोई चारा न हो।

इस प्रकार प्रधानमंत्री जी के इस अभूतपूर्व एवं महत्वपूर्ण निर्णय से सीमा पार के नकली नोटों का कारोबार तथा देश की अर्थव्यवस्था में कालेधन की भूमिका पर रोक लगी हैं। अवैध तरीके से कालेधन की भूमिका पर रोक लगी है। अवैध तरीके से अर्जित और बेहिसाब कालाधन एक ही झटके में चलन से बाहर हो गया। इस फैसले से कितनी सफलता मिलने वाली है। इसका सही अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। लेकिन यह माना जा रहा है कि करीब दस लाख करोड रू. बैंक में जमा होंगे। इसका सकारात्मक असर देश के विकास पर पड़ेगा, क्योंकि सरकार के पास बुनियादी ढ़ाँचे को परियोजनाओं तथा जनकल्याण के कार्यक्रमों पर खर्च करने के लिए अधिक पैसा होगा। जिससे आर्थिक विकास की दर में वृद्धि होगी साथ राजनीतिक, सामाजिक, ढ़ाँचे की तस्वीर बदल सकती है।

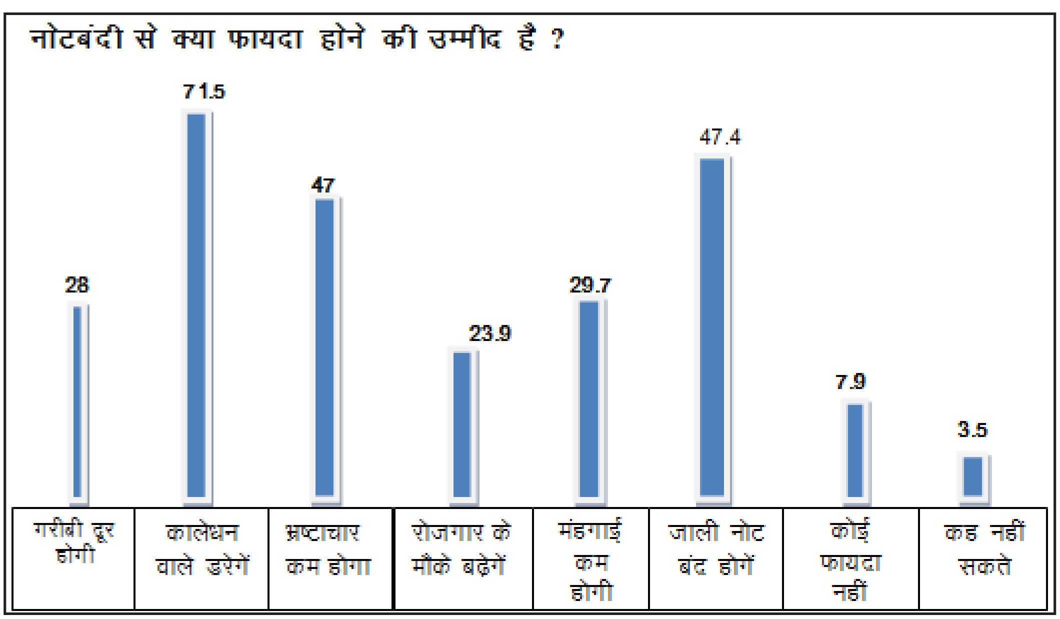

उदारीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रभाव

नितेश मिश्रा *

शोध सारांश – उदारीकरण का अर्थ है विश्व के साथ व्यापार की शर्तो को उदार बनाना, इस से ना केवल अर्थव्यवस्था का विकास सुनिश्चित होता है बल्कि देश का व्यापक विकास तथा बहुमुखि उन्नति होती है, उदारीकरण का अर्थ ऐसे नियंत्रण में ढील देना या उन्हें हटा लेना है, जिससे आर्थिक विकास को बढ़ावा मिले। उदारीकरण में वे सारी क्रियाए सम्मिलित हैं, जिसके द्वारा किसी देश के आर्थिक विकास में बाधा पहुॅचाने वाली आर्थिक नीतियों, नियमों, प्रशासनिक नियंत्रणों, प्रक्रियाओं आदि को समाप्त किया जाता हैं या उनमें शिथिलता दी जाती है।

प्रस्तावना – भारत में उदारीकरण की संकल्पना की शुरूआत 1980 के दशक में राजीव गॉधी के शासन काल में ही हो गयी थी, जब बहुत से उद्योग धन्धे तथा व्यापार पर प्रतिबंध समाप्त होना शुरू हो गया था किन्तु 1990 के दषक में जिन्होंने उदारीकरण को नया जन्म दिया वो इस कार्य के लिए सदैव जाने जाएंगे। 24 जुलाई 1991 के दिन को हमारे देश के पूॅजीपतियों ने ऐतिहासिक दिन बताया क्योंकि उसी दिन उदारीकरण एवं निजीकरण की अर्थव्यवस्था का प्रदुर्भाव तत्कालिक वित्तमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने श्री पी.वी नरसिंहा राव के प्रधानमंत्री काल में लागू किया।

शोध परिकल्पना – उदारीकरण वैश्वीकरण के कोंख से पैदा होने वाली व्यवस्था है, जिसने कुछ सालों में पूरी दुनिया के जनजीवन को प्रभावित किया है और एक दिशा में उसको विस्थापित किया है। यह कहना अतिषयोक्ति नहीं होगा की उदारीकरण ने विकास को नयी दिशा दी है। आज भारत दुनिया की बाजार पॅूजीकरण के अनुसार 12वीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था हैं और भारत की 8 प्रतिशत से ज्यादा वृद्धि दर है। भारतीय अर्थव्यवस्था में बदलाव का श्रेय उदारीकरण को ही जाता है। जिसके फलस्वरूप भारतीय घरेलू उत्पाद 5 प्रतिशत् की रफ्तार से बढ़ रहा है। भारतीय अर्थव्यवस्था जिसमें विनमेश का क्षेत्र को 2005 में 8.98 से बढ़कर 12 प्रतिशत हो गया है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – उदारीकरण ने प्रत्येक सेक्टर में अपना अभूतपूर्व योगदान दिया है। चाहे वह कृषि, उद्योग सेवाऍ बैकिंग और दवा उद्योग, पैट्रोलियम और प्रकृति गैस उद्योग और इन सभी सेक्टरों में सुधार ने अधिकाधिक रोजगार के अवसर दिया है। यह कहना गलत नहीं होगा कि उदारीकरण ने लोगों के जीवन स्तर में सुधार किया है। तथा प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोत्तरी की है। किन्तु उदारीकरण का दूसरा पहलू जो वर्तमान में अत्यन्त भयावह है, उसका दृश्यावलोकन निम्नानुसार है।

कहने को तो राजनीतिक रूप से देश आजाद रहा किंतु उसकी नीतियां, योजनाएं और कार्यक्रम विदेशी निर्देशों पर विदेशी हितों के लिए संचालित होने लगे। बहुत तेजी से भारत की नीतियों आर्थिक प्रशासनिक ढ़ांचे और नियमों कानूनों में बदलाव होने लगे। तत्कालीन वित्तमंत्री मनमोहन सिंह अब देश के प्रधानमंत्री है। बीच में वे सरकार में नहीं थे, किन्तु जो सरकारें आई उन्होंने भी कमोवेश इन्हीं नीतियों को जारी रखा। देश में जागरूक लोक संगठन और जनआंदोलन इन नीतियों का विरोध करते रहे और इनके खतरनाक परिणामों की चेतावनी देते रहे। दूसरी और इन नीतियों के समर्थक कहते रहे कि देश की प्रगति और विकास के लिए यही एक रास्ता है। प्रगति के फायदे नीचे तक रिस कर जाएंगें और गरीब जनता की भी गरीबी दूर होगी। उनकी दलील यह भी है कि बहस सैद्धांतिक और अनुमानात्मक रही। दोनों पक्ष दलील देते रहे कि इनमे ऐसा होगा या वैसा होगा। हद् से हद् दूसरे देशों के अनुभवों को बताया जाता रहा किंतु अब तो भारत में इन नीतियों को दो दशक से ज्यादा हो चले है। एक पूरी पीढ़ी बीत चली है। किन्हीं नीतियों के या विकास के किसी रास्ते के मूल्यांकन के लिए इतना वक्त काफी होता है। इन नीतियों के वैश्वीकरण, उदारीकरण, निजीकरण, मुक्त बजार, आर्थिक सुधार, बाजारवाद, नवउदारवाद आदि विविध और कुछ हद तक भ्रामक नामों से पुकारा जाता है।

शोध उपकरण एवं सांख्यिकीय तकनीक – वास्तव में यह वैश्विक पूंजीवाद का एक नया ज्यादा आक्रामक और ज्यादा विध्वंसकारी दौर है। भारत में इसके अनुभव की समीक्षा का वक्त आ गया है। इन पर पूरे देश में खुलकर बहस चलना चाहिए। यह इसलिए भी जरूरी है कि भारत सरकार अभी तक के अनुभव की समीक्षा किए बगैर बड़ी तेजी से इन विनाशकारी सुधारों को आगे बढ़ा रही है। उनकी भाषा में यह दूसरी पीढ़ी के सुधारों पर चल रही है। तो आइए देखें कि भारत में इस तथाकथित उदारीकरण का रिर्पोट कार्ड क्या रहा है। उपलब्धियां सरसरी तौर पर पिछले दो दशकों में काफी प्रगति दिखाई देती है। राष्ट्रीय आय जी.डी.पी की सालाना वृद्धि दर पहले 2.3 फीसदी हुआ करती थी। जिसे अर्थशास्त्री मजाक में हिन्दू वृद्धि दर कहते है किंतु इस अवधि में वह बढ़ते-बढ़ते 2005-06 से 2007-08 के बीच 09 के ऊपर पहुंच गई ।इससे उत्साहित होकर भारत को चीन के साथ नई उभरती आर्थिक महाशक्ति का दरजा दिया जाने लगा । हालांकि बाद में यह वृद्धि दर उतरते-उतरते चालू साल में 6 से नीचे आ गई है। 1991 के संकट के समय भारत का विदेशी मुद्रा भंडार खाली हो गया था। और भारत का सोना 20 टन यूनियन बैंक ऑफ स्विटजरलैण्ड एवं 47 टन सोना बैंक ऑफ इग्लैण्ड में गिरबी रखना पड़ा। यह संकट दूर हुआ और भारत के विदेशी मुद्रा भंडार में काफी बढ़ोत्तरी हुई । भारत के निर्यात भी काफी बढ़े है। यदि विदेशी पूंजी निवेश को उपलब्धि माने तो इस अवधि में वह भी काफी बढ़ा है। भारतीय कम्पनियां अब दुनिया के अन्य देशों में जा रही हैं। और वहां की कम्पनियों को खरीद रही है यानी वे भी बहुराष्ट्रीय बन रहीं है। देश में कम्प्यूटर सूचना टेक्नालाजी, मोबाईल और वाहन क्रातियां हुई है। बैंग्लोर, हैदराबाद, पूना, गुड़गांव में इंटरनेट कम्पयूटर के केन्द्र विकसित हुए हैं, जिनमें रोजगार के नए अवसर पैदा हुए है। नए राजमार्ग एवं एक्सप्रेस मार्ग बने है। जिन पर

* शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

कारें सौ से ऊपर की रफ्तार पर दौड़ सकती है। दिल्ली का मेट्रो रेल भी एक चमत्कार लगती है। नए कार्पोनेट अस्पताल बन गए है जहां इलाज कराने के लिए दूसरे देशों से लोग आ रहे हैं और अब रसायन पर्यटन का नाम एक नई चीज शुरू हो गई है। शिक्षा में भी प्रबंधन, इंजीनियरिंग, सूचना टेक्नोलाजी, एविऐशन आदि के कई तरह के नए संस्थान खुल गए हैं और नए अवसर पैदा हुए हैं किंतु इन लुभावने आंकड़ों और चमक-दमक के बीच जो सवाल रह जाता हैं, वह यह कि देश के साधारण लोगों का क्या हुआ। उनकी जिंदगी पर क्या असर पड़ा वही असली कसौटी होगी। गरीबी और भुखमरी कहां है, रिसाव कुछ समय पहले भारत सरकार ने अर्थशास्त्री अर्जुन सेनगुप्ता की अध्यक्षता में असंगठित क्षेत्र के बारे में एक आयोग गठित किया था। इस आयोग के एक यान ने देश के प्रबुद्ध वर्ग को चौंका दिया था। वह यह कि देश के 78 फीसदी लोग 20रू. रोज के नीचे जीवनयापन करते है। इस आंकड़े ने देश की प्रगति और विकास के दावों की पोल खोल दी और राष्ट्रीय आय की ऊंची वृद्धि दर के जश्न की हवा निकाल दी। सेनगुप्ता आयोग का यह आंकड़ा 2004-05 का था किंतु उसके बाद तो मंहगाई से लोगों की हालत और खराब हुई। भारत सरकार और उसका योजना आयोग गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाली आबादी में लगातार कमी का दावा करता रहता हैं, उसकी भी असलियत सेनगुप्ता आयोग के इस कथन ने उजागर कर दी। इस बीच में कई विद्धानों ने बताया है कि गरीबी रेखा के निर्धारण और उसकी गणना में कितनी त्रुटियां है। पिछले वर्ष जब योजना आयोग ने सर्वोच्च न्यायालय को बताया कि वह गांवों में 26 रू. और शहरों में 32 रू. रोज से ज्यादा प्रति व्यक्ति खर्च करने वालों को गरीब नहीं मानता है तब इस हास्यास्पद और दयनीय गरीबी रेखा पर देश में बवाल मचा। दरअसल जानबूझकर इतनी नीची और अव्यवहारिक गरीबी रेखा रखी गई है ताकि गरीबी में कमी और बड़े हिस्से को बुनियादी सुविधाओं में सरकारी मदद से वंचित करने में भी किया जा रहा है। जिससे साधारण लोगों के कष्ट बढ़े हैं, भारत को आर्थिक महाशक्ति बताने वालों को यह भी देख लेना चाहिए कि प्रति व्यक्ति आय के हिसाब से दुनिया के देशों में भारत का स्थान लगातार बहुत नीचे 133 के आसपास बना हुआ है। ऊंची वृद्धि दर के बावजूद भारत दुनिया के निर्धनतम देशों में से एक है। राष्ट्रीय आय और प्रति व्यक्ति आय के मौद्रिक आंकड़े पूरी हकीकत का बयान नहीं करते हैं। मानव विकास सूचकांक और अंतर्राष्ट्रीय भूख सूचकांक में भी भारत का स्थान बहुत नीचे है। संख्या के हिसाब से दुनिया के सबसे ज्यादा भूखे, कुपोषित और अनपढ़ लोग भारत में ही रहते है। अर्थशास्त्री ज्यांद्रेज और अमर्तय सेन ने पिछले दिनों एक लेख (आउटलुक 14 नवम्बर 2011) में हमारा ध्यान कुछ दुखद तथ्यों की ओर आकर्षित किया है। कुपोषित कमजोर बच्चों का अनुपात पूरी दुनिया में भारत में सबसे ज्यादा है। (43.5 फीसदी), अफ्रीका के बाहर केवल चार देशों की बाल मृत्यु दर भारत से ज्यादा है और केवल पांच देशों की युवा महिला साक्षरता दर भारत से कम है। कई मामलों में हमारे पड़ोसी पाकिस्तान, बांग्लादेश और नेपाल की हालत हमसे बेहतर है क्या ये शरम से सिर झुकाने लायक हालात नहीं है, दरअसल पिछले दो दशकों में भारत में पहले से मौजूद गैरबराबरी और तेजी से बढ़ी है। जो समृद्धि दिखाई दे रही है, वह थोड़े से लोगों के लिए है। राष्ट्रीय आय की वृद्धि मुट्ठी भर लोगों के हाथ मंढ़े जा रही है। अमीर और उच्च मध्यम वर्ग के लोग अमीर बनते जा रहे हैं बाकी लोग या तो अपनी जगह है या कई मायनों में बदत्तर होते जा रहे हैं। अमीर-गरीब की बढ़ती खाई के अलावा गांव, क्रमशः शहर , खेती-गैर खेती की खाई तथा क्षेत्रीय गैर बराबरी और सामाजिक गैर बराबरी भी बढ़ी है। इस बढ़ती गैर बराबरी के कारण समाज में अंसतोष, तनाव, झगड़ों और अपराधों में भी बढ़ोत्तरी हो रही है। रोजगार शून्य विकास राष्ट्रीय आय की वृद्धि का आम लोगों की बेहतरी में न बदलने का एक प्रमुख कारण है कि यह रोजगार रहित वृद्धि हैं। नए रोजगार कम पैदा हो रहे हैं और पुराने रोजगार तथा अजीविका के पारम्परिक स्त्रोत ज्यादा नष्ट हो रहे हैं। कम्प्यूटर-इंटरनेट के नए रोजगारों की संख्या बहुत सीमित है और अमरीका- यूरोप की मंदी के साथ उनमें भी संकट पैदा हो रहा है।

शोध व्याख्या - आर्थिक उदारीकरण के पूर्व खाद्यान्न के संकट को हमने हरित क्रांति के जरिए दूर किया था और हम इस क्षेत्र में स्वावलम्बी हो गए थे। फिलहाल देश में खाद्यान्न संकट नहीं है और वर्षा अच्छी होने के कारण फसल अच्छी होने की उम्मीद है, लेकिन इससे खाद्यान्न की समस्या का समाधान नहीं होगा। विचित्र उलटबासी है कि देश में खाद्यान्न का और अन्य वस्तुओं का पर्याप्त भंडार है, लेकिन वह लोगों को नसीब नहीं।

महंगाई तो विकास की पहचान बन गई है। यह नहीं कहा जाता कि महंगाई के कारण इस देश की अधिकांश जनता को जीवन चलाने के लिए नितांत अभाव ग्रस्तता की कोई यातना देश के कर्णधारों के वक्तव्यों में नहीं झलकती। महंगाई को विकास से जोड़कर वे सुखी और संतुष्ट लोगों को ऑकड़ेबाजों की तरह आश्वस्त कर देते हैं लेकिन अभावग्रस्त जनता के लिए अप्रासंगिक हो जाते हैं।

विकास के लिए देश में विदेशी पूंजी निवेश की चाह लिए करीब दो दशक पहले जिस उदारीकरण का सपना देश की जनता को तात्कालीन कांग्रेस की सरकार (नरसिंह राव की सरकार) ने दिखाया था उसने आम आदमी को आखिर दिया क्या। आज जबकि उदारीकरण को 20 साल से ऊपर हो चुके हैं तो सबसे बड़ा सवाल यही हैं।

उदारीकरण को लेकर न जाने कितने ही तर्क और कुतर्क दिए जाते हैं लेकिन वास्तविकता क्या है, यदि इस उदारीकरण को आम आदमी के नजरिए से देखा जाए जिसके लिए सारी योजनाएं बनती हैं और नीतियों का निर्धारण किया जाता है। भले ही उसकी हकीकत कुछ भी हो तो यह सिर्फ एक धोखे के अलावा कुछ भी नहीं लगता। सच तो यह है कि उदारीकरण ने सीधे-सीधे पूंजीपतियों को लाभ पहुंचाया।

निष्कर्ष - आम आदमी की आर्थिक स्थिति तो पहले भी खराब थी और धीरे-धीरे बिगड़ती ही चली गई। अमीर और गरीब के बीच जो खाई दरअसल आज इस देश में है, उसकी जड़ भी उदारीकरण ही है। मुनाफे पर आधारित विकास की परम्परा की नींव पर अगर विकास का मकान खड़ा किया जाए तो वह किसके हित में होगा यह सहज भी समझा जा सकता है। इस प्रकार उदारीकरण के तथ्यों पर गहन विचार- विमर्श किया जाऐं तो यह स्पष्ट होता हैं कि उदारीकरण विनाश का कारण ही बना रहा है।

सुझाव - शोध पत्र के माध्यम से उदारीकरण में महंगाई तो विकास की पहचान बन गई है। यह नहीं कहा जाता कि महंगाई के कारण इस देश की अधिकांश जनता को जीवन चलाने के लिए नितांत अभाव ग्रस्तता की कोई यातना देश के कर्णधारों के वक्तव्यों में नहीं झलकती। महंगाई को विकास से जोड़कर वे सुखी और संतुष्ट लोगों को ऑकड़ेबाजों की तरह आश्वस्त कर देते हैं लेकिन अभाव ग्रस्त जनता के लिए अप्रासंगिक हो जाते हैं। इन प्रयासों को समझकर एवं बेहतर निर्णय लेकर उदारीकरण की प्रक्रिया में लोच की आवश्यकता है। जिससे देश का अग्रसर विकास संभव हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

जनजातीय श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन (शहडोल जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. शाहीन परवीन *

प्रस्तावना – भारत देश का अधिकांश क्षेत्र आदिवासी जनसंख्या बाहुल्य है तथा विश्व के अन्य देशों की अपेक्षा पिछड़ा हुआ है। स्वतंत्रता के बाद जहाँ एक ओर देश के विकास पर जोर दिया गया, वहीं समाज के आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े आदिवासी जनजातीय समुदायों को समाज की मुख्य धारा में जोड़ने का कार्य तत्कालीन सरकारों द्धारा किया गया है। इनके विकास के लिए समय-समय नीतिगत निर्णय लिये जाकर उनके विकास एवं प्रगति के कार्य किए गए है एवं निरंतर प्रयास किए जाते रहे है। वर्तमान परिवेश में शहडोल जिले के जन-जातीय समुदायों में रोजगार और शिक्षा के ढ़ॉचे में जो परिवर्तन दिखाई देता है, उसका अर्थ शास्त्रीय आधार क्या होगें यह जानने के लिए सूक्ष्म अध्ययन ही आवश्यकता है। अत: इस बात की जानकारी प्राप्त करना अति आवश्यक है कि शहडोल जिले के जनजातीय श्रमिकों का कितना आर्थिक विकास हुआ है। तथा अभी कितना होना शेष है। शहडोल जिले में मुख्य रूप से गोंड, बैगा, भरिया, कोल, कंवर खैरवार आदि जनजातियाँ निवासरत है। जिले में गोंड जनजाति की संख्या सर्वाधिक है।

शहडोल जिले के जनजातीय श्रमिकों के जीवन यापन के साधन – समाज अपने उद्‌भव से वर्तमान तक अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सतत संघर्षरत है। समाज का यह संघर्ष स्वयं से प्रकृति के साथ है। स्वयं से संघर्ष का तात्पर्य हैं, समाज अपने अस्तित्व को बनाए रखने के अर्थात् समाज की इकाइयाँ (मनुष्य) जीवित रहने के लिए आदिकाल से ही प्रयासरत है, वहीं प्रकृति से संघर्ष का तात्पर्य है, प्राकृतिक आपदाओं से स्वंय को सुरक्षित रखना। समाज का अस्तित्व जीवन के कारण ही बचा हुआ है और जीवन के लिए आवश्यक है- 'आवश्यकताओं की पूर्ति'। इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य द्धारा हजारों वर्षो से किए जा रहे प्रयासों को विद्धानों ने जीवन यापन के साधन बताया है। समाज में मनुष्य की कुछ मूलभूत आवश्यकताए होती हैं, जिनमें सबसे प्रमुख आवश्यकता है - भोजन , भोजन के अतिरिक्त अन्य आवश्यकताओं में आवास और वस्त्र आते हैं।

जनजातीय समाज में जीवनयापन के साधन एक अनिवार्य आवश्यकता है। जनजातीय श्रमिकों का समाज सरल समाज है । ये अत्यन्त कठिन एवं विषम परिस्थितियों में जीवन यापन करते हैं। जनजातीय श्रमिकों के जीवन निर्वाह के सभी साधन पूर्णत: प्रकृति पर ही आधारित हैं। भौगोलिक एवं क्षेत्रीय भिन्नताओं के कारण इनकी जीवन शैली भी पृथक-पृथक होती हैं। जनजातीय श्रमिकों के जीवन यापन के साधनों में भी भिन्नता दिखाई देती है। जनजातीय श्रमिकों के जीवन यापन के विभिन्न साधनों का प्रभाव निम्नानुसार है -

1. **वातारण –** जनजातीय श्रमिकों में विभिन्न वातारण एवं भौगोलिक पर्यावरण में जीवनयापन होता है। भौगोलिक वातारण की भिन्नता के कारण ही जनजातीय श्रमिकों का कृषि कार्य अधिक होता है। जिसमें जनजातीय श्रमिक मुख्य रूप से शिकार मछली पालन कृषि क्षेत्र में मजदूरी आदि का कार्य करते हैं।

2. **परिस्थितिकी –** वातारण के साथ मानव का अभियोजन अथवा सामंजस्य स्थापित करना परिस्थितिकी कहलाता है। जनजातीय श्रमिकों के समाज के जीवन यापन के साधनों में परस्थितिकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। आवास के अतिरिक्त जनजातियों के वस्त्र भोजन भी परिस्थितिकी पर निर्भर करते हैं। शहडोल जिले के जनजातीय श्रमिकों द्धारा चावल, मछली, वनोपज, दूध, घी तेल मांस आदि अधिकाधिक प्रयोग करते हैं। तकनीकी मनुष्य का वातावरण और परिस्थितिकी के साथ संबंध स्थापित करने में तकनीकी महत्वपूर्ण कार्य करती है। तकनीकी ज्ञान मनुष्य की आवश्यकतानुसार विकसित होता है।

जनजातीय श्रमिक समाज के जीवनयापन के साधन प्रकृति पर आधारित है। विकास के साथ-साथ जनजातीय श्रमिकों ने भी जीवन यापन के अन्य साधन अपनाना प्रारंभ किया है। जनजातीय श्रमिकों के जीवन यापन के प्रमुख साधनों को निम्नानुसार विभक्त किया जा सकता है -

1. **जंगलों से संकलन द्धारा-** शहडोल जिले के जनजातीय श्रमिकों के जीवन यापन के साधनों का प्रथम स्तर संकलन है । वनों एवं पहाड़ों में जीवन यापन करने वाला जनजातीय श्रमिक समुदाय अपने निवास के समीपस्थ स्थानों से कंदमूल फल , वनस्पति लकड़ी आदि संकलन कर उपभोग करते हैं। एवं संकलन के अतिरिक्त होने पर उसे अपने समाज में वितरित कर देते हैं।

2. **आखेट-** जनजातीय श्रमिकों के जीवन यापन के साधनों का द्धितीय स्तर आखेट या शिकार करना है। शहडोल जिले की सबसे अधिक पिछड़ी बैगा जनजाति है, जो कि आज यही जनजाति शिकार करती हैं। शहडोल जिले में बैगा, भूमिया, बहेलिया ही आखेट कार्य करती हैं।

3. **कृषि-** जनजातीय श्रमिक समाज में कृषि जीवनयापन का एक महत्वपूर्ण साधन है। आज अधिकांश जनजातीय श्रमिक अपने श्रम साधन से शिल्प कला और घरेलू श्रम कार्य जो कृषि से संबंधित हैं । उनके माध्यम से जीवन यापन करते हैं।

4. **शिल्पकला एवं घरेलू उद्योग-** वर्तमान में जनजातीय श्रमिक समूहों में शिल्पकला एवं घरेलू उद्योगों का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। जीवनयापन के साधनों के रूप में जनजातीय श्रमिकों के द्धारा घरेलू उद्योग के रूप में बांस की टोकरी , लकड़ी के उपयोगी सामान, सूत कातना, रस्सी

* अतिथि विद्धान (अर्थशास्त्र) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

बनाना, महुए से शराब बनाना और बेचना लघु वनों पर संग्रहण , लोहा गलाकर औजार बनाना वस्तु निर्माण आदि कार्य किए जाते हैं।

5. **खनिज खदानें –**खनिज खदानों में मजदूरी करना भी जनजातीय श्रमिक की एक प्रमुख व्यावसायिक गतिविधि है। आदिवासी क्षेत्रों में वन संपदा के साथ–साथ खनिज सम्पदा का भी भण्डार शहडोल जिले में है। कोयला , चूना , आदि की खदानों में अधिकांश जनजातीय श्रमिक कार्यरत हैं।

6. **उद्योग –** विकास के साथ जनजातीय श्रमिक समाजों में भी तकनीक का विकास हुआ है। तकनीकी विकास के फलस्वरूप वर्तमान में जनजातीय श्रमिकों द्वारा लाख कत्था, उद्योग संचालित कर रही है। शहडोल जिले में लाख से चूड़ी , चपड़ा बनाया जाता है। खैर की लकड़ी से कत्था बनाया जाता है।

7. **बाँस उद्योग –** जनजातीय कृषक समाज में बांस उद्योग एक प्रमुख उद्योग है। वनों से पयार्प्त मात्रा में बांस की उपलब्धता के कारण जनजातियों द्वारा बांस का व्यावसायिक उपयोग किया जाता है। बांस की चटाई ,टोकनी, सूपा , अनाज रखने के बर्तन आदि दैनिक उपयोग के अलावा व्यावसायिक स्तर पर भी बनाए जाते हैं।

शहडोल जिला आदिवासी बाहुल्य तथा जंगलों की अधिकता के कारण यहाँ के जनजातीय श्रमिकों द्वारा बांस का उपयोग दैनिक जीवन यापन की वस्तुओं के साथ–साथ व्यावसायिक उपयोग पर भी प्रयोग किया जाता है।

8. **मधुमक्खी पालन उद्योग –** वनों के निवासी होने के कारण जनजातीय श्रमिकों द्वारा मधुमक्खी पालन इनका एक प्रमुख व्यवसाय हैं। जनजातीय श्रमिकों द्वारा मधुमक्खी के छत्तो का रस एकत्र कर शहद को शहरों में बेंचा जाता है।

शहडोल जिले के जंगली क्षत्रों में निवासरत जनजातियों द्वारा इस व्यवसाय से अपने जीविकोपार्जन का माध्यम बनाए हुए हैं।

9. **रेशम उद्योग एवं कोसा उद्योग–** शहडोल जिले के अलावा यह उद्योग बैतूल, होशंगावाद जिलों में रेशम उत्पादन होता है। शहडोल जिले के जनजातीय श्रमिकों द्वारा रेशम उद्योग का उपयोग लधुस्तर पर किया जाता है।

शहडोल जिले में कोसा उद्योग न्यून स्तर पर कोसा के वस्त्र बनाए जाते है। यहाँ के जनजातीय श्रमिकों का जीविकोपार्जन कोसा उद्योग के द्वारा नहीं हो पाता है।

इसप्रकार जनजातीय श्रमिक समाज द्वारा उपरोक्त व्यवसायों के अतिरिक्त पत्थर, की मूर्तियों, कांसे की घंटी, माला बनाना आदि कार्य भी सम्पादित किए जाते हैं। जिससे इनकी आजीविका की पूर्ति होती है। और अर्थव्यवस्था की वृद्धि भी होती है।

निष्कर्ष– शहडोल जिले में जनजातीय श्रामिकों की आर्थिक स्थिति निम्नतर स्थिति की है। देश के विकास की गति के साथ यदि तुलना की जाए तो इस गति में जनजातीय समाज काफी पीछे है। देश के बढ़ते नगरीकरण के कारण आदिवासी वर्ग में काफी विषमता देखने को मिलती है। अशिक्षा एवं गरीबी के कारण व्यापारी, महाजन और ठेकेदारों द्वारा इनका निरंतर शोषण किया जा रहा है। इनके आर्थिक विकास के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा अनेक योजनाएँ एवं नीतियां क्रियान्वित है। जैसे शौक्षिणिक योजनाएं, तेंदूपत्ता संकलन योजना, बालश्रम कल्याण योजना आदि।

सदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जिला सांख्यिकी पुस्तिका जिला शहडोल (म.प्र.)।
2. शहडोल के आदिवासी– राममित्र चतुर्वेदी।
3. आदिवासी समाज में आर्थिक परिवर्तन– राकेश कुमार सिंह।
4. मध्य प्रदेश का आर्थिक विकास– प्रो. ओ.एस. श्रीवास्तव।
5. महिला श्रमिक– सरोज राय।
6. म.प्र. के आदिवासी– शिवकुमार तिवारी।

****

कृषि विपणन में कृषि उपज मण्डियों तथा संगठित बाजारों की भूमिका - खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में

डॉ. सपना भालेकर *

प्रस्तावना – भारत कृषि योग्य भूमि की दृष्टि से विश्व का तीसरा बड़ा देश है, किन्तु विडम्बना यह है कि कृषिकेवल आजीविका का साधन बनकर रह गई है। भारतीय कृषि को लाभकारी व्यवसाय बनाया जाए तो कृषि उत्पादन के साथ-साथ कृषि विपणन पर पूर्ण ध्यान देना होगा। उदारीकरण के पश्चात् भारतीय कृषि विश्व बाजार के पटल पर आ चुकी है। अब यह जरुरत महसूस की जा रही है कि एक कृषक को एक अच्छा किसान ही नहीं, बल्कि एक अच्छा व्यापारी भी होना चाहिए। भारतीय कृषकों को न केवल देश के अंदर प्रचललित कृषि बाजारों की जानकारी होना चाहिए, बल्कि विश्व बाजारों मे होने वाले उच्चावचनों की भी जानकारी होनी चाहिए, जिससे कि उचित ढंग से उत्पादन का विपणन हो एवं अधिक से अधिक कृषि उत्पादों के मूल्यों की प्राप्ति हो सके।

कृषि विपणन क्यों – म.प्र. शासन द्वारा मण्डी अधिनियम 1972 में समय-समय पर संशोधन कर कृषकों को लाभ प्रदान करने का प्रयास किया गया है। वर्ष 2006-07 में इसी दृष्टि से कृषि विपणन में बहुराष्ट्रीय कंपनियों को भी प्रवेश दिया गया है एवं मण्डी प्रांगण के बाहर खरीदी करने की अनुमति निजी कंपनियों को दी गई, किन्तु इस प्रक्रिया का पूरे जोर तरीके से व्यापारियों द्वारा विरोध किया गया एवं रुचि सोया कंपनियों ने ग्रामीण क्षेत्रों मे अपने क्रय सेन्टर खोल दिए है एवं विपणन कार्य करने लगे है। ग्रामीण क्षेत्र में हाट, बाजारों में भी लगी मण्डी समितियों की कुल संख्या 341 है, जिसमें इंदौर संभाग में कुल 32मण्डी समितियाँ कार्य कर रही है तथा खरगोन जिले में 07 मण्डी समितियाँ है।

भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में कृषकों को आज भी व्यवस्थित बाजारों से पहुंच दूर है। साथ ही शहरी क्षेत्र में आज भी कृषक अपने खलिहानों से 50-50 किलोमी. दूर अपने माल को विक्रय करने हेतु ले जाते है। परिणाम यह होता है कि कृषक विवश होकर बिचौलियों को अपनी उपज को विक्रय कर देते है। इन्हीं समस्त बातों को ध्यान में रखते हुए यह जानने का प्रयास किया गया है कि खरगोन जिले में स्थापित मण्डी समितियों के विपणन कार्य से कृषकों के शोषण में कमी आयी है या नहीं। कृषकों को मण्डियों की पर्याप्त सुविधाएँ मिल पा रही है या नहीं।

अध्ययन क्षेत्र – शोधप्रबंध के अंतर्गत खरगोन जिले अन्तर्गत पूर्व में शोधकर्ताओं द्वारा किए गए शोध कार्य, अनुभव एवं अवलोकन लिया गया है। इसी के साथ शोध प्रविधि में समग्र, अवलोकन की इकाई अध्ययन की, प्रतिचयन विधि एवं आकार, आंकड़ों के संकलन एवं विश्लेषण के उपकरणों को समाहित किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. मण्डियों तथा संगठित बाजारों मे कृषि उपज का पर्याप्त मूल्य मिल रहा है या नहीं की स्थिति का विश्लेषण करना।
2. कृषकों द्वारा ली जाने वाली प्रमुख फसलों की विपणन अतिरेक तथा विपणन लागत की स्थिति का पता लगाना।
3. कृषकों द्वारा उत्पादन, विक्रय एवं उचित मूल्य प्राप्त करने हेतु अपनाए गए उपायों का अध्ययन करना।

अध्ययन परिकल्पना पर आधारित है – प्रस्तुत **अध्ययन** की परिकल्पनाएँ निर्धारित की गई है।

1. ग्रामीण क्षेत्रकाकृषि विपणन के क्षेत्र में पर्याप्त विकास नहीं हो पाया है। वर्तमान मे भी कृषक परंपरागत विपणन व्यवस्था को अपनाए हुए है, जिसमें उन्हें अपनी उपज का पर्याप्त मूल्य नहीं मिल पाता है।
2. मण्डियों एवं संगठित बाजारों के विकास से कृषकों के शोषण में कमी आई है।

भारत में कृषि विपणन की स्थिति – मण्डियों में कृषि उपजों के विक्रयार्थ प्रदर्षन तीन प्रकार से होता है। (1) ट्रेक्टर ट्राली में रखी खुली उपज (2) बोरों में रखी उपज का नमूना निकालकर (3) फंड पर उपज का ढेर लगाकर मण्डी प्रांगण में आदि समस्त कृषि उपजों का मूल्य निर्धारण निविदा बोली या खुली नीलाम पद्धति से तय किया जाता है। राज्य सरकार द्वारा कृषि उपजों के घोषित समर्थन मूल्य से ऊपर नीलाम बोली प्रारंभ की जाती है। किसान अपनी उपज को नीलाम में अंतिम बोली द्वारा निर्धारित मूल्य पर विक्रय से मना कर पुन: उसी दिन नीलाम के अंत में या अन्य दिन विक्रयार्थ प्रस्तुत कर सकता है। अत: नियमित मण्डियों के स्थापना से प्रति स्पर्धात्मक विक्रय पद्धति विकसित हुई जो अधिकाधिक किसानों के हित में है। यद्यपि संभागीय मण्डियों में 10-20% विक्रय निजी समझौता पद्धति से होना पाया गया है।

खरगोन जिले (म.प्र.) में कृषि विपणन की स्थिति – मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम 1972 की अनुसूची में सूचीबद्ध कृषि उपजों का क्रय-विक्रय अधिनियम के प्रावधानों के तहत ही किया जा सकता है। अधिनियम के प्रावधानों के तहत क्रय-विक्र किए जाने के लिए मध्यप्रदेश राज्य कृषि विपणन बोर्ड द्वारा मण्डी समितियों के लिए उपविधि-2009 का निर्माण किया गया है।

जिसमें क्रय-विक्रय किए जाने के लिए मध्यप्रदेश राज्य कृषि विपणन बोर्ड द्वारा मण्डी समितियों के लिए उपविधि 2009 का निर्माण किया गया है, जिसमें क्रय-विक्रय के तरीके को निम्न भागों में विभक्त किया गया है। उपविधि में क्रय-विक्रय के दो तरीके निर्धारित किए गए है –

1. पूरी उपज मण्डी प्रांगण में विक्रय हेतु लाना।
2. नमूना एवं सौदा पत्रक के आधार पर बिक्री करना।

व्यापार को करने के लिए जो आवश्यक अधोसंरचना है, वह मण्डी समिति उपलब्ध करावे। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ही उपविधियों में एक

* (अर्थशास्त्र) सी-6 शरद नगर धार (म.प्र.) भारत

से अधिक बिक्री की पद्धति लागू की गई है, ताकि प्रदेश मे, 21वी सदी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कृषि विपणन की पद्धतियों को विकसित किया जा सके तथा नियमन का लाभ अधिक से अधिक उत्पादकों को मिल सके।

कृषि विपणन में कृषकों की वास्तविक स्थिति – अध्ययन क्षेत्र खरगोन जिले से संबंधित है, जिसमें किसानों द्वारा मण्डियों के संदर्भ में दिए गए विचारों को तालिकाबद्ध करके विश्लेषण एवं व्याख्या की गई है। अध्ययन क्षेत्र के किसानों का सूक्ष्म स्तर पर अवलोकन के पश्चात् यह पाया गया है कि यहां अधिकांश किसान वर्तमान समय में भी कृषि की परंपराग तकनीकी को अपनाए हुए है, जिससे उपज की गुणवत्ता में अधिक मात्रा में सुधार नहीं हो पाया है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि किसानों की आय में गिरावट होती जा रही है। अध्ययन क्षेत्र के उत्तरदाताओं की कृषि से प्राप्त आय का औसत 116155.6 रु. है, जबकि अन्य स्त्रोतों से आय अर्जित करने वाले 61 उत्तरदाताओं की आय का औसत 28848.2 रु. है। कृषकों की आय मे अधिक उच्चावचन होने का मुख्य कारण यह है कि अधिकांश कृषक छोटी जोत वाले है तथा विपणन के प्रति कम जागरुक है, जबकि बड़ी जोत तथा अधिक उत्पादन करने वाले किसान विपणन के प्रति जागरुक होने के साथ आधुनिक सूचना तंत्र के माध्यम से कृषि मूल्यों की जानकारी आसानी से प्राप्त कर लेते है।

अध्ययन क्षेत्र में कृषकों द्वारा संस्थागत स्त्रोतों से 57.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने ऋण प्राप्त किया है, जबकि असंस्थागत स्त्रोतों से ऋण प्राप्त करने वाले किसान 80.4 प्रतिशत है। स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में असंस्थागत स्त्रोतों से सर्वाधिक मात्रा में किसान ऋण प्राप्त करते है। असंस्थागत स्त्रोतों की ऋण राशि समय पर नहीं लौटाने पर गिरवी रखी संपत्ति को संबंधित व्यक्ति जब्त कर लेते है। विपणन व्यवस्था तथा भण्डारगृहों के संबंध में 53.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया किउनके स्वयं के गोदाम (भंडारगृह)है, जहां उपज को संग्रहित किया जाता है, जबकि मात्र 3.6 प्रतिशत उत्तरदाता किराये के भंडारगृहों का उपयोग करते है। अध्ययन क्षेत्र 43.3 प्रतिशत उत्तरदाता उपज को संग्रहित करके नहीं रखते, बल्कि उसे शीघ्र बेच देते है तथा जीवन निर्वाह हेतु खाद्यान्नों को घरों में संग्रहित कर देते है।

अध्ययन क्षेत्र में मात्र 10.2 प्रतिशत किसान उपज का श्रेणीकरण करते है तथा47.1:किसान उपज को न्यूनतम समर्थन मूल्यों पर बेचते है। इसके साथ ही50.7:गांवों में पक्की सड़कें विद्यमान है। जबकि अन्य गाँवों मे कच्ची सड़कें आज भी विपणन कार्यो को नकारात्मक ढंग से प्रभावित करती है।

निष्कर्ष – अंतिम निष्कर्ष के रुप में यह स्पष्ट होता है कि कृषि उपज मण्डियों तथा संगठित बाजारों ने कृषि विपणन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

1. कृषि विपणन में मण्डी बोर्ड, महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है, क्योंकि मण्डी बोर्ड को अपने कारोबार में वृद्धि करने, मण्डियों की विपणन प्रक्रिया में एकरुपता लाने एवं शोषण रहित विपणन प्रणाली विकसित करने हेतु विनियम एवं उपविधियों बनाने का वैधानिक अधिकार है। वही मण्डी समितियाँ अपने कार्य में कारोबार करने हेतु नियम बना सकती है।
2. संगठित बाजारों के विस्तार ने सूचना तंत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किया है, क्योंकि इसके माध्यम से किसानो को उपज के वास्तविक मूल्यों का ज्ञान होता है। साथ ही उपज वृद्धि की प्रेरणा भी मिलती है।
3. किसानों, व्यापारियों तथा उपभोक्ताओं के हितों को ध्यान में रखते हुए कई प्रकार की नीतियाँ भारतीय खाद्य निगम ने भी बनाई है, जिसने ग्रेडिंग पद्धति में खाद्यान्नों में मिलावट की समस्याओं का समाधान किया है।
4. सूक्ष्म स्तर पर अध्ययन क्षेत्र में संगठित बाजारों के योगदान को जानने के लिए 225 कृषक उत्तरदाताओं के परिवारों का सर्वेक्षण किया गया, जिसमें महत्वपूर्ण रुप से यह पाया गया है कि उत्तरदाताओं की जीवन निर्वाह का मुख्य साधन कृषि है। जिसमें उनकी औसत आय 1,16,155 रु. के लगभग है। अन्य स्त्रोतों से प्राप्त आय मात्र 28,848 रु. है तथा अन्य स्त्रोतों से प्राप्त आय परिवारों की मात्र 27 प्रतिशत है।
5. कृषि उत्पादन से प्राप्त आय को किसानों द्वारा उत्पादक एवं अनुउत्पादक कार्यो में बराबर व्यय किया जाता है।
6. 98.4 प्रतिशत किसान उत्पादक कार्यो हेतु ऋण लेते है, जिसके लिए बंधक के रुप में पावती का उपयोग किया जाता है, जबकि असंस्थागत ऋणों के बदले कृषि भूमि, पषुधन तथा आभूषण और फसलों का हिस्सा व घर को बंधक के रुप में रखा जाता है।
7. अधिकांश कृषकों द्वारा विभिन्न मौसमों में ली जाने वाली फसलों खरीफ एवं रबी की है, जो 84.9 प्रतिशत है।
8. मात्रा 14 प्रतिशत किसान केवल खरीफ की फसल ले रहे है।
9. किसान 66.2 प्रतिशत केवल जीवनयापन के लिए कृषि कार्य कर रहे है।
10. कृषि विपणन व्यवस्था के संबंध में यह वास्तविकता नजर आती है कि 48 प्रतिशत किसान 30-60 दिनों के अंतर्गत कृषि उपज बेच देते है।
11. उपज के शीघ्र बेचने का कारण ऋणों का भुगतान करना एवं भंडारगृहों की कमी है, विपणन व्यवस्था को दुरस्त करने के लिए सड़कों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।
12. अध्ययन क्षेत्र में 50.7 प्रतिशत किसान सड़कों के माध्यम से उपज मण्डी तक लाते है। साथ ही सर्वाधिक 55.6 प्रतिशत किसान परिवहन हेतु निजी साधनों का उपयोग करते है।

उपरोक्त निष्कर्ष यह स्पष्ट करता है कि संगठित बाजारों के विकास ने किसानों के शोषण को कम किया है, ताकि उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। संपूर्ण देश में हमारा प्रदेश कृषि विपणन के क्षेत्र में क्रान्ति का अग्रदूत होगा। प्रदेश के किसान को समुचित विपणन से कृषि उत्पादन के बहुपयोगी लाभ प्राप्त होने से ग्रामीण विकास में पर्याप्त योगदान मिल सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल ए.एन. (1997), 'भारतीय अर्थशास्त्र विकास एवं आयोजन', म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. अग्रवाल एम.सी. (1974), 'कृषि का अर्थतंत्र', म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
3. अग्रवाल, अनुपम (1999), 'भारतीय अर्थशास्त्र', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
4. भारत का आर्थिक सर्वेक्षण (2006), म.प्र. राज्य कृषि विपणन बोर्ड भोपाल।
5. भद्दा बी.एम. एवं पोखार बी.एल. (2001), 'विपणन प्रबंध के सिद्धांत एवं व्यवहार' रमेश बुक डिपो, जयपुर।
6. भद्दा बी.एम. पोरवाल बी.एल. (1998), 'विपणन प्रबंध के सिद्धांत एवं व्यवहार', रमेश बुक डिपो, जयपुर।

म. प्र. - छत्तीसगढ़ के जनजातियों की संस्कृति एंव कला

डॉ. किरण अग्रवाल * डॉ. बी.एस. धुर्वे **

प्रस्तावना - जनजाति या भूमिजन , बनवासी या जिन्हें हम आदिवासी के नाम से जानते है। भारत के विभिन्न प्रांतों में सुदूर ग्रामीण अंचलो के बीच प्रकृति की गोद में जिन्दगी बसर करते आ रहे हैं ,धरती मां की गोद मे पलते है। कुदरती वातावरण मे अपने आपको ढालते है आदि युग से ही ये प्रकृति के प्रेमी है एंव निकट में रहकर जीवन यापन करने के आदी है।

म0प्र0 -छत्तीसगए में विभिन्न जनजातियाँ निवास करती है जैसे गोड, माडिया, भुरिया, भतरा धुर्वा, हलवा, भील भिलाला, कोरकू, बैगा, पठारी प्रधान, ढुलिया, उराव कोरबा, कोल पनिका आदि। इनमें से गोंड जनजाति म0प्र0 के प्राय: सभी जिलो में पायी जाती है जबकि बस्तर जिले में माडिया मुरिया, हलवा, अबूझ माडिया, भतरा आदि जनजातिया निवास करती है भील, भिलाला धार, बडवानी एंव झाबुआ जिले में, कोरकू बैगा बैतूल जिले में उराव रायगढ एंव सरगुजा जिले मे, कोल शहडोल, डिण्डौरी, मण्डला रीवा, सीधी, सिंगरौली, जिलो में निवास करती है।

संस्कृति एंव कला - यह सर्वविदित है कि जनजातियों की अपनी एक अलग संस्कृति है जो अपने आप में सम्पूर्ण एंव परिपूर्ण है इन जनजातियों में अपनी भौगोलिक, आर्थिक, समाजिक, एंव संस्कृतिक सीमाओ में रहते हुए अपनी आवश्यकताओ के आधार पर अपनी कला एंव संस्कृति को संजोया एवं सवारा है और समृद्ध भी किया है। उनका संगीत,नृत्य कला एंव हस्तशिल्प दुनिया मे अनूठा एंव बैजोड है। प्राय: सभी जनजातियाँ खेतों में अनाज बोने के पहले धरती माता, इन्द्रदेव एवं बड़ा देव की पूजा गांव के भी लोग मिलकर करते है। जिसे कहीं कहीं 'बिरी पूजा' भी कहते है। बस्तर के माडिया काकसार उत्सव मनाकर जो गोत्र देव बडादेव की पूजा खेतों में बोए जाने वाले बीजों में उत्तम फसल की कामना करते है। नयी फसल पक जाने पर 'नवाखानी के रूप में जश्न मनाते है। इस अवसर पर बडा देव की पूजा प्रमुख रूप से मनाते है सरगुजा जिले के उराव एवं कोरबा जनजाति फसल कटाई के बाद पौश माह में गांव गांव मे 'धिर्रा उत्सव' मनाते है। इस उत्सव में नृत्य का मुख्य आकर्षण होता है बैगा जाति साल में 'गिरदा उत्सव' मनाती है रात भर नृत्य होता है। करमा नृत्य गोड एवं उराव जाति में हर्षोलास के साथ मनाते है।

आदिवासी संस्कृति में मदिरा पान का विषेश महत्व है हर उत्सव में इसका सेवन किया जाता है। माडिया, मुरियो में सल्फी पीने का रिवाज है। महमानी सत्कार में भी सल्फी का प्रयोग किया जाता है।

संगीत एंव नृत्य आदिवासी जीवन का प्रमुख आधार है। प्रत्येक जनजातीय परिवार के अपने नृत्य गीत होते है, जैसे उराव जाति का सरहुल, गोड जाति का मरमा, सैला रीना बैगाओ का भिलमा भी भिलालाओं का भगोरिया एवं ढोहा नृत्य आदि, समय और मान्यताओं के मुताबिक इन नृत्यों का आयोजन होता रहा है। अपने इष्ट देव के प्रति समर्पित होकर जब नृत्य करते है, तब ऐसा लगता है, मानो प्रकृति ही नाच रही है। यह एक ऐसा खजाना है जिसके माध्यम से दिन भर के थकान मिट जाती है नृत्यों में स्वत: के स्फूर्ती कला होती है। बाहरी व्यक्ति पर निर्भर नही रहते। बैंगा युवतियां गुन्नेरी घास से अत्यन्त कलात्मक लाछा बनाता है। जिसे वे लडी के रूप में सिर से पैरो तक लटकते हुए पहनती है। गोड युवक मोर पंख के डंठल एंव उनके संयोग से इतनी सुदर रंगीन कलंगी बनाते है कि जिसका मन मोह न जाता हो उराव युवतियां बगुला पंखो से मनमोहक टैंघा बनाती है, जिसे नृत्य के समय जूडे में खोंसती है। युवक मोर पंख से नृत्य करते है भील महिलाए भगोरिया नृत्य के समय सिर पर रखने के लिये बांस की सुंदर बोडनी बनाती है। इस तरह म.प्र. एंव छत्तीसगढ़ के जनजातियों की चित्रकला अपने आप मेंअत्यधिक समृद्ध है। जो सीधे उनकी संस्कृति से जुडी हुई है। सिद्धहस्त लोक कलाकार पेमा फत्या, बेलगूर, जागण एवं भूरी बाई ने अपनी संस्कृति की इस जानदार विधा को बिना किसी हस्तक्षेप या परिष्कृत के विकसित किया है। काष्ठ शिल्प में आदिवासी अपनी कला में धनी और अद्धितिय है।

गोंदना परम्परा हमारे देश के साथ साथ सम्पूर्ण विश्व की विभिन्न जातियो में प्रचलित है। म.प्र. छ.ग. के आदिवासियों को भी इस प्रथा में अटूट आस्था एवं सांस्कृतिक विश्वास है। अलग अलग आदिवासी जातियों में अलग रूप और मान्यताएं हैं महिलाएं बाह वक्ष स्थल, पैर जांघ, हाथ पीठ पर गोदना गुदवाती है। यही संस्कृति के निरालेपन की पहचान भी है।

उपसंहार - समय परिवर्तन के साथ जनजातियों के जीवन और संस्कृति में परिवर्तन हो रहा है। विज्ञान और टैक्नालाजी के माध्यम से और निरंतर बाहरी सम्पर्क मे आने के कारण अपनी संस्कृति से हटकर बहुत सी नई बाते सीख रहे। आधुनिकता से परिचित भी हो रहे है। तरक्की की दौड में शामिल होना अच्छी बात है परंतु अपनी संस्कृति एवं कला को मौलिक रूप में बनाए रखना भी जरूरी है। देखने में आ रहा है कि आधुनिक विचारधारा में जनजातियों की समृद्धशाली संस्कृति कला एवं संगीत की मौलिकता पर गंभीर असर पड रहा है। यह हमारे हित मे ठीक नही है। एक समय ऐसा आ सकता है, जब महान समृद्धशाली एवं अपने आप में अनूठी संस्कृति हमेशा के लिये विलुप्न हो जाये। आज हम अपनी पुरानी सभ्यता को भूलते जा रहे है। अनेक जानजातिया तो अपनी मूल भाषा और बोलियों को ही भूल रही। नृत्य एवं गीत एंव अन्य कलाये भी धीर-धीरे छूटती जा रही है। अपनी परम्परा को भूलते जा रहे है।

जनजातीय समाज का यह पहला कर्तव्य होना चाहिए कि अपनी संस्कृति की पहचान को बनाए रखना होगा। जनजातियों के बीच सम्पर्क की खाई को कम करने के लिए कला संगीत एंव नृत्य को माध्यम बनाना होगा। जानजातियो की खुशिया इन्हीं साधनो पर निर्भर है। उनकी खुशियाँ, मोहब्बत एवं सामाजिक पहलू का यही एक अटूट हिस्सा है। अब हमे विकास के प्रयत्नो मे आदिवासी युवा की बुद्धि, धैर्य, एकाग्रता, परिश्रम और सामाजिक चेतना का असरकारक और कारगर उपयोग करने के लिये प्रयत्नशील होना पड़ेगा। जनजातीय संस्कृति, कला, संगीत, और नृत्य के खजाने को सर्वेक्षण शोध संग्रह संचार और सम्पर्क इत्यादि के माध्यमो से प्रकाश में लाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता दर्पण।
2. प्रतियोगिता किरण।

* एड्वोकेट (अर्थशास्त्र) अनूपपुर (म.प्र.) भारत
** सेवा नि. प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शा.पं.श.ना.शु. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश में अनुसूचित जनजाति में उभरते राजनीतिक नेतृत्व का स्वरूप

दीवान सिंह बारिया *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश में अनुसूचित जनजाति के नेतृत्व में राजनीतिक ही नहीं सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक व तकनीकी आदि क्षेत्रों में भी समृद्धि प्राप्त की हैं। अनुसूचित जनजाति के नेतृत्व की महत्वपूर्ण भूमिका रही हैं। मध्यप्रदेश में राजनीतिक नेतृत्व के परिवर्तन के दौर में अनुसूचित जनजाति को राजनीतिक शक्ति का जो सानिध्य मिला हैं, उसे साकार करने में नेतृत्व का बहुत बड़ा हाथ हैं। नेतृत्व ने उत्प्रेरक के रूप में कार्य करते हुए जनजातीय जीवन में राजनीति को स्थापित करने का जो कार्य किया है, उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। नेतृत्व की संकल्पना को आज विवादास्पद अवधारणा माना जा रहा हैं। प्रदेश की राजनीति में शीर्ष से स्थानीय स्तर तक नेतृत्व की संकल्पना अनुसूचित जनजाति में उभरते राजनीतिक नेतृत्व से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हैं। राजनीतिक नेतृत्व राजनीति के प्रति वैयक्तिक अभिव्यक्तियों और अभिमुखीकरणों का प्रतिमान है, अर्थात राजनीतिक व्यवस्था तथा राजनीतिक मुद्दों से संबंधित सामाजिक दृष्टिकोणों, विश्वासों और मूल्यों से राजनीतिक नेतृत्व का निर्माण होता हैं। मध्यप्रदेश राज्य ने भी राजनीतिक नेतृत्व के क्षेत्र में सफलता प्राप्त की। यहाँ की अनुसूचित जनजाति के लोग अपनी आत्म कथा स्वयं कहते हैं। इतने सजीव, जीवन्त-प्राणवान एवं सक्रिय राजनीतिक परिदृश्य में नेतृत्व का अध्ययन इन अर्थों में महत्वपूर्ण हैं कि राजनीतिक सत्ता के इस क्रमिक रूपान्तरण में नेतृत्व के स्वरूप का अध्ययन कौतूहलपूर्ण, रोचक एवं विस्मयकारक भी हैं।

राजनीति अपने ऐतिहासिक एवं प्राचीन स्वरूप में मूलत: राजा, राज-परिवार या सत्ता के केन्द्र से जुड़े उच्च पदों पर उदासीन सेवकों की धरोहर थी व उनके अध्ययन की विषय थी। किन्तु भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् प्रजातंत्र की स्थापना से राजनीति से सामान्यजन भी जुड़े, इसमें ऐसे समूह भी जुड़े जो अनेक वर्षो से सामान्यजन से दूर अपना जीवन बिता रहे थे।

म.प्र. में अनुसूचित जनजाति में उभरते राजनीतिक नेतृत्व के स्वरूप में अनुसूचित जनजाति में व्यापक रूप से प्रचलित विश्वासों और मनोभावों को लिया जाएगा, जो अभिमुखीकरण के उन विशिष्ट प्रतिमानों का निर्माण कर सकते हैं, और राजनीतिक प्रक्रियाओं को व्यवस्था और स्वरूप प्रदान करते हैं। राजनीतिक नेतृत्व राजनीतिक क्षेत्र को उसी प्रकार संरचना और अर्थ प्रदान करता है, जिस प्रकार सामान्य नेतृत्व सामाजिक जीवन को एकीकरण प्रदान करता हैं। राजनीतिक नेतृत्व एक निश्चित रूप से क्रमवार अवधारणा हैं, जो सामान्य नेतृत्व से संबंधित और प्रभावित रहते हुए भी उससे कुछ स्वतंत्र हैं।

नेतृत्व की अवधारणा – सभ्य मानव ने जब से समूह में संगठित होकर जीवन यापन करना सीखा तभी से सम्भवत: 'नेतृत्व' की शुरूआत हुई होगी। आधुनिक समाजों तथा सरकारों में जहाँ जटिल एवं विशाल आकार के संगठन कार्यरत हैं, में नेतृत्व एक महत्वपूर्ण आवश्यकता तथा समस्या के रूप में उभर रहा है। सरकारी एवं निजी प्रशासन से लेकर सामाजिक तथा पारिवारिक कार्यों तक संगठन या समूह की समस्त गतिविधियों तथा कार्यों को वांछित उद्देश्यों की और संचालित तथा निर्देशित करने का कार्य नेतृत्व करता है। नेतृत्व का सामान्य अर्थ किसी संगठन के शीर्ष पर विराजमान कार्यकारी अधिकारी की उस योग्यता एवं स्थिति से हैं जो अधीनस्थों या अनुयायियों में प्रेरणाए उत्पन्न करती हैं। मार्क ट्वेन के अनुसार- 'हिरणों की ऐसी सेना जिसका नेतृत्व शेर द्वारा किया जा रहा हो, शेरों की उस सेना से बेहतर होती हैं जिसका नेतृत्व हिरण द्वारा किया जा रहा हो।'

विश्व इतिहास की बहुत सी युगांतकारी घटनाएँ तथा राष्ट्रों के उत्थान पतन की कहानियाँ सफल या विफल नेतृत्व से भरी पड़ी हैं। यद्यपि नेता के पास अपने अनुयायियों या समूह को निर्देशित करने की सत्ता होती है तथापि हमेशा दण्ड एवं भय से संगठन के कार्यो का कुशलतापूर्वक संचालन करना सम्भव नहीं हैं। आधुनिक प्रशासनिक संगठनों में जहाँ नौकरशाही की एक विशिष्ट कार्यशैली के साथ-साथ लोकतांत्रिक मूल्यों का राजनीतिक परिवेश होता हैं, में नेतृत्व का कार्य बहुत चुनौतीपूर्ण हो जाता हैं। भारत सहित अधिकांश विकासशील राष्ट्रों के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा प्रशासनिक संगठनों में कुशल नेतृत्व की समस्या यथावत विद्यमान हैं। यही कारण हैं कि सैद्धान्तिक दृष्टि से श्रेष्ठतम नीतियाँ एवं कार्यक्रम निरूपित करने के उपरान्त भी हमारे प्रशासनिक संगठन क्रियान्वयन के स्तर पर प्राय: विफल सिद्ध हुए हैं, क्योंकि प्रभावी नेतृत्व का अभाव रहा हैं। विशेषज्ञों का मानना हैं कि संगठन में आने वाले सभी व्यक्ति इस बात से पुर्णतया परिचित नहीं होते हैं कि उस संगठन का वास्तविक लक्ष्य तथा रणनीति क्या हैं अधिसंख्य कार्मिक अपनी व्यक्तिगत समस्याओं तथा मान्यताओं के साथ केवल दिनो-दिन संगठनात्मक कार्यकलाप निपटाते रहते हैं। अत: नेतृत्व का यह गम्भीर दायित्व हो जाता हैं कि वह सभी कार्मिकों एवं इकाईयों में समन्वय स्थापित करें। कार्य विभाजन, विशिष्टीकरण तथा विकेन्द्रीकरण ने संगठन के लिए समन्वय और नेतृत्व की समस्याएँ तुलनात्मक रूप से बढ़ा दी है। **सेक्लर हडसन** का मानना हैं कि- 'नेतृत्व की समस्याओं का असाधारण महत्व प्रशासनिक आकार की विशालता, जटिलता, विशिष्टीकरण, संगठनात्मक सत्ता, तकनीकी विकास तथा सामाजिक आवश्यकताओं जैसे तत्वों में क्रांतिकारी वृद्धि के साथ बहुत बढ़ गया है।'

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 366(25) के अनुसार जनजाति से तात्पर्य उन जनजातीय समुदायों अथवा उनके अंशों या समूहों से हैं जो

*शोधार्थी (राजनीतिशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, (म.प्र.) भारत

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत अनुसूचित जनजातियों के रूप में माने गए हैं। इसी अनुच्छेद के तहत राष्ट्रपति के द्वारा आम सूचना जारी की जाती हैं। संसद किसी भी जनजातीय समुदाय अथवा उसके अंशों को अनुसूचित जनजातियों की सूची से निकाल सकती हैं या उसमें जोड़ सकती हैं।

अनुसूचित जनजाति मूलनिवासी – महाद्वीपों के दुर्गम क्षेत्रों में आज भी ऐसे अनेक मानव समूह है, जो हजारों वर्षो के शेष विश्व की सभ्यता से दूर अपनी-अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना की पहचान बनाये हुए है। ये मानव समूह बीहड़, वनों मरूस्थलों ऊँचे पर्वतों और पर्वतों-पठारों के उन अंचलों में निवास करते हैं, जिन्हें आधुनिक समाज की अर्थदृष्टि अनुत्पादक मानती है। इन मानव समूहों का अपना अनुल्लिखित इतिहास था जिसका केवल अंतिम पृष्ठ ही शेष रह गया है और उसमें यह लिखा हैं कि न जाने किस समय यह समूह छोटे-छोटे ऐसे कबीलों में बंट गया जिनमें एक दूसरे की पहचान और रिश्तों की डोरी या तो टूट चुकी हैं या उलझ चुकी है। हिन्दी में ऐसे मानव-समूहों के लिए 'जनजाति' 'आदिमवासी' कबीली जनसंख्या और जनजाति जैसे संबोधन है, ये सभी शब्द अंग्रेजी भाषा के नेटिव एबोरिजन और ट्राइब या (ट्राइबल्स) शब्दों के पर्याय है। अत: भारतीय संविधान के अनुच्छेद 341 में सूचीबद्ध जातियाँ अनुसूचित जनजातियाँ कहलाती हैं।

जनजाति या आदिम जाति अथवा आदिवासी 'ट्राइब्स' शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। जनजातियों की उपस्थिति और उनके महत्व का पहला परिचय भारतीय समाज में आजादी के पूर्व हो चुका था। विशेष रूप से बिहार में संथाल, उराँव और मुण्डा विद्रोह के नाम से प्रसिद्ध जनजाति आंदोलन भारतीय जनजातियों की सजगता को व्यक्त कर रहे थे।

राल्कपिडिंगटन ने जनजाति का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि – 'हम एक जनजाति की व्याख्या व्यक्तियों के ऐसे समूह के रूप में कर सकते हैं जो समान भाषा बोलता हो, समान भू-भाग में निवास करता हो तथा जिसकी संस्कृति में समानता पाई जाती हो।' भारत में ट्राइब शब्द के स्थान पर अब शेडयूल्ड ट्राइब नामक शब्द है, जिसे हिन्दी में अनुसूचित जनजाति अनुमोदित किया जाता हैं।

अनुसूचित जनजाति – अनुसूचित शब्द से तात्पर्य सूचीबद्ध से है। इस अर्थ में अनुसूचित जनजाति के संदर्भ में हम कह सकते हैं कि वे जनजातियाँ अनुसूचित जनजातियाँ है, जिन्हें भारतीय संविधान के आधार पर सन् 1950 में सूचीबद्ध किया गया था।' सूचीबद्ध करने के पीछे जो कारण था वह था जनजातियों के लिए विकास मार्ग को प्रशस्त करना जनजातीय विकास हेतु भारतीय संविधान में जनजातियों और अनुसूचित जातियों के लिए नौकरियों में आरक्षण तथा शिक्षा में सुविधा देने की दृष्टि से इन्हें सूचीबद्ध किया था। अनुसूचित का अर्थ न तो पिछड़ा हुआ है और न ही उन्नत। बल्कि सरकार ने 1935 में जनजातियों की एक ऐसी सूची बनाई थी, जिनके विकास की सरकार को चिन्ता थी तथा जिन्हें विभिन्न आयामों में विकसित करना था। अत: जो जनजातियाँ इस सूची में सम्मिम्लित की गयी वे अनुसूचित जनजाति कहलाई। मध्यप्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों की कुल संख्या लगभग 46 है।

मध्यप्रदेश में जनजाति का स्थान – जनसंख्या के आधार पर देखा जाए तो देश में सर्वाधिक जनजातीय जनसंख्या मध्यप्रदेश में निवास करती है। वर्ष 2011 की जनगणा के अनुसार मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या 72626809 में से 15316784 जनसंख्या अनुसूचित जनजातियों की है। इसमें अनुसूचित जनजाति वर्ग के पुरूषों की जनसंख्या 7719404 है तथा महिलाओं की जनसंख्या 7597380 है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार राज्य में कुल 46 अनुसूचित जनजातियों की उपस्थिति दर्ज की गई है। राज्य के जिलों के संदर्भ में देखा जाए तो धार जिले में सर्वाधिक जनसंख्या अनुसूचित जनजातियों की है। मध्यप्रदेश में जनजातीय समूहों की जनसंख्या के संदर्भ में देखा जाए तो राज्य की कुल जनजातीय जनसंख्या में भीलों की उपस्थिति सर्वाधिक 5993921 है।

तालिका क्रमांक – 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

राजनैतिक स्थिति – जनजातियों की राजनैतिक स्थिति ग्रामीण व जंगली क्षेत्रों में निवास करने वालों की अपेक्षा कुछ अच्छी देखने को मिलती है। जिस परिवार में शिक्षित लोग है, उस परिवार के लोगों व क्षेत्रों में राजनीतिक जागरूकता देखने को मिलती है। उसी जाति व परिवार के लोग व्यावसायिक रूप से व नौकरी पेशे से मजबूती की स्थिति में पाए गए। ग्रामीण क्षेत्रों में व कम शिक्षित लोगों का यह कहना हैं कि हमने तो अपना किया है, हमको वोट देना था, सो दे दिया। अब जनप्रतिनिधि का काम हैं कि, वो अपना काम करे या ना करे। इस बात से यह स्पष्ट होता हैं कि इन वर्गो में राजनीतिक जागरूकता की थोड़ी कमी है। वही दूसरी तरफ यह पाया गया कि जनजातीय समुदाय में राजनीतिक जागरूकता अधिक है। आये दिन ये लोग अपने अधिकारों को लेकर धरना, पदयात्रा तथा बैठके आयोजित करते हैं, जिससे एक दबाव समुह का निर्माण हो रहा है। अत: यह पूर्ण रूप से नहीं कहा जा सकता हैं कि जनजातीय समुदाय के लोगों में राजनीतिक जागरूकता की गति धीमी है। राजनीतिक जागरूकता का स्तर बहुत तीव्र गति से बढ़ रहा है।

सामाजिक स्थिति – अनुसूचित जनजातीय समूह के लोगों में ऊँच-नीच का भेदभाव कम मिलता है। अन्य जाति समूह की अपेक्षा ये लोग हिन्दू धर्म के लोगों के सम्पर्क में लगातार सम्पर्क में होने के कारण इन जाति समूह में भी सामाजिक वर्ग निर्मित हो गए हैं। जैसे कि भील समुदाय के अनेक उपजातियों की उत्पत्ति हो गई। भीलाला, कोरकू, गोंड, अरख, अरखी, बोपची, मोअसी, मुण्डा, ओरान, धनका, धनगड़ आदि जनजातियों की बहुतायत पायी जाती हैं। जिनमें से कुछ जातियाँ अपने को श्रेष्ठ मानती है। भीलाला भीलों से उच्च मानते है। उनका कहना हैं कि हम भीलाला राजपूत हैं। इन जातियों में अधिकांशत: महिला प्रधान समाज देखने को मिलता हैं। इन वर्गो के यहाँ कुछ सामाजिक मान्यताएँ हैं, जो एक परम्परानुसार चलती आ रही हैं। जैसे भगोरिया विश्वप्रसिद्ध त्यौहार मनाया जाता हैं तथा शीतला माता का पूजन आदि अनेक त्यौहार बहुत ही श्रद्धा तथा निश्चित परम्परानुसार मनाये जाते हैं, इस त्यौहार बकरे की बली दी जाती हैं तथा शराब का सेवन किया जाता हैं। वही भील जनजातियों में आज भी भगोरिया हाट का पर्व मनाया जाता हैं। इस पर्व में इन समुदाय की महिलाओं को भगाकर शादी करने की परम्परा बनी हैं। बारेला, पटेलिया आदि समुदाय के लोगों में भील, भीलाला जैसी ही सामाजिक परम्पराएँ मिलती-जुलती हैं।

आर्थिक स्थिति –अनुसूचित जनजातियों की आर्थिक स्थिति भिन्न-भिन्न पाई गई हैं। अधिकांश अनुसूचित जनजातियाँ कृषि कार्य करती हैं, जो कि पहाड़ी क्षेत्रों तथा जंगली क्षेत्रों में निवास करती हैं। अनुसूचित जनजाति के लोगों की अपेक्षा मैदानी क्षेत्रों में निवास करने वाली कुछ जातियों की आर्थिक स्थिति अलग होती हैं। कुछ लोग अपनी जीविका का साधन वनोपज, पशुपालन, मदिरा, कृषि कार्य से सम्बन्धित एवं दैनिक उपभोग करने वाले छोटे-छोटे हथियार निर्माण के द्वारा अपना जीवन निर्वाह करते हैं, जिनके द्वारा इनकी आय में वृद्धि देखी गई हैं। तथा कुछ लोग छोटे-मोटे व्यापार व नौकरी आदि कार्यों में लगे हुए हैं।

व्यक्तिगत दृष्टि से मनुष्य हमेशा ही एक व्यक्ति का नेतृत्व ही पसन्द करता हैं। हर मनुष्य में अन्त:प्रेरणा एकल नेतृत्व से व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक भावना में पड़ती हैं। यह विचित्र बात हैं कि व्यक्ति अन्य सब दृष्टियों से अपने जीवन में अनेकता व अनेकों का साथ, सहयोग और सहायता चाहता हैं, किन्तु जब नेतृत्व का प्रश्न आता हैं, तो वह एक से अधिक नेता उसके जीवन के संचालक के रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं होता हैं। राजनीतिक नेतृत्व तो मानव एक ही व्यक्ति में निहित देखने की प्रवृत्ति रखता हैं। यही कारण हैं कि लोकतान्त्रिक शासनों में सर्वत्र राष्ट्रपतियों या प्रधानमन्त्रियों में शक्ति को केन्द्रित होने देने में आम आदमी की अन्त:प्रेरित प्रवृत्ति सहयोगी होती जा रही हैं। व्यक्ति अपने देश का एक नेता चाहता हैं, जिससे वह राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोए रखे, दृढता के साथ राज्य को आगे बढ़ाए और उसके लिए राष्ट्रीय अहम का प्रतीक बने। व्यक्तियों की इसी प्रवृत्ति के कारण विकासशील राज्यों में लोकतन्त्र व्यवस्थाओं को सबसे बड़ा खतरा रहा हैं। इन देशों में राजनीतिक दलों व राजनीतिक नेताओं की आपसी खींचतान में या तो एक सर्वमान्य नेता उभर आता है। अन्यथा इसके अभाव में जनता लोकतन्त्र से उतरकर तानाशाही का रास्ता प्रशस्त करने में सहायक हो जाती है। यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक हैं कि एकल नेतृत्व केवल आम जनता द्वारा पसन्द किया जाता हैं। राजनीतिक समाज के अभिजन हमेशा ही इस प्रकार के नेतृत्व के विरूद्ध रहते हैं। इस कारण समाजों में इस प्रकार की दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियाँ विद्यमान रहती हैं किन्तु अधिकांश जनसाधारण अपने नेता के रूप में एक ही व्यक्ति को देखना चाहते है। यही कारण हैं कि आधुनिक चुनाव कम से कम संसदीय प्रणालियों में विशेषकर ब्रिटेन में एक व्यक्ति भावी प्रधानमन्त्री के इर्द–गिर्द होने लगे है। भारत भी इसका श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करता है। भारत में सन् 1977 के आम चुनाव में श्रीमती इन्दिरा गांधी के इर्द–गिर्द ही लड़े गए थे। अत: इस भावना के कारण कार्यपालिका अध्यक्ष सर्वाधिक शक्ति सम्पन्न व चोटी का नेता बनकर कार्यपालिका को शक्ति केन्द्र बना देता हैं।

निष्कर्ष –लोकतंत्र में एक ईमानदार व्यक्ति के नेतृत्व की तलाश हैं। डॉ. रामस्वरूप शर्मा ने नेतृत्व के संबंध में लिखा है – 'हमें आज एक ऐसा कुशल और ईमानदार नेता चाहिए, जो अपनी भूख से अधिक उन लोगों की भूख को देखे जिनके वोट लेकर वह मुखिया बना हुआ हैं' जिस दिन हमें नेतृत्वधारी व्यक्तित्व मिल जायेगा, शायद उस दिन अनुसूचित जनजाति का सम्पूर्ण विकास होगा।'

सुझाव –सुझावों को शोध पत्र के आधार पर प्रस्तुत किया गया है –

1. राजनीतिक नेतृत्व में राज व्यवस्था हेतु ग्रामीण जन प्रतिनिधियों को और अधिक अधिकार प्रदान किए जाने चाहिए।
2. अच्छे राजनीतिक नेतृत्व की राज–संस्थाओं के सफल कार्य–संचालन के लिए इनके वित्तीय साधनों को बढ़ाना अत्यन्त आवश्यक है।
3. राजनीतिक नेतृत्व के लिए अनुसूचित जनजाति की सामाजिक, शैक्षणिक तथा आर्थिक स्थिति को ऊपर उठाने के हर सम्भव प्रयास किए जाने चाहिए।
4. अनुसूचित जनजाति के शिक्षित युवक और युवतियों द्वारा अपने ग्रामीण अंचलों में जाकर ग्रामीण महिला और पुरूषों में उनके अधिकारों के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना चाहिए।
5. अनुसूचित जनजातियों के निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण दियाा जाना चाहिए।
6. राजनीतिक नेतृत्व के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में गुटबन्दी और दलगत राजनीति पनपी है, जो ग्रामों के सर्वांगीण विकास में बाधक है, अत: इनमें ग्रामों को मुक्त रखा जाना चाहिए।
7. आदिवासी बहुल क्षेत्रों में शिक्षा व्यवस्था पर शासन को विशेष ध्यान देना होगा ताकि भविष्य में इन वर्गों में मजबूत राजनीतिक नेतृत्व उभरकर आ सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, हरिओम, ग्रामीण नेतृत्व के उभरते प्रतिमान, अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, 2009
2. वर्मा, बी.एम., रूरल लिडरशीप इन ए वेल्फेयर सोसाइटी, मित्तल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1994
3. मेहता, प्रकाशचन्द्र, भारत के आदिवासी, शिवा पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, उदयपुर, 1993
4. शर्मा, श्रीनाथ, जनजातीय समाजशास्त्र, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2003, पृ.क्र.–4
5. वैदय, नरेश कुमार, जनजातीय विकास मिथक एवं यथार्थ, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, नई दिल्ली, 2003
6. कुमार, अभय एवं अरविन्द, 2012 सन्थाल आदिवासियों की धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्पराएँ, मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल, मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन, (म.प्र.), अंक 1–2, जनवरी–दिसम्बर, 2012

मध्यप्रदेश में जनजातियों की संख्यात्मक स्थिति

तालिका क्रमांक – 01

मध्यप्रदेश की अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या (वर्ष 2011)

क्र	अनुसूचित जनजाति का नाम	कुल जनसंख्या		ग्रामीण जनसंख्या		शहरी जनसंख्या	
		पुरूष	महिला	पुरूष	महिला	पुरूष	महिला
	मध्यप्रदेश की कुल जनजातीय जनसंख्या	7719404	7597380	7187769	7089105	531635	508275
1	आगरिया	20706	20537	19292	19095	1414	1442
2	अन्ध	70	67	18	19	52	48
3	बैगा	207588	206938	197173	196859	10415	10079
4	भैना	3192	3165	3038	3017	154	148
5	भारिया भूमिया	97574	95656	92217	90537	53057	5119

क्र	अनुसूचित जनजाति का नाम	कुल जनसंख्या		ग्रामीण जनसंख्या		शहरी जनसंख्या	
		पुरूष	महिला	पुरूष	महिला	पुरूष	महिला
6	भट्रा	599	556	516	484	83	72
7	भील, भीलाला, बरेला	3016445	2977476	2839091	2810066	177354	167410
8	भील मीना	1194	1050	641	572	553	478
9	भूंजिया	767	702	99	99	668	603
10	बिआर, वियार	5390	5062	4508	4193	882	869
11	बिंझवार	7766	8039	6886	7171	880	868
12	बिरहूल, बिरहोल	27	25	05	06	22	19
13	डामोर, डमरिया	936	879	506	488	430	391
14	धनवार	1109	1066	621	628	488	438
15	गढाबा, गडबा	295	283	65	58	230	225
16	गोंड, अरख, अरखि...	2549973	2543151	2386602	2385115	163371	158036
17	हलबा, हलबी	7148	7290	3753	3909	3395	3381
18	कामर	333	333	214	220	119	113
19	कोरकू	156	109	82	54	74	55
20	कावर, कंवर, कौर......	9380	9223	7272	7301	2108	1922
21	खैरवार, कोन्डर	39193	36904	35229	33160	3964	3744
22	खरिया	1258	1171	907	822	351	349
23	कौध, खोड़, कांध	54	55	19	21	35	34
24	कोल	595338	572356	526981	506074	68357	66282
25	वोलम	112	112	85	78	27	34
26	कोरकू, बोपची, मोअसी...	372552	358295	361196	347740	11356	10555
27	कोरवा, कोडकू	459	461	234	215	225	246
28	माझी	26513	24142	9142	8128	17371	16014
29	मझवार	226	217	55	40	171	177
30	म्वासी	55234	53946	52724	51398	2510	2548
31	मुंडा	2669	2372	1033	929	1636	1443
32	नागेसिया, नागासिया	180	179	71	62	109	117
33	ओरान, धनका, धनगड...	14275	14156	6113	6043	7307	7128
34	पनिका-आदि	49546	48221	42239	41093	7307	7128
35	पाओ	21706	22606	20305	21240	1401	1366
36	परधान, पाथरी, सरोती	62189	61553	52594	52015	9595	9538
37	पारधी, बहेलिया-आदि	3029	2867	2625	2517	404	350
38	परजा	70	67	39	35	31	52
39	साहारिया, सहरिया	316541	298417	304277	287183	12264	11234
40	साउता, सौता	113	77	95	60	18	17
41	सेर	86983	80983	82314	77192	4043	3791
42	सावर, सावारा	464	417	395	354	69	63
43	सोंर	6644	6261	6340	5939	304	322

स्त्रोत – सामाजिक, आर्थिक जाति आधारित जनगणना, 2011

****

मानव अधिकार संरक्षण के अंतर्गत पुलिस की भूमिका (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ. प्रविता सिंह *

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही राज्य का मूलभूत उद्देश्य समाज में शांति बनाए रखना है, जिससे मानवाधिकारों की रक्षा की जा सके। मानवाधिकारों शब्द दो शब्दो मानव + अधिकार से मिलकर बना है, जिसका सीधा अर्थ मानव के प्राकृतिक अधिकारो से है, जिसका प्रयोग कर मनुष्य अपना सर्वांगीण विकास कर सके। जिसकी प्रमुख शर्त समानता है क्योंकि प्रकृति ने किसी भी मनुष्य में कोई भेदभाव नहीं किया है। मानव अधिकारों को स्पष्ट करते हुए श्री ***दिलीप जाखड़ कहते है*** कि 'मानव अधिकार ऐसे अधिकार है, जो प्रत्येक व्यक्ति को प्राणी होने के नाते प्राप्त है भले ही उनकी राष्ट्रीयता लिंग, वर्ग, व्यवसाय और सामाजिक व आर्थिक स्थित भिन्न हो। आर. जे. बिसेट का विचार है कि 'मानव अधिकार को मानव होने के कारण प्राप्त है, जिनका आधार मानव स्वभाव से निहित है'।

इस प्रकार हम कह सकते है मानव अधिकार वे अधिकार है, जो मनुष्य के जीवन उसके अस्तित्व एवं व्यक्तित्व के विकास के लिए अनिवार्य है। जो कि स्वभाव में ही अन्तनिहित होते है और इस अधिकारों की रक्षा हेतु मानवाधिकार आयोग की स्थापना की गई है। भारत जैसे राष्ट्र में जहां लगातार अपराधों का ग्राफ बढ़ रहा है सामाजिक जीवन के अर्थ व अपराध का महत्व स्थापित हो रहा है। जनसंख्या में वृद्धि, अपराधों में वृद्धि, राजनीति में अपराध का बढ़ता प्रभाव, गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी, प्रदूषण, वेश्यावृत्ति, आर्थिक व सामाजिक विषमताएँ, भाषावाद व राष्ट्रीय चरित्र का अभाव जैसी विषमताएँ पाई जाती है। जहां की बड़ी आबादी निरक्षर है, वहाँ मानवाधिकारों की

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 – मध्यप्रदेश भारत का ऐसा पहला राज्य है, जहां मानवाधिकार आयोग का गठन सन् 1992 में किया गया। भारत की संसद द्वारा 'मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993' पारित किया गया जो 28 सितम्बर 1993 को प्रभावशील हो गया। जिसके आधार पर अक्टूबर 1993 में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की स्थापना की गई इस अधिनियम की धारा 29 (1) की शक्तियों का प्रयोग में लाते हुए म.प्र. शासन राजपत्र असाधारण दिनांक 13 सितम्बर 1993 में प्रकाशित अधिसूचना क्रमांक एफ/15.94(1) द्वारा म.प्र. मानवाधिकार आयोग का गठन किया। इन दोनों आयोगो ने लगातार अपने अस्तित्व में आने के बाद से भारतीय समाज में मानवाधिकार संरक्षण हेतु अभिनव प्रयास किया और समाज में प्रत्येक नागरिक को उसका अधिकार दिलाने हेतु प्रयासरत है।

मानव अधिकार के वियना सम्मेलन में 25 जून 1993 को अपनाए गये वियना घोषणां पत्र के अनुसार प्रत्येक राज्य को मानव अधिकारों के उल्लंघन होने की दशा में एक प्रभावशाली व्यवस्था या संस्था प्रदान करने लिए एक आयोग स्थापित करना चाहिए।

वियना सम्मेलन के पश्चात्, भारत सहित कई राज्यों ने मानव अधिकारों के उलघन की शिकायतों के समाधान हेतु मानव अधिकारों की रक्षा हेतु राष्ट्रीय कमीशन की स्थापना की पश्चिमी देशों खासकर अमेरिका ने भारत की समस्त सेना एवं सुरक्षा सेना की जम्मू काश्मीर के मामले में तीव्र आलोचना की वर्तमान में यह भली–भांति स्वीकार किया जाता है कि आतंकवाद मानव अधिकारों का गंभीर उल्लंघन है, किन्तु इसके बावजूद जब कभी भारतीय सुरक्षा सेनाओं ने आतंकवादियों या उग्रवादियों के साथ कठोरता का व्यवहार किया तो अमेरिका द्वारा भारत के इस कृत्य की अनिवार्य रूप से आलोचना की गई। वर्तमान में यह भली–भांति स्वीकार किया जाता है कि आतंकवादी मानव अधिकारों का गंभीर उल्लंघन है, किन्तु इसके बावजूद जब कभी भारतीय सुरक्षा सेनाओं ने आतंकवादियों या उग्रवादियों के साथ कठोरेता व्यवहार किया तो अमेरिका द्वारा भारत के इस कृत्य की अनिवार्य रूप से आलोचना की गई। इन आलोचनाओं का जवाब देने हेतु भारत द्वारा मानव अधिकारों की रक्षा हेतु राष्ट्रीय कमीशन की स्थापना करने का निर्णय लिया गया। तत्पश्चात् 28 सितंबर 1993 को भारतीय राष्ट्रपति के अध्यादेश उद्घोषणा द्वारा मानव अधिकारों के राष्ट्रीय कमीशन की स्थापना की गई। जिसमें संबंधित एवं बिल को लोकसभा में 18 दिसम्बर 1993 को पारित किया। इस बिल को राष्ट्रपति की सहमति से 8 जनवरी 1994 को भारत के गजट में प्रकाशित किया गया और इस अध्यादेश का स्थान मानव अधिकारों के संरक्षण अधिनियम 1993 ने ले लिया। मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 मानवाधिकारों के अच्छे संरक्षण के लिए तथा उससे संबंधित अनुशंगिक मामलों के लिए राष्ट्रीय व राज्य मानवाधिकार आयोग एवं मानवाधिकार न्यायालय की स्थापना करने का सुव्यवस्थित प्रावधान है। इस अधिनियम की धारा 1(2) के अनुसार अधिनियम पूर्व भारत में लागू होगा, परन्तु जम्मू व काश्मीर के मामले में यह उन्ही विषयों में लागू होगा जो संविधान की सातवी अनुसूची व सूची 1 व 3 में वर्णित है।

मानवाधिकारों के संरक्षण अधिनियम 1993 की प्रस्तावना में यह स्पष्ट किया गया है कि यह अधिनियम मानवाधिकारों के बेहतर संरक्षण के लिए राष्ट्रीय व राज्य मानवाधिकार आयोग तथा मानवाधिकार न्यायालय की स्थापना तथा उनसे संबंधित मामलों के लिए पारित किया गया है।

संरक्षण अधिनियम 29 सितंबर 1993

प्रारंभिक –

1. इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 है।
2. इसका विस्तार सम्पूर्ण भारत में है, परंतु यह जम्मू कश्मीर राज्य में केवल वहां तक लागू हो जहां तक इस संबंध इस राज्य को यथा लागू संविधान की सातवी अनुसूची की सूची 1 या 3 में प्रगणित प्रविष्टियों में से किसी से संबंधित विषयों से है।
3. यह 29 सितंबर 1993 को प्रवृत्त हुआ समझा जायेगा।

* अतिथि विद्वान (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला – उमरिया, रीवा (म.प्र.) भारत

(1) इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ में अन्यथा अपेक्षित न

(क) 'सशस्त्र बल' से नौसेना, सेना और वायु सेना अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत संघ का कोई अन्य सशस्त्र बल है।

(ख) अध्यक्ष से यथास्थिति, आयोग का या राज्य आयोग का अध्यक्ष अभिप्रेत है।

(ग) आयोग से धारा 3 के अधीन गठित राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग प्रभिप्रेत है।

(घ) मानव अधिकार से प्राण, स्वतंत्रता, समानता और व्यक्ति की गरिमा से संबंधित ऐसे अधिकार अभिप्रेत है, जो संविधान द्वारा प्रत्याभूत किए गए है या अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं से सन्निविष्ट है। और भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय है।

(ङ) 'मानव अधिकार न्यायालय' से धारा 30 के अधीन विनिर्दिष्ट मानव अधिकार न्यायालय अभिप्रेत है।

(च) अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा से संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा 16 दिसंबर 1966 का अंगीकार की गई। सिविल ओर राजनीतिक अधिकारों संबंधी अतर्राष्ट्रीय प्रसविदा तथा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों संबंध अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा अभिप्रेत है।

(छ) 'सदस्य से, यथास्थिति आयोग' का या राज्य आयोग का सदस्य अभिप्रेत है।

(ज) 'राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग' से राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम 1992 की धारा 3 के अधीन गठित राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अभिप्रेरित।

(झ) राष्ट्रीय अनुसूचित जाति ओर अनुसूचित जनजाति आयोग से संविधान के अनुच्छेद 338 में निर्दिष्ट अनुसूचित जनजाति आयोग अभिप्रेत है: और इस अंतर्गत अध्यक्ष है।

(ञ) 'राष्ट्रीय महिला आयोग से राष्ट्रीय महिला' आयोग अधिनियम 1990 की धारा 3 के अधीन गठित राष्ट्रीय महिला आयोग अभिप्रेत है।

(ट) 'अधिसूचना' से राजपत्र में प्रकाषित अधिसूचना अभिप्रेत है

(ठ) विहित से इस अधिनियम के अधीन बनाये गये नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है।

(ध) 'लोक सेवक' का वही अर्थ है जो भारतीय दण्ड संहिता की धारा 21 में है।

(न) 'राज्य आयोग' से धारा 21 के अधीन गठित राज्य मानव अधिकार आयोग अभिप्रेत है।

मानवाधिकार और पुलिस – प्रत्येक पुलिसकर्मी पुलिस में भती होने से पहले एक साधारण मनुष्य होता है और पुलिस की वर्दी पहन लेने के बाद भी उसके मनुष्य होने का अधिकार समाप्त नहीं हो जाता है। एक प्रसिद्ध कहावत है कि 'प्रत्येक नागरिक बिना वर्दी का पुलिस मेन है और प्रत्येक पुलिस मैन .... नागरिक है'। इस कहावत के अनुसार पुलिस कर्मी के नागरिक होने की बात स्वीकारी गई है लेकिन अफसोस की बात है कि पुलिसजनों के मानवाधिकारों की बात आज न तो किसी मानवाधिकार संगठन ने उठाई है और न ही किसी मानवाधिकार आयोग ने। मानवाधिकारों के हनन के आरोप केवल लगा देने तक ही अपना कर्तव्य पूरा मान लेने की प्रवृत्ति देखी गई है बल्कि यह माना जाना चाहिए कि पुलिसकर्मी महज कानून व्यवस्था लागू करने वाली मशीनी व्यवस्था के पुर्जे मात्र नहीं है। बल्कि वे स्वयं भी मानव है। और मानवीय व्यवहार पाने के हकदार है। पुलिसकर्मियों के मूलभूत मानवाधिकारों की पूर्ति किए जाने के बाद ही उनसे यह आशा की जानी चाहिए कि वे अन्य नागरिकों के मानवाधिकारों के प्रति संवेदनशील होगे। यह आवश्यक है कि मानवाधिकार संगठनों को यह अनुभव कराया जाए कि इस संबंध में कोई भी बात उठाते समय उन्हें पुलिसकर्मियों के मानवाधिकार को कतई अनदेखा नहीं करना चाहिए। किन्तु पुलिस संगठनों का दूसरा पहलू यह है कि दुनिया भर में पुलिस संगठनों पर शक्ति के दुरूपयोग और आचरणहीनता के आरोप लगते रहे है। इस संबंध में एक प्रसिद्ध कहावत है कि 'शक्ति भ्रष्ट बनती है और असीमित शक्ति असीमित रूप से भ्रष्ट बनाती है। पुलिस संगठनों को अन्य संगठनों के बजाय अधिक शक्ति प्रदत्त की गई है इसलिए यह स्वभाविक है कि शक्ति के कुछ सीमा तक दुरूपयोग की संभावना रहती है।

पुलिस अभिरक्षा में मानव अधिकारों का हनन –

अ. अवैध गिरफ्तारी

ब. अभिरक्षा में मृत्यु प्रताड़ना

स. अवैध निरोध

2. एफ.आई.आर न लिखना एवं त्वरित कार्यवाही न करना

2. अभिरक्षा में लाए गए व्यक्तियों को समुचित चिकित्सीय सुविधा उपलब्ध नहीं करना।

2 अपराधों का लघुकरण करना (गंभीर अपराधों के स्थान पर छोटे अपराध पंजीबद्ध करना।)

2 पीड़ित अभियुक्त एवं पुलिस तीनों पक्षों के मानव अधिकार।

पुलिस के विरूद्ध प्राप्त शिकायतों के प्रकार –

1. कार्यवाही करने में असफलता
2. अपराधों का लघुकरण करना (गंभीर अपराधों के स्थान पर छोटे अपराध पंजीबद्ध करना)
3. अवैध निरोध झूठे प्रकरणों में फसाया जाना।
4. अभिरक्षा में मृत्यु
5. अभिरक्षा में हिंसा शारीरिक प्रताड़ना/अमानवीय व्यवहार
6. अवैध गिरफ्तारी।
7. मुठभेड़
8. पुलिस अभिरक्षा में बलात्कार/यौन प्रताड़ना।
9. धारा 151 का दुरूपयोग
10. हथकड़ी और बेड़ियों का प्रयोग

पुलिस के विरूद्ध प्राप्त शिकायतों के प्रकार –

संभावित कारण –

1. बाह्य हस्तक्षेप
2. सीमित संसाधन
3. मानवाधिकारों के प्रशिक्षण की कमी
4. अपसंस्कृति
5. असंतोष कार्य दशा

पुलिस प्रताड़ना के संभावित समाधान –

1. दोषी पुलिसकर्मियों के विरूद्ध त्वरित कार्यवाही
2. पारदर्शिता
3. प्रशिक्षण
4. पुलिस व जनता के संबंध
5. पुलिस कर्मियों के मानव अधिकार का सम्मान
6. प्रेस की सकारात्मक भूमिका
7. संसाधनों में सुधार

वर्तमान समय में पुलिस – भारत में पुलिस के दैनिक कार्यो का गंभीरता से अवलोकन करे तो हम पाते है कि आधे से अधिक कार्य बोझ तो केवल समाज की अनुउत्तर दायित्व पूर्ण मानसिकता के कारण है। पड़ोसियों के बीच नाली, खिड़की, दीवार, कचरा तथा बच्चो की छोटी–मोटी समस्याओं को लेकर आए दिन सिर फुटव्वल तथा पुलिस रिपोर्ट दर्ज होती है। शरू में प्रतिष्ठा का प्रश्न उठाकर हम थाना–कचहरी तक पहुंच जाते है। और एक दिन ऐसा भी आता है कि जब सॉप के मुह में छछूंदर की स्थिति हो जाती है। वस्तुत: लोक कल्याणकारी राज्य के नाम पर सर्व सुलभ पुलिस एवं न्याय सेवाओं का उपयोग कम दुरूपयोग अधिक हो रहा है। यह स्थिति केवल भारत की ही नहीं बल्कि सभी विकास शील राष्ट्रो की है।

छोटे बच्चों को वाहन चलाने के लिए देना, अवैध शारीरिक संबंध स्थापित करना, शराब पीकर उत्पात मचाना या वाहन चलाना सार्वजनिक संपत्ति को तोड़ना, लूटना तथा जलाना, पुलिस पर पथराव करना, आपराधिक तत्वो को पनाह देना, अवैध व्यापार करना, झूठे कागजात तैयार करना, जरा–जरा सी बातों पर उलझ पड़ना, संकट तथा आपातकालीन परिस्थितियों में दायित्वों से मुँह चुराना, बच्चों का शोषण करना, वेश्यावृत्ति में लिप्त रहना, रिश्वत लेना या देना, पिछड़ी जातियों के प्रति उपेक्षा एवं शोषण करना तथा आतंकवाद को प्रश्रय देना।

विचारणीय प्रश्न यह है कि समाज में गुण्डों, अपराधियों तथा आतंकवादियों से डर कर चुप रहने वाले अधिकांश पुरूष, अपने घर में तथा बाहर महिलाओं, नौकरों श्रमिकों बच्चो तथा दलित वर्गो के लोगों के साथ निर्ममता से व्यवहार करते है तथा हिंसा पर भी उतर आते है ढोंग तथा कायरता से पूर्ण यह मनोदशा विकास तथा कानून व्यवस्था के लक्ष्य प्राप्त करने में किसी भी दृष्टि से उपयुक्त नहीं कही जा सकती है। भारतीय समाज में यह समस्या छोटी सी दिखती है किन्तु उसका प्रभाव दूरगामी तथा व्यापक रहता है जब कभी बस, ट्रेन, रेलवे स्टेशन, अस्पताल, पार्क, बाजार या किसी भी सार्वजनिक स्थल पर कोई व्यक्ति अन्य के साथ बदतमीजी करता है मारपीट करता है, जेब काटने का प्रयास करता है अथवा किसी सार्वजनिक कानून का उल्लंघन करता है। तो तमाशबीनों की भीड़ ही एकत्र नहीं होती है बल्कि चलो छोड़ों कोई बात नहीं या होता है सब चलता है, भूल जाइए जो जो हुआ इत्यादि जुमलों के माध्यम से एक प्रकार से अपराधों को प्रश्रय देते है। छोटी सी घटना से शुरू हुआ आपराधिक जीवन किसी को भी बड़ा अपराधी बना देता है। यदि समाज अपराध या गैरकानूनी गतिविधियों को प्राथमिक स्तर पर ही दवाब एवं कानूनी रूप से नियंत्रित करना शुरू करे तो पुलिस का बहुत सारा कार्य बोझ कम हो सकता है।

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम का मूल्यांकन – मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 में राष्ट्रीय आयोग राज्य मानव अधिकार आयोग तथा जिलों में मानव अधिकार न्यायालयों को विनिर्दिष्ट उद्देश्य अर्थात मानव अधिकारों के बेहतर संरक्षण के लिए गठन किया गया था। प्रश्न यह उठता है कि क्या राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग मानव अधिकारों के संरक्षण करने में समर्थ रहा है?

अथवा क्या इसके द्वारा इस उद्देश्य की प्राप्ति हुई है जिसके लिए इसका गठन किया गया था? नि:संदेह राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने मानव अधिकार उल्लंघनों के हजारों परिवारों पर जांच की है तथा इसने मानव अधिकार उल्लंघनों के बहुत से गंभीर मामलों का अन्वेषण भी किया गया है और इसने सरकार को रिर्पोट भी प्रस्तुत किया है जिसमें इसमे मानव अधिकार उल्लंघनों में कमी लाने के लिए अपनाये जाने वाले उपायों का सुझाव देते हुए बहुत सी सिफारिशे की है किन्तु आयोग केवल एक अन्वेषणात्मक एवं सिफारिशात्मक निकाय है।

यह सत्य है कि कोई राष्ट्रीय संस्था अथना मानव अधिकार आयोग चाहे वह कितना ही प्रभावी क्यों न हो, अभावग्रस्त लाखों लोगों के लिए भोजन, कपड़ा, मकान, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाएँ नहीं प्रदान करवा सकता। यह सरकार का कर्तव्य है कि वह मानव की गरिमा की अभिवृत्ति के लिए इन आवश्यक मूलभूत अधिकारों का प्रबंध करें। मानव गरिमा एवं मूलभूत मानव अधिकारों को सुनिश्चित करने के पुलिस एवं जेल प्राधिकारियों की भूमिका का बहुत अधिक महत्व है। मानव अधिकार संरक्षण पुलिस एवं जेल प्राधिकारियों की गुणवत्ता पर बहुत कुछ निर्भर करता है। उन्हे आवश्यक रूप से प्रारंभिक प्रशिक्षण तथा सेवा के दौरान समय–समय पर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दि स्टेड्स मैन, दिनांक 20 मार्च 1988
2. यू.जी.सी. एकेडमिक स्टाफ कालेज जबलपुर पृ. 110
3. मानवाधिकार दशा व दिशा पृ.सं. 8
4. दिलीप जाखड मानवाधिकार युनिवर्सिटी बुक हाउस जयपुर पृ. 3942
5. ए.आई.आर 1999, एम.सी 340
6. दामोदर मिश्रा व अखिल शुक्ला, मानवाधिकार व दशा दिशा प्रोइंटर पब्लिर्स, जयपुर पृ. 2

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

1885-1905 मध्य के सामाजिक एवं राजनीतिक आंदोलन

डॉ. संदीप श्रीवास्तव *

प्रस्तावना - एक तरफ जहां भारत के राजनीतिक रंगमंच पर कांग्रेस का पदार्पण हो रहा था, या उदारवादी अपनी राजनीतिक मांग सरकार से कर रहे थे वही समाज में दूसरी तरफ अंग्रेजी हुकूमत के शोषण के विरूद्ध भारतीय समाज में सामाजिक एवं राजनीतिक आंदोलन हो रहे थे, जिन्होंने भारतीय स्वाधीनता संग्राम की नींव को मजबूत किया। जमींदारों अथवा किसानों, खेत मजदूरों अथवा कारीगरों, औद्योगिक मजदूरों अथवा तत्वों के विषय में उनके जीवन की परिस्थितियों एवं उनकी चेतना, दोनों के बदलाव का विश्लेषण करते हुए, कोई वास्तविक इतिहास नहीं रचा गया है। यह महत्वपूर्ण कमी राजनीतिक आंदोलनों, विशेषत: राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास को एक शून्यता का शिकार बना देती है। बिरसा मुंडा के आदिवासी विद्रोह का नरम एवं गरम दलों के झगड़ों से अधिक महत्व हो, अत्यंत चलताऊ कोई प्रयास करना अप्रासांगिक न होगा।

1. **जनजाति विद्रोह -** 1885 से 1905 के आरंभिक या बाद के कालों में सर्वाधिक हिंसक विद्रोह आदिवासियों के ही रहे जिनके संबंध में के.सुरेश सिंह ने लिखा है - 'कृषकों सहित किसी भी अन्य समुदाय की तुलना में ये अधिक विद्रोह करते थे और इनके विद्रोह अधिक हिंसक भी होते थे।'[1] भारत के विभिन्न भागों के बहुत बड़े क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों ने 19वीं सदी में कई छापामार लड़ाईयाँ लड़ीं। आदिवासी समाज की तीव्रता को ईसाई मिशनकारियों ने बढ़ा दिया। 1870-1880 के बीच में एक महत्वपूर्ण होने वाला तथ्य था औपनेवेशिक सरकार द्वारा राजस्व की दृष्टि से, वन क्षेत्रों पर नियंत्रण कड़ा करना। 1882 में सांबुदान नामक एक जादूगर के नेतृत्व में कुछ नागाओं ने अंग्रेजों पर आक्रमण कर दिया। 1900 में विशाखापट्टनम एजेंसी में कोरा मलैया नाम के कोंड़ा डोरा ने दावा किया कि उस पर देवता आया है और एक दिन अंग्रेजों को बाहर निकाल देगा और उनके शस्त्रों को पानी में बदल देगा। 1879 के विद्रोह ने कम से कम 5000 वर्गमील क्षेत्र को प्रभावित किया।

1886 के रामदंडु (राम की सेना के विद्रोही) के नेता राजन अनंतैरैया ने जयपुर के महाराजा से एक विचित्र 'आद्य राष्ट्रवादी प्रार्थना की थी - क्या अंग्रेजों का हमारे देश में रहना अच्छा है? हमें अंग्रेजों के विरूद्ध युद्ध छेड़ देना चाहिए। ऐसे भी अंग्रेजों को परेशान कर रहे हैं। यदि मुझे सैनिकों और शस्त्रों की सहायता मिले तो मैं राम की भूमिका निभाने को तैयार हूँ।'[2] आदिवासियों का अंग्रेजी हुकूमत के शोषण के विरूद्ध 1899-1900 में रांची के दक्षिण क्षेत्र में बिरसा मुंडा विद्रोह हुआ। विद्रोह का मुख्य कारण खूंटकट्टी खूंटों अथवा वंशों के सामूहिक भूस्वामित्व की व्यवस्था को साहूकारों, जागीरदारी, ठेकेदारी एवं ईसाई मिशनकारियों द्वारा ध्वस्त करना। विद्रोह का परिणाम 1902-1910 के सर्वेक्षण एवं बंदोबस्त की कार्यवाही ने और 1908 के छोटा नागपुर टेनेंसी एक्ट ने देर से ही सही खूंटकट्टी के अधिकारों को मान्यता दी और जबरी बेगार पर प्रतिबंध लगाया। बिरसा मुंडा आज भी एक पूर्णरूपेण राष्ट्रवादी पृथक झारखंड आंदोलन के पैगंबर या अतिवाम पंथ के एक नायक के रूप में अपनी जनता की याददाश्त में जिंदा है।

2. **वासुदेव वलवंत फड़के का विद्रोह -** फड़के का उदय स्वाधीनता संग्राम की एक अनोखी घटना थी। जिसने बुद्धिजीवियों के सचेत राष्ट्रवाद और जनसामान्य की जुझारू राष्ट्रीयता के बीच थोड़े समय के लिए सामंजस्य स्थापित किया था। 'महाराष्ट्र और देश वासियों की दुर्दशा देखकर उनके मन में क्रमश: अंग्रेज सरकार के खिलाफ विद्रोह की भावना प्रबल होने लगी। 1871 तक उन्होंने मन में निश्चित कर लिया कि अंग्रेज सरकार से प्रतिशोध लेना होगा।'[3] राष्ट्र की संपत्ति के दोहन पर रानाडे के व्याख्यानों, 1876-1877 दक्षिण में पड़ने वाले अकाल और पूना के ब्राम्हण बुद्धिजीवियों में बढ़ती हुई हिंदु पुनरूत्थानवादी प्रकृति ने उन पर गहरा प्रभाव डाला था। उनका मुख्य उद्देश्य था पुन: हिंदु राज स्थापित करना। फड़के ने कहा था - 'लोगों के मन में बहुत आक्रोश है और इस समय यदि कुछ लोग शुरूआत कर दें तो भूखे लोग उसमें शामिल हो जाएंगे।'[4] इसमें बाद के क्रांतिकारी आतंकवाद का स्पष्ट पूर्वाभास मिलता है। जिसने शोषण के विरूद्ध 1883 तक अपने दल को जीवित रखकर अंग्रेजी हुकूमत का विरोध किया।

3. **मालाबार कृषक संघर्ष -** 'धार्मिक कट्टरता' भूस्वामियों एवं विदेशियों के विरूद्ध विद्यमान असंतोष को प्रकट करने में सहायक हुई। मोपाला पुलिस की गोलियों का सामना होने पर सामूहिक आत्महत्या कर लेते थे उनका विश्वास था कि ऐसा करने पर वे सीधे स्वर्ग में जाएंगे। 1836 से 1919 के बीच कुल 28 विद्रोह में विद्रोहियों की संख्या 349 थी। मोपला विद्रोही 'ग्रामीण आतंकवाद का एक विशिष्ट प्रकार थे, जो शायद उन मोपालों के हित में जंनमियों की बढ़ी हुई शक्ति को सीमित करने का सबसे प्रभावकारी साधन थे जो स्वयं इन विद्रोहों में भाग नहीं लेते थे।'[5] सांप्रदायिकता इस संघर्ष का नकारात्मक दुखद पहलू था। किंतु यह पक्ष उन्हीं क्षेत्रों में तीव्र रहा जहाँ हिन्दू साम्राज्यवाद के साथ दिखाई दे रहे थे। अन्यथा ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जहाँ दस मील के क्षेत्र में बसे हिन्दुओं को छुआ भी नहीं गया। यह तथ्य पुष्टि करते हैं कि मोपाला संघर्ष मूलत: साम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशस्त्र और विशाल विद्रोह था। मालाबार जनसंघर्ष का दुखद पहलू यह रहा कि आंदोलन के सशस्त्र क्रांतिकारी चरित्र से घबराकर राष्ट्रीय नेतृत्व में अपने को उससे पूर्णत: अलग कर लिया। ई.एम.एस. नम्बूदिरीपाद के शब्दों में 'किसानों से क्रांतिकारी प्रतिशोध की शिक्षा लेने के स्थान पर उन्होंने किसानों को अहिंसात्मक समर्पण की कला सिखाने का प्रयास किया। केरल

* अतिथि विद्वान, शासकीय न. महाविद्यालय, तेंदूखेड़ा, जिला- नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

में ग्रामीण क्रांतिकारी आंदोलन के हरावल दस्ते मोपाला किसानों की मदद केरल के ग्रामीण क्रांतिकारी आंदोलन की एकता स्थापित करने के बजाय उन्होंने उसे ब्रिटिश सेना के रहमो करम पर छोड़ दिया। यदि नेतृत्व ने नाजुक अवसर पर यह शर्मनाक विश्वासघात न किया होता तो 1921 के शानदार विप्लव का इतिहास कुछ और ही होता।'[6]

4. लगान की नाअदायगी का आंदोलन – असम के कामरूप एवं दरांग जिलों में 1893–1894 में एक नया राजस्व बंदोबस्त जारी किया गया जिससे लगान की दर में 50 से 70 प्रतिशत वृद्धि हो गई। विरोध में ग्रामवासियों की सभाएं आयोजित की गई, असामाजिक बहिष्कार किया गया। मध्यमवर्गीय राष्ट्रीयता ने 1905 के बाद ही इस साधन का प्रयोग किया। बंगाल के नरमदलीय कांग्रेसी नेता रासबिहारी घोष ने इस मामले को इंपीरियल लेजिस्लेटिव कांउसिल में भी उठाया। अछूत गछवाहों और खेत मजदूरों ने जो मूलत: शनान कहलाते थे, व्यापार के माध्यम से धन कमाकर एक उच्च वर्ग का निर्माण कर लिया और 1901 की जनगणना में क्षत्रिय श्रेणी के अंतर्गत सम्मिलित किए जाने की मांग करने लगे थे।

5. सांप्रदायिक संकीर्णता – 1885 के बाद साम्राज्यवादी दृष्टिकोण रखने वाले कूपलैंड ने लिखा है – 'भारत में ब्रिटिश शासन के बने रहने के कारण ही हिन्दू-मुसलमान समस्या है।'[7] 1880 के दशक के बाद सांप्रदायिक झगड़े आम हो गए। इनका मुख्य कारण आर्थिक आधार से सीधा संबंध नहीं था। 1883–1891 के बीच में गेराल्ड बैरियर ने पंजाब में 15 बड़े सांप्रदायिक दंगों का उल्लेख किया है। सुधारवादी पत्रिका सुधारक में तो 1898 में यहां तक कहा गया कि गणपति उत्सव की तुलना में मोहर्रम कहीं अधिक राष्ट्रवादी त्यौहार रहा है। सांप्रदायिक चेतना के विकास के साथ कलकत्ता के पटसन कारखानों में श्रमिकों में आरंभिक चेतना का उदय हुआ। 1882–1890 के बीच बंबई और मद्रास में 25 महत्वपूर्ण हड़तालें दर्ज की गई, 1892–1893 और 1901 के बीच बंबई में अनेक बड़ी हड़तालों का उल्लेख मिलता है।

6. राष्ट्रीयता व राजनीतिक चेतना का उदय – भारतीय स्वाधीनता संग्राम की पृष्ठभूमि में एक महत्वपूर्ण योगदान बुद्धिजीवी वर्ग एवं उसकी चेतना का है। महाराष्ट्र के पूना में बुद्धिजीवी वर्ग एक ऐसे शहर में स्थित था जिसका वस्तुत: कोई औद्योगिक या व्यापारिक महत्व नहीं था। 1901 में बंबई सरकार ने साहूकारों को किसानों की भूमि का हस्तांतरण रोकने का कदम उठाया जिसका तिलक और गोखले ने विरोध किया। 1880–1890 के दशकों में बुद्धिजीवी नेतृत्व जिनमें फीरोजशाह मेहता, के.टी. तैलंग एवं बदरूद्दीन तैयबजी एवं मिल मालिकों के बीच अपेक्षाकृत स्थायी संबंध बने। ये संबंध लंकाशायर के सूती कपड़ों पर से आयात कर की समाप्ति एवं आबकारी लगाने की मांग को लेकर किए जाने वाले आंदोलन से बने थे जिसका प्रतीक दिनशावाचा की वृत्ति थी। राष्ट्रवादियों के लिए पूंजीपतियों की थैलियां एक पीढ़ी बाद ही खुल सकी, जब प्रथम विश्व युद्ध के बाद महात्मा गांधी का उदय हुआ।

7. हिन्दू सुधार आंदोलन एवं पुनरूत्थानवाद – तिलक ने हिन्दू समाज की रूढ़िवादी एवं सुधार विरोधी भावनाओं को राष्ट्रवादी तर्कों के साथ प्रस्तुत किया। तिलक का कहना था कि विदेशी शासकों को धार्मिक एवं सामाजिक रीति-रिवाजों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है। 1880–1890 के दशकों में जोगेन्द्रचंद घोष एवं परिष्कृत एवं बुद्धिजीवी पुनरूत्थानवाद बंकिमचन्द्र के लेखन में सर्वोत्तम रूप में दिखाई देता है। इसमें कृष्ण को आदर्श पुरूष, संस्कृति नायक और राष्ट्रनिर्माता के रूप में प्रस्तुत किया गया है। विवेकानंद का आरोप था कि सुधारवादी आंदोलन अभिजात्यवादी और विदेशी आदर्शों पर आधारित है। उन्होंने इसके स्थान पर समाज सेवा का आदर्श प्रस्तुत किया। तिलक, विष्णुकृष्ण चिपलुणकर, एनीबेसेंट, रानाडे, दयानंद सरस्वती जैसे समाज सुधारकों के लक्ष्य एक प्रभुत्वपूर्ण अखिलहिन्दु पुनरूत्थानवाद की रूपरेखा में समाहित हो गए। इस प्रकार पुनरूत्थानवाद स्पष्ट रूप से एक आक्रामक हिन्दू अस्मिता को स्थापित करने में सहायक हुआ।

8. भारतीय इस्लाम में सुधार की प्रवृत्तियां – 19वीं शताब्दीं के उत्तरार्द्ध में भारतीय इस्लाम में सुधारवाद और पुनरूत्थानवाद का संघर्ष स्पष्ट दिखाई देता है। 1880–1890 के दशकों में संप्रदायवाद भी पहली बार एक अखिल भारतीय आयाम ग्रहण कर रहा था। इसके दो प्रमुख मुद्दे थे – उर्दू और देवनागरी का विवाद और गौरक्षा। देवनागरी की मांग बनारस के कुछ हिंदुओं ने की जिसे 1900 में लेफ्टिनेंट गर्वनर लार्ड मैकडॉनेल ने स्वीकार कर लिया था। लेकिन गौरक्षा का मुद्दा ही अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ क्योंकि यह अभिजातवर्गीय और लोकव्यापी संप्रदायवाद के बीच की कड़ी का था। दयानंद ने 1881 में गोकरूणानिधि शीर्षक से एक किताब को प्रकाशित किया था और इस दशा में 1892–93 से गौरक्षिणी सभाएं अधिक जुझारू बनने लगी थी जो शायद वर्ष भर पूर्व 'एज ऑफ कंसेट' बिल के पारित किए जाने के विरोध में रूढ़िवादी हिन्दुओं का रोष दर्शाता था। पुनरूत्थानवाद एवं राष्ट्रवाद की परिणति दंगों के रूप में हुई थी। जिसका स्वागत करते हुए भारत सचिव किम्बरले ने कहा था कि इससे 'उस कांग्रेस आंदोलन की जड़ ही कट जाएगी जो भारतीयों को एकजुट करने के लिए चल रहा था।'[8] (लैसडाऊन को किम्बरले का पत्र 25 अगस्त 1893) 1905 के पूर्व राष्ट्रवाद में अकेला सबसे बड़ा योगदान दादाभाई नौरोजी, रानाडे, जी.वी. जोशी और आर.सी. दत्त जैसे लोगों ने संपत्ति के दोहन सिद्धांत द्वारा अंग्रेजी शासन के आर्थिक पक्षों की विस्तृत समीक्षा के रूप में दिया था।

9. नवीन साहित्य का उदय – बुद्धिजीवी वर्ग की देशभक्ति की प्रथम एवं सहज अभिव्यक्ति प्रांतीय भाषाओं के साहित्य के माध्यम से हुई। 1880–1890 के दशकों में जब बंगाल में हिन्दु पुनरूत्थानवाद अपने सर्वोच्च शिखर पर था, वहां राजनीतिक रूचि में थोड़ी बहुत कमी दिखाई देने लगी थी। बंगाल के रंगमंच पर अब गिरीशचन्द्र घोष के भावुकता पूर्ण पारिवारिक अथवा पौराणिक कथानकों पर आधारित नाटक, 1903 में विपिन चन्द्र पाल ने कहा था कि इल्बर्ट बिल के समय से ही 'अमूर्त धर्म के हित में राजनीतिक की अवहेलना होती रही है और इसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय गीतों का स्थान धार्मिक गीतों ने ले लिया है।[9] (न्यू इंडिया, 19 मार्च 1903) तिलक, केलकर और रजवाड़े द्वारा शिवाजी की एक नितांत भिन्न छवि प्रस्तुत कर गुरू रामदास को हिन्दू संघर्षवृत्ति के धर्मदूत के रूप में चित्रित करना। स्वदेशी से संबद्ध हिन्दु युवा वर्ग 1905 के बाद से बंकिमचंद को देवता मानने लगा था, किन्तु बड़ी सीमा तक राष्ट्रवाद से सहानुभूति रखने वाली मुसलमान जैसी मुस्लिम पत्रिकाओं ने भी उन पर बारंबार आक्षेप किए क्योंकि उनकी अनेक रचनाओं में यवनों की निंदा की गई थी। आर्य समाजियों एवं रूढ़िवादी हिन्दुओं द्वारा उठाए गए देवनागरी लिपि वाली हिन्दी के आंदोलन की एक विशिष्ट लोकप्रिय अपील थी, क्योंकि उनकी अनेक रचनाओं में यवनों की निंदा की गई थी। आर्यसमाजियों एवं रूढ़िवादी हिन्दुओं द्वारा उठाए गए देवनागरी लिपि वाली हिन्दी के आंदोलन की एक विशिष्टि लोकप्रिय अपील थी क्योंकि फारसी – बहुल उर्दू में ही लिखते रहे। भाषा और लिपि के मतभेदों को धीरे-धीरे धार्मिक मतभेदों से जोड़ा जाने लगा जो संप्रदायवाद की खाई को गहरा कर रहा था।

इस प्रकार सुधार आंदोलन, राजनैतिक चेतना का उदय, धार्मिक सुधार आंदोलन ने सामाजिक कुरीतियों के विरूद्ध भारतीय जनमानस में चेतना की मशाल जलाना एवं आर्थिक सुधार आंदोलनों ने भारतीयों के आर्थिक शोषण को रोकने के लिए विभिन्न आंदोलन किये गये। बुद्धिजीवी वर्ग ने शिक्षा के माध्यम से जनसाधारण तक अपने विचारों को पहुंचाया, जिससे हिन्दु पुनरूत्थानवाद एवं राष्ट्रवाद के आंदोलनों को बढ़ावा मिला। इस समय तक हिन्दु और मुसलमानों ने राष्ट्रीय एकता बनाए रखने के लिए अपना अमूल्य योगदान दिया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. सरकार, सुमित, आधुनिक भारत 1885–1947, पृ. 62, राजकमल प्रकाशन प्रा.लिमिटेट, नई दिल्ली 2000
2. वहीं पृ. 64
3. सिंह, अयोध्या, भारत का मुक्ति संग्राम भाग 1, पृ. 409, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड नई दिल्ली 1992
4. सरकार, सुमित पृ. 67
5. सरकार, सुमित पृ. 68
6. नम्बूदिरिपाद, ई.एम.एस., केरल : यस्टर्डे, टुडे एण्ड टुमारो, पृ. 68, नेशनल बुक एजेंसी कलकत्ता 1968
7. सरकार, सुमित पृ. 77
8. सरकार, सुमित पृ. 77
9. सरकार, सुमित पृ. 98

****

ग्रामीण विकास में पंचायती राजव्यवस्था का योगदान एवं मूल्यांकन

विनोद कुमार शेण्डे *

प्रस्तावना – भारत एक लोकतांत्रिक देश है। लोकतांत्रिक पद्धति का मूल आधार लोगों की भागीदारी है। पंचायती राज उस भारतीय लोकतंत्र का प्रतिनिधित्व करता है, जिसकी जड़े लोगों में मौजूद है। भारतीय समाज में सदियों से जातीय पंचायतें प्रचलन में थी, जो स्थानीय स्तर पर अपने समाज की समस्याओं का निपटारा करती थी। देश के संविधान में परम्परागत पंचायतों की पंचायती राज व्यवस्था अर्थात् इनको लोकतांत्रिक स्वरुप देकर पुन: जीवित किया गया है, और संविधान में निर्देश दिया गया कि राज्य सरकारें पंचायतों के गठन के लिए जरुरी कदम उठाएगी, और उन्हें ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेगी कि वे स्वशासन की इकाई के रुप में कार्य कर सके।

भारतीय लोकतंत्रात्मक व्यवस्था का मूल आधार पंचायत राज व्यवस्था रही है। सभ्य समाज की स्थापना के बाद से ही मनुष्य ने जब समूहों में रहना सीखा पंचायत के आदर्श एवं मूल सिद्धांत उसकी चेतना में विकसित होते आए है। लेकिन पूरे देश में प्रशासन का विकेन्द्रीकरण करके बुनियादी स्तर पर पंचायत राज की स्थापना और जनता के हाथों में सीधे अधिकार देने की शुरुआत संविधान के 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम से संभव हुई है।

'पंचायती राज व्यवस्था भारतीय समाज की एक सांस्कृतिक विशेषता है। ग्रामीण समाज को संगठित रखने ,ग्रामीण समाज में व्यवस्था और नियंत्रण सीमित बनाने में पंचायतो का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।'

पंचायती राज एवं ग्राम स्वराज संषोधन अधिनियम 2001 लागू किया गया। इस प्रकार महात्मा गांधी का ग्राम स्वराज का सपना साकार हुआ।

ग्राम स्वराज व्यवस्था गांव की आर्थिक, सामाजिक एंव राजनीतिक विकास में प्रत्येक गांववासी की भागीदारी सुनिश्चित करेगी। जिससे गांव आत्मनिर्भर और समृद्ध बनेगें। हर गांव स्वायत्त गणतंत्र बनेगा जिससे नेतृत्व राजनीति से लोकनीति की ओर जायेगा ओर इसके फलस्वरूप प्रत्यक्ष प्रजातंत्र स्थापित होगा। ग्रामीण विकास हो या शहरी विकास महिलाओं के बिना अपेक्षित विकास नहीं किया जा सकता। केन्द्र सरकार की घोषणा अनुसार वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया जिसकेपरिप्रेक्ष्य में महिलाएं नीचे स्तर से लेकर राजनीति के उच्च स्तर तक अपना नेतृत्व प्रदान करने में आगे आई।

स्वतंत्र भारत में पंचायती राजव्यवस्था – लोकतंत्र की सबसे छोटी इकाई पंचायतों की स्थापना के बारे में जो सदियों से भारत के शासन संचालन का आधार रही थी, भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही महात्मा गांधी के पंचायती राज व्यवस्था के स्वप्न को साकार करने का अवसर प्राप्त हुआ। राष्ट्र के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, आध्यत्मिक विकास की परिकल्पना जो गांधीजी के मस्तिष्क में थी, उसे वे पंचायती राज के माध्यम से साकार करना चाहते थे। उनका इस बात पर दृढ़ विश्वास था कि भारत की आत्मा उनके सात लाख गांवों में निवास करती है। गांधीजी का मानना था कि गांवों के लिए स्वतंत्र भारत का संविधान सुदृढ़ ताने बाने से बना हो तथा समन्वित ग्रामीण समुदाय पर आधारित होना चाहिए।

'स्वतंत्रता के पश्चात सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा भौगोलिक रूप से संतुलित विकास करने, आम व्यक्ति का जीवन सुधारने तथा **समता, न्याय, एवं भाईचारे** के लक्ष्य पाने हेतु ऐसे लोक प्रशासन की जरूरत थी जो कि संवेदनशील, विशेषज्ञता युक्त तथा जनोन्मुख हो। इसी संदर्भ में भारतीय प्रशासन को **'विकास प्रशासन'** के रूप में ढ़ाला गया।'

'भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 में उल्लेख किया गया है कि राज्य ग्राम पंचायतों का गठन करने के लिए अग्रसर होगा, तथा उसको ऐसी शक्तिया व अधिकार प्रदान करेगा, जो उनको स्वायत शासन इकाई के रूप में कार्य करने में योग्य बनाने के लिए आवश्यक हो।'

'भारतीय संविधान में पंचायत को प्रतिस्थापित करने का श्रेय संविधान सभा को मिला किन्तु उसे व्यावहारिक स्वरूप देकर विकसित करने का दायित्व राज्य सरकारों पर था। नये अनुच्छेद का स्वागत करते हुए अधिकांश इकाइयों ने अपने राज्य के लिए पंचायती राज अधिनियम तैयार किए। इसी दिशा में उत्तरप्रदेश सरकार ने सर्वप्रथम सन 1947 ई. में पंचायत राज अधिनियम तैयार किया। 1948 में पंचायत निर्वाचन सम्पन्न कराये गए। बिहार में 1947 में, तामिलनाडु में 1950 में, हरियाणा, पंजाब और हिमाचल प्रदेश में 1952 में तथा राजस्थान में 1953 में पंचायत अधिनियम बनाए गए।'

भारत सरकार ने पंचायती राज व्यवस्था को ढाँचे में सुधार लाने हेतु अनेक समितियों का समय-समय पर गठन किया गया है। इन समितियों ने अनेक प्रस्ताव एवं सुझाव प्रस्तुत किए है। प्रमुख गठित समितियाँ निम्नलिखित है।

1. बलवंत राय मेहता समिति (1957)
2. अशोक मेहता समिति (1977)
3. जी .वी. के. राव समिति (1985)
4. एल.एम. सिंघवी समिति (1986)
5. 64 वाँ संविधान संशोधन विधेयक (1989)
6. 72 वाँ संविधान संशोधन (1991)
7. 73 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम (1993)

जनगणना 2011 के अनुसार हमारे देश (भारत) की कुल जनसंख्या 121.02 करोड़ आंकलित की गई है, जिसमें 68.84 प्रतिशत जनसंख्या

* शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

गांवों में निवास करती है और 31.16 प्रतिशत शाहरों में निवास करती है। स्वतंत्र भारत की प्रथम जनगणना 1951 में ग्रामीण एवं शहरी आबादी का अनुपात 83 प्रतिशत एवं 17 प्रतिशत था। 2001 की जनगणना में ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या का प्रतिशत 74 एवं 26 प्रतिशत हो गया इन आकड़ों के देखने पर स्पष्ट होता है कि भारतीय ग्रामीण लोगों का शहरों की ओर पलायन तेजी से बढ़ रहा है। गांव में पायी जाने वाली रोजगार की अनिश्चिता, प्राकृतिक आपदा, स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव ने लोगों को पलायन के लिए प्रेरित किया।

स्वतंत्र भारत में ग्रामीण विकास कार्यक्रम – कृषि, ग्रामीण विकास, गरीबी निवारण तथा ग्रामीण रोजगार के लिए संचालित प्रमुख राष्ट्रीय कार्यक्रम इस प्रकार है –

- इटावा अग्रगामी योजना, 1948
- नीलोखेडी परियोजना, 1948
- भूदान आंदोलन, 1951
- ग्रामदान आंदोलन, 1952
- सामुदायिक विकास कार्यक्रम, 1952–53
- राष्ट्रीय विस्तार सेवा, 1953–54
- अनुप्रयुक्त पोषाहार कार्यक्रम, 1958–59
- पंचायती राज कार्यक्रम, 1959–60
- गहन कृषि जिला कार्यक्रम, 1960–61
- पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1960–61
- जनजातीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1962–63
- गहन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम, 1964–65
- उन्नत फसल कार्यक्रम (अधिक उत्पादकता वाली प्रजाति कार्यक्रम), 1965–66
- गहन क्षेत्र विकास कार्यक्रक्रम, 1965–66
- लघु किसान विकास अभिकरण, 1969–70
- सीमान्त कृषक तथा कृषि श्रमिक विकास अभिकरण,1969–70
- सूखा संभावित क्षेत्र कार्यक्रम, 1970–71
- ग्रामीण निर्माण कार्यक्रम, 1970–72
- ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, 1970–72
- बच्चों के लिए विशेष पोषाहार कार्यक्रम, 1971–72
- गहन ग्रामीण रोजगार परियोजना, 1972–73
- त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम, 1972–73 (1986 राष्ट्रीय पेयजल मिशन)
- रोजगार गारंटी योजना, 1972–73
- नियंत्रित क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1973–74
- न्यूनतम आवष्यकता कार्यक्रम, 1974–75
- कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1974–75
- समन्वित बाल विकास सेवा, 1975–76
- आवास कार्यक्रम, 1976–77
- भोजन तथा निर्माण कार्यक्रम, 1977–78
- अन्त्योदय योजना, 1977–78
- मरूस्थल विकास कार्यक्रम, 1977–78
- ऑपरेशन बर्गा, 1978–89
- व्यापक क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1978–89
- जिला उद्योग केन्द्र, 1978–79
- एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, 1978–79
- बंधुआ मजदूरी उन्मूलन योजना, 1978–79
- ग्रामीण युवाओं के लिए स्वरोजगार कार्यक्रम, 1978–79 (ट्राइसेम)
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, 1980–81
- सम्पूर्ण गाँव विकास कार्यक्रम, 1980–81
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, 1980–81
- ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास योजना (ड्ढाकरा), 1982–83
- ग्रामीण भूमिहीन श्रमिक रोजगार गारंटी कार्यक्रम, 1983–84
- टेक्नोलोजी मिशन, 1986–87
- सीमावर्ती क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1986–87
- इन्दिरा आवास योजना, 1988–89
- जवाहर रोजगार योजना, 1989–90
- राष्ट्रीय पनधारा परियोजना, 1990–91
- बंजर भूमि विकास योजना, 1992–92
- ग्रामीण दस्तकार (कारीगर) योजना, 1992–93
- सुनिश्चित रोजगार योजना, 1993–94
- ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम, 1993–94
- जल संग्रह विकास कार्यक्रम, 1993–94
- सांसद स्थानीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1993–94
- महिला समृद्धि योजना, 1993–94
- इन्दिरा महिला योजना, 1995–96
- राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम, 1995–96 (राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना, राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना, राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना)
- गांधी ब्लॉक योजना, 1995–96
- दस लाख कुएं योजना, 1996–97
- ग्रामीण स्वरोजगार योजना, 1996–97
- कस्तूरबा गांधी शिक्षा योजना, 1997–98
- रगरंगा कल्याण योजना, 1997–98
- स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना, 1997–98
- बालिका समृद्धि योजना, 1997–98
- राजेश्वरी महिला कल्याण योजना, 1998–99
- ग्रामीण महिलाओं का विकास एवं अधिकार परियोजना (स्वशक्ति परियोजना), 1998–99
- जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, 1999–2000 (संशोधित जवाहर रोजगार योजना)
- स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, 1999–2000 (समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम, ट्राइसेम, ड्ढाकरा, ग्रामीण दस्तकार योजना, गंगा कल्याण योजना तथा दस लाख कुएं योजना का एकीकरण)
- प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना, 2000–2001
- जनश्री बीमा योजना, 2000–2001
- प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, 2000–2001
- अन्त्योदय अन्न योजना, 2000–2001
- महावीर ग्राम कल्याण योजना, 2000–2001
- सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, 2002 (सुनिश्चित रोजगार योजना तथा जवाहर ग्राम समृद्धि योजना का एकीकरण)

- स्वजलधारा कार्यक्रम, 2002–2003
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, 2005
- भारत निर्माण कार्यक्रम, 2005
- राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, 2005

निष्कर्ष – आजादी के बाद पंचायती राजव्यवस्था में सामुदायिक विकास तथा योजनाबद्ध विकास की अन्य अनेक योजनाओं के माध्यम से गांवों की हालत बेहतर बनाने और गांव वालों के लिए रोजगार के अवसर जुटाने पर ध्यान किया जाता रहा है। 73वें संविधान संशोधन के जरिए पंचायती राज संस्थाओं को अधिक मजबूत तथा अधिकार सम्पन्न बनाया गया और ग्रामीण विकास में पंचायतों की भूमिका काफी बढ़ गई है। पंचायतों में महिलाओं व उपेक्षित वर्गो की हिस्सेदारी होने लगी है इस प्रकार से गांवों में शहरों जैसे बुनियादी जरुरतें उपलब्ध करवाकर पलायन की प्रवृत्ति को सुलभ साधनों से रोका जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जैन, डॉं. पुखराज फडिया, डॉ. बी.एल. 'भारतीय शासन एवं राजनीति', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा सन् 2000
2. शर्मा डॉ. पारूल (2007) – पंचायती राज प्रशासन, जयपुर।
3. कौशिक सुरेन्द्र 2008, राजनीति विज्ञान, उपकार प्रकाशन, आगरा।
4. चौधरी, सहदेव बी (1992) अखिल भारतीय पंचायत परिषद – पंचायत संदेश, भोपाल।
5. पत्रिका कुरुक्षेत्र फरवरी 2012 पृष्ठ 11,13 ग्रामीण विकास मंत्रालय नईदिल्ली।

****

भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद- एक विश्लेषण

डॉ. वसुधा आवले *

प्रस्तावना – भारत एक प्रजातांत्रिक देश है, यहाँ स्वतंत्रता, समानता और भातृत्व के सिद्धान्तों पर भारतीय संविधान की नींव रखी गयी। संविधान के प्रथम अनुच्छेद में कहा गया है कि 'भारत राज्यों का एक संघ होगा।' संविधान बनाते समय संविधान निर्माताओं ने जिन मूल्यों को सर्वाधिक महत्व दिया वे हैं राष्ट्रीय एकता एवं जनतांत्रिक चेतना की सर्वव्यापकता। भारत में जिन विभिन्नताओं को एकता के सूत्र में आबद्ध करने हेतु संघवादी संसदीय प्रणाली की स्थापना का निर्णय लिया गया उस स्थिति में जब देश ब्रिटिश शासन की विभाजन नीति के बाद टूटने एव बंटने के कगार पर खड़ा था। राष्ट्रीय एकीकरण और क्षेत्रीयतावाद एक दूसरे के विपरीत है।

क्षेत्रीयतावाद से तात्पर्य एक देश में या उसके किसी भाग में उस छोटे से क्षेत्र से है जो आर्थिक, भौगोलिक, सामाजिक, धार्मिक आदि कारणों से अपने पृथक अस्तित्व के लिए जागरूक हो व शक्तियों में वृद्धि चाहता हो। भारतीय राजनीति के संदर्भ में क्षेत्रीयतावाद ऐसी धारणा है, जो भाषा, धर्म, संस्कृति व क्षेत्र पर आधारित है। इसका ध्येय संकुचित क्षेत्रीय स्वार्थों की पूर्ति करना है, जो सारे देश में व्याप्त सुनियोजित व सुव्यवस्थित आंदोलनों के रूप में प्रकट होती है। उदाहरण के लिए पंजाब –पंजाबियों के लिए, गुजरात–गुजरातियों के लिए, बिहार–बिहारियों के लिए व महाराष्ट्र–मराठी व बंगाल–बंगालियों के लिए।

भारत में क्षेत्रीयतावाद के कारण –

- क्षेत्रीयतावाद की भावना भौगोलिक परिस्थितियों, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, सांस्कृतिक विरासत, आर्थिक विकास, भाषागत विविधता क्षेत्र विशेष में जाति की प्रधानता व राजनीतिक महत्वाकांक्षा की देन है।
- क्षेत्रीयतावाद उग्र केन्द्रीयकरण की नीति के विरूद्ध प्रतिक्रियात्मक आंदोलन के रूप में अभिव्यक्ति है।
- केन्द्र व राज्यों के मध्य विवादों के कारण क्षेत्रीयतावाद को बढ़ावा मिलता है।
- गरीबी, बेरोजगारी व क्षेत्रीय उपेक्षा के कारण क्षेत्रीयतावाद की प्रकृति प्रतिदिन व्यापक होती जा रही है।
- ग्रामीण असंतोष, आर्थिक असन्तुलन, समाज में नैतिक मूल्यों के पतन के कारण पिछड़े क्षेत्रो में क्षेत्रीयतावाद बढ़ता जा रहा है।
- क्षेत्रीय राजनीतिक दलों की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण भी क्षेत्रीयतावाद की भावना बलवती होती जा रही है।

भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद एक परिदृश्य –

- **क्षेत्रीयतावाद ऐतिहासिक विरासत के रूप में –**
- भारत एक विविध भाषा व संस्कृति वाला विशाल देश है, विदेशी ताकतों द्वारा इसका शोषण किया गया। ब्रिटिशकाल में भारत दो भागों में विभाजित था – भारतीय प्रान्त व देशी रियासतें। देश में स्वतंत्रता के पश्चात ही राष्ट्रीय एकीकरण की समस्या व केन्द्र–राज्य सम्बन्धों के निर्धारण के कारण क्षेत्रीयतावाद की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है व अनेक नवीन राज्यों की स्थापना की माँग उठती जा रही है
- **क्षेत्रीयतावाद और पृथक राज्यों की माँग –** स्वतंत्रता पश्चात 1956 में राज्य पुनर्गठन आयोग ने भाषाई राज्यों की माँग के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन किया। जिससे क्षेत्रीयतावाद को और प्रोत्साहन मिला। उदाहरण के लिए पृथक विदर्भ की माँग, बम्बई राज्य का विभाजन, आंध्रप्रदेश में तेलंगाना, उत्तर प्रदेश में उत्तरांचल, बिहार में वनांचल, मध्यप्रदेश में छत्तीसगढ़ आदि इस तरह नये राज्यों का सृजन करते हुए आज भारत में 29 राज्य व 07 केन्द्र शासित प्रदेश हो गये हैं। असम में बोडोलैण्ड पश्चिम बंगाल मे गोरखालैण्ड, गुजरात में सौराष्ट, स्वतंत्र कश्मीर के सपने हेतु लोग सक्रिय हैं।
- **क्षेत्रीयतावाद बनाम केन्द्र राज्य सम्बन्ध –** भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद की अभिव्यक्ति केन्द्र राज्यों के मध्य विवादो के रूप में हुई है। केन्द्र पर राज्यों की निर्भरता को कम करने, राज्यों द्वारा केन्द्र की नीतियों का विरोध करने व निर्देशों का पालन न करके अपने स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखने का परिचय दिया तथा केन्द्र से अधिकतम वित्तीय स्त्रोतों को प्राप्त करने के लिए क्षेत्रीयतावाद की नीति अपनायी।
- **क्षेत्रीयतावाद बनाम अन्तर्राज्यीय झगड़े –** भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद की प्रवृत्ति ने उग्ररूप धारण कर लिया। राज्यो के मध्य सीमा विवाद कर्नाटक–तमिलनाडु के मध्य कावेरी जलविवाद, मध्यप्रदेश, गुजरात व राजस्थान के मध्य नर्मदाजल वितरण विवाद, समय–समय पर उग्र रूप धारण कर चुके हैं। पंजाब–हरियाणा के मध्य सीमाविवाद, असम नागालैण्ड के मध्य सीमा विवाद नरसंहार का कारण बन चुका है।
- **क्षेत्रीयतावाद के संदर्भ में उत्तर दक्षिण की भावनाएँ –** उत्तर–दक्षिण की मनोवृत्ति के कारण क्षेत्रीयतावाद की भावना अधिक है। दक्षिण भारत के लोगों का यह दृष्टिकोण है कि उत्तर भारत के लोगों द्वारा उनकी उपेक्षा की गयी है व दक्षिण के राज्यों को यह लाभ नहीं मिले जो उन्हें मिलना चाहिए थे। उत्तरी भारत में उद्योगों का जाल यातायात के साधनों का विकास, केन्द्रीय मन्त्रीमण्डल, केन्द्रीय सचिवालय में प्रतिनिधित्व, उत्तर की भाषा हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित किया जाने के कारण चुनाव के समय की उत्तर दक्षिण के मताचरण में काफी अंतर मिलता है।
- **क्षेत्रीयतावाद के संदर्भ में भाषावाद –** स्वतंत्रता के बाद हिन्दी को राष्ट्रभाषा व अल्पसंख्यको को संरक्षण देने हेतु क्षेत्रीय भाषाओ को संविधान

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, उमरानाला, जिला - छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

में स्थान दिया गया तथा भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन किया गया। दक्षिण भारत के लोगों द्वारा हिन्दी का विरोध किया गया व भाषा को राजनीतिक हथियार के रूप में प्रयुक्त करने की प्रवृत्ति बढ़ी दक्षिण के कई राज्यो में हिंसात्मक आंदोलन हुए, असम में भाषा की राजनीति असम आंदोलन की प्रेरणा बनी। आज राज्यों में प्रादेशिक भाषाओं को सरकारी और गैरसरकारी सेवाओं में लेने पर बल दिया जाने लगा है यह संकीर्ण मानसिकता का परिचायक है। यह क्षेत्रीय भाषाओं को प्रधानता देने की भावना देश की अखण्डता के मार्ग में बाधक होती जा रही है।

- **सम्पूर्ण उत्तर पूर्वी भारत में उग्र क्षेत्रीयतावाद –** सात केन्द्र शासित प्रदेशों मे क्षेत्रवादी प्रवृत्ति के कारण सामान्यत: विदेशी यात्रियों के प्रवेश पर प्रतिबंध लगाया गया है व इन राज्यों में शेष भारत के लोगों को भी प्रवेश के लिए अनुमति लेना आवश्यक है। उदाहरण के लिए उल्फा उग्रवादी संगठन ने हिन्दी भाषीयों को असम छोड़ने के लिए बाध्य किया, नागालैण्ड में नागाओं की समस्या, असम में बिहारियों के घर जला दिए, महाराष्ट्र में रेल्वे भर्ती मे हिंसा, जम्मू कश्मीर में अनेक उग्रवादी संगठन आतंकी गतिविधियों के आधार पर हिंसा पर जोर दे रहे हैं। इन सभी को रोकने व राष्ट्रीय एकता को बनाये रखने हेतु शान्ति स्थापना के प्रयास किए जा रहे हैं।
- **क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का अभ्युदय व क्षेत्रीयवाद –** भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों की बढ़ती संख्या ने केन्द्रीय राजनीति को प्रभावित किया है। सभी क्षेत्रीय दलो का उदय और विकास क्षेत्रीयतावाद के लिए उत्तरदायी कारणों के मिश्रण का परिणाम है उदाहरण के लिए तमिलनाडु में डी.एम.के. अन्ना डी.एम.के., पंजाब में अकालीदल, आंध्रप्रदेश में तेलगुदेशम, तेलंगाना में राष्ट्रसमिति, जम्मू कश्मीर में नेशनल कान्फ्रेंस, महाराष्ट्र में शिवसेना, आदि क्षेत्रीय दलों के स्वर प्रबल होते जा रहे हैं, जो क्षेत्रीयतावाद की मानसिकता को प्रभावित कर रहे हैं।
- **भारतीय राजनीति व जातीय आधार पर क्षेत्रीयतावाद की बढ़ती प्रवृत्ति –** भारत में जिन क्षेत्रों में किसी एक जाति की प्रधानता रही है, वहां क्षेत्रवाद की उग्रप्रवृत्ति दिखायी देती है। जातिय कट्टरता के कारण बिहार, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, महाराष्ट्र, में हिंसात्मक संघर्ष हुए है। पिछड़ी जातियों व दलितों को आपस में बाँटकर वोट की राजनीति व जातिय विद्वेष को बढ़ावा देकर क्षेत्रवाद को बढ़ावा दिया जा रहा है।
- **भूमिपुत्र की अवधारणा व क्षेत्रीयतावाद –** भारत में क्षेत्रीयतावाद की एक प्रवृत्ति के रूप में भूमिपुत्र की अवधारणा का तात्पर्य किसी राज्य अथवा क्षेत्र के निवासियों द्वारा उस राज्य में बसने व रोजगार प्राप्त करने हेतु विशेष संरक्षण दिया जाना तथा जब तक उस राज्य के सभी निवासियों को रोजगार प्राप्त न हो जाये तब तक अन्य बाहरी व्यक्तियों को सुविधाएं नहीं दी जानी चाहिए। असम व मुम्बई में रेलवे भर्ती के दौरान बिहारियों के साथ दुर्व्यवहार, महाराष्ट्र में आक्रामक क्षेत्रवादी आचरण व शिक्षा, नौकरी, व्यवसाय आदि क्षेत्रों में महाराष्ट्रियों को प्राथमिकता देने की माँग कर्नाटक में कर्नाटक वासियों को रोजगार देने की माँग क्षेत्रीयतावाद को बढ़ावा देती है व राष्ट्रीय हित में इस पर अंकुश लगाना आवश्यक होगा।

क्षेत्रीयतावाद की बढ़ती प्रवृत्ति को रोकने हेतु सुझाव –

- भारत में विभिन्न प्रदेशों तथा भाषायी राज्यों के मध्य सांस्कृतिक महोत्सवों का आयोजन किया जाना चाहिए। जिससे भारत की विविध संस्कृति का लोगों को पता लगे व क्षेत्रीय एकता को प्रोत्साहन मिल सके व उत्तर –दक्षिण के मध्य की दूरी को कम किया जा सके।
- अमीर और गरीबी में बढ़ती खाई को पाटकर यथाशीघ्र आर्थिक विषमता व असंतोष को दूर कर पिछड़े हुए राज्यों के आर्थिक विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया जाना चाहिए।
- राज्यों के राजनीतिक दलों एवं जनप्रतिनिधियों को संकीर्ण क्षेत्रीय मनोवृत्ति से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हित की मुख्यधारा के परिप्रेक्ष्य में चिंतन करना चाहिए व क्षेत्रीय राजनीति दलों की बढ़ती संख्या पर नियंत्रण करना चाहिए।
- देश में अलगाववादी व विघटनकारी तत्वों पर कठोर प्रतिबन्ध लगाए जाने चाहिए तथा जातीयता, धर्मान्धता, साम्प्रदायिकता का राजनीति में प्रयोग वर्जित होना चाहिए जिससे क्षेत्रीय भिन्नता को कम किया जा सके।
- सभी क्षेत्र के लोगों को समान आर्थिक सुविधाएं प्रदान की जाए, जिससे अनावश्यक प्रतिस्पर्धा व ईर्ष्या की भावना न पनप सके अर्थात समावेशी विकास को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
- राष्ट्रीय भाषा हिन्दी को किसी भी क्षेत्रीय समूह पर जबरदस्ती न लादा जाए अपितु हिन्दी भाषा का प्रचार–प्रसार इस ढंग से हो कि विभिन्न क्षेत्रीय समूह स्वत: ही उसे सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार कर ले।
- केन्द्रीय मंत्रीमण्डल में सभी क्षेत्रो के जनप्रतिनिधियों का सन्तुलित प्रतिनिधित्व हो जिससे क्षेत्रीय पक्षपात के आरोपों से बचा जा सके।
- देश में कल्याणकारी योजनाओं के सही क्रियान्वयन हेतु प्रशासनिक स्तर पर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए तथा मानसिक दृष्टिकोण में सकारात्मक सोच उत्पन्न करनी चाहिए ।
- जनचेतना, जागरूकता, सहभागिता को राष्ट्रीयस्तर पर बढ़ावा देना चाहिए व आकाशवाणी चलचित्र नुक्कड़ नाटक पत्र पत्रिकाओं प्रदर्शनियों व कार्यशालाओं के माध्यम से राष्ट्रीय एकता को प्रोत्साहन देना चाहिए।
- केन्द्र व राज्य स्तर पर रोजगार के अवसर सभी को दिए जाने चाहिए।

इस तरह क्षेत्रीयतावाद ने भारतीय राजनीति को काफी प्रभावित किया है क्षेत्रीयता की समस्या भारतीय राष्ट्रीय एकता के मार्ग मे बाधक बनती जा रही है। भारत में क्षेत्रीयतावाद का लक्ष्य पृथकतावाद नहीं है अपितु वे अपने क्षेत्र व समूह विशेष के लिए अधिक सुविधाएं प्राप्त करना चाहते है। क्षेत्रीयतावाद की संकुचित भावनाओं को दूर करने के लिए हम स्वंय को पंजाबी, गुजराती, बंगाली, मराठी, बिहारी न समझकर भारतीय समझे व भारत की एकता व अखण्डता की रक्षा में अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दुर्गादास बसु – भारतीय सविधान एक परिचय, नई दिल्ली।
2. राजेश जैन –क्षेत्रीयतावाद और भारतीय राजनीति।
3. एस.एम. सईद–भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, लखनऊ, सुलभ प्रकाशन।
4. रजनी कोठारी–भारत में राजनीति, नई दिल्ली, ओरिण्ट लाग्मैन लिमिटेड।
5. एस.सी. सिंहल–भारतीय शासन एव राजनीति, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
6. विपिन चन्द्र–आधुनिक भारत में साम्प्रदायिकता, दिल्ली विश्वद्यालय, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय ।
7. रजनी कोठारी– कॉस्ट इन इण्डियन पॉलिटिशन, नई दिल्ली, ओरिण्ट लाग्मैन लिमिटेड।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

भारत में जातिवाद और राजनीति

डॉ. समीना खटक *

प्रस्तावना - भारत एक अति प्राचीन सभ्यता है, जिसका सामाजिक ढाँचा अनेक प्रकार के विभेदों से बना हुआ है। यह समाज प्राचीन परम्पराओं व कई अर्थो में यहाँ का ग्रामीण समाज रूढ़ीवादी मान्यताओं व पौराणिक व धार्मिक रिवाजों से प्रेरित होकर संचालित होता है। जैसा कि हम जानते है भारत की पारम्परिक सामाजिक संरचना जाति व्यवस्थाओं ओर धार्मिक अस्मिताओं के आसपास संगठित है। भारत में जाति व्यवस्था का प्रचलन परम्परागत रूप से उत्तर वैदिक काल से माना जाता है। जिसमें ब्राहम्ण, क्षत्रिय , वैश्य व शुद्र नाम से चार श्रेणियों में समाज का बंटवारा किया गया था। यह व्यवस्था जन्म के आधार पर न होकर कर्म के आधार पर की गई थी।

प्राचीन काल में जाति व्यवस्था का कठोरता के साथ पालन किया जाता था परन्तु धीरे- धीरे अनेकों सामाजिक आन्दोलनों , नई परिस्थितियों व शिक्षा के दायरे के फैलाव के चलते स्वतंत्रता के पश्चात भारत में जाति व्यवस्था का प्राचीन रूप अनेकों बदलावों से गुजरता हुआ आज करीब-करीब ध्वस्त हो चुका है। परन्तु क्योंकि प्राचीन सामाजिक संरचना की जडें इतनी मजबुत थी कि भारतीय समाज में आज भी जातिवाद की प्रतिध्वनी मौजुद है। और राजनीतिक दल अपने स्वार्थ हेतु इस व्यवस्था को पूर्ण रूप से समाप्त भी नहीं होने देना चाहते है।

प्रो.रूडोल्फ के अनुसार 'भारत के राजनीतिक लोकतन्त्र के सम्बंन्ध में जाति वह धुरी है, जिसके माध्यम से नवीन मूल्यों एंव तरीकों की खोज की जा रही है।

यथार्थ में यह एक ऐसा माध्यम बन गई है जिसके जरिये भारतीय जनता को लोकतान्त्रिक राजनीतिक प्रक्रिया से जोडा जा सकता है।'

किसी भी विकसित या विकासशील देश की राजनीति का आधार उस देश का सामाजिक ढाँचा होता है। जाति प्रधान समाज होने के कारण भारत में राजनीति सामाजिक ढांचे के अनुसार अपनी दिशा तय करती है। यह किसी भी देश की राजनीति के लिए एक अच्छा लक्षण नहीं है। क्योंकि लोकतान्त्रिक व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने हेतु स्वस्थ व प्रगतिशील राजनीतिक व्यवस्था की आवश्यकता एक बेहद आवश्यक तत्व है। जिसके अभाव में राजनीति के प्रदूषित होने की सम्भावना बनी रहती है। भारत में राजनीतिक दलों के व्यवहार पर दृष्टि डालने पर पता चलता है कि यहाँ जातिय विविधता का राजनीतिक स्वार्थ हेतु नकारात्मक प्रयोग किया गया है। पिछले 3-4 दशक की भारत की राजनीति पर नजर डालें तो स्पष्ट हो जाता है कि लगभग सभी राजनीतिक दलों की यह नीति है कि सैद्धान्तिक रूप से जातिवाद को भले ही अस्वीकार किया जाए किन्तु व्यवहारिक रूप से जाति धर्म एंव वर्ग को एक साधन के रूप में प्रयोग करने से राजनीतिक दल अपने तुच्छ राजनीतिक स्वार्थ को पूरा करने हेतु समाज की विभिन्न जातियों को एक दुसरे के विरूद्ध खड़ा करने से भी नहीं चुकती है। आज समाज के विभिन्न वर्गो में बढ़ती वैमनस्यता व कटुता का एक कारण यह भी है कि राजनीतिक दल जातिगत राजनीति का उपयोग अपने व अपने दल के लाभ हेतु कर रहे है नाकि उस जाति के समग्र विकास हेतु।

यद्यपि भारत के इस जाति प्रधान सामाजिक ढांचे से राजनीतिक दलों का जुड़ाव स्वाभाविक ही था। क्योंकि लोकतान्त्रिक राजनीति मूलत: आवश्यकताओं की राजनीति है, जिसके कारण पारम्परिक समाज और उसमें नेतृत्व का उसके साथ जुडाव हुआ। डॉ.रजनी कोठारी के अनुसार 'इसके दो नतीजें निकले। पहला जाति प्रथा ने नेतृत्व को राजनीतिक गोलबंदी के लिए संरचनात्मक और विचारधारात्मक आधार प्रदान किया। जिससे राजनीति को विभिन्न तबकों के प्रतिनिधि संगठन मिले और पहचान का वह पैमाना मिला जिसके जरिए समर्थन को जमीन पर उतारा जा सकता था। दूसरा, स्थानीय दावों के साथ नेतृत्व को रियायती सलूक करना पडा। उनके बीच सत्ता की आकांक्षा को लेकर बनी सहमति को मान्यता देनी पडी और राजनीतिक प्रतिस्पर्धा को पारम्परिक शैली में संयोजित करना पडा। इस तरह जातियाँ राजनीतिक और आर्थिक उद्देश्यों के लिये संगठित हुई। इस सब के साथ राजनीतिक संगठन प्रणाली ने जन्म लिया जो विभिन्न समूहों के हितों से जुडी हुई थी। इस प्रकार राजनीति और समाज में निकटता की शुरूआत हुई और एक नई अधिरचना उभरने लगी।'

भारतीय सामाजिक संरचना में जाति के महत्व के चलते यह लगभग असम्भव था कि यहां की राजनीति जातिवाद से अछूति रह सके। विभिन्न जातियों ने अपने आप को दलगत राजनीति से इसलिए जोड दिया कि इस प्रकार के जुड़ाव से देश व राज्यों की राजनीतिक व्यवस्था में उनका वर्चस्व बडेगा और अन्ततोत्वा इसका उनकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति पर सकारात्मक प्रभाव पडेगा। भारत की जनता जातियों के आधार पर संगठित है इसलिए राजनीति का जातियों के साथ गठजोड बेहद आवश्यक भी है और जातियों के दृष्टिकोण से यदि सकारात्मक रूप में किया जाए तो उन जातियों की राजनीतिक सहभागिता की दिशा भी सुनिश्चित करता है। भारतीय समाज की जातिवादी सरंचना का जो सबसे अधिक नकारात्मक पहलू रहा, वह था अछूतों का यहां की राजनीतिक व्यवस्था में नगण्य स्थान।सदियों तक सम्पूर्ण समाज पर राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षिक सांस्कृतिक अर्थात प्रत्येक स्तर पर ब्राहाम्ण , क्षत्रिय व वैश्य का वर्चस्व बना रहा और देश की जनंसख्या का एक बडा भाग होने के उपरान्त भी निचली जाति के लोग देश के विकास में अपनी सहभागिता केवल इसलिए नहीं दर्ज करा सके क्योंकि यहां की राजनीति में उनकी भूमिका ना के बराबर थी। 80 के दशक में मण्डल आयोग की सिफारिशें लागू होने के पश्चात भारत

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला - उज्जैन (म.प्र.) भारत

की राजनीति में जातिवाद चरम सीमा पर हावी हो गया। पिछड़ी और अछूत समझी जाने वाली जातियों को यह विश्वास हो गया कि राजनेता अभी तक केवल उनको वोट देने वाली मशीन की तरह उपयोग कर रहे थे परन्तु उनको राष्ट्र की मुख्य धारा में जोड़ने के सच्चे प्रयास नही किये गये। उनके इस विश्वास ने एक ऐसे संशय को जन्म दिया। जिसके चलते उन्होंने स्वंय को संगठित राजनीतिक इकाई के रूप में तैयार करने का प्रयास किया ताकि वे राजनीति की मुख्य धारा में शामिल होने के लिए मुख्य राजनीतिक दलों पर दबाव बना सके और अपने आप को राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक पहचान दिलाने की दिशा में सार्थक पहल कर सकें। 80 के दशक से पूर्व जो राजनीतिक दल ब्राहम्ण, क्षत्रिय व वैश्य वर्गो से मुख्य रूप से जुडे रहते थे व वंचित व पिछडों जाति के लोग कूेवल एक वोट से अधिक कुछ नहीं थे, यह स्थिति आज बदल गई है। रजनी कोठारी के अनुसार जातियों ने आज अपने आप को निर्वाचन और दलगत राजनीति से जोड़ लिया है। परिणाम स्वरूप गतिशीलता के अधिक सामुहिक और सहभागी रूप सामने आए है और विभिन्न स्तरों के बीच समन्वय बेहतर हुआ है। राष्ट्र-राज्य और राजनीतिक लोकतंन्त्र उत्थान और उनमें अन्तर्निहित संगठित ढांचे के कारण जातियों का परिपेृक्ष्य भी काफी बदला है और यह निरन्तर बदल रहा है। इसकी मात्रा क्रमश: बढ़ती जा रही है। राजनीति की निर्णयकारी प्रक्रिया में अधिकाधिक तबके भागीदारी करते जा रहे है।

हम यह कह सकते है कि एक जटिल जातिवादी व बहुलतावादी समाज होने के उपरान्त भी समाज के बिखराव व कुछ हद तक आपसी बेमनस्य को रोके रखने में जातिवादी राजनीति भी सहायक सिद्ध होती है। राजनीति का प्रमुख लक्ष्य होता है, सत्ता प्राप्ति। एक बिखरे व आपस में एक दूसरे के साथ वैमनस्य व घृणा करने वाले समाज पर कोई भी राजनीतिक दल आसानी से शासन नहीं कर पायेगा। अत: कोई भी राजनीतिक दल, चाहे वह कितना भी दक्षिणपंथी क्यों ना हो, एक बिन्दु से आगे अपनी कट्टर राजनीति को भारत जैसे बहुलतावादी समाज में नहीं ले जाना चाहता है।

राजनीतिक समाजीकरण भी इसी की एक शाखा है। राजनीतिक सहभागिता के विस्तार की आकांक्षा और राजनीतिक चेतना के उदय के साथ ही राजनीतिक दलों की संख्या में भी वृद्धि हुई और इसी के साथ विभिन्न जाति समुहों का देश व राज्यों की राजनीति के साथ जुड़ाव बड़े स्तर पर प्रांरभ हो गया। इसी के साथ एक या दो दलों के वर्चस्व वाली राजनीतिक व्यवस्था के स्थान पर बहुदलीय राजनीतिक व्यवस्था का जन्म हुआ ,जिसमें छोटे- छोटे राजनीतिक दलों ने, जो कुछ विशेष राज्य स्तरीय, जाति समूहों द्वारा संचालित होते है, राष्ट्रीय दलों से मिलकर 80 के बाद के दशकों में गठबन्धन सरकारों का राष्ट्र व राज्य दोनों स्तरों पर संचालन किया और भारतीय राजनीति को एक नया आयाम दिया। यह प्रयोग केवल उत्तर भारत ही नहीं दक्षिण भारत में भी देखने को मिले और वर्तमान में भी देखे जा सकते है।

जातियों के इस राजनीतिकरण या राजनीति के इस जातिकरण ने भारत की राजनीति को ना केवल अलग स्वरूप में हमारे सामने प्रस्तुत किया अपितु देश की अनेकों उन अछूत कही जाने वाली जातियों को उस धरातल पर ला खडा किया जिसकीं उन्होनें कल्पना भी नहीं की थी। जातिवादी राजनीति के अनेकों नकारात्मक प्रभावों के साथ ही उनके सकारात्मक पहलुओं को भी देखना व समझना चाहिये और इस प्रयोग को और अधिक परिष्कृत करने के प्रयास करते रहने की दिशा में आगे बढ़ते रहना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रजनी कोठारी भारत में राजनीति कल और आज, वाणी प्रकाशन , नईदिल्ली , 2007
2. प्रो.आर.पी.जोशी , भारतीय सरकार एंव राजनीति, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर , 2007

****

पंचायतीराज में अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की बढ़ती भूमिका

आशीष कुमार मेश्राम *

प्रस्तावना – पंचायत प्रणाली में ग्रामराज और ग्राम स्वराज के बारे में भारत की अवधारणा पश्चिम की संकल्पना से अलग है। निर्णय करने की पंच परमेश्वर की भारतीय पद्धति एक आदर्श पद्धति है क्योंकि ये पंच, लोगो की समस्याओं को सबसे अच्छी तरह जानते है। हमारे देश में पंचायत की संकल्पना काफी पुरानी है। चौपाल, जाति पंचायत और परिवार पंचायत आदि संस्थाओं मेंआधुनिक पंचायत व्यवस्था की जड़े व्याप्त थी। सिंधु घाटी की सभ्यता में इसका प्रमाण मिलता है।

हमारे देश की जनसंख्या का आधा हिस्सा महिलाओं का हैं, तथा इसमें भी अनुसूचित जनजाति की महिलाओं का बहुत बड़ा भाग है। अत: देश का समग्र विकास महिलाओं की भागीढारी के बगैर नहीं हो सकता। भारत में अनादिकाल से जीवन के हर क्षेत्र में महिलाओं ने पुरूषो के साथ मिलकर काम किया है। भारतीय महिलाएं घर–गृहस्थी का पुरा काम–काज निपटाने के साथ–साथ राष्ट्रीय जीवन के हर क्षेत्रों में खेतो–खलिहानों, कल कारखानों, दफ्तरों, अस्पतालों में उपयोगी योगदान देती आयी है। चाहे गांवो में साक्षरता के प्रसार का अभियान हो या गांव के युवकों को रोजगार उपलब्ध कराने का मामला हो। गांव में पीने के पानी की समस्या अथवा फसलों को बीमारियों से बचाना हो, यह सब कार्य ग्रामीण महिलाओं के आपसी सहयोग और विकास कार्यो में सबकी भागीदारी सुनिश्चित करके कर सकती है। बढ़ती आबादी की रोकथाम, पर्यावरण की रक्षा, बच्चों को पोष्टिक व संतुलित आहार देने और इन सबसे बढ़कर स्थानीय संसाधनों की अधिकाधिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने की दिशा में अनुसूचित जनजाति की महिलाएं अपना योगदान और नेतृत्व दे सकती है। अत: पंचायतीराज संस्थाओं में भी अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की अहम् भूमिका है।

समस्याएँ – विभिन्न सामाजिक आर्थिक रूकावटों के कारण अनुसूचित जनजाति को महिलाओं को अपनी सांख्यिकी शक्ति के बावजूद समाज में बहुत छोटा दर्जा प्राप्त है। महिलाओं द्वारा अनौपचारिक राजनीतिक, क्रियाओं में तीव्र वृद्धि के बावजूद राजनीतिक संरचना में इनकी भूमिका वास्तव में अपरिवर्तित रही है।

कई महिला प्रतिनिधियों को खासकर अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को वित्तीय समस्या से अपने परिवार का पालन–पोषण करने के लिये कृषि कार्य अथवा मजदूरी पर जाना पड़ता है। उनका मानना है कि यदि वे पंचायतो की बैठकों में जायेगी तो उनके परिवार का पालन पोषण कौन करेगा?

यह देखने को मिलता है कि जिन प्रतिनिधियों के परिवार में 10–12 सदस्य है वे परिवार को देखभाल करने और घर का काम करने के कारण पंचायतो की बैठकों मे कम ही भाग ले पाती है।

ग्रामीण क्षेत्रो में अनूसूचित जनजाति को महिलाओं की स्थिति द्योयम दर्जे की है। यदि कोई महिला आगे बढ़कर कोई कार्य करना भी चाहती है, तो उसे समाज स्वीकार नहीं करता है। समाज में पर्दा प्रथा, पुराने रीति–रिवाज आज भी विद्यमान है। जिससे अनुसूचित जनजाति की महिलाएं विकास की प्रक्रिया में पूर्ण भागीदारी नहीं कर पा रही है।

कई गांवों में जातिवाद आज भी विद्यमान है। कुछ गांवो में जहां महिला सरपंच अनुसूचित जनजाति की है, वहाँ अन्य महिला प्रतिनिधि जो सामान्य तथा पिछड़े वर्ग की पंच महिला है, पंचायत की बैठकों में नही जाती क्योकि उनका मानना है कि महिला सरपंच नीची जाति की महिलाओं के साथ बैठने पर उनका अपमान होता है।

अशिक्षित महिला प्रतिनिधि भी महसूस करती है, कि उन्हें पढ़ा–लिखा होना चाहिए ताकि वे भी पंचायतीराज व्यवस्था के माध्यम से ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों को बना सकें, उन्हे कार्यान्वित कर सके। महिला प्रतिनिधियों को पंचायत का प्रतिनिधि बनने से पहले या बाद में प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। जिन गांवो में पंचायत भवन की व्यवस्था नहीं है, वहाँ महिला प्रतिनिधि पंचायत की बैठकों में नहीं जा पाती।

पंचायत चुनावों में कई क्षेत्रों में यह देखा गया है कि समाज के प्रभावशाली व्यक्ति अपनी ही पत्नि, बहन, माँ, अथवा किसी अन्य संबंधी महिला को चुनाव में उम्मीदवार के रूप में खड़ा कर देते है, जो बाद में उन्हीं के इशारे पर काम करने को विवश होती है। इस प्रकार महिलाओं को एक तिहाई स्थानों तथा अनुसूचित जनजाति एवं अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित प्रावधान की धज्जियां उड़ाई जाती है। गांवो में दलबंदी होने के कारण छोटे–छोटे झगड़े होते है और जनकल्याण की योजनाओं के प्रति सही निर्णय नहीं ले पाती है।

सुझाव – राजनैतिक माहौल में सहभागी महिला प्रतिनिधियों के प्रति पुरूष समाज की रूढ़िवादी सोच बदलनी होगी। अनुसूचित जनजाति की महिलाए, पहली बार राजनीतिक माहौल में आ रही है। इसलिए उनमें भय संकोच एवं घबराहट होती है। ऐसी महिलाओं मे साहस उत्पन्न करना होगा तथा महिलाओं को उनकी आंतरिक क्षमता एवं शक्ति पर भरोसा करना होगा। महिलाओं को भी पुरूषों जैसा ही मान सम्मान और सामाजिक प्रतिष्ठा देनी होगी। तथा राजनीति में महिलाओं का सकारात्मक सहयोग प्राप्त हो सकेगा। राजनीतिक माहौल में अपराधीकरण, आतंकवाद, नक्सलवाद, काला धन, चरित्र लांछन जैसे दुर्गुण है, इससे महिलाएं सार्वजनिक रूप से अलग रहती है। उन्हें सामाजिक प्रतिष्ठा का भय बना रहता है। इसलिए राजनेताओं और राजनीतिक दलो द्वारा इस दूषित वातावरण में परिवर्तन लाना जरूरी है, ताकि अनुसूचित जनजाति की महिलाएं राजनीति में अपना सक्रिय योगदान दे सके।

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

समानता पर आधारित सामाजिक संरचना का गठन करना आवश्यक है। ऐसे समाज का निर्माण करना होगा जहाँ मानव द्वारा मानव का शोषण नहीं, स्त्री एवं पुरूष एक दूसरे को सम्मान की दृष्टि से देखे। स्त्री और पुरूष, दोनों ही पारस्परिक ईर्ष्या, दोष, द्वेष, अंहभावना से ऊपर उठकर परस्पर सहयोग, परिश्रम एवं संगठन शक्ति का उपयोग कर गांव के विकास में अपना पूर्ण योगदान दे सके।

अधिकतर अनुसूचित जनजाति की महिला प्रतिनिधि अनपढ़ है, जिससे उनको पंचायत के लेखापत्र, नियम पढ़ने में या लिखने मे दिक्कत आती है। अत: महिला पंचायत प्रतिनिधियों को शिक्षा देनी जरूरी है। प्रौढ़ शिक्षा का लाभ उठाकर एक शिक्षित व्यक्ति एक अनपढ़ व्यक्ति को पढ़ाने का संकल्प करे तो निरक्षरता का कलंक शीघ्र की दूर हो सकता है, और इससे पंचायते सक्षम बनेगी।

जनजाग्रती तथा देश के आध्यात्मिक और नैतिक मुल्यों पर जोर देना होगा। ऐसा वातावरण उत्पन्न करना होगा। जिससे इन मूल्यों को उपयुक्त महत्व प्रदान किया जाए। तभी अनुसूचित जनजाति की महिलाएं ऊपर उठ सकेगी, और वे पंचायतीराज संस्थाओं में हिस्सा ले सकेगी। अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को प्रोत्साहित करने के लिए चुने गए प्रतिनिधियों और विकास अधिकारियों के बीच सम्पर्क के जरिए सक्रिय प्रयत्नों की जरूरत हैं। निरंतर सभाओं और विचार-विमर्श के द्वारा कार्य योजना तैयार की जानी चाहिए। अनुसूचित जनजाति महिला विकास कार्यक्रम पंचायत। स्थानीय अधिकारियों से अनिवार्य रूप से संबंद्ध हो सके। जिससे की विकास में अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की ज्यादा प्रभावपूर्ण भागीदारी संभव हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. पंचायत राज चुनौतियां एवं संभावनाएं-महिपाल।
2. एन.के. श्रीवास्तव-भारत में पंचायतीराज।
3. मीनाक्षी पवारसेन पाल-पंचायतीराज और ग्रामीण विकास।
4. कुरूक्षेत्र अगस्त 2006 पंचायतीराज संस्थाओं में बढ़ती महिलाओं की भूमिका।

****

मध्ययुग में ग्वालियर क्षेत्र में हिन्दी साहित्य सृजन

डॉ. शुक्ला ओझा *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति के विकास में ग्वालियर क्षेत्र का अभूतपूर्व योगदान रहा है। अत्यन्त प्राचीन काल से ही यहां मानव ने, भारतीय संस्कृति के विकास की परम्पराओं की प्रस्थापना प्रारंभ कर दी थी और मध्ययुग में इस क्षेत्र में उत्कृष्ट साहित्यिक रचनाओं का सृजन किया गया। इस क्षेत्र में प्राप्त ग्रंथों में, तत्कालीन साहित्य की गरिमा के साथ-साथ सांस्कृतिक परिस्थितियों की भी झलक दिखाई देती है। ग्वालियर क्षेत्र की साहित्यिक चेतना की यह विशेषता रही है कि साहित्य मनीषियों के साथ-साथ यहां के शासकों ने भी अपनी कृतियों द्वारा समयानुकूल योगदान दिया है। हिन्दी साहित्य के प्रारंभिक विकास पथ पर मध्युगीन ग्वालियर के साहित्यकारों के साहित्य लेखन ने अविस्मरणीय योगदान दिया है। इस योगदान को उद्घाटित एवं प्रस्तुत करने का महती दायित्व ग्वालियर शोध संस्थान ने उठाया तथा ग्वालियर तथा समीपवर्ती स्थलों में उपलब्ध प्राचीन ग्रंथों की पाण्डुलिपियों का संग्रह, सम्पादन एवं प्रकाशन का अनवरत प्रयास किया, जिसके सुपरिणाम के रूप में ग्वालियर क्षेत्र के साहित्यकारों यथा विष्णुदास, नारायणदास आदि के मध्ययुग के हिन्दी भाषा के ग्रंथों का प्रकाशन हो सका एवं सुधी पाठक उससे लाभान्वित हो सके। इन ग्रन्थों में हिन्दी भाषा मध्ययुग की ग्वालियर क्षेत्र की स्थानीय बोली 'ग्वालियरी भाषा' के रूप में प्रस्तुत होती है जो स्थानीय बोली, बुंदेली एवं ब्रजभाषा का मिश्रित स्वरूप थी।

ग्वालियर क्षेत्र के मूर्घन्य इतिहासकार हरिहर निवास द्विवेदी का तो यह मत है कि हिन्दी साहित्य लेखन की प्रारंभिक जड़ों को अभिसिंचित करने का श्रेय मध्ययुगीन ग्वालियर को ही जाता है। उन्हीं के शब्दों में चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं शताब्दी में हिन्दी की सुनिश्चित रूप से ज्ञात रचनाऐं हिन्दी में बहुत नहीं है, जो हैं वे लगभग इसी क्षेत्र की हैं। बेतवा के तीर पर बसे एरछ नगर में सन् 1354 ई. में 'प्रद्युम्न-चरित' की रचना करने वाले सधारू अग्रवाल ने पूर्ववर्ती रचना विधा को आगे प्रवाहित किया था। उसकी भाषा को, अपभ्रंश के केंचुल से विमुक्त कर, व्यापक काव्य भाषा का स्वरूप दिया सन् 1435 में गोपाचल के विष्णुदास ने, और उसे रस सिक्त किया था गोपाचल के ही नारायणदास ने। सूफी प्रेमाख्यानों की काव्यधारा को प्रांज्जल रूप प्रदान किया शेख मंझन अब्दुल्ला ने जिनका रचना क्षेत्र गोप क्षेत्र की बेतवा का अंचल रहा है। ग्वालियर क्षेत्र के इस रस निष्णात कवि की ही परम्परा को आगे बढ़ाने का कार्य जायसी व अन्य कवियों ने किया। हिन्दी संसार अभी न जाने कब तक इस छलना से व्यथित रहेगा कि नारायणदास के 'छिताई चरित' को पूर्ण करने वाले ग्वालियर के देवचन्द्र का अनुज, सूरदास, रूनुकता या सीही में जन्मा था, तथापि उसका पद साहित्य जिस धारा से पुष्ट हुआ, वह ग्वालियर के मान और उसकी राजसभा के बैजू, बक्शू, महमूद, कर्ण, पान्डे, के पद संग्रह से प्रवाहित हुई थी, इसमें अब किसी को सन्देह नहीं होना चाहिए। ग्वालियर के इस महान दाय के मूल्यांकन तथा प्रस्तुतिकरण के लिए बहुत कुछ लिखा गया है, तथापि अभी बहुत लिखा जाना है।[1] ग्वालियर क्षेत्र के इस योगदान को मूर्त रूप प्रदान करने में यहां के विष्णुदास की सन् 1435 ई. के लगभग प्रणीत रचना महाभारत, लगभग 1480 के आसपास नारायण दास रचित छिताई चरित, 18 वीं शताब्दी में दलपतिराय कृत 'ग्वालेरी भाषा व्याकरण', विक्रम संवत् 1557 (सन् 1500 ई.) में ग्वालियर में थेघनाथ द्वारा कृत श्रीमदभगवत गीता का हिन्दी रूपान्तर का महती योगदान रहा है। पन्द्रहवीं -सोलहवीं शताब्दी से ही ग्वालियर क्षेत्र में, मिश्रित भाषा तथा संदिग्ध व्याकरण का, तथापि अपार परम्परागत श्रृद्धा -भक्ति से परिपूर्ण एक श्लोक प्रचलित हो गया-

गोपाचले महादुर्गे, ग्वालिया यत्र तिष्ठते।
ऋद्धि-सिद्धि प्रदातारौ, ये नमन्ति दिने-दिने।।

यह श्लोक ग्वालियर में उतारी गयी, प्राचीन ग्रंथों की अनेक हस्तलिखित प्रतियों में प्राप्त होता है। खड्गराय ने भी 'गोपाचल आख्यान' में भी इसका प्रयोग किया है। खड्ग राय ने अपनी गोपाचल आख्यान कृष्णसिंह तोमर को सुनाने के लिए, उनके 'ग्वालियर के राज्य' के पद ग्रहण के समय सत्र् 1631 ई में लिखा था।[2] इसके चाचा महाकवि सुन्दरदास कृत 'सुन्दर श्रंगार' आज भी रीति कालीन काव्य में विशिष्ट स्थान रखता है। खड्ग राय के अतिरिक्त मध्यकालीन ग्वालियर के ही नाना कवि द्वारा सन् 1783 ई. में रचित 'गोपाचल आख्यान' भी इस क्षेत्र की हिन्दी साहित्य सम्पदा का अमूल्य रत्न है। खड्गराय ने इस राज कथा (एतिहासिक ग्रंथ) में पौराणिक इतिहास की परम्परा का निर्वहन किया है। यह ग्रन्थ उन्हें हिन्दी के श्रेष्ठ कवियों में स्थापित करता है। खड्गराय एवं नाना कवि की श्रृखला में ही ग्वालियर क्षेत्र के बादलीदास का ग्वालियर नामा भी एक अहम रचना है जिसे उन्होंने विक्रम संवत् 1853 (सन् 1796 ई.) में पूर्ण किया था। मध्यकालीन ग्वालियर क्षेत्र में रचित इन ग्रंथों ने हिन्दी साहित्य की विकास यात्रा में इस क्षेत्र की उपस्थिति दर्ज करायी है।

संस्कृत साहित्य में आख्यान ग्रंथों को 'चरित' एवं 'कथा' के रूप में दो भागों में विभक्त किया गया है, जबकि हिन्दी में यह तीन वर्गों में विभक्त हैं- धर्मकथा, कामकथा, और राजकथा। खड्गराय ने अपने ग्रंथ आख्यान को राजकथा का दर्जा दिया है। खड्गराय से पहले हिन्दी में केशवदास के वीर चरित्र और जहांगीर रसचन्द्रिका को ही राजकथा माना जाता था। उनके पश्चात् कालक्रम में, खड्गराय के गोपाचल आख्यान का ही स्थान है, उन्हीं का अनुसरण कालान्तर में गोरेलाल ने छत्रप्रकाश और दलपति रायसो, नवल सिंह ने खण्डेराय रायसो में किया है। खड्गराय प्रथमत: कवि हैं इसीलिए उन्होंने इसकी रचना विधा एतिहासिक ग्रन्थ के स्थान पर काव्यरूप में की है। इसमें इल्तुतमिश और सारंगदेव के बीच युद्ध एवं जौहर के वर्णन में वीर रस एवं शान्त रस का उत्तम प्रदर्शन दर्शनीय है। डॉ. द्विवेदी के शब्दों में छन्द रचना उन्हें उच्चकोटि के कवियों की श्रेणी में सम्माननीय स्थान पर प्रतिष्ठित करती है। हिन्दी वाड्.मय में खड्यराय का स्थान महत्वपूर्ण है। कुछ त्रुटियां होते हुए भी इतिहास लेखन में उसके कथन बहुत सारगार्भित हैं। आख्यान काव्य की दृष्टि से उसकी रचना अत्यन्त श्रेष्ठ है। उसका गोपाचल आख्यान ग्वालियर का गौरव ग्रन्थ है। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में यही उनका

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

योगदान है।

ग्वालियर क्षेत्र में हिन्दी साहित्य सृजन के क्षेत्र में एक अन्य महत्वपूर्ण नाम नाना कवि का है, जिसने अपना गोपाचल आख्यान सन् 1783 के लगभग लिखा था, जिसमें महादजी सिन्धिया की गोपाचल विजय तक की घटनाऐं उल्लिखित हैं। ग्वालियर दुर्ग कैप्टन पोफम के प्रयासों से 4 अगस्त 1780 को अंग्रेजों के अधिकार में आया था।[4] यही घटनाक्रम नाना ने भी दर्शाया है। ग्वालियर क्षेत्र के हिन्दी साहित्य के इतिहास में नाना को 'ग्वालियर का प्रथम अहिन्दी भाषा हिन्दी कवि' माना गया है यद्यपि महादजी सिन्धिया ने भी हिन्दी में अनेक पद लिखे थे, परन्तु वे संभवत: उज्जैन या पूणे में लिखे गये थे।

नाना कवि द्वारा रचित हिन्दी भाषा के इस दोहे में अनुपम भाषा सौन्दर्य उद्घाटित हो रहा है,

सुखद सुभग कलियल हरन करन सुमंगल खानि।
श्री गोपाचल की कथा सुनत सकल फलदानि।।
नना नृपति चरित्र शुभ ग्वालियर आख्यान।
सुनत सुजस जन सौख्यदा शत्रु हरन धन दानि।।

वास्तव में वे ग्वालियर क्षेत्र में हिन्दी साहित्य की इस धारा के प्रवाह के सहायक बने। हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल की प्रेममार्गी शाखा के कवि मंझन और उनकी काव्य रचना 'मधुमालती' की संबंध भी ग्वालियर क्षेत्र से रहा है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मतानुसार मंझन के सम्बन्ध में (उनकी रचना की अतिरिक्त) कुछ भी ज्ञात नहीं हैं [5] जबकि मधुमालती की पंक्ति 'गढ अनूप बस नगर चनोठी' एवं 'सन नौ सौ बावन (1545 ई.) जब गए, सती पुरूष कलि परहरि गए' के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया कि मंझन ग्वालियर में अवश्य रहे थे और वहीं शेख मौहम्मद गोस से मिले थे।[6] यद्यपि इस तथ्य का भरपूर विरोध भी किया गया [7] तथा मधुमालती का रचना स्थल चुनार सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया। किन्तु यहां हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध व्यक्तित्व शिवनाथ उपाध्याय जी का कथन अवश्य विचारणीय प्रतीत होता है कि जब हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखा जाए तब मंझन की रचना के सरस स्त्रोत को, चुनार के पत्थरों में खोजना अनुचित होगा, उनकी रचना मधुमालती (रायसेन गढ़ के निकट बहने वाली) वेत्रवती की सुकोमल लाड़ली है, उसने यौवन का निखार गोपाचल गढ़ पर पाया और उसे नवीन वाचना के रूप में पुनर्जन्म मिला रूपमती के सारंगपुर में। हिन्दी साहित्य के समृद्ध भण्डार की श्री वृद्धि उनके पीढ़ियों के अनेक लेखकों और अनेक विश्वासों तथा सम्प्रदायों के साधकों ने की है, उसमें रससिद्ध कवि मंझन गोपक्षेत्र द्वारा अर्पित बहुमूल्य रत्न है।[8]

मध्ययुग में ग्वालियर क्षेत्र में लिखी गयी हिन्दी साहित्य की रचनाओं में दलपतिराय कृत 'ग्वालेरी भाषा व्याकरण' का अति महत्वपूर्ण स्थान है। श्री अगरचन्द नाहटा के विचारानुसार किसी भाषा का व्याकरण ही उसका मूल आधार होता है। ग्वालेरी भाषा व्याकरण नामक ग्रंथ की रचना जयपुर में रहने वाले दलपतिराय ने 18 वीं शताब्दी में की थी।[9] जिसकी प्रति राजस्थान–प्राच्य–विद्या–प्रतिष्ठान, जोधपुर में संग्रहीत है उन्हीं के शब्दों में,

देव नाग भाषा कहूं, कहूँ जावनी होइ
भाषा नाना देस की ग्वोलेरी मधि जोई।

व्याकरण ग्रंथ के अतिरिक्त मध्ययुग में इस क्षेत्र में संगीत ग्रंथो की भी रचना की गयी। दक्षिण के कुछ गायक चौदहवीं शताब्दी में गोपाचल क्षेत्र की ओर आते दिखाई देते हैं। कवि रूद्राचार्य के शिष्य देवेन्द्र भट्ट उसी समय ग्वालियर में निवास करने लगे थे। उन्होंने सन् 1350 ई. में 'संगीत मुक्तावली' नामक ग्रंथ की रचना की थी[10] जिसमें आंध्र महाराष्ट्र तथा कर्नाटकी शैलियों के साथ विविध नृत्य प्रक्रिया को सम्मिलित किया गया है। ग्वालियर के तोमर शासक वीरमदेव तोमर (1402–1423 ई.) के काल में प्रणीत नयनचन्द्र सूरि की रम्भा मंजरी डूंगरेन्द्र सिंह तोमर (1415–1459) के काल में विरचित संगीत चूड़ामणि ग्रंथ तथा 1435 में विष्बुदास रचित महाभारत (पाण्डव चरित्र) की रचना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।[11] तोमर नरेश कल्याण मल्ल के काल में ही नारायण दास द्वारा छिताई चरित की रचना प्रारंभ कर दी थी। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में नागरी प्रचारणी सभा, काशी की हस्तलिखित ग्रंथों की खोज रिपोर्ट में इसका उल्लेख होना अत्याधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। किन्तु हिंदी भाषा एवं साहित्य के इतिहास में इसका उल्लेख न होना दु:खद है। डॉ. द्विवेदी के शब्दों में 'विष्णु दास और नारायणदास के विस्तृत विवेचन से विहीन हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास कर्ण और अर्जुन रहित महाभारत हैं' इससे यह विसंगति स्पष्ट हो जाती है। भगवानदास माहौर ने तो विष्णुदास कृत महाभारत को हिन्दी साहित्य के प्रथम महाकाव्य का दर्जा दिया है। काव्य भाषा के रूप में हिन्दी का विकास, उसके काव्य का विकास और उसमें जनजीवन के लिये आशाप्रद जीवन–राग समन्वित भावप्रेरणा, इन सभी दृष्टियों से विष्णुदास के इस महाभारत ग्रंथ का अत्याधिक महत्व है। इसका सम्यक परिशीलन किये बिना न तो विस्तृत हिन्दी भाषा–भाषी प्रदेश में समझी जाने वाली काव्य भाषा के उत्थान और उसके विकास को विकासयुगीन जन भावनाओं कोही और न ही साहित्य के प्रतिफलन को भलीभांति समझा जा सकता है। इस व्यापक काव्यभाषा का नाम सर्वत्र 'ग्वालियरी' प्रसिद्ध हुआ। इसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण कर्तव्य विष्णुदास का ही है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मतानुसार 'पश्चिम में गुजरात से लेकर पूर्व में बिहार तक समझी जाने वाली व्यापक काव्य भाषा के रूप में इस मध्यदेशीया का महत्व स्वाभाविक हुआ और उसमें भी 'ग्वालियरी' का। वे तो हिन्दी के इस व्यापक प्राचीन काव्य भाषा रूप को 'विष्णुदासी' हिन्दी तक कहने का समर्थन करते है।[12] ऐसा माना जाता है कि सन् 1300 ई0 से हिन्दी साहित्य के उन्मेषयुग का प्रारंभ हुआ और सन् 1400 ई.के पश्चात इसका विकास अत्यंत तीव्र गति से हुआ। जिसका विष्णुदास को माना गया है, जिन्होंने तुलसीदास से एक शताब्दी पूर्व दोहे चौपाई में 'महाभारत' महाकाव्य लिखकर ग्वालियर नरेश डूगरेन्द्र सिंह को सन् 1435 ई0 में सुनाना प्रारंभ किया था। सुप्रसिद्ध भाषाविद एवं साहित्यकार पूनम चन्द तिवारी का मत है कि विष्णुदास की महाभारत की भाषा पर तत्कालीन प्रचलित अपभ्रंश का प्रभाव नगण्य ही था। अतएव उन्हें अपनी तत्कालीन ग्वालियरी भाषा का मुख्य रचनाकार मानना चाहिये। विष्णुदास कृत 'पाण्डव चरित्र' में भाषा सौन्दर्य दर्शनीय है–

जो फलु होई के दारह जंता। सौ फलु पाण्डव चरितु सुनंता।।
जो फलु बाभन दीने गाई। गया क्षेत्र जे पिंड भरहिं।।
सो फलु बिस्नदासु कवि भनहीं। पंडव चरितु जु मन दै सुनहीं।।

इस प्रकार विष्णुदास की रामायन में उर्मिला प्रसंग पर वे प्रचलित कथानक से भिन्न कथा कहते दिखाई देते हैं। डॉ. विनय मोहन शर्मा ने उनके आलेख 'मानस और रामायन की कथा में उर्मिला और तारा' में स्पष्ट किया है कि तुलसी ने जहाँ आदि कवि (वाल्मिकि) के समान उर्मिला को सर्वथा मौन बिसूरती के रूप में प्रस्तुत किया है वहीं उनके पूर्ववर्ती कविवर विष्णुदास ने जो उनसे लगभग सौ वर्ष पूर्व ग्वालियर नगर में प्रादुर्भूत हुये थे, अपने आदर्श कवि का अनुसरण नहीं किया। उन्होंने वनवास से पूर्व लक्ष्मण और उर्मिला का सामना कराया है।

सुनि लक्ष्मन जो तू न रहाई
तब अपने अन्त: पुर जाई

जननि भेंट, सुन्दरि समुझाई
सुनि अवधि लें मिलिये आई।।

महाकवि विष्णुदास के यशस्वी पुत्र नारायणदास पन्द्रहवीं शताब्दी के हिन्दी के प्रथम लौकिक आख्यान काव्य प्रणेता महाकवी हैं। उन्होंने 'छिताई चरित' के रूप में जो आख्यान काव्य ग्वालियर में वरचित किया था उसका अनेक दृष्टि से हिन्दी साहित्य के बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। डॉ द्विवेदी ने उन्हें उनकी पंक्ति 'विरसिंध वंश नारायण दासू' के आधार पर उन्हें वीरसिंह वंश का राज्याश्रित एवं 'जपै विस्नु नारायण दासू' के आधार पर विष्णुदास का पुत्र माना है।[14] छिताई चरित के रचनाकाल पर इतिहासकारों में मतभेद है।[15] इस विषय में डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल का विचार भी उल्लेखनीय है कि मूल रचना के पश्चात समय-समय पर उसकी प्रतिलिपियों की जाती थीं जिनके रचनाकाल भ्रम उत्पन्न करते थे जैसा कि जायसी के पद्मावत के साथ भी हुआ।[16] यही छिताई चरित के साथ भी घटित हुआ है।[17] छिताई चरित ऐतिहासिक औपन्यासिक आख्यान की तरह अनूठा काव्य है। इसकी भाषा का लालित्य बुन्देली से ओतप्रोत है। यह व्यापक परिनिष्ठित काव्य भाषा का वह रूप है। जिसका सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व तत्कालीन सांस्कृतिक केन्द्र ग्वालियर करता था। इस शट भाषा प्रकृति के मिश्रण का दाय नारायणदास को मिला। सूरदास ने इसी दाय का व अष्टछाप में इसी भाषा का परिष्कार किया, विशदता प्रदान की।[18] मध्यदेशीय भाषा (ग्वालियरी) के कवियों में नारायणदास ऐसा कवि है, जिसने तद्भव शब्दों का अधिक प्रयोग दिया हिन्दी की सबसे बड़ी विशेषता है तद्भव शब्दों का प्राचुर्य- वस्तुत: तद्भव शब्द ही हिन्दी के मेरूदण्ड हैं।[19] छिताई चरित में इन शब्दों की लम्बी सूची है। डॉ. कोमल सिंह सोलंकी का यह कथन कि मध्ययुग के मुसलमान हिन्दी कवि मौलाना दाऊद, कुतबन और मंझन ठीक वैसी ही काव्य भाषा का प्रयोग करते थे, जैसी नारायणदास दल्ह, मानिक या चतुर्भुजदास निगम आदि के काव्यों में मिलती है। गोस्वामी तुलसीदास का 'मानस' इसी भाषा रूप से परिप्लावित है। यही ग्वालियर के साहित्यकार नारायण दास, विष्णुदास इत्यादि का मध्ययुग में हिन्दी साहित्य में विकास में महती योगदान है।

मध्ययुग में हिन्दी साहित्य रचना क्षेत्र में ग्वालियर क्षेत्र की उपस्थिति हर्षप्रद है। महाकवि केशव ने वीरचरित की रचना सम्वत् 1644 (सन् 1607 ई.) के प्रारंभ में की थी।[20] इस समय तक सलीम जहांगीर की उपाधि धारण कर आगरे की गद्दी पर आसीन हो चुका था। उसके सम्राट बनते ही जैसे बड़ौनी के ठाकुर वीर सिंह बुन्देला का भाग्य सूर्य उदय हुआ[21] इन्हीं पर आधारित वीर चरित के साहित्यकार केशवदास ने 'कविप्रिया' में मध्यप्रदेश के भौगोलिक विस्तार की चर्चा करते हुए इसमें सातौपुरी सबतीरथ, गंगादिक नदी तथा गोपाचल गढ का उल्लेख किया है। कालान्तर में बृजभाषा के विस्तार क्षेत्र में ग्वालियर का उल्लेख बार-बार मिलता है। 'वंश भास्कर' के रचयिता सूरजमल्ल ने एक दोहे में दिल्ली और ग्वालियर के बीच के प्रदेश को ब्रज भाषा का क्षेत्र माना है जो निम्न दोहे से स्पष्ट हो जाता है-

पुर दिल्ली और ग्वालियर
बीच ब्रजादिक देस।
पिंगल उपनायक गिरा
तिनकी मधुर बिसेस।।

इसी प्रकार आइने अकबरी में भी ब्रज भाषा के विस्तार क्षेत्र में ग्वालियर का उल्लेख है।[22] इसी प्रकार जियाउद्दीन, प्रसिद्ध भाषा शास्त्री ग्रियसैन, श्रीनारायण चतुर्वेदी ने भी उसमें ग्वालियर को सम्मिलित माना है।[23] तथापि ग्वालियरी भाषा की स्वतंत्र स्थापना के प्रमाण भी उपलब्ध है। अगरचन्द नाहटा ने अपने लेख 'ग्वालियर हिन्दी का प्राचीनतम ग्रंथ' में गोपाल कवि लिखित 1619 ई. के एक ग्रंथ का उल्लेख किया है। इस ग्रंथ का टीकाकार जयकीर्ति ने 'ग्वालेरी यभाषा के एक दोहे का उल्लेख किया है जिसमें - ग्वालेरी' भाषा का 'इसरवार' कहा है।[24] इस प्रकार मध्ययुग में ग्वालियर में हिन्दी में जो भी साहित्य रचा गया उसमें भाषा का स्वरूप ग्वालियरी भाषा के रूप में प्रस्तुत हुआ जो स्थानीय बोली के साथ-साथ बुंदेली, ब्रज, अपभ्रंश का समन्वित रूप था तथा जो कालान्तर में सूर-तुलसी के भाषा सौन्दर्य का भी आधार बना यही अत्याधिक गर्व का विषय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. द्विवेदी, हरिहर निवास - मनीषा - पृष्ठ क्रमांक 04
2. द्विवेदी हरिहर निवास - गोपाचल आख्यान - पृष्ठ क्रमांक 27
3. द्विवेदी हरिहरनिवास - गोपाचल आख्यान - पृष्ठ क्रमांक 30
4. ग्रान्ट एण्ड डफ - हिस्ट्री ऑफ दी मराठाज - पृष्ठ क्र 420
5. वर्मा राजकुमार - हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - पृ0क्र 307
6. द्विवेदी हरिहर निवास - मंझन के गुरू शेख गौस- भारती - अप्रेल 1957
7. पाण्डेय श्याम मनोहर - मंझन का जीवन वृत्त त्रिपथगा - जुलाई अगस्त 1959 पृ0क्र 111
8. उपाध्याय, शिवनाथ - मंझन कृत मधुमालती का रचना स्थल- मनीषा - पृ0क्र0 132
9. नाहटा, अगरचन्द - दलपतिराय कृत ग्वालेरी भाषा व्याकरण- ग्वालियर दर्शन - पृ0क्र0 136
10. वृहस्पति, कैलाशचन्द - भारत का संगीत सिद्धांत - पृ0क्र0 311
11. द्विवेदी हरिहरनिवास - महाकवि विष्णुदास कृत महाभारत- पृ0 क्र0110
12. द्विवेदी, हरिहरनिवास - छिताई चरित - पृष्ठ क्रमांक 31
13. माहौर, भगवानदास - हिन्दी का प्रथम महाकाव्य- विष्णुदास की 'महाभारत' - मनीषा पृ0क्र0 34
14. द्विवेदी, हरिहर निवास - छिताई चरित - पृ0क्र0 13
15. आर्य, ओमप्रकाश -मध्यकालीन हिन्दी और पंजाबी प्रेमोख्यान- पृ0क्र0 33
16. अग्रवाल, वासुदेव शरण - पद्मावत -पृ0क्र0 33
17. द्विवेदी, हरिहर निवास - ग्वालियर के तोमर - पृ0क्र0 145
18. सक्सेना, बाबूराम - दकिनी हिन्दी - पृ0क्र0 32
19. तिवारी, उदयनारायण - हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास - पृ0क्र0210
20. मिश्र, विश्वनाथ प्रसाद - केशव ग्रंथावली खण्ड3 वीर चरित्र - पृ0क्र0477
21. जहांगीर नामा - अनुवाद ब्रजरत्नदास - काशी नागरी प्रचारिणी सभा - पृ0क्र0 45
22. अबुल फजल - आइने अकबरी - 7पृष्ठ क्रमांक 183
23. ब्रज भारती - विक्रमसंवत 2004 वर्ष 5 संख्या - पृ0क्र0 03
24. मिश्र ऐवं शर्मा - प्राचीन ग्वालियर के सीमान्तों के पुरातात्विक, पुरातन- भौगोलिक एवं ऐतिहासिक आधार ग्वालियर दर्शन - पृ0क्र0 277

****

पूर्व मध्यकालीन साहित्य में गणपति

डॉ. मनीषा पाण्डेय *

प्रस्तावना – मानव जब पूर्ण रूप से सभ्य बना और अपनी दैनिक खानपान की आवश्यकताओं की पूर्ति कर चुका तब उसने चिंतन की ओर ध्यान दिया। भारत वर्ष ही ऐसा प्राचीन सुसभ्य देश है। जहॉ इस ओर सबसे पहले ध्यान दिया गया और अद्यावधि इस पक्ष पर अनवरत भारत में दिया जाता है। अपने इसी चिन्तन और विचार के आधार पर भारत वासियों ने इस संसार का संचालन करने वाली अदृश्य शक्ति के विषय में भी सोचना प्रारम्भ किया। अन्ततः सर्व शक्तिमान सत्ता के विषय में सोचकर यह ज्ञान प्राप्त कर लिया कि इस सृष्टि का संचालन करने वाली एक महान शक्ति है। मानव ऐसी शक्तिशाली शक्ति से भयभीत हो उठा। कहीं वह शक्ति अप्रसन्न न हो जाए। उसको प्रसन्न रखने तथा मानव पर उसकी कृपादृष्टि बनी रहे , इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर उसके अस्तित्व की कल्पना मानव सभ्यता की प्रारम्भिक काल में कभी पशु पूजा के रूप में की गयी। जो कालान्तर में मूर्ति पूजा के रूप में विकसित हुई। विचार तथा चिन्तन के पश्चात आत्मानुभूति के लिये जब किसी आधार की आवश्यकता हुई, तो दृश्य प्रतिमाओं का निर्माण किया गया। क्योकि बिना आधार के ध्यान अथवा चित्त को एकाग्र नही किया जा सकता था।

गणपति शब्द सर्वप्रथम ऋग्वेद में प्राप्त होता है। यहा गणपति शब्द बृहस्पति के लिए प्रयुक्त है। जो मंत्रो कम अधिपति है। ऐतरेय ब्रह्मांड में भी बृहस्पति की उपाधि 'गणपति' मिलती है। इन्द्र मरूत को भी गणपति के उपाधि से विभूषित किया गया है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में गण शब्द के अनेक प्रयोग प्राप्त होते है। ई0पू0 छठि शती के बौधायन धर्म सूत्र में गणेश के तर्पण का उल्लेख हुआ है। इसी प्रसंग में गणेश के अनेक नामो की चर्चा की गयी है। जैसे विघ्न विनायक, गजमुख, एकदन्त, वक्रतुण्ड ,लम्बोदर इत्यादि नामो से संबोधित किया है। ऐसा भी विश्वास होता है कि पौराणिक युग में गणपति या गणेश के जिस स्वरूप का विकास हुआ है। उनके अनेक तत्वों की कल्पना छठी शती ई0पू0 के लगभग कर ली गयी थी।

'ऊँ0 कारमाद्य प्रवदन्ति संतो वाच श्रुतिनामपियं गृणन्ति।
गजानन देवगणात्रतइध्निं भजेडहमर्धेन्दु कृतावंतसम्।।'

प्राचीन संस्कृत साहित्य के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति में श्री गणेश जी का स्थान सर्वोपरि है। हिन्दू धर्म का कोई भी धार्मिक कार्य हो, उसका प्रारम्भ श्री गणेश नमन से ही होता है। 'श्री गणेशाय नमः।' हिन्दू धर्म में तैतीस कोटि देवता है, किन्तु प्रत्येक देवता की पूजा में अग्रस्थान श्री गणेश देवता का ही है। श्री गणेश तो देवताओं को भी वरदान देने वाले देवता है, स्वंय श्री गणेश ऊँ0कार स्वरूप है। वेद में भी गणानात्वां गणपति हवामहे। इत्यादि मन्त्र में गणपति का अर्थ ग्रहण किया गया है। यजुर्वेद में इन्हें गणपति, प्रियपति एवं निधि पति के रूप में आहूत किया गया है। ये प्रथम पूज्य है, गणेश विध्नेश है साथ ही विद्या–वारिधि और बुद्धि विधाता भी है, स्वास्तिक चिन्ह श्री गणपति का स्वरूप है और दो–दो रेखाएँ श्री गणपति की भार्यास्वरूपा सिद्धि–बुद्धि एवं पुत्र स्वरूप लाभ और क्षेम है। श्री गणपति का बीजमन्त्र है– अनुस्वारयुक्त 'ग' अर्थात 'ग' इसी 'ग' बीजमन्त्र की चार संख्या को मिलाकर एक कर देने से स्वास्तिक चिन्ह बन जाता है। इस चिन्ह में चार बीजमन्त्रों का संयुक्त होना श्री गणपति की जन्मतिथि चतुर्थी का द्योतक है। श्री गणपति बुद्धि प्रदाता है। इनका पूजन सिद्धि बुद्धि, लाभ और क्षेम प्रदान करता है, यही भाव स्वास्तिक के आस–पास दो–दो खडी रेखाओं का है।

संस्कृत मध्यकालीन साहित्यों में गणपति के स्वरूप – भारतीय संस्कृति में सभी मांगलिक अवसरों पर गणेश का चित्रांकन तथा मंगल कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व गणेश की पूजा होती है। गृह के मुख्य द्वार पर गणेश का अंकन किया जाता है। मंगल कार्य प्रारम्भ होने से पूर्व सर्वप्रथम सभी देवताओं के पूर्व गणेश की ही पूजा की जाती हैं क्योंकि इनको विध्नहर्त्ता या विध्न विनायक माना जाता है। अतएव इस भय से किसी भी मंगल कार्य में कोई विध्न बाधा न आए, गणेश का पूजन कर उनके सम्पूर्ण विध्न बाधाओं को हर लेने की प्रार्थना की जाती है।

वेदों में श्रीगणेश जी के 51 रूपों की व्याख्या की गयी है। जैसे बाल गणपति, तरूणगणपति, शक्ति गणपति, वीर गणपति, सिद्धि विनायक , इत्यादि। चित्रकला में श्री गणेश की सिद्धि गणपति या विध्न विनायक रूप में चित्रांकन हुआ।

प्राचीन संस्कृत साहित्य के विकास क्रम में पूर्व मध्यकालीन एवं मध्यकालीन संस्कृत साहित्य भी गणेश की स्तुति का विस्तृत विवरण मिलता है।

श्री तत्व निधि, मन्त महोदधि, मन्तरत्नाकर, रूपमण्डन, शिल्परत्न, मंत्रमहार्णव, अंशमद्भेदागम, उत्तर कामि कागम सुप्रभेदागम आदि ग्रन्थों में गणेश के विभिन्न स्वरूप है। वे जगत के कारण है।

गणेश के प्रतीकात्मक स्वरूप –

गणेश का लाल वर्ण – श्री गणेश के शरीर का रंग, लालवर्ण का प्रदर्शित किया जाता है, और भारतीय के भित्त चित्रों में भी श्री गणेश जी का लाल रंग में चित्रण हुआ है। लाल रंग श्री गणेश जी का सर्वश्रेष्ठ देवता होने का प्रतीक है, क्योंकि लाल रंग समस्त रंगों में सर्वोत्तम माना जाता है।

स्थूलकाय शरीर – श्री गणेश के स्थूलकाय शरीर एवं गजानन और गज–सुण्ड का होना भी कई विद्धानों के अनुसार अनेक प्रतीकात्मक अर्थ रखते है। श्री गुरूदत्त के अनुसार–गणेश शब्द से विदित होता है कि यह गणपति अर्थात गिनतियों (अंको) का स्वामी है। दूसरे शब्दों में वह धनाध्यक्ष है क्योंकि यह धनधान्य के प्रदाता है। संसार के अनुपम भण्डार स्वरूप इनका पेट बड़ा शरीर मोटा और हाथी की भॉति बृहद कान बनाया गया है। साधु सुदर्शन के विचारनुसार श्री गणेश जी का स्थूल शरीर ब्रहमाण्ड की सम्पूर्णता का द्योतक है।

मस्तक पर चन्द्र – श्री गणेश जी के सिर पर अथवा माथे पर चन्द्र को एक अलंकरण के रूप में बनाया जाता है। गणेश का यह चन्द्राभूषण अमरत्व की

* अतिथि विद्वान (इतिहास) नवीन शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला – उमरिया (म.प्र.) भारत

सुधा का प्रतीक है। इन्हें त्रिनेत्रधारी भी दिखाया जाता है। तीसरा नेत्र अंतर्ज्ञान अंत:बुद्धि का सूचक है। इसके अतिरिक्त तीसरा नेत्र यह भी इंगित करता है कि ज्ञात और अज्ञात , अगोचर या गोचर सभी पदार्थ देवता के लिए एक समान है।

गणेश के प्रमुख आयुध – श्री गणेश विध्नों के नाशक है। उनके असंख्य आयुध है, जिनका उपयोग निस्संदेह विध्नों को नष्ट करने के लिए निरंतर होता रहता है। प्रधान रूप से आयुध दस कहे गए है। वे वज्र , शाक्ति , दण्ड, खड्ग, पाष , अंकुश, गदा, त्रिशूल , पद्म, और चक्र है। शक्ति और गदा की गणना स्त्रीलिंग में है। चक्र और पद्म नपुंसकलिंग में परिगणीत है तथा शेष छ: आयुध पुलिंग में गणित है।

अंकुश आयुध – श्री गणेश जी के हाथ उपर्युक्त दस आयुधों से विभूषित होने के साथ ही ध्वजा, बाण, धनुष , कमण्डल, इक्षुदण्ड, दन्त मुद्रर आदि से भी युक्त है। तथा वे श्री गणपति अनेक श्री विग्रहों में वर्णित है। श्री गणेश जी के प्राय: सभी श्री विग्रहों के हाथ में अंकुश रहता है। श्री गणेश जी अंकुश अपने पिछले दाहिने हाथ में धारण करते है। एलीमेंण्ट्स ऑफ हिन्दू आइकोनो ग्राफी के प्रथम खण्ड में उल्लेख है कि कालडी में श्री शारदा देवी के मंदिर में स्थापित श्री गणेश विग्रह के पिछले दाहिने हाथ में अंकुश शोभित है यह उन्मत्त उच्छिष्टगणपति का विग्रह है। अंकुश की गणना पुल्लिंग आयुधों में है।

पाशआयुध – श्री गणेश जी के शोभित दूसरा प्रधान आयुध पाश है। उपर्युक्त कालडी स्थित शारदादेवी के मंदिर में विद्यमान गणेश–विग्रह के पिछले बाये हाथ में पाश का निरूपण किया गया है। रूपमण्डन में भूषण रूढ़ हेरम्ब गणेश के बायें हाथ में पाश का वर्णन मिलता है। पाश को सात कंणों से युक्त नरसर्पाकर एवं पुच्छ युक्त बताया गया है।

बेताल आयुध – श्री गणेश जी का हाथ बेताल से शोभित रहता है। बीरविध्नेश के 16 हाथों में से एक में बेताल है। गदा दस आयुधों में से एक है। गदा की गणना स्त्रीलिंग आयुधों में है। इसका वर्ण पीत कहा गया है। एलिमेंन्ट्स ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी के प्रथम खण्ड में उल्लेख है कि वराह पुराण में गदा को अर्धम का नाश करने वाला कहा गया है।

शक्ति आयुध – स्त्री आयुध है। शक्ति का वर्ण लाल होता है और वृक उसका वाहन है। गणेश जी के चारों हाथों में खड्ग खेट, धनुष और शक्ति होने का उल्लेख गणेश पुराण में उपलब्ध होता है।

वज्र पुरूष आयुध – वज्र पुरूष आयुध है। 'एलिमेंट्स' ऑफ हिन्दू आइकनोग्राफी के प्रथम खण्ड में उल्लेख है कि विध्नेश्वर प्रतिष्ठा विधि में शक्तिगणपति का जो ध्यान वर्णित है, उसके अनुसार उनका रंग अस्त कालीन सूर्य के समान होता है। तथा उनके हाथ पाश और वज्र दस आयुधों में से एक है। पुराणों में गणेश जी को दस आयुधों से विभूषित कहा गया है।

दण्ड पुरूष आयुध – दण्ड पुरूष आयुध है। यह पुरूष के आकार का है, इसका कृष्ण–काला वर्ण है तथा इसके नेत्र लाल है।

चक्र आयुध – श्री गणेश जी के हाथ में चक्र शोभित रहता है। चक्र नपुसंक आयुध है। 'उत्तरकामिकागाम' के अष्टषष्टितम पटल में चक्र को नपुसंक आयुध ही कहा गया है। 'एलिमेंन्ट्स हिन्दू ऑफ आइकोनोग्राफी' के प्रथम खण्ड में चक्र को पुरूष आयुध स्वीकार किया गया है। उसके नेत्र गोल होते है तथा वह अनेक आभूषणों से अलंकृत होता है। उसके हाथ में चावर रहता है। तेनकाशी के विश्वनाथ स्वामी–मंदिर में स्थापित लक्ष्मीगणपति के हाथ में चक्र स्थित है। विध्नेश्वर गणपति के हाथ में चक्र रहता है।

शंख पुरूष आयुध – शंख पुरूष आयुध है। यह दिव्य पुरूषकार है तथा शुक्ल वर्ण का है। इसके नेत्र देखने में सुंदर है। भुवनेशगणपति के हाथ में शंख विभूषित रहता है। इसे अविद्या का नाशक कहा गया है। 'एलिमेंन्ट्स ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी' में उल्लेख है कि वराह पुराण में शंख का अविद्यानाशक के रूप में वर्णन है।

खड्ग पुरूष आयुध – खड़ग पुरूष आयुध है। इसका शरीर श्याम वर्ण है तथा इसके नेत्र क्रोध युक्त है। खड़ग अज्ञान का नाश करता है। वीर विध्नेश्वर को खड्गयुक्त निरूपित किया गया है। उक्त संदर्भ में गणेश जी के हाथों को खेट , खटवांग और मुग्दर इत्यादि से विभूषित कहा गया

मोदक पात्र – श्री गणेश जी को मोदक प्रिय कहा जाता है। वे अपने एक हाथ में मोदक पूर्ण पात्र रखते है। 'मंत्रमहार्णव' में एक ध्यान में श्री गणेश की सूँड के अग्र भाग पर मोदक भूषित है। मोदक को महाबुद्धि का प्रतीक बताया गया है। 'एलिमेंन्ट्स हिन्दू ऑफ आइकोनोग्राफी' में उल्लेख है कि त्रिवेन्द्रम् में स्थापित केवल गणपति मूर्ति के हाथों में अंकुश, पाश, मोदक धारी और दॉत शोभित है। मोदक आगे के बॉये हाथ में सुशोभित है। मोदक धारी गणेश का चित्रण मिलता है। पद्मपुराण के सुष्टिखण्ड में उल्लेख है कि मोदक का निर्माण अमृत से हुआ है।

गजमुख का प्रतीकात्मक स्वरूप –हाथी की उत्पत्ति सम्बंधित कई कथाएं है। सृष्टि का सर्वप्रथम हाथी ऐरावत माना गया है, जो इन्द्र का वाहन है। इसकी उत्पत्ति समुद्र मंथन के फलस्वरूप हुयी जो 14 रत्नों में से एक था। हाथी की उत्पत्ति के सम्बंध में एक दूसरी कथा मोंतग लीला में भी मिलती है। इसके अनुसार ऐरावत की उत्पत्ति ब्रह्मा के दॉये हाथ में पकडे हुए दिव्य पक्षी गरूण के अण्डार्थ से हुई थी। इसी के बाद सात अन्य नर हाथी उसी अण्डार्थ से पैदा हुए और ब्रह्मा के बॉये हाथ के अण्डार्थ में से आठ मादा हथनियॉ निकली यह आठ–हाथी हथनियॉ दिग्गज कहलाएँ। ऐसी मान्यता है कि आठों दिशाओं के यह हाथी आकाश रूप चादर को अपने पैरों से दबाए है। एच.जिम्मर ने अपनी पुस्तक 'मिथ्स एण्ड सिम्बल्स इस इण्डियन आर्ट एण्ड सिविलाइजेशन' तें ऐरावत की उपस्थिति से संबंधित इस कथा का वर्णन किया गया है।

भारतीय देवों में गणेश जी का विशिष्ट स्थान है। इस विशिष्टता का मुख्य कारण यह है कि वे पांच उदात्त तत्वों के समन्वित रूप है। ये तत्व है – 1 शौर्य–साहस , 2 आनन्द–मंगल , 3 बुद्धि , 4 कृषि तथा 5 व्यवसाय–वाणिज्य। यहॉं हम इन पांच तत्वों का संक्षिप्त विवेचना करेंगे।

1. शौर्य– साहस – अमरकोश में गणेश जी के आठ नाम इस प्रकार दिये गये है–

प्रथम दोनों नाम , विनायक एवं विध्नराज , गणेश जी के शौर्य–साहस तथा तज्जनित नेतृत्व के परिचायक है। उनकी युद्धप्रियता का भाव उनके लिए प्राचीन साहित्य में प्रयुक्त 'हेरम्ब' (युद्ध में नाद करने वाला) संज्ञा से होता है गणेश जी की असाधारण वीरता तथा साहस के कारण उन्हें शिवगणों के नायकत्व का पद प्राप्त हुआ। विनायक – शब्द गणेश के यक्षों–जैसी भयंकरता की ओर भी इंगित करता है। मानवगृह सूत्रों, महाभारत, आदि ग्रंथों में विध्नकारी विनायकों के उल्लेख मिलते है।

आनन्द मंगल – विध्नराज के अनन्तर गणेश जी का दूसरा रूप विध्नहर्त्ता सामने आता है। यह उनका मनोहर रूप था। इसी रूप में वे पार्वती शिव के पुत्र प्रख्यात हुए। अब वे कल्याण एवं मंगलकारी प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि माने गये। गोस्वामी तुलसीदास जी ने उनकी मोदक प्रिय मुद मंगल–दाता छवि की वन्दना की है। याज्ञवल्क्य–स्मृति में अम्बिका–पुत्र के रूप में विनायक का उल्लेख है।

बुद्धि – गणेश जी बुद्धि के भी प्रतिनिधि देवता मान्य हुए। वैदिक साहित्य में गणपति शब्द आया। इसका प्रयोग अग्रपूज्य देव के लिए मिलता है, तथा गणानात्वां गणपति हवामहें। कवि कवीनाम, (ऋग्वेद 2-23-1) और नमो गणेभ्यों गणपतिभ्यश्च वो नमों (यजुर्वेद 16-26) आदि। यहॉ गणपति शब्द बाग्देवता के लिए प्रयुक्त हुआ है।

कृषि – कृषि के प्रारम्भिक देवता इन्द्र है। वे उस वर्षा के प्रतिनिधि है, जो भूमि को उर्वरा बनाती है। भूमि, अन्न, जल, वनस्पतियों तथा खनिज प्रदार्थो का अक्षय भंडार है।इसीलिए उसे हमारे यहॉ माता कहा गया है। माता भूमि: पुत्रोडहं पृथिव्या: (अथर्ववेद)। भारतीय साहित्य और कला में 'गजलक्ष्मी' की कल्पना मिलती है। अनके मूर्तियों में दो हाथियों द्वारा जलपूरित कलशों से लक्ष्मी देवी का अभिषेक मिलता है। यहॉ लक्ष्मी पृथ्वी की द्योतक है और हाथी (ऐरावत) इन्द्र के प्रतिनिधि है।

व्यवसाय – वाणिज्य – खेती के अतिरिक्त अन्य उद्योग धंधों तथा व्यापार द्वारा देश की समृद्धि बढ़ती है और उसका आर्थिक आधार पुष्ट होता है। वाणिज्य के प्रवर्धक रूप में गणेश जी का मान्यता मध्यकाल में बहुत बढी। वे वणिकों के विशेष पूज्य देवता हो गए। कुबेर को हमारे यहां धन का अधिपति माना जाता है। उनका भारी भरकम तोंद वाला शरीर वणिकों द्वारा पूज्य था। कुबेर – जैसी तुन्दिल प्रतिमाएँ गणेश जी की भी बडी़ संख्या में मिली है। इन दोनों देवों में अन्तर यह था कि कुबेर बहुत कम हिलते-डुलते थे, जब कि गणेश जी युद्ध तथा नृत्यादि व्यायामों से मोदक पुष्ट अपने शरीर को कृशकाय बनाने का उद्यम करते रहते थे।

स्मृति युग – याज्ञवल्यस्मृति में वर्णन आया है कि रूद्र और ब्रह्मदेव में विनायक को गणों का नायक बनाकर मध्वयज्ञों में विघ्न करने को नियत किया है। वहां एक ही विनायक का उल्लेख है। उनके छ: नाम कथित हुए। 1 मित, 2 सम्मित, 3 शाल, 4 कटड्क्ट, 5 कूष्माण्ड और 6 राजपुत्र। विनायक की माता का नाम अम्बिका है।

अजितागम में – गणेश की दो प्रकार की प्रतिमाओं का उल्लेख मिलता है।

प्रथम प्रकार में उन्हें विनायक कहा गया है। जिनका मुख भाग हाथी की आकृति का है। जिनकी तीन ऑखें है और सिर पर करण्ड मुकुट धार किये हुए है। जिनके हाथों में कुल्हाड़ी (टंक), पाश, दन्त और लड्डू है। वह एकदन्त और लम्बे होंठ वाले दिखाए गए है तथा नागयज्ञोपवीत धारण किए है व पूरे शरीर पर लाल रंग का वस्त्र धारण किए हुए है।

गणेश का प्रतिहार आयतन – अन्य देवताओं की तरह गणेश के आयतन और प्रतिहारों का विवरण 'रूपमण्डन' में है। गणेश प्रतिहार के अविघ्न, विघ्नराज, सुवक्त्र, बलवान, गजकर्ण, गोकर्ण, सुसौम्य और शुभदायक है। ये सभी चतुर्भुज बामनकार है। 'रूपमण्डन' के पाठ सर्वोच्च वामनाकारा: सौम्याश्त पुरूषाना: के अनुसार सभी प्रतिहार सौम्यमूर्ति है। किन्तु राव महोदय ने भ्रमवश 'सौम्य' को 'असौम्य' समझा है।

श्री तत्वनिधिमें गणेश की बत्तीस प्रकार की प्रतिमाओं का उल्लेख किया गया है। याथा – बालगणपति, तरूण गणपति , भक्त गणपति, वीर गणपति, शक्ति गणपति, द्विजगणपति, सिद्ध गणपति, उच्चिष्ठ गणपति , क्षिप्र गणपति , हेरम्ब् गणपति, लक्ष्मी गणपति ,महागणपति, विजय गणेश, नृतगणपति , उर्ध्व गणपति, एकाक्षर गणपति , वरगणपति, त्रयाक्षर गणपति, क्षिप्र प्रसाद गणपति, हारिद्र गणपति, एकदन्त गणपति, सुष्टि गणपति, उद्दण्ड गणपति, रणमोचक, धंधी गणपति, द्विमुखी गणपति , सिंह गणपति, योग गणपति, दुर्गा गणपति और संकट हरण गणपति।

बौद्ध धर्म में गणपति – छठी शताब्दी ईसा पूर्व में जन भारतीय समाज वैदिक धारा की विभिन्न कथाओं एवं कर्मकाण्डों में लिप्त था, तब महात्मा बुद्ध ने अपने ज्ञान-दीप से समाज को प्रकाशित करने का कार्य किया महामान बौद्ध धर्म में इस हिन्दु देवता को सर्वाधिक उदारता के साथ ग्रहण किया गया है।

विदेशों में गणपति का प्रसार मुख्यत: इसी सम्प्रदाय द्वारा किया गया है। परम्परानुसार गणपति हद्या मंत्र नमों भगवते आर्य गणपति हद्याय राजग्रह में स्वंय महात्मा बुद्ध द्वारा अपने प्रिय शिष्य आनंद के लिए उदघाटित किया गया था।

निष्कर्ष – इस प्रकार मध्यकालीन साहित्य के विवरण से यह स्पष्ट है कि प्राचीन साहित्य की तरह मध्यकालीन भारतीय साहित्य में भी गणपति जी को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। उपर्युक्त वैदिक प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध होता है कि गणेश जी वैद्धिक देवता है। वेदों और उपनिसष, पुराणों आदि में गणेश जी के तत्त पुरूष, एकदन्त, हस्तमुख, वक्रतुण्ड, दंति, कराट, आदि अनेक नाम आयें है। जो गणेश जी के ही पर्यावाचक नाम है। और वे सभी नाम गणेश जी के स्वरूप व महत्व को व्यक्त करते है। एवं भक्तों के लिए शुभ और लाभप्रद है। गणेश विध्नों को नाश करते है। और मनोकामनाओं की पूर्ति करते है। अत: गणेश घर-घर के देवता है। जन-जन के आस्था के प्रतीक गणेश लोक कल्याणकारी गण देवता है। मांगलिक कार्य के सकुशल एवं निर्विध्न सम्पन्न होने हेतु आमंत्रण-पत्र का शुभारम्भ ही गणेश के चित्र या उनके ध्यान मंत्र से किया जाता है। इस कारण इस विषय का चयन करके साहित्य सामग्री से अभिभूत और अनुप्रमाणित हो सर्व विध्न विनाशक, विमल, बुद्धि प्रदायक सर्वसिद्धी सदन गजवदन भगवान गणपति की कृपानुकम्पा और इन्हीं के प्रेरणा से ही पूर्ण मध्यकालीन साहित्य में गणपति में लिखकर में आनंद का अनुभव करती हूँ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बनर्जी जे. एन. डी. एच. आई. पृ. 359
2. गेटी गणेश पृ. 261
3. गेटी गणेश पृ. 261
4. साधु सुदर्शन, हिन्द, देववाद में प्रतीकात्मकता भवन जनरल 8,1971
5. एम0बी0 श्री दन्त शर्मा बल्लमेश्वर भवन जे0 अगस्त 25,1968
6. क्रियाक्रमद्यौति।
7. विष्णु धर्मेत्तर पुराण।
8. विष्णु धर्मोत्तर पुराण 3-11-13
9. खड्गखटेधुन: शक्ति शोमिचारूचतुर्मजम्। उपा0 12-35
10. गणेश पुराण उपा0 21/31
11. गणेश पुराण आ0 (65-/6,9-11)
12. भण्डारकर , वैष्णिविज्म , शैविज्म एण्ड माइनर रीलिजियस सिस्टम पु. 148
13. यदुवंशी , शैवमत पृ. 50
14. ऐलिस गेठी, गणेश पृष्ठ 23
15. मिश्र, नेपालीज , बुद्धिस्ट लिटरेचर पृष्ट 89
16. भट्टाचार्य इण्डियन बुद्धिस्ट आइकोनोग्राफी पृ. 157
17. भट्टशाली आईकोनोंग्राफी ऑफ बुद्धिस्ट एथ ब्रह्मनिकल स्कल्पचर्स इन ढाका म्यूजियम कलक 23 (अ.स.)

****

रीवा राज्य के कलचुरि

सुभाष कुमार तिवारी *

प्रस्तावना – सोलहवीं शताब्दी के अन्त में आए हुए कलचुरि परिवार को उनकी वीरता के कारण शीघ्र ही राज्य में सम्मान पूर्ण स्थान प्राप्त हो गया। रीवा राज्य के तत्कालीन प्रधान शत्रु सेंगर ठाकुर थे, जिनका अधिकार क्षेत्र मनगवाँ और उसके आस-पास तक था। इसलिए उनसे राज्य की रक्षा के लिए कल्चुरियों को रहने के लिए राज्य की इसी सीमा पर विभिन्न स्थान दिये गए।

पटना शाखा – नीलकंठ देव तो अपने जीवन काल में भोलगढ़ में ही रहे। उनके बड़े पुत्र हिम्मतराय की संतान को जोन्ही तथा कुछ अन्य गाँव दिए गए, पर उन्होंने अपने अन्य भाईयों के निकट पटना गाँव में ही रहने का निर्णय किया, बाद में यह गाँव उनके वंशजों की सेवा के बदले उन्हें मिल गया। हिम्मतराय के द्वितीय पुत्र जोरावर सिंह को उनकी युद्ध सेवा के लिए रामनई गाँव प्राप्त हुआ था। कुछ पीढ़ियों तक घटना में रहने के पश्चात् उनके वंशज विशेसर सिंह ने पटना छोड़कर रामनई में रहने का निश्चय किया, किन्तु उनके दत्तक पुत्र नरहर सिंह और उनकी पत्नी स्वर्गवास के पश्चात् रीवा नरेश महाराज व्यंकटरमण सिंह ने उनकी पत्नी के दत्तक पुत्र रंगदेव सिंह को उनका उत्तराधिकारी स्वीकार नहीं किया। फलत: रामनई की समस्त सम्पत्ति राज्य में सम्मिलित कर ली गई। तब रंगदेव सिंह और उनके वंशज रामनई छोड़कर हनुमानपुर गाँव में रहने लगे। सन् 1796 में हुई नैकहाई की लड़ाई में इस शाखा के लोगों ने बड़ी वीरता दिखाई। बहादुर सिंह ने ही सर्वप्रथम युद्ध करने का बीड़ा उठाया था। अजीत फतेह में निम्न वीरों का उल्लेख है- श्याम साहि, बहादुर सिंह, अभिमान सिंह।

रायपुर शाखा – नीलकंठ देव के द्वितीय पुत्र साहेबराय के वंशज रायपुर ग्राम में रहने लगे। इस परिवार की काफी वृद्धि हुई। इस ग्राम का नाम रायपुर होने के संबंध में यह प्रश्न उठता है कि क्या यह नाम रत्नपुर की दूसरी शाखा रायपुर के नाम से संबंधित है। इस संबंध में स्पष्ट कुछ नहीं कहा जा सकता है किन्तु किवदन्ती के अनुसार कल्चुरियों के आने से पहले से ही ग्राम के पुराने वासी रायजादा लोगों के कारण इस ग्राम का नाम रायपुर रहा। अजीत फतेह में इस शाखा के निम्न वीरों का उल्लेख है- कलन्दर सिंह, संग्राम सिंह, मेहरबान सिंह, उम्मेद सिंह।

खुझ शाखा – नीलकंठ देव के चतुर्थ पुत्र चिन्तामणिराय की संतान रायपुर के निकट ही खुझ ग्राम में बसी। इस परिवार में अधिक वृद्धि तो नहीं हुई किन्तु इसका इतिहास भी वीरता के लिए प्रसिद्ध है। अजीत फतेह में इस शाखा के निम्न वीरों का उल्लेख है- खुमान सिंह।

डिहिया शाखा – नीलकंठ देव के तृतीय पुत्र हिमंचल शाह का परिवार रीवा से 6 मील दूर वर्तमान रीवा-शहडोल राजमार्ग पर डिहिया ग्राम में बसा। इस वंश की अच्छी वृद्धि हुई और तीनों ग्राम के परिवार से इनका बराबर संबंध बना रहा और अब भी प्राय: वैसा ही है। अजीत फतेह में इस शाखा के निम्न वीरों का उल्लेख है- हरिवंश राय, भगवान सिंह, वीर सिंह, रक्षपाल सिंह, खेत सिंह, मणेश सिंह, पृथ्वीपाल सिंह, सुजान सिंह।

भाईयों का परिवार–रायपुर में एक कल्चुरि परिवार और है जिसे भाईयों का परिवार कहते है। यद्यपि ये नीलकंठ देव के वंशज नहीं हैं पर इनका सम्मान परिवार के बीच कम नहीं है। इनका प्रमाणिक इतिहास तो प्राप्त नहीं है पर ऐसा जान पड़ता है कि नीलकंठ देव के साथ जो और कल्चुरि रत्नपुर से आए उन्हीं के ये वंशज है। इन्हें भाई का दर्जा मिला और भाई वाले काम में पीछे भी कभी नहीं रहे। युद्धों में सदा साथ रहे और वीरता के लिए विख्यात रहे हैं। सैनिक के रूप में इनकी प्रतिष्ठा सदा से है। इस वंश के लोग वर्तमान समय में भी भाई ही कहे जाते हैं और कृषि तथा शिक्षा के क्षेत्र में उन्नत अवस्था में हैं।

बावनी या सरयूपार के कल्चुरि – उक्त परिवारों के अतिरिक्त रायपुर और डिहिया में एक तीसरा कल्चुरि परिवार और भी है, जिन्हें बावनी कहते हैं। ऐसा जान पड़ता है कि ये इस गाँव में उक्त दोनों परिवारों के पश्चात् आए। पूर्व चर्चित पण्डित गया प्रसाद त्रिपाठी के लेख के अनुसार ये लोग उस वंश के हैं, जो संवत् 1313 वि. में रत्नपुर से असंतुष्ट होकर उत्तर की ओर सरयूपार में चले गए थे और वहाँ चेरु जाति के लोगों को हरा कर वहीं बस गये थे। यह बताया गया है कि महिष्मती से आरम्भ हुए कल्चुरि वंश से बावनवी पीढ़ी में भूपति देव हुए, उन्हीं के वंशज होने के कारण ये अपने को बावनी कहने लगे। यह बात असंदिग्ध है कि रायपुर ग्राम में यह परिवार नीलकंठ देव के वंशजों के पश्चात् आकर बसा है। ये लोग युद्ध में अन्य कल्चुरि परिवारों के साथ वीरता पूर्वक लड़ते रहे हैं, और रीवा राज्य की सेना में इस परिवार के सैनिक अपेक्षाकृत अन्य कल्चुरि परिवारों की तुलना से अधिक संख्या में रहे हैं क्योंकि सैनिक सेवा ही इनका प्रधान पेशा रहा है। सम्प्रति यह परिवार पीछे लिखे चार घर से प्राय: घुल मिल गया है और इस परिवार ने कृषि, शिक्षा आदि कार्यो में अच्छी प्रगति की है। रीवा राज्य में आए हुए कल्चुरि परिवारों ने गत तीन सौ वर्षो में इस राज्य में धर्म, विद्या और कला के संबंध में अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। यहाँ आने पर 'कल्चुरि' वर्ण विपर्यय से कर्चुलि और स्वर लोप से कर्चुली हो गया। अत: अब ये कर्चुली कहलाते हैं। नीलकंठ देव जिस समय रत्नपुर छोड़कर रीवा आए, उत्तर भारत में वैष्णव धर्म का बोलबाला था। रीवा नरेश भी वैष्णव थे। स्वभावत: इसका प्रभाव नवागतों पर भी पड़ा और ये भी धीरे-धीरे वैष्णव हो गए। अस्तु सम्पर्क के प्रभाव से ये लोग प्रधान रूप से विष्णु के उपासक और गौण रूप से शैव्य हो गए जैसा कि यहाँ इनके रायपुर, पटना आदि में बनाये मन्दिरों से ज्ञात होता है।

* शोधार्थी (इतिहास) श्री गुरू सदन वार्ड नं. 13 घरौला, शहडोल (म.प्र.) भारत

अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी का काल इस राज्य का असुरक्षा काल था। बाहर से शत्रुओं के आक्रमण होते रहते थे और राज्य के भीतर भी अशान्ति रही आती थी। इसीलिए कल्चुरि या कर्चुली वीरों को भी जो इस राज्य के अंग बन चुके थे, इनमें व्यस्त रहना पड़ता था। इस प्रकार के युद्धों में रीवा के इतिहास में बहुचर्चित युद्ध 'नैकहाई का युद्ध' था।[1] महाराज अजीत सिंह के शासन काल में सन् 1796 में बाजीराव पेशवा के पौत्र अली बहादुर के सेनापति नायक यशवन्तराव ने रीवा पर चढ़ाई की।[2] शत्रु का सामना करने के लिए मंत्रणा आरम्भ हुई। राज्य की सैनिक स्थिति देखते हुए महाराज के सरदारों ने शत्रु से सन्धि का निर्णय लिया। उनकी महारानी कुन्दन कुँवरि को यह निर्णय अनुचित लगा और उन्होंने सरदारों को रण निमंत्रण देकर ड्योढ़ी में बुलवाया और उनके पास पान का बीड़ा और सिन्दूर की डिबिया भेजी जिसका आशय यह था, या तो बीड़ा उठाकर शत्रु से युद्ध करो अथवा सिन्दूर लगाकर जनाने खाने में रहो। इस वृतान्त को रायपुर कर्चुलियान ग्राम के सुप्रसिद्ध कवि स्व. श्री शेषमणि शर्मा 'मणि रायपुरी ने अपने खण्ड काव्य ''द्वितीया' में बहुत ही खूबसूरती से इस प्रकार वर्णित किया है-

अपनी बांदी से रानी ने, ज्यों ही यह सारा हाल सुना।
'कुन्दन कुँवरि नाम जिनका, क्षत्राणि ने निज शीश धुना।।
सरदार वीर सामंतों को, अपनी ड्योढ़ी पर बुलवाया।
सबके हाथों में एक-एक, बीड़ा फिर उसने भिजवाया।।
बांदी से गरज कहा उसने, मेरा संदेशा कह देना।
यदि हो कुछ भी पुरूषत्त्व शेष, तो रण का यह बीड़ा लेना।।
अन्यथा साथ में भेज रही, चूड़ियाँ और सुन्दर सारी।
मैं रण क्षेत्र में जाऊँगी, तुम सब कोई बनना नारी।।

कर्चुली वीर इस अपमान को कैसे सह सकते थे। पटना के सरदार बहादुर सिंह ने आगे आकर युद्ध का बीड़ा उठाया। सेना के एक प्रधान भाग के सेनापति होकर इन्होंने शत्रु पर सामने से धावा किया और बहादुरी के साथ लड़कर, सब के सब वीरगति को प्राप्त हुए। दूसरा दल रायपुर के कलन्दर सिंह कर्चुली के सेनापतित्त्व में पीछे से चोरहटा ग्राम की ओर से गया। उसने सीधे नायक के खेमें पर आक्रमण करके उसे मार डाला। इस युद्ध ने कर्चुली वीरों की धाक राज्य में बहुत अधिक जमा दी। ये शूरवीर ही नहीं प्रशासनिक कार्य में भी दक्ष थे। सारे देश के साथ रीवा राज्य में भी शान्ति का युग आया और उन्नीसवीं शताब्दी के चौथे चरण में राज्य में शिक्षा और सुदृढ़ शासन का काल आरम्भ हुआ। कर्चुलियों में अनेक विद्वान चतुर और योग्य प्रशासक हुये।

सन् 1875 में महाराज रघुराज सिंह ने अपने राज्य का प्रबन्ध ब्रिटिश सरकार को सौंप दिया। सन् 1881 में राज्य के प्रबन्धक सुपरिन्टेन्डेण्ट ने राज्य शासन में सहायता देने के लिए आठ सदस्यों की एक कौन्सिल बनाई। इसमें रायपुर के कर्चुलियों के प्रतिनिधि स्वरूप दो सदस्य सरदार नरहर सिंह और सरदार दल प्रताप सिंह लिए गए। अपने पंचवर्षीय प्रतिवेदन में तत्कालीन सुपरिन्टेन्डेण्ट मेजर डी. डब्लू. के बारे में इन दोनों सदस्यों की योग्यता की बड़ी प्रशंसा की है। इस परिवार में समय-समय पर अनेक संस्कृत के विद्वान ज्योतिषी और कवि हुए हैं। बीसवीं शताब्दी में जब शिक्षा के साधन बढ़े तो इस परिवार ने उसका अधिकतम लाभ उठाया। परिणामस्वरूप कर्चुली परिवार स्नातकों, वकीलों, डाक्टरों तथा इन्जीनियरों से भरा हुआ, इस क्षेत्र में अपना गौरवपूर्ण स्थान बनाए हुए है।

मध्यप्रदेश के उच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश (सेवा. नि.) न्यायमूर्ति गुरु प्रसन्न सिंह इसी परिवार के हैं, जिससे कर्चुली परिवार ही नहीं सारा समाज गौरवान्वित है। रीवा नरेश के दरबार का सबसे बड़ा राजकीय सम्मान जमातदार राज्य के कलचुरि परिवार के चार सदस्यों को प्राप्त था। पटना घराने के नरहर सिंह और रायपुर घराने के संग्राम सिंह, दलथम्मन सिंह और दलबीर सिंह। इस सम्मान से विभूषित सरदारों को रीवा नरेश दरबार में आने पर खड़े होकर सम्मानित करते थे और सरदार श्रीमान् को स्वर्ण मुद्रा में भेंट के रूप में देते थे। इनके वंशज रीवा राज्य की समाप्ति तक इस सम्मान से सम्मानित रहे। जिसमें अन्तिम इन्द्रदेव सिंह, बटुक प्रतात सिंह, यज्ञ प्रताप सिंह और कुशध्वज सिंह थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुरू रामप्यारे अग्निहोत्री - रीवा राज्य का इतिहास, पृ. 69, 71
2. अजीत फतेह या नायक रायसा - दुर्गा दास।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

A Sociological Study On Increasing Juvenile Crimes Rates In Kashmir (Jammu And Kashmir)

Saima Mehraj * Dr. J.K. Patel **

Abstract - Jammu and Kashmir is the northern most State of India, The paper focuses on the condition of juvenile delinquents in India from the standpoint of the provisions guaranteed to them by the Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2000, amended in 2006 and 2011. Many of the issues addressed provide for the similar challenges in many South-Asian countries. The paper analyzes the upper age limit of the Indian juvenile justice system and the gap between theory and practice by looking at the data for 200 juvenile court case files from the Kashmir province juvenile courts and in depth interviews of 400 children (200 Juveniles in Conflict with Law and 200 Children in Need of Care and Protection). The special focus of the paper are the stone-pelting riots, The paper concludes with some recommendations for the Government of India in order to facilitate child-friendly system for Juveniles in Conflict with Law and Children in Need of Care and Protection.
Key word - Delinquents', Child rights, stone pelting, positive youth development, juvenile.

Introduction - Jammu and Kashmir is the northern-most part of India, situated between 32°-15´ and 37°-5´ north latitude and 72°-35´ and 80°-20´ and east longitude. It stretches over an area of 15,853 km giving the appearance of an old lacustrine bed which measures 135 km in length and 14 km at its widest point. Jammu and Kashmir stands 19th State of the country as far as population is concerned with an overall population of 1,25,48,926. It is a zone of armed conflict since 1989 and hence owing to the turbulent history of the region, the legal system in Jammu and Kashmir is not as developed as the rest of the Indian judiciary, and has minimal provisions for the rights to children. This paper is based on a survey of juvenile delinquency and situation of children in the Kashmir region through massive fieldwork encompassing the Courts, adjudication, police and various other departments responsible for protection and development of children in the region. The universe of the study is Kashmir region (10 districts of the region). The sample includes 400 children, 200 juveniles in conflict with law and 200 children in need of care and protection or at-risk children from whom information was acquired through in-depth interviews. The socio-economic profile of these children is presented is very low, Therefore, after presenting the situation of children in Jammu and Kashmir through the statistics of National Crime Records Bureau, the threadbare analysis of juvenile justice system in India will be supported in view of the statistics acquired in the field survey of the Kashmir region.

No Uniform Code - The JJA is applicable to the whole of India except its northern most State, Jammu and Kashmir because of a special status accorded to the State under Article 370 of the Indian constitution. Meant as a temporary provision in 1950, Article 370 of the Indian Constitution allows the State of Jammu and Kashmir unprecedented legal independence with relation to all other regions of India and hence the juveniles of the State come under the purview of the Jammu and Kashmir Juvenile Justice Act 1997 (referred to as JKJJA 1997 henceforth) which is just a reflection of the JJA 1989. Although, JKJJA 1997 was amended in 2013 and renamed as Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2013 but the Act does not fully comply with the provisions of the Central legislation. Owing to the distinctions in the upper age limit of juveniles made by JKJJA 1997 (which fixed the upper age of juvenility for boys to be 16 and for girls to be 18), the juvenile justice system in this part of the country was quite confusing because a boy between 16-18 had to be treated as an adult criminal. Under this section the claim of juvenility can be raised even after disposal of the case18 but the juveniles of the State of Jammu and Kashmir could not take this benefit until 2013.

Age Determination - The JJA requires that any child who has committed an offence and is proved to be under the age of juvenility is to be dealt with under it. But to prove that a child is under the prescribed range of juvenility needs that the juvenile's birth is registered somewhere like birth registration or school registration. There is enormous population in India whose birth is not registered, therefore they lack in having any proof of age. As per NFHS-3 (2005-06), 41 percent of children under age five years have had

***Research Scholar (Sociology) Dr. C.V. Raman University, Kargiroad, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**
****Associate Professor (Law) Dr. C.V. Raman University, Kargiroad, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA**

their births registered with the civil authorities. However, only 27 percent of children under age five years have a birth certificate. In addition, a vast number are those who never attended schools.

Joint Trial of a Juvenile With An Adult - Article 10(3) of the ICCPR and Article 37(c) of the UNCRC require that children should be detained separately from adults or from convicted children, but reports of a failure to separate adults from children in detention facilities are commonplace in India. Article 18 of the JJA provides that there shall be no joint proceeding of juvenile and person not a juvenile. The philosophy of juvenile justice system is undoubtedly based on the concept of diversion which means distracting minors from the formal proceedings of the criminal Courts and helping them avoid criminal contagion so that they realize that life has other options. "Restorative justice is an important component of diversion. This approach focuses on 'restoring' damaged relationships (between victim, offender and community) to the way they were before a crime was committed – to 'make things right as much as possible."41 The problem of joint trials exists throughout India.

No expungement of Records of Conviction - Despite provisions by Article 19(2) of the JJA that that the relevant records of conviction shall be removed after the expiry of the period of appeal or a reasonable period as prescribed, no efforts have been made to conceal the identity of juveniles in conflict with law who are handcuffed and chained and are brought from jails in buses with regular criminals. The reason of expunging records is the idea that the presence of records of any offence committed by the juveniles at the Courts or police stations might lead to their stigmatization. Photographs of children taken through mobiles and cameras have been witnessed during the visits to the Courts in Kashmir.

Absence of Child Welfare Committees (CWCs) - Ironically, Child Welfare Committees have not been constituted in most of the States in India. However, a 2010 report compiled from information provided by the respective State departments/ directorates, reveals the existence of only 516 CWCs across the country (the compilation excludes Uttaranchal and J&K districts), indicating that CWCs have not been formed in over 100 districts. A report in May 2013 by National Commission on Protection of Child Rights says that there are nearly 480 CWCs and close to 400 JJBs in the country and it is estimated that there are 117 million children who are in need of care and protection.51 Further, the NALSA report submitted to the Supreme Court of India shows that as of August 2011, at least 8 of the 33 States/ Union Territories (excluding Arunachal Pradesh and J&K) have not constituted CWCs in every district. For this reason the UNCRC Article 20 and 21, recommends non-institutional care of the children through adoption. Likewise the JJA through its Section 40 stresses rehabilitation and social reintegration of a child which shall begin during the stay of the child in a children's home or special home and the rehabilitation and social reintegration of children shall be carried out alternatively by (i) adoption, (ii) foster care, (iii) sponsorship, and (iv) sending the child to an after-care organisation. JJ (Amendment) Act 2006 has added the option of 'Adoption' of orphaned, abandoned or surrendered children through Article 41 of the Act which remains inapplicable to the State of Jammu and Kashmir

Reasons for Non-Application of Integrated Child Protection Scheme (ICPS) - The ICPS is the main scheme devised in India for the protection and development of children in difficult circumstances. At the moment there are only a total of about 10,000 functionaries i.e. the Probation Officers, Case Workers, Superintendents, Counselors administrative and field staff etc of the ICPS for a population of 170 million children in need of care and protection, which is at the ratio of 1: 17000. Further they still are to have proper orientation, training, knowledge and skills for social investigation reports, counselling, supervision and mentoring.

Reasons for Non-Application of ICPS in Jammu and Kashmir - The ICPS cannot be launched in Jammu and Kashmir as the State government is not well equipped to accommodate the scheme. Some of the reasons is ICPS requires setting up of service delivery structures, that is, State Child Protection Society (SCPS), District Child Protection Society (DCPS), State Project Support Unit (SPSU) and State Adoption Resource Agency (SARA) to manage and monitor the implementation of the scheme.

Underlying Factors of Juvenile Delinquency and Problems of Children in Kashmir - The in-depth interviews with juveniles in conflict with law and children in need of care and protection reveal that the causes of crime by children and against children in Kashmir are social, economic and an outcome of situation of armed conflict. The crimes committed against children in special circumstances in turn, make them more prone to commit crimes. The following Figures will present statistics which corresponds to the data collected from 400 children in Kashmir (200 juveniles in conflict with law and 200 children in need of care and protection).

Social Factors - The adolescents most at risk of coming into conflict with the law are often the product of difficult family circumstances that might include poverty, family breakdown, parental abuse or alcoholism.58 The following Figures show that the familial conditions are to a great extent response.

Economic and Environmental Factors - Statistics on children who are in conflict with law or have fallen into delinquency reveal that they often come from a particular background, or rather are found in a particular background, including growing up in violence and exclusion. 50.25 % of the children apprehended for being in conflict with law in 2013, says the National Crime Records Bureau (NCRB), come from households with an annual income of less than Rs 25000. The data points towards the fact that the poor in

India are the chief committers of the wide range of offences. The NSSO Report shows that in India unemployment is typically higher among youth and educated, particularly among the age group 15-29 years for both males and females and in urban and rural areas the unemployment is significantly higher than the average level of unemployment of all persons.

Police Brutality - The commonality of such events, which are in direct conflict with Article 9, Paragraph 1, of the International Covenant on Civil and Political Rights, prohibiting arbitrary detention and imprisonment of minors, are also contradictory of the rights to prompt access to legal representation and other relevant assistance as stimulated in the same paragraph. The International Human Rights Association of American Minorities (IHRAAM) also emphasizes that the youths detained by the State authorities in Kashmir are not held in the juvenile detention centres that could offer appropriate and separate facilities for minors. However, the trend of illegal arrests of juveniles remains unabated until now. The following Figures show the place and period of detainment of 200 juveniles in conflict with law in Kashmir, 24.50 % of the total have been detained in police stations, observation home and regular jails for very long period. It is absolutely against human and child rights to detain children for such long time.

Conclusion and Recommendations - The profile of the juveniles in India displays that majority of them are living in deplorable and wretched conditions and are truly deprived of developmental opportunities. The JJA has failed, in a number of areas, to bring about any meaningful change due to its fragmented and incomplete implementation. Despite continuous recommendations from international and national organizations like the United Nations, Amnesty International, Asian Centre for Human Rights, National Commission for Protection of Child Rights (NCPCR) etc, the Government of India seems to be totally uninterested in humanitarian treatment of the children. Although, there were seemingly certain positive political and legal developments in 2012 (like suspension of some parts of the PSA in Jammu and Kashmir, release of children under 18 from prisons in Kashmir on recommendations of Amnesty International), the implementation of AFSPA, the PSA in Jammu and Kashmir and AFSPA in the North-Eastern States continue to violate India's obligation under international human and child rights. The prospects for social development and economic growth are hindered in Kashmir and hence delinquency and crime are developmental issues..

Irrespective of the armed conflict in many parts of the country, the level of its economic development and the legacy of political management, an affluent, flexible and healthy system of juvenile justice can be acquired only if there is a strong political will at the Central and State levels. The problem of poverty, illiteracy, unemployment, neglect and delinquency are interrelated, so policies and programs must focus on lessening of poverty and improvement in the sector of education and employment. In addition, proactive efforts shall be taken to engage NGOs, community, mass-media, public and in fact, the concerned officials which are altogether fundamental to the long-term effectiveness of the measures for bringing magnificent juvenile justice in the country. Certain recommendations for Government India for ensuring best-interest of the children and child-friendly juvenile justice system in the country are:

- Repeal the Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Bill 2014 which proposes lowering the upper age limit of juvenility from 18-16 which is in direct violation of the UNCRC.
- Strengthen and review all the existing policies, programs and legislations for children.
- Establish a State Commission for Protection of Child Rights SCPCR in all the States immediately, so that the ICPS is implemented in all the States and all the children in India are able to take its benefit.
- Expand role of the NCPCR to circumspect the SCPCRs so that the funds for child development and protection are not unnecessarily swallowed by the States.
- Boards, Child Welfare Committees, Observation Homes and other institutions necessary for protection and development of children under the UNCRC and provide funds and infrastructure for establishing the same.

References :-

1. "Notorious Stone Pelter Arrested in Srinagar: Police," *Kashmir Life*, Nov. 27, 2012. Available at : kashmirlife.net/notorious-stone-pelter-arrested-in-srinagar-police/
2. A Juvenile Detainee of Observation Home, Harvan, *FIR: 24/12*, R/O Zoonimar, Kashmir.
3. Centre for Dialogue and Reconciliation Report. 2011. *Behind the Numbers: Profiling those Killed in Kashmir's 2010 Unrest*. pp. 25-40. Available at: http://www.cdr
4. See, *UNCRC 1989*. Available at: http://www.unesco.org/education/pdf/CHILD_E.PDF
5. "15 Year Old Booked Under PSA," *Kashmir Global*, Posted on Nov 7, 2010. Available at: http://www.kashmirglobal.com/?p=1115
6. "Juveniles Suffer in Kashmir," *The Pioneer*, July 8, 2011.
7. "Jammu and Kashmir Must Release or Charge Teenage Protestor," *Frontline Kashmir*,
8. Eleventh Five Year Plan 2007-2012, Inclusive Growth, vol 1. Available at: planningcommission.nic.in/plans/planrel/fiveyr/11th/11.../11th_vol1.pdf

****

महार जाति की महिलाए एवं सामाजिक परिवर्तन (भोपाल नगर के विशेष संदर्भ में)

डॉ. पिंकी सोमकुवर *

शोध सारांश – यह शोध पत्र महार जाति की महिलाओं से संबंधित है। इस शोध पत्र में महार जाति की महिलाए एवं सामाजिक परिवर्तन की चर्चा की गई है। यह शोध पत्र मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल नगर में किए गए अध्ययन पर आधारित है। अध्ययन क्षेत्र में इकाइयों के रूप में 300 (n=300) महार जाति की महिलाओं का चयन निदर्शन पद्यति के द्धारा किया गया है। इसमें प्राथमिक एवं द्धितीयक तथ्यों के लिये अनुसूची का प्रयोग कर साक्षात्कार के माध्यम से तथ्य एकत्रित किए गए है। प्रस्तुत शोध पत्र 3 भागो में विभाजित है – 1 प्रस्तावना, 2 महार जाति की महिलाए एवं सामाजिक परिवर्तन तथा 3 निष्कर्ष।

प्रस्तावना – भारत में सामाजिक परिवर्तन की अनेक प्रक्रियाएं एक साथ चल रही है, जिनका उल्लेख विभिन्न समाजशास्त्रियों द्धारा अपने अध्ययनों में किया गया है। भारत में स्वतंत्रता के बाद सामाजिक परिवर्तन की इन प्रक्रियाओं की गति में तेजी आई है इसलिये भारत के अनेक स्थानों पर अध्ययन किए जाने की आवश्यकता को अनेक समाजशास्त्रियो द्धारा सामने रखा गया है। भारत में अनुसूचित जातियों से संबंधित अनेक अध्ययन हमारे सामने आए है परन्तु भारत में समाज विज्ञानों के क्षेत्र में प्रमुख रूप से समाजशास्त्र के क्षेत्र में महिलाओं से संबंधित अध्ययन का प्रारंभ 1980 के दषक से प्रारंभ हुआ है। मालविका कारलेकर (2000) ने इस बात का विशेष रूप से उल्लेख किया है कि समाज विज्ञान के क्षेत्र में पहले महिलाओं से संबंधित अध्ययन बहुत कम हुए है। समाज विज्ञान के क्षेत्र में पूर्व में किये गये अध्ययन प्रमुख रूप से पुरूषों द्धारा दिये गये साक्षात्कार पर आधरित होते थे तथा उन्हीं अध्ययनों को समाज के अध्ययन के नाम से जाना जाता था। वर्तमान समय में इस स्थिति में कुछ परिवर्तन आए है।

महार जाति की महिलाओ में सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तन हुए है। संवैधानिक प्रावधान तथा राजनीतिक प्रक्रियाओं ने इनके जीवन में नई आकांक्षाओं का सूत्रपात किया है। इसमें एक महत्वपूर्ण भूमिका डॉ0 बी0 आर0 आम्बेडकर के विचारों व उनके नेतृत्व की रही है।जिनके कारण इस जाति तथा अन्य अनुसूचित जातियों, विशेष रूप से महिलाओं में सामाजिक गतिशीलता संभव हो सकी है। जगन कराडे (2009) ने भारत में अनुसूचित जातियो के मध्य शैक्षणिक उपलब्धियों व व्यवसायिक गतिशीलता की विवेचना की है। उन्होंने यह बताया कि वह समूह जो जनसंख्या की दृष्टि से काफी बड़ा (जिसे दलित कहा जाता है) उसे उनके जीवन जीने के बुनियादी कानून व मानव अधिकारों से वंचित रखा गया है। इसके उपरांत भी इस अनुसूचित जाति की दूसरी पीढ़ी अपने पूर्व की पीढ़ी की अपेक्षा अत्यंत परिवर्तनशील है।

इस शोध पत्र के अन्तर्गत (द्धारा) हमने महार जाति की महिलाओं में होने वाले सामाजिक परिवर्तनों को देखने का प्रयास किया है। इन महिलाओं पर निजीकरण (Privatization) तथा पश्चिमीकरण (Westernization) के प्रभाव की चर्चा की है। इन महिलाओं द्धारा भविष्य में इनके बच्चों की दूसरे जाति में विवाह की संभावनाओं से संबंधित जानकारी के अतिरिक्त वर्तमान समय में इन महिलाओं द्धारा अपने ज्ञान व मनोरंजन के किन साधनों का प्रयोग किया जाता है ? इसके अंतर्गत समाचार पत्र, एफ.एम, रेडियो तथा टेलीविजन आदि से संबंधित जानकारी एकत्रित की गई है ? इसके साथ ही क्या इनके परिवारों में कम्प्यूटर तथा इंटरनेट जैसे आधुनिक सुविधाओं का प्रयोग किया जाता है ? इंटरनेट जैसे आधुनिक सुविधाओं का प्रयोग परिवार के किन सदस्यों द्धारा इन सुविधाओं का प्रयोग किया जाता है ? तथा इंटरनेट का प्रयोग किन कार्यो के लिए किया जाता है? आदि प्रश्नों की चर्चा की गई है। मनोरंजन के अन्य साधनों की भी चर्चा की गई है। क्या ये महिलाए किसी किट्टी पार्टी की सदस्य है ? इसकी भी चर्चा की गई है

महार जाति की महिलाए एवं सामाजिक परिवर्तन – सामाजिक परिवर्तन के अन्तर्गत पश्चिमीकरण, आधुनिकीकरण तथा वैश्वीकरण आदि प्रक्रियाओं की चर्चा की गई है। जिन्हें निम्न तालिकाओं के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

तालिका क्रमांक–1

पश्चिमी देशों कीं संस्कृति का प्रभाव महार जाति पर पडा है।

क्र.	पश्चिमी देशों कीं संस्कृति का प्रभाव महार जाति पर पड़ा	आवृत्ती	प्रतिशत
1	हाँ	193	64.33
2	कुछ सीमा तक	38	27.67
3	नहीं	24	8.00
	कुल योग	**300**	

उपरोक्त तालिका के अनुसार 64.33 % महिलाओं के अनुसार पश्चिमी देशों की संस्कृति का प्रभाव महार जाति पर पड़ा है। पश्चिमी देशों की संस्कृति का प्रभाव महार जाति पर 27.67 % महिलाओं के अनुसार कुछ सीमा तक पडा है। इसके अतिरिक्त 8.00 % महिलाओं के अनुसार पश्चिमी दशों की संस्कृति का प्रभाव महार जाति पर नहीं पड़ा है। इन महिलाओं का मानना है कि महार जाति पश्चिमी देशों की संस्कृति से अप्रभावित है इसके विपरीत 92.00 % महिलायें मानती है कि पश्चिमी देशों की संस्कृति का प्रभाव देश के साथ महार जाति पर भी पड़ा है। पश्चिमी देशों के जीवन शैली, परिधान, अभिवादन के तरीके भाषा तथा खान–पान के तरीको आदि का भी प्रभाव महार जाति पर दिखाई देता है। अत: हम कह सकते है कि पश्चिमीकरण की प्रक्रिया से महार जाति अप्रभावित नहीं रही है।

* अतिथि विद्वान (समाजशास्त्र) नवीन शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला – उमरिया (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक-2
आप अपने पुत्र का विवाह किसी अन्य जाति में करना चाहेगी।

क्र.	पुत्र का विवाह अन्य जाति में करेगी	आवृत्ती	प्रतिशत
1	बच्चे नहीं है	09	3.00
2	पुत्र नहीं है	24	8.33
3	पुंत्र का विवाह हो चुका है	18	6.00
4	हां	52	17.33
5	कह नहीं सकते	95	31.67
6	नहीं	102	34.00
	कुल योग	**300**	

उपरोक्त तालिका के अनुसार 17.33 % महिलाएं अपने पुत्र का विवाह अन्य जाति में भी कर सकती है। इन महिलाओं के विचारों में संभवत: खुलापन है, जिसके कारण ये महिलाये जाति पर विचार नहीं रखना चाहेगी। इन महिलाओं का मानना है कि ऐसा करने से जातिवाद को खत्म किया जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन महिलाओं पर आधुनिकता प्रभाव है अपने पुत्र का विवाह अन्य जाति में करने के बारे में 31.67 % महिलाएं मानती है कि वे अभी कुछ कह नहीं सकती है क्योंकि यह भविष्य में पुत्र की इच्छा पर निर्भर करेगा कि वह विवाह कहां करना चाहता हैं। तेजी से बदलती हुई परिस्थितियों के कारण अभी से ये महिलाए अपने पुत्र के विवाह के बारे में कुछ कह नहीं सकती है। अपने पुत्र का 34.00% महिलाए किसी अन्य जाति में विवाह नहीं करना चाहेगी। इन महिलाओं का मानना है कि वे अपने पुत्र का विवाह महार जाति में ही करेगी अन्यथा उनके अनुसार महार की लडकियों से विवाह कौन करेगा ? आधुनिकीकरण का प्रभाव हमें 17.33% महिलाओं पर दिखाई दे रहा है। इसके साथ ही शिक्षा का भी यह प्रभाव हो सकता है। उनके द्वारा जाति प्रथा की जटिलताओं को कम करने के एक प्रयास के रूप में इसे हम देख सकते है।

तालिका क्रमांक-3
आप अपनी पुत्री का विवाह किसी अन्य जाति में करना चाहेंगी।

क्र.	पुत्री का विवाह अन्य जाति में करेगी	आवृत्ती	प्रतिशत
1	बच्चे नहीं है	09	3.00
2	पुत्री नहीं है	31	10.34
3	पुत्री का विवाह हो चुका है	34	11.33
4	हां	29	9.66
5	कह नहीं सकते	68	22.67
6	नहीं	129	43.00
	कुल योग	**300**	

उपरोक्त तालिका के अनुसार 9.66 % महिलाए अपनी पुत्री का विवाह अन्य जाति में भी करना चाहेंगी, संभवत: इसका कारण शिक्षा का प्रभाव तथा विचारों में खुलापन है। इन महिलाओं का मत है कि यदि पुत्री के लिए महार जाति में योग्य वर प्राप्त नहीं हो पाया तो वे अपनी पुत्री का विवाह अन्य जाति में करना चाहेगी। ये महिलाए आधुनिक विचारों वाली हैं। अपनी पुत्री का विवाह अन्य जाति में करने के बारे में 22.67 % महिलाए कुछ कह नहीं सकती है। ये महिलाए मानती है कि पुत्री का विवाह परिस्थितियों के अनुसार किया जायेगा। पुत्री की इच्छा पर भी यह निर्भर होगा। अपनी पुत्री का विवाह 43.00 % महिलाए अन्य जाति में नहीं करना चाहेंगी वे मानती है कि यदि वे अपनी पुत्री का विवाह अन्य जाति में करती है, तो पुत्री अपने परिवार व नातेदारों से दूर हो जायेगी साथ ही उसे अन्य जाति के रीति रिवाजों को अपनाने में मुश्किल हो सकती है। इन महिलाओं द्वारा अपनी पुत्रियों को बौद्ध धर्म से संबंधित शिक्षा दी गई है तथा जो महार जाति के पारंपरिक रीति रिवाजों को मानते है, उन महिलाओं द्वारा अपनी पुत्रियों को इससे संबंधित शिक्षा दी गयी हैं। इसलिए ये महिलाए अपनी पुत्री का विवाह अन्य जाति में नहीं करना चाहती है। इन महिलाओं पर आधुनिकता का प्रभाव कम दिखाई देता हैं। इसके अतिरिक्त अपनी पुत्रियों की अपेक्षा अपने पुत्रों का विवाह किसी अन्य जाति में करना चाहने वाली महिलाओं की संख्या अधिक पायी गयी है।

तालिका क्रमांक-4
महिलाओं द्वारा ज्ञान एवं मनोरंजन के लिये उपयोग किए जाने वाली सुविधाओं की जानकारी

क्र.	सुविधाओ की जानकारी	आवृत्ती	प्रतिशत
1	समाचार पत्र	295	98.33
2	टेलीविजन	293	97.66
3	एफ एम रेडिओं	162	54.00
4	कम्प्यूटर	104	34.66
5	इंटरनेट	39	13.00
	कुल योग		

उपरोक्त तालिका के अनुसार महिलाओं द्वारा अपने ज्ञान और मनोरंजन के लिए विभिन्न सुविधाओं का उपयोग किया जाता है । अपने ज्ञान को बढ़ाने तथा मनोरंजन के लिए 98.33% महिलायें समाचार पत्र पढ़ती है । इन महिलाओं का मानना है कि समाचार पत्र ज्ञान एवं मनोरंजन का एक सस्ता एवं सुविधाजनक साधन है । अपने ज्ञान एवं मनोरंजन के लिए 97.66% महिलाये टेलीविजन का प्रयोग करती है । उनके लिए टेलीविजन मनोरंजन के साधनों में से सर्वाधिक लोकप्रिय साधन है, इसके साथ ही विभिन्न समाचार चैनल्स के द्वारा इनका ज्ञानवर्धन भी होता है । इसके अतिरिक्त कुछ ज्ञानवर्धक धारावाहिक भी टेलीविजन पर देखने को मिलते है । अपने ज्ञान व मनोरंजन के लिये 54.00% महिलाए एफ एम रेडियों का भी प्रयोग करती है । इन महिलाओं द्वारा भोपाल नगर में आने वाले विभिन्न एफ.एम. स्टेशनस् का प्रयोग अपने मनोरंजन तथा ज्ञान के लिए किया जाता है । अपने ज्ञान तथा मनोरंजन के लिए इन महिलाओं द्वारा कम्प्यूटर तथा इंटरनेट का भी प्रयोग किया जाता है । कम्प्यूटर तथा इंटरनेट का प्रयोग करने वाली महिलायें अपेक्षाकृत कम आयु समूह से है तथा ये उच्च शिक्षित महिलाए है । कम्प्यूटर का प्रयोग 38.00% महिलाओं द्वारा तथा इंटरनेट का प्रयोग 13.00% महिलाओं द्वारा अपने ज्ञान, मनोरंजन तथा विभिन्न जानकारियों के लिए किया जाता है ।

तालिका क्रमांक-5
परिवार में इंटरनेट की सुविधाओं का उपयोग किया जाता है

क्र.	इंटरनेट का प्रयोग परिवार में किया जाता है	आवृत्ती	प्रतिशत
1	हॉ	24	8.00
2	कभी-कभी	225	75.00
3	नही	51	17.00
	कुल योग	**300**	

उपरोक्त तालिका के अनुसार 8.00% महिलाओं के परिवार में इंटरनेट की विभिन्न सुविधाओं का उपयोग किया जाता है । इंटरनेट की सुविधा 20.00% परिवारों में है । इन परिवारों में इंटरनेट के द्वारा विभिन्न कार्य किए

जाते है जिसकी चर्चा अगली तालिका में की गई है। इंटरनेट की सुविधाओं का उपयोग 75.00% परिवारों में कभी-कभी किया जाता है। इस प्रकार कुल 83.00% परिवारों में इंटरनेट का उपयोग किसी न किसी रूप में व परिवार के किसी न किसी सदस्य द्वारा किया जाता है। आज के आधुनिक युग में नगरों में कम्प्यूटर तथा इंटरनेट का प्रयोग बढ़ता ही जा रहा है। इंटरनेट की सुविधाओं का 17.00% परिवारों में उपयोग नहीं किया जाता है।

उत्तरदाताओं के परिवारों में उपयोग की जाने वाले इंटरनेट से संबंधित विभिन्न सुविधाओं की चर्चा की गई है। इंटरनेट की अधिकांश सुविधाओं का 8.67% परिवारों में उपयोग किया जाता है। रेल्वे आरक्षण के लिए 27.00% परिवारों में इंटरनेट का उपयोग किया जाता है। ई-मेल करने के लिए 16.33% परिवारों में इंटरनेट का उपयोग किया जाता है। ई-मेल के साथ ही चैटिंग के लिए भी 10.33% परिवारों में इंटरनेट का उपयोग किया जाता है। बिल के भुगतान के साथ रेल्वे आरक्षण के लिए 8.33% परिवारों परिवारों में इंटरनेट का उपयोग किया जाता है। ई-मेल के साथ रेल्वे आरक्षण के लिए 7.67% परिवारों में इंटरनेट का उपयोग किया जाता है। ई-बैंकिंग के लिए 1.00% परिवारों में इंटरनेट का उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त 0.67% परिवार में शिक्षा संबंधी कार्य के लिए इंटरनेट का उपयोग किया जाता है। इन महिलाओं के परिवारों में किसी न किसी कार्य, मनोरंजन तथा ज्ञान के लिए इंटरनेट का उपयोग किया जाता है। इन उत्तरदाताओं के परिवारों में महिला सदस्यों की अपेक्षा पुरूष सदस्यों द्वारा इंटरनेट का उपयोग किया जाता है।

तालिका क्रमांक-6

महिलाए किसी किट्टी पार्टी की सदस्या है

क्र.	**किट्टी पार्टी की सदस्या है**	**आवृत्ती**	**प्रतिशत**
1	हॉ	71	23.66
2	नही	229	76.34
	कुल योग	**300**	

उपरोक्त तालिका के अनुसार 23.66% महिलाए किसी न किसी किट्टी पार्टी की सदस्या है। इसके अतिरिक्त 76.34% महिलाए किसी भी किट्टी पार्टी की सदस्या नहीं है। उन महिलाओं की संख्या अधिक है, जो किट्टी पार्टी की सदस्या नहीं है।

निष्कर्ष - उपरोक्त तालिकाओं के माध्यम से महार जाति की महिलाओं में होने वाले सामाजिक परिवर्तन की जानकारी को प्रस्तुत किया गया है। हमने भोपाल में जिन परिवारों का अध्ययन किया, उनमें से अधिकांश परिवार एकांकी परिवार है। इन परिवारों का एकांकी स्वरूप होने के कारण महिलाओं को अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता प्राप्त है तथा अपने विचारों को क्रियान्वित करने के लिए भी स्वयं को अधिक स्वतंत्र महसूस करती है। इसके साथ ही अध्ययन के दौरान हमने यह भी महसूस किया कि आधुनिकता तथा संचार के साधनों एवं माध्यमों से संबंधित प्रश्नों का वैश्वीकरण के संदर्भ में अध्ययन किया जाना अधिक उपयुक्त होगा।उत्तरदाताओं द्वारा अपने बच्चों के विवाह से संबंधित विचारों को भी व्यक्त किया गया है। अपने पुत्र का 17.33% महिलाए किसी अन्य जाति में विवाह कर सकती है, तथा 9.66% महिलाए अपनी पुत्री का भी अन्य जाति में विवाह कर सकती है। इन महिलाओं पर आधुनिकता का प्रभाव दिखाई देता है, इसलिए ये महिलाए जाति को कम महत्व दे रही है।

भोपाल नगर में महार जाति की महिलाओं द्वारा अपने ज्ञान व मनोरंजन के लिये वर्तमान समय में उपलब्ध विभिन्न जनसंचार की सुविधाओं का उपयोग किया जा रहा है। समाचार पत्र पढ़कर सर्वाधिक 98.33% महिलाओं द्वारा अपना मनोरंजन कर ज्ञान में वृद्धि की जाती है, परन्तु 97.00% महिलाओं को समाचार पत्र पढ़ना पसंद है। दैनिक भास्कर समाचार पत्र सर्वाधिक 59.33% महिलाओं द्वारा पढ़ा जाता है। हिन्दी भाषा के समाचार पत्र सर्वाधिक 96.00% उत्तरदाताओं द्वारा पढे ़जाते है, इसके अतिरिक्त 4.00% महिलाए अंग्रेजी भाषा के समाचार पत्र भी पढ़ती है, इनमें प्रमुख रूप से हिन्दुस्तान टाइम्स तथा द हिन्दु समाचार पत्र है। समाचार पत्र मनोरंजन का एक सस्ता एवं सुलभ साधन है। टेलीविजन 97.66% महिलाओं को देखना पसंद है। महिलाए स्टार प्लस, जी.टी.व्ही., सोनी तथा कलर्स आदि चैनल्स देखना अधिक पसंद करती है, इसके अतिरिक्त कुछ महिलायें न्यूज चैनल्स जैसे-आजतक, स्टर न्यूज, जी-न्यूज, एन.डी.टी.व्ही. इंडिया तथा न्यूज-24 आदि के साथ डिस्कवरी चैनल एंव नेशनल जॉग्राफी भी देखना पसंद करते है। एफ.एम. रेडियो 54.00% महिलाओं द्वारा सुना जाता है। सर्वाधिक 27.00% महिलाओं द्वारा विविध भारती को सुना जाता है। इनमें कुछ महिलाए सिलाई करते समय तथा कुछ महिलाए यातायात के समय एफ.एम. सुनती है। नवीन तकनीकी में महिलाओं द्वारा कम्प्यूटर तथा इंटरनेट का भी प्रयोग अपने ज्ञान व मनोरंजन के लिए किया जताा है। किट्टी पार्टी में 23.66% महिलायें सदस्य है तथा अपना मनोरंजन वे इस माध्यम से करती है। इसके साथ ही इनमें सामाजिक अंतक्रिया भी होती है। इन सभी के अतिरिक्त 1.00% महिलाएं सामाजिक कार्य के क्षेत्र में भी सक्रिय है। सामाजिक कार्य में विशेष रूप से बौद्ध धर्म से संबंधित कार्यक्रमों में इन महिलाओं की रूचि है। विपश्यना जो कि योग से संबंधित है इसमें भी उत्तरदाताओं की रूचि है तथा इस कार्य में ये महिलाए संलग्न है। इस प्रकार भोपाल नगर की महार जाति की विवाहित महिलाओं में सामाजिक परिवर्तन को उनके विचारों के माध्यम से देखा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Karlekar, Malivika(2000), Women's studies and Women's development in M.S. Gore(ed.) **Third Survey of Research in sociology and social Anthropology** (vol.1), New Delhi - Indian Council of Social Science Research and Manak Publication.
2. Jagan, Karade(2009.), **Occupational Mobility Among Scheduled Castes**, Newcastle - Cambridge Scholars publishing.

****

नोटबंदी बनाम भ्रष्टाचारबंदी - एक सामाजिक विश्लेषण

डॉ. उमा लवानिया *

प्रस्तावना - आधुनिकता के दौर में भ्रष्टाचार एक देश व्यापी समस्या बन चुकी है, राजनीतिक क्षेत्र हो, सामाजिक क्षेत्र हो, आर्थिक क्षेत्र हो या अन्य कोई भी क्षेत्र हो, भ्रष्टाचार से अछूता नहीं है। देश के अधिकांश सत्ताधारी व्यक्तियों एवं प्रशासनिक अधिकारियों का जीवन, व्यवहार, कार्यक्रम एवं विचार भ्रष्टाचार का एक अभिन्न अंग बन गया है। प्रजातंत्र, स्वच्छ प्रशासन, समाजवाद, सामाजिक न्याय, एवं राष्ट्रीय चरित्र आज आडम्बर मात्र बनकर रह गए है। भ्रष्टाचार से जुड़े तत्वों में भ्रष्टाचार मनुष्य के आचरण का एक प्रकार है, भ्रष्टाचार से जुडे मानव आचरण को समाज द्वारा मान्यता प्राप्त नही होती, इस आचरण का उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ कमाना होता है, इस मानव आचरण में व्यक्तिवादी भावना की प्रधानता होती है, ऐसा मानव आचरण व्यक्ति को स्वैच्छा से जान-बूझकर कर्त्तव्यों के उल्घंन के लिए प्रेरित करता है।

ई.एस.एम. प्रकाशन ने भ्रष्टाचार के तत्वों के संबंध में लिखा है कि चेतन अवस्था में किया गया कोई भी काम जो नियम या व्यवस्था के खिलाफ हो ऐसा कोई भी काम जो न्याय एवं नैतिकता के मान्य सिद्धांतो के खिलाफ हो, ऐसा कोई भी काम जो सार्वजनिक कर्त्तव्यों के पालन में पक्षपात पर आधारित हो । जान बूझकर किसी काम को विलम्ब से संपादित करना, जान बूझकर ऐसी सूचना या रिपोर्ट देना जिससे व्यक्ति गुमराह हो, किसी प्रमाण या तथ्य को दबाना या उसकी गलत व्याख्या करना, एवं जानते हुए भी दूसरे व्यक्तियों के कार्यों अथवा गलतियों को न रोकना आदि।

अत: भ्रष्टाचार के अन्तर्गत मनुष्य भ्रष्टाचार के अन्तर्गत मनुष्य शिष्टाचार के विपरीत आचरण करता है। मनुष्य द्वारा निर्धारित आचार व्यवहारों का उल्लंघन करना भ्रष्टाचार कहा जाता है। शिष्टाचार के अन्तर्गत मनुष्य शिष्ट और शालीन व्यवहार करता है। मनुष्य के क्रियाकलापों और व्यवहार का समझता है, उसे शिष्टाचार की संज्ञान दी गई आज भी शिष्टाचार है, करोड़ो भारतवासी, जिनकी रग-रग में ईमानदारी दौड़ती है उनका मानना है कि भ्रष्टाचार, कालेधन और आतंकवाद के खिलाफ निर्णाक लड़ाई लड़नी चाहिए। भ्रष्टाचार पर लगाम लगाने के लिए नोटबंदी कर कालेधन को बाहर निकालने के लिए 16 मई 2014 को देश का मोडिफिकेशन हुआ था। नोट बंदी (500 एवं 100) कर एलान कर दिया गया उद्देश्य कालेधन की रीढ़ पर वार और ईमानदारों के मन की बात, इस फैसले के दूरगामी परिणाम सार्थक होगे।

8 नवंबर 2016 रात 12 बजे से नोटबंदी (500एवं1000) कर दी गई। 1978 में हजार, पांच हजार और दस हजार के नोट बंद किए थे। लगभग 38 साल बाद भ्रष्टाचार के विरोध में कालेधन को निकलवाने के लिए यह ठोस कदम उठाया। जिसका उद्देश्य नोट बंद करने से लेकर बेनामी सम्पत्तियों का पता लगाना है। भ्रष्टाचार व कालेधन को खत्म करने के अभियान में यह करारा प्रहार है, जिसमें आने वाली चुनौतियों का हमें सामना करना है।

भ्रष्टाचार, कालाधन, जाली नोट और आतंक को धन से पोषित करने से रोकने के लक्ष्यों का कोई विरोध नहीं है, सिद्धांत यानी थ्योरी गलत नहीं होती, लागू करने का तरीका गलत हो सकता है। अच्छे दिनों के बड़े 'टारगेट' को भेदने के लिए लागू की गई प्रक्रिया कुप्रबंधन का प्रतीक न बन जाए लोग परेशान न हों नोट बंदी की घोषणा के बाद देश के कृषि बाजार में भारी गिरावट न आ जाए इससे किसानों, व्यापारियों, और भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था पर भी प्रभाव न पड़े जैसे अनाज की आवक, किसान को फसल में नुकसान बिन नकदी सब सूझ, रोजी रोटी पर कहीं-कहीं संकट के बादल, उत्पादन में गिरावट एवं कहीं-कहीं संकट के बादल, उत्पादन में गिरावट एवं आयात-निर्यात में मंदी और भी अन्य समस्याएं आम साधारण नागरिक में देखने को न मिले इनसे निपटने के लिए नोटबंदी का फैसला लेने से पूर्व इसके आवश्यक नकारात्मक पहलुओं पर विचार करना भी अति आवश्यक है। परन्तु नोटबंदी ही ऐसा अच्छा अवसर है, जिससे देश का आर्थिक परिदृश्य बदलकर तरक्की होगी क्योंकि में भी सहायक है। भ्रष्टाचार कालेधन की जमाखोरी करने वालों और आतंकियों पर यह ऐसा मास्टर स्ट्रोक है। जिसे गलत तरीके से अमीर बने लोगों को छोड़कर प्रत्येक भारतीय ने सराहा है यह गरीब, मध्यम वर्ग और ईमानदार लोगों के भले के लिए ही है, यह तो जनहित का महायज्ञ है।जिसमें सभी को शामिल होकर इसे सफल बनाना है।

कैसे छपते है नोट? चीन के बाद भारत में होती है सबसे ज्यादा नोट की छपाई मध्यप्रदेश के देवास महाराष्ट्र के नासिक, कर्नाटक के मैसूर और पश्चिम बंगाल के सल्बोनी की प्रिंटिंग प्रेस में नोट छपते हैं। कागज म.प्र. व महाराष्ट्र में बनता है। इंपोर्ट भी किया जाता है, ऑफसेट स्याही देवास और सिक्किम में बनती है। पेपर शीट को सायमंटन मशीन में इंसर्ट किया जाता है फिर इंटाब्यू मशीन से नोट की प्रिंटिंग होती है। अच्छे व खराब नोट की छटनी की जाती है, एक शीट में करीब 32 से 48 नोट होते है। नोट की संख्या चमकीली स्याही से मुद्रित होती है। नोट में चमकीले देशे होते है। अल्ट्रावायलेट रोषनी में देखे जा सकते है। कॉटन और कॉटन के रेशे मिश्रित एक वॉटर मार्क पेपर पर नोट मुद्रित किया जाता है। शीट पर छप गए नोटो पर नंबर डाले जाते है। फिर शीट से नोटों को काटने के बाद एक-एक नोट की जांच की जाती है। फिर इन्हें पैक किया जाता है। इन पैकिंग को ट्रेन से भारतीय रिजर्व बैंक तक भेजा जाता है। भारत हर साल 22 हजार मीट्रिक टन पेपर नोट छापने में इस्तेमाल करता हे। नोटों की छपाई का 40 फीसदी खर्च कागज का ही होता है। कालेधन का रिष्ता खत्म होने की शुरूआज ही काला धन

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

हमारी अर्थव्यवस्था के लिए हमेशा से शर्म का विषय रही है।, क्योंकि यह सरकार, लोकतंत्र और देश के सम्मानों के पतन का कारण बनती है। यह लंबे समय से कॉर्पोरेट अनियमितताओं, भ्रष्टाचार और सरकार व नीति को पंगु बनाने का कारण रही है, नकदी को बदलने का यह कदम रूपान्तरण की दिशा में मील का पत्थर है। यह राष्ट्रहित में साहसी कदम उठाया है। आतंकवाद, भ्रष्टाचार, मंहगाई की समस्याओं को निशाना बनाया है। यह एक मात्र ऐसी सर्जिकल स्ट्राइक होगी जो नए सिरे से ज्ञान के शिखर पर लाएगी, सोने की चिड़िया भी बनाएगी और हर नागरिक को देश के शत्रुओं से लड़ने की ताकत भी देगी।

देश के सात दशकों के लोकतंत्र की कई कमजोर विरासतें है उनमें कालेधन की अर्थ व्यवस्था भी है। यह हमारी राजनीतिक और सरकारी व्यवस्था ये भयावह भ्रष्टाचार के लिए ईधन होने के साथ-साथ हमारे लोकतंत्र अर्थव्यवस्था और देश के लिए खतरा है। इस काली अर्थव्यवस्था की सफाई करने का मतलब राजनीति, चुनाव, सरकार व विजनेस की सफाई के साथ आतंकवाद में पैसा लगाने और फर्जी करेंसी नोटों की समस्या से निपटना भी है योजना सुनियोजित ढंग से काले धन की अर्थव्यवस्था को पुरूस्कार व दण्ड की नीति से संकुचित करने का कार्य करेगी, काले धन पर विशेष जांच दल एटीएम बैंकिग और ई-भुगतान के लिए सीधे लाभ, प्रोत्साहन योजनाएं और कालाधन शामिल करने की योजनाएं शामिल है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. अशोक डी. पाटिल, डॉ एस.एस. भदौरिया।
2. समाजिक समस्याएं और अपराध- प्रो. आनंद प्रकाश सिंह, वैशाली प्रसाद।
3. समाचार पत्र-
    1. दैनिक भास्कर - 3.11.16
    2. पत्रिका - 6.11.16
    3. पत्रिका - 09.11.16
    4. दैनिक भास्कर -11.11.16
    5. पत्रिका - 12.11.16
    6. दैनिक भास्कर - 12.11.2016
    7. पत्रिका - 14.11.2016
    8. पत्रिका - 27.11.16
    9. दैनिक भास्कर - 29.11.16
    10. न्यूज अराउण्ड - 30.11.16
    11. देश-विदेश - 01.12.16

****

45 एवं अधिक उम्र की महिलाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन

प्रो. ऋचा एस. मेहता *

प्रस्तावना – भारतीय समाज में महिलाओं के जीवन में कुछ ऐसे महत्वपूर्ण परिवर्तन आते है जिससे उनके जीवन की दशा एवं दिशा दोनों बदल जाती है। पहला महत्वपूर्ण परिवर्तन तब आता है, जब लगभग 18 से 25 वर्ष की उम्र में एक कन्या का विवाह होता है। माता-पिता के घर में एक राजकुमारी की तरह रहने वाली एक लड़की किसी परिवार की बहू बन जाती है और कई तरह की जिम्मेदारियों में बँध जाती है। कुछ ही समय में वह अपने जीवन की बदली हुई दशाओं में अपने आपको ढाल लेती है एवं नए परिवार का एक महत्वपूर्ण अंग बन जाती है। संतान प्राप्ति के बाद उसका जीवन पति, बच्चे एवं ससुराल के अन्य सदस्यों की सुख सुविधाओं का ध्यान रखने में ही समर्पित हो जाता है। जीवन के लगभग 20 वर्ष उसकी जीवन की दिनचर्या लगभग एक समान रहती है। दूसरा महत्वपूर्ण परिवर्तन महिला के जीवन में 45 वर्ष की उम्र के पश्चात आता है। संतान बड़ी हो जाती है। जो माँ उनके जीवन का प्रमुख आधार होती थी, वे अब उनकी चिन्ता करें एवं सुख सुविधाओं का अधिक ध्यान रखें, वह उन्हें बंधनकारी लगने लगता है। जब अपनी संतान माँ द्वारा उसकी कही गई बातों पर झल्लाने लगे तब माँ को बहुत बुरा लगता है। यह जीवन का दूसरा महत्वपूर्ण परिवर्तन जीवन को सर्वाधिक प्रभावित करता है। उम्र के इस पड़ाव पर महिलाओं को अपनी जीवनशैली में कुछ परिवर्तन करना चाहिए। उन्हें अपनी प्राथमिकताओं को बदलना चाहिए।

मैंने समाजशास्त्रीय, दृष्टिकोण से तथ्य पर गौर किया तो पाया कि 45 की उम्र को पार कर चुकी कुछ महिलाओं का जीवन स्वस्थ, सुखी एवं आनंदित है जबकि कुछ महिलाओं का जीवन बीमारी, दुख एवं अवसाद से ग्रसित हो गया है। लगभग 25 महिलाओं के जीवन के संबंध में उनसे प्राप्त जानकारियों एवं दैनिक समाचार पत्रों में महिलाओं द्वारा किए जाने वाले प्रशंसनीय कार्यों के लेखों के आधार पर मैंने यह निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया है कि 45 वर्ष की उम्र के पश्चात ऐसा क्या किया जाना चाहिए कि जीवन का अगला पड़ाव स्वस्थ एवं आनंदित रूप से सम्पन्न हो। अपने अध्ययन के निष्कर्ष बताने से पूर्व समाचार पत्र में पढ़ी गई दो लघु कथाओं का सार में यहाँ पर उल्लेखित करना चाहूँगी।

छत्रपति शिवाजी के दरबार में एक बार यह प्रश्न उठा की वास्तव में जीवन क्या है ? सभी ने अपने-अपने मत दर्शाए पर शिवाजी महाराज को संतोषप्रद उत्तर नहीं मिला। तभी शिवाजी महाराज के गुरू समर्थ रामदास का आगमन हुआ। शिवाजी महाराज ने गुरूवर से पूछा कि जीवन वास्तव में क्या है ? समर्थ रामदास ने उत्तर दिया कि गति एवं शक्ति ही जीवन है। जब तक जीवन में गति बनाए रखोगे शक्ति बनी रहेगी एवं जब तक शरीर में शक्ति होगी जीवन गतिशील बना रहेगा। जिस दिन व्यक्ति ने गति रोक दी उसकी शक्ति क्षीण होती जाएगी एवं शक्ति क्षीण होने पर गति कम होती जाएगी तथा मनुष्य उसी क्षण से मृत्यु की ओर प्रयाण कर देगा। मुझे लगता है यहाँ गति का अर्थ सदैव जीवन में कुछ नया सीखने एवं नया करने से है जिससे जीवन ऊर्जा से भरा रहता है और ऊर्जा शरीर में शक्ति का संचार करती है। 45 वर्ष की उम्र को पार कर चुकी जिन महिलाओं ने अपनी गति लगातार बनाए रखी उनका जीवन स्वस्थ एवं सुखमय बना रहा तथा जिन्होंने अपने आपको निवृत्त मान लिया उनके जीवन की शक्ति एवं ऊर्जा भी कम हो गयी। अत: जीवन में गति बनाए रखना नितांत आवश्यक है।

मेरा दूसरा दृष्टांत भी जीवन के लिए अत्यंत उपयोगी है। एक तालाब में बहुत से मैंढक रहते थे। धीरे-धीरे उस तालाब के मैंढकों में अनुशासहीनता बढ़ती गई। बढ़ती अनुशासनहीनता के कारण लड़ाई झगडे बढ़ने लगे तथा उनका जीवन दुष्कर हो गया। कई अच्छे मैंढक तालाब छोड़कर अन्य तालाबों में चले गए। तालाब के कुछ बुजुर्ग मैंढकों ने भगवान शिव से प्रार्थना की कि हमें तालाब का कोई एक ऐसा पहरेदार दो जो हमारे तालाब में अनुशासन स्थापित कर दें। भगवान शिव ने कहा ठीक है मेरे इस नंदी बैल को ले जाओं। नंदी बैल तालाब के पास जाकर रहने लगा। वह कुछ करता नहीं और तालाब के आसपास घूमते रहने के कारण प्रतिदिन कई मैंढक उसके पैर के नीचे कुचलकर मर जाते। परेशान होकर मैंढकों ने भगवान शिव से कहा कि कोई दूसरा अच्छा पहरेदार दिया जाए। भगवान ने अपने गले के सर्प को पहरेदार बनाकर भेजा। सर्प रोज दो चार मैंढकों को चट कर जाता। परेशान मैंढक फिर भगवान के पास गए। अपनी समस्या बताई। इस पर शिवजी ने कहा में आपको यही शिक्षा देना चाहता था कि किसी दूसरे का तंत्र कभी भी आपकी समस्या को हल नहीं कर सकता। इसलिए आप अपने स्वयं का तंत्र स्थापित करो क्योंकि आपकी अपनी समस्याओं को आपसे बेहतर कोई नहीं समझ सकता इसलिए आप स्वयं अपनी समस्याओं का हल ढूँढ़ने का प्रयास करें। यहाँ पर फिर में अपने विषय पर आती हूँ कि जिन महिलाओं ने अपनी समस्याओं पर गौर करके उनके समाधान ढूँढ़ने का प्रयास किया उनका जीवन प्रशंसा का पात्र बन गया तथा ऐसी महिलाएँ जिन्होंने अपनी समस्या का केवल सबसे सामने दुखड़ा रोया वे निंदा एवं मजाक का पात्र बनकर रह गई।

उम्र के इस पडाव को पार कर चुकी 25 महिलाओं की बातचीत के आधार पर मैंने निम्न निष्कर्ष निकाले है, जो सुखी, सफल एवं आनंदित जीवन के लिए उपयोगी हो सकते है -

1. **अपनी उत्सुकता को बढाएँ –** उम्र के इस पड़ाव में बच्चे बड़े हो जाने के कारण इस उम्र में अधिक समय मिलता है। आपको इस उम्र में ऐसी

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला - देवास (म.प्र.) भारत

गतिविधियों को ढूँढ़ना है, जो आपको आनंदित रख सकें जैसे – गायन, वादन, घूमना, बागवानी, विविध व्यंजन बनाना, बच्चों को पढ़ाना आदि। इसके लिए आप अपने पसन्द की गतिविधियों की सूची अपने समय एवं धन की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए बनाइए।

2. **नई एवं पसंदीदा गतिविधियों में व्यस्त हो जाइए –** आप इस सूची में से अपने पसंद की ऐसी गतिविधि का चयन करें, जो पहले आप धन, समय एवं परिस्थितियों के कारण नहीं कर पाए। इसके अतिरिक्त समय, काल एवं परिस्थितियों बदलने पर जो नई गतिविधियाँ सामने आई है। उसमें से आपको जो गतिविधि पसंद आए उसको भी करने की कोशिश करें एवं अपने आपको इनमें व्यस्त कीजिए। सीखने की कोई उम्र नहीं होती। इसलिए इन गतिविधियों की आवश्यकता हो तो किसी क्लास में जाकर सीखने में कोई हिचकिचाहट नहीं होना चाहिए। जैसे आप समय की कमी के कारण गायन, वादन, नृत्य, चित्रकला, पैन्टिंग आदि नहीं कर पाए हो तो इस उम्र में भी आप इसकी टयूशन लेकर इसे सीख सकती है एवं अपने आपको आगे बढ़ा सकती है। अपने पसंदीदा गतिविधि को करने में शर्म या हिचक बिलकुल भी महसूस न करें।

3. **जब भी संभव हो घूमने फिरने जाएं –** अपने समय एवं धन की परिस्थितियों के अनुसार घूमने-फिरने अवश्य जाएं। घूमना-फिरना आपको चलित रखेगा जिससे आपका शरीर, मन एवं मस्तिष्क व्यस्त रहेगा जो आपको हृदय को जवान रखेगा।

4. **अपनी शिक्षा को बढ़ाइए –** आपके पसंदीदा विषय पर उपलब्ध वांचन सामग्री का विस्तृत वांचन करें एवं उस पर क्लासेस लेने का प्रयत्न करें। यदि आप नौकरी या व्यवसाय में संलग्न है, तो वांचन एवं ट्रेनिंग के माध्यम से अपना ज्ञान हमेशा नवीन परिस्थितियों के अनुसार बढ़ाते रहिए। इसके लिए क्लासेस, व्याख्यान, सेमीनार तथा अन्य शिक्षकीय कार्यक्रम का उपयोग कर सकते है। यदि आप अपने दिमाग को लगातार कुछ नया सीखने में व्यस्त रखेंगे तो आपके दिमाग के बूढ़े होने की रफ्तार अत्यंत कम हो जाएगी। अपने द्वारा प्राप्त किए गए ज्ञान एवं शिक्षा को दूसरों तक पहुँचाने का भी पूर्ण प्रयास करें।

5. **स्थानीय क्षेत्र के स्वयंसेवक बने –** अपने बुद्धि एवं अनुभव के लाभ स्थानीय क्षेत्र को उपलब्ध कराने का प्रयास करें। इसके लिए स्थानीय विद्यालय, अस्पताल, वृद्धाश्रम, अनाथालय आदि में मुलाकात कर यथाशक्ति मदद करने के लिए तत्पर रहें। यह कार्य आपको अपने अभी के जीवनकाल में किए गए किसी भी कार्य से अधिक आनंद एवं सुख देगा। जो एम.वाय. हॉस्पिटल में मरीजों को भोजन एवं दूध वितरण का कार्य करती है। उसमें दो महिलाएँ सरकारी स्कूल के बच्चों को अतिरिक्त समय में अंग्रेजी एवं गणित पढ़ाती है। इंदौर में संवेदना एवं सहायता नामक दो लोक पारमार्थिक संस्थाएँ एम.वाय. हॉस्पिटल में मरीजों को मुफ्त भोजन एवं दूध वितरण का कार्य करती है। मेरे अध्ययनमें शामिल चार महिलाएँ सप्ताह में 2-3 घण्टे इस कार्य में सहायता करती है।

6. **नए लोगों से जुड़िए –** प्रत्येक व्यक्ति यह महसूस करता है कि उसकी पसंदीदा गतिविधियों में समय काल एवं परिस्थितियों के कारण बदलाव आया है। पिछले 20 वर्षों में तो अत्यंत तीव्र गति से बदलाव हर क्षेत्र में आया है। इसलिए इन बदली हुई परिस्थितियों में नए लोगों से जुड़कर तथा उनकी मदद से आप इस नए एवं तेजी से बदले जगत में सामंजस्य बैठा सकते है। इनसे जुड़कर आप नए क्षेत्र में अपनी योग्यता बढ़ा सकते है एवं अपने जीवन में एक नयी ऊर्जा भर सकते है। नए व्यक्तियों से जुड़ने के लिए आप अपने आसपास के कई तरह के क्लब एवं संस्थाओं के सदस्य बन सकते है। अन्य शहरों एवं देशों के लोगों से जुड़ने के लिए आप सोशल मीडिया का भी उपयोग कर सकते है।

7. **अपने चिकित्सक से लगातार सम्पर्क में रहें –** उम्र के इस पडाव में आप अपने चिकित्सक से लगातार सम्पर्क में रहे तथा अपने शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए आवश्यक दिशा निर्देशों का पुरी मुस्तैदी से पालन करें। नियमित रूप से शरीर के चैकअप करवाते रहें। अपने शरीर में होने वाले परिवर्तनों का लगातार निरीक्षण करते रहे एवं किसी भी महत्वपूर्ण परिवर्तन के संबंध में अपने डाक्टर से सलाह लेते रहिए।

8. **नियमित एवं पौष्टिक खानपान –** 45 वर्ष की उम्र पूर्ण करने के बाद शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए नियमित एवं पौष्टिक खानपान का विशेष महत्व होता है। इसके लिए ग्रीन सब्जियों, फल एवं प्रोटीनयुक्त भोजन का नियमित सेवन करना चाहिए। अपने शरीर एवं कार्य की परिस्थितियों के अनुसार प्रतिदिन 1600 से 2800 कैलोरी ग्रहण करना आवश्यक है। इसके लिए प्रतिदिन 1 से 1.5 कप फल, 2.5 से 3 कप सब्जियाँ, 5 से 8 औंस खाद्यान्न, 5 से 6.5 औंस प्रोटीन, 2 से 3 कप दूध, दही, चीज आदि का सेवन करना चाहिए। सोडियम की मात्रा कम करना चाहिए। मिठाई एवं तले हुए भोजन की मात्रा अत्यंत कम कर देना चाहिए। माँसाहार का सम्पूर्ण त्याग कर देना चाहिए।

9. **नियमित कार्डियोवस्कुलर व्यायाम –** नियमित व्यायाम आपको शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ बनाए रखेगी। अपने स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए औसत स्तर की कोई भी नियमित व्यायाम की गतिविधि जैसे वाकिंग, स्वीमिंग, योगा आदि कीजिए। एक सप्ताह में कम से कम 150 मिनिट व्यायाम अवश्य करें। कार्डियोवस्कुलर व्यायाम आपके हार्ट को मजबूत बनाती है तथा ब्लड वेसल्स में खून के संचार को लगातार बनाए रखती हैं जो व्यक्ति के स्वस्थ रहने के लिए अत्यंत आवश्यक है। किसी भी व्यायाम कार्यक्रम प्रारंभ करने के पूर्व अपने चिकित्सक से अवश्य परामर्श लेवे। अपने व्यायाम के दौरान अपने शरीर में होने वाले परिवर्तन पर ध्यान दीजिए एवं यदि व्यायाम आपको थका रहा है या आपको शारीरिक तकलीफ दे रहा है, तो व्यायाम तब तक न करें जब तक आप अच्छा महसूस न करने लगे।

10. **शरीर को बलवान बनाने वाली कसरत करें –** कार्डियोवस्कुलर एक्ससरसाइज के अतिरिक्त शरीर को बलवान एवं मजबूत बनाने के Strength training exercise भी कीजिए। यह तथ्य साबित हो चुका है कि यह व्यायाम उम्र की प्रक्रिया को उल्टा कर देती है तथा उम्र जनित बीमारियों से सुरक्षा भी देती है जैसे मसल्स एवं हड्डियों को मजबूत बनाने से ओस्टियोपोरेसिस बीमारी से बचा जा सकता है। इसके लिए जीम में वेट ट्रैनिंग ली जा सकती है। वेट ट्रेनिंग लेने से पूर्व अपने चिकित्सक या सर्टिफाइड ट्रेनर से परामर्श अवश्य लेना चाहिए।

11. **अपने शरीर को सुनें –** घूमने-फिरने से लेकर व्यायाम तक की सभी गतिविधियों को करते समय अपने शरीर एवं संवेदना पर पूरा ध्यान रखे। यह किसी भी शारीरिक परेशानियों को पहचानने में आपकी मदद करेगी। आवश्यकता या इच्छा होने पर पूर्ण आराम करें। यदि किसी दिन आप थके हुए है व्यायाम नहीं करना चाहते है तो उस दिन आराम अवश्य करें। यह शरीर को स्वस्थ एवं मन को आनंदित रखने के लिए अत्यंत आवश्यक है।

प्रतिदिन 7 से 9 घण्टे सोने की आदत रखें। निद्रा आपके तन एवं मन दोनों को स्वस्थ रखेगी।उपरोक्त सभी निष्कर्षों को ध्यान से पढ़ने पर दो महत्वपूर्ण वही तथ्य उभरकर आते है जो मैंने दो लघु कथाओं के माध्यम से समझाने का प्रयास किया है। जीवन में गति एवं शक्ति आवश्यक है अत: इसे लगातार बढ़ाने का प्रयास करें। अपने जीवन को सुखी एवं स्वस्थ बनाने का प्रयास हमें ही करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 45 वर्ष की उम्र को पार कर चुकी 25 महिलाओं से किए गए प्रश्नों के उत्तर एवं दैनिक समाचार-पत्रों के महिलाओं द्वारा किए जाने वाले प्रशंसनीय कार्यो एवं अन्य लेख के आधार पर।

****

भारतीय संस्कृति और जल संरक्षण

डॉ. ज्योति मेहता *

प्रस्तावना - अर्थशास्त्र के जनक एड्म स्मिथ ने पैरा डॉक्स ऑफ डायमंड एंड वाटर की अवधारणा में यह स्पष्ट किया, कि हीरा लोगों के लिए कम उपयोगी है, फिर भी महंगा है, और पानी की मांग सबसे ज्यादा है, उसे मंहगा होना चाहिए, पर पानी के संदर्भ में ऐसा नहीं दिखाई देता, क्योंकि अपने उद्‌भव से लेकर आज तक मानव को पानी की इतनी आपूर्ति होती रही है, वह जीवित रहे, इसलिए मानव ने पानी को हीरे के साथ कभी जोड़कर देखा ही नहीं, जबकि वास्तविकता यह है, कि पानी के कारण कई संस्कृतियों का विनाश हो गया। सिंधु घाटी सभ्यता, मेसोपोटामिया की सभ्यता या मिश्र की सभ्यता हो, सभी नदियों के किनारे ही विकसित हुई। जो यह दर्शाता है, कि संस्कृतियों के विकास में जल का भी योगदान रहा है।

मानव पृथ्वी पर पाए जाने वाले सभी अन्य प्राणियों से अपने को अलग करने में सफल हुआ क्योंकि उसने संस्कृति का निर्माण किया। संस्कृति जिसके कारण व्यक्ति सिर्फ प्रकृति के सहारे ही नहीं बल्कि अपने मूल्यों एवं व्यवहारों के सहारे भी अपने अस्तित्व को सुनिश्चित करने में सफल हो सका। अपने अस्तित्व की रक्षा में मानव को कभी पानी, हवा आदि के लिए कुछ विशेष सोचने की जरूरत नहीं पड़ी। पानी को सिर्फ एक रासायनिक संयोजन से ज्यादा भारतीय समाज में जीवन के आधार के रूप में देखा जाता है। पानी को सिर्फ पीने तक सीमित न करके इसे जीवन का उद्धार करने वाला बताया गया है। यह कथा सर्वविदित है, कि भागीरथ के प्रयास के कारण ही गंगा को भागीरथी भी कहते है। तब से गंगा को मोक्षदायिनी मानकर हिन्दु समाज गंगा जल का उपयोग हर पवित्र कार्य के लिए करता है।

पानी को औषधियों के गुणों का वाहक भी माना जाता है। ऋगवेद में स्पष्ट किया गया है, कि जल मनुष्य के लिए कल्याण कारी होता है। और इसके सेवन से बाह्य और आंतरिक मल विक्षेप दूर होते है। भारतीय समाज में पानी को मूल्य परक माना गया है और समाज को नियंत्रित करने हेतु पानी के लिए विभिन्न उपमाओं का प्रयोग किया गया है। आँखों में पानी होना, यह प्रचलित मुहावरा व्यक्ति की नैतिकता एवं अनैतिकता दोनों के लिए उपयोग किया जाता है। सभी मनुष्यों से यह सामाजिक अपेक्षा भी स्वच्छ जल की तरह ही की गई है, कि वे संसार का उपकार करे।

भारतीय समाज में प्रकृति को जीवन का एक महत्वपूर्ण भाग माना गया है। भौतिक संस्कृति से इतर प्राकृतिक अवयवों में भी अलौकिक शक्ति का समावेश करके उसे सम्मान दिया गया है। यही कारण है, कि नदियों में पानी को मोक्ष प्रदान करने वाला माना गया है।

'गंगा सिंधुश्च कावेरी, यमुना च सरस्वती,
रेवा महानदी गोदावरी, सप्तेता, मोक्ष दायिका'

उपरोक्त सात नदियाँ मोक्ष प्रदान करने वाली है, पानी को एक प्राकृतिक तत्व से ऊपर एक अलौकिक शक्ति का वाहक बनाकर देखा गया और वैदिक काल में इसके लिए एक देवता को जिम्मेदार माना गया है। जिसे वरूण देवता कहाँ जाता था।

मानव सभ्यता में सबसे महत्वपूर्ण कार्य था खेती करना। खेती ने मानव जीवन को ना सिर्फ स्थायित्व प्रदान किया बल्कि सामाजिक संरचना के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, सामाजिक संरचना को बनाए रखने में खेती का अद्वितीय स्थान है, जो वर्षा और भूमि जल की उपलब्धता पर निर्भर है। अप्रत्यक्ष रूप से मानव के स्थयित्व एवं सामाजिक संरचना की निरंतरता में पानी ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। पानी के लिए ऐसी विकसित तकनीक नव पाषण काल (भारत में आज से चार हजार वर्ष पूर्व का समय जब मानव ने खेती एवं पशुपालन का कार्य आरंभ किया में) में नहीं थी, कि पृथ्वी के अंदर का जल आवश्यकता पड़ने पर उपयोग किया जा सके। खेती के संदर्भ में उगाई जाने वाली फसलों की जड़ों में भी जमीन की सतह से कुछ ही भीतर तक पानी प्राप्त करने की क्षमता होती है। यही कारण है, कि पानी को गहराई से प्राप्त करने के लिए अतिरिक्त प्रयास करने पड़ते है। इस तरह (आधुनिक) के तकनीक प्रयास उस समय उपलब्ध नहीं थे, इसलिए पानी के प्रति संवेदना उत्पन्न करने के लिए पानी और खेती से जुड़े कई मुहावरे एवं लोकोक्ति प्रचलित हो गए, ताकि लोग पानी के उपयोग के प्रति संवेदशील हो सके। किसी भी समाज की महत्वपूर्ण इकाई परिवार है और भारतीय समाज में पुत्र को अत्यधिक महत्व दिया गया है और उसी से मोक्ष प्राप्त होता है। इसलिए समाज में पानी के महत्व को पुत्र के साथ जोड़कर समझाने का प्रयास किया है।

'दस कुओं के बराबर एक तालाब, दस तालाब के बराबर एक झील,दस झीलों के बराबर एक पुत्र पानी की आवश्यकता में ही समाज की निरंतरता जुडी है। पानी की उपलब्धता के अनुक्रमानुपाती समाज की स्थिरता होती है। जब भी इस प्राकृतिक सामाजिक सूत्र में असंतुलन होगा, समाज को हानि का सामना करना पड़ेगा, इसलिए सामाजिक निंरतरता के लिए भी एक आवश्यक तत्व है। परन्तु समाज में आरंभ से ही तकनीकी का विकास नहीं हुआ था, ऐसी स्थिति में खेती आधारित समाज का अस्तित्व बचा रहे, इसके लिए पानी के प्रति लोगों को संवेदनशील एवं गंभीर बनाने के लिए तरह तरह की लोकोक्तियाँ ग्रामीण समाज में प्रचलित हो गई। दस धान, उखेरा। तीनों पानी के चेरा (घाघ 2001) किस फसल को पानी चाहिए और किसको ज्यादा पानी की आवश्यकता नहीं है, इस तथ्य को मुहावरों के जोड़ देने के कारण, पानी के प्रति एक सहज चेतना जाग्रत करना सहज था। मनुष्य की जैविक आवश्यकताओं

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(मैलानोवास्की) में उपापचय की पूर्ति भोजन से ही करनी थी। मनुष्य के लिए यह आसान नहीं था, कि वह प्राकृतिक अवयवों का मूल रूप से उपयोग कर सके इसके लिए संस्कृति के सहारे उसने अपने स्थायित्व के लिए जिस तरह के भोजन को प्राथमिकता दी, उसे वह स्वंय उगाता था और जो पूरी तरह पानी की उपलब्धता पर निर्भर था। इसलिए संस्कृति एवं सामाजिक सरंचना के निर्माण में पानी की आवश्यकता को कम करे नहीं आका जा सकता।

आज की अपेक्षा पूर्व में ग्रामीण संस्कृति की निरंतरता के लिए पानी का होना पूरी तरह प्रकृति पर आधारित था इसलिए पानी को भी उपेक्षित दृष्टि से नहीं देखा गया। पीने के पानी से ज्यादा महत्वपूर्ण यह था, कि खेती के लिए पानी मिल गया है या नहीं, इस प्रक्रिया ने मनुष्य और समाज दोनों को चिंतनशील बना दिया और इसी के परिणामस्वरुप ग्रामीण संस्कृति का किसान एक प्राकृतिक वैज्ञानिक भी बनने को अग्रसर हो गया।

पानी बरसे आधे पूस, आधा गल्ला आधा भूस।

इस प्रकार ग्रामीण संस्कृति में पानी के बरसने की अवधि से यह गणना तक होने लगी कि खेती करने वाले को कितना अनाज प्राप्त होगा, पर संस्कृति में उत्पन्न हुई इस तरह की वैज्ञानिकता का ह्रास भी नई तकनीकी के आ जाने से होने लगा। इस नई तकनीक के द्धारा किसान भूगर्भ जल का उपयोग खेती के लिए करने लगा, जिससे भू-गर्भ जल का दोहन बढ़ गया और एक पर्यावरणीय असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो गई। पानी को अत्यधिक दोहन का शिकार होना पड़ा, पानी की कृत्रिम तरह से उपलब्धता बढ़ जाने के कारण स्वतंत्रता के समय खेती की जाने वाली जमीन 19.5 लाख हेक्टेयर थी, जो 1990-2000 में पंचानवे लाख हेक्टेयर हो गई। परंतु इस कारण पानी की समस्या से हम उत्तरोत्तर ज्यादा ग्रस्त होते चले गए।

देश की स्वतंत्रता के समय प्रति व्यक्ति वार्षिक जल की उपलब्धता पांच हजार एक सौक्यूबिक मीटर थी, जो वर्ष 2000 में घटकर बाईस सौ हो गई और वर्ष 2017 तक पानी एक दबाव की स्थिति में आ जायेगा और प्रति व्यक्ति वार्षिक उपलब्धता सोलह वर्ष क्यूबिक मीटर हो जावेगी (यू.एन.रिपोर्ट2007) यही कारण है, कि वर्ष 2005-2015 के दशक को पानी के प्रति समर्पित कया गया है एवं वर्ष 2007 को पानी कमी से निपटने का वर्ष मनाया गया। (यू.एन.रिपोर्ट2007) पानी और समाज के बीच उत्पन्न हो रहे असंतुलन के कारण उत्पन्न स्वास्थ्य समस्या से आर्थिक पर भी गंभीर प्रभाव पड़ रहा है। जिससे परंपरागत संस्कृति के वाहक समूह में गरीबी बढ़ी ही है।

भारतीय संस्कृति में अनेकता में एकता की विशेषता को प्रस्तुत किया गया है और यदि समाज शास्त्रीय विधि शास्त्रों के अंतर्गत विधि का समाज पर और समाज का विधि पर प्रभाव देखें, तो भारतीय संविधान में स्पष्ट है कि किसी भी तरह का भेदभाव नहीं हो सकता (अनुच्छेद 15) लेकिन पानी के उपयोग स्तर पर समाज पर विधि का प्रभाव काफी देर से हो सका। अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत पानी के अधिकार को सुनिश्चित किया गया है। पर स्वच्छ पानी आज भी समाज की एक बड़ी समस्या है। यूँ तो पानी से इकाई स्तर पर किसी व्यक्ति विशेष को ही हानि होती है। परंतु व्यक्ति किसी न किसी संस्कृति समाज का सदस्य होता है। जो अंतत: उस पर भी प्रभाव डालता है। इसलिए पानी का विश्लेषण संस्कृति एवं समाज पर पड़ने वाले प्रभाव के संदर्भ में भी किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. टायलर ई.वी., 1871 प्रिमिटिव कल्चर, मैलानोवस्की बी. के., 1944, ए, साइंटिफिक थ्योरी ऑफ कल्चर एंड अदर एसेज, यू.एन. रिपोर्ट, 2007 अंक मार्च विधि भारती जुलाई - सितंबर 2012

****

अनूपपुर जिले की अनुसूचित जाति का मानव संसाधन के रूप में विश्लेषण

डॉ. राजकुमार विश्वकर्मा *

शोध सारांश – मानव स्वयं एक आर्थिक संसाधन है, जब क्षेत्र के मुख्य जातियों का विकास होगा तो उस क्षेत्र का भी विकास आवश्यक होगा और देश का भी तीव्र गति से आर्थिक विकास होगा। मनुष्यों में संसाधन उत्पन्न करने की क्षमता है इसलिए उसे संसाधन का जनक भी कहा गया है।

2001 में अनुसूचित जाति का जिले की कुल जनसंख्या का 7.3प्रतिशत हो गया जबकि 1991 में 7.4प्रतिशत था। इस प्रकार जिले में 0.1प्रतिशत की कमी हुई। 2001 की जनगणना के अनुसार 60.29प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में और 39.51प्रतिशत लोग शहरी क्षेत्रों में पाए जाते है। बिजुरी राजस्व निरीक्षक मण्डल में अनुसूचित जातियों की संख्या 11.16प्रतिशत है जबकि खमरौध राजस्व निरीक्षक मण्डल में 1.95प्रतिशत अनुसूचित जातियों की संख्या है। 2011 की जनगणना के अनुसार जिले में कुल ग्रामीण जनसंख्या का 9.19प्रतिशत अनूसुचित जाति के लोग निवास करते हैं। जिसमें 50.38प्रतिशत पुरूष एवं 49.62प्रतिशत स्त्रियों की संख्या है।

1991 में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 15103 थी जो अनूपपुर के नगरीय क्षेत्र में निवास करती थी और जिले की कुल जनसंख्या का मात्र 4.32प्रतिशत थी, जिसमें 53.65प्रतिशत पुरूष एवं 46.35प्रतिशत स्त्रियाँ थी। 2001 में अनूपपुर जिले में अभूतपूर्व परिवर्तन दिखाई देने लगा। अनूपपुर जिले में नगरों का उदय हुआ और नगरीय जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। तथा अनुसूचित जातियों की संख्या बढ़कर 24408 हो गई जो जिले की नगरीय जनसंख्या का 11.89प्रतिशत है। जिसमें 51.87प्रतिशत पुरूष एवं 48.13प्रतिशत स्त्रियाँ है।

प्रस्तावना – जातीय संरचना से तात्पर्य जनसंख्या के ऐसे समूह से है, जिसमें विभिन्न जाति वर्ग के लोग आते है, जिसमें भारत की विभिन्न जातियाँ आती हैं। भूगोल में जातीय संख्या एवं संरचना का अध्ययन इसलिए आवश्यक है, क्योंकि विभिन्न जातियों में जाति वर्ग की पहचान एवं पृथक विचारधारा तथा रीति रिवाज होते हैं। जाति का अध्ययन देश के संदर्भ में अच्छे से किया जा सकता है लेकिन छोटी सी इकाई के संदर्भ में किया जाना कठिन होता है।

अध्ययन क्षेत्र अनूपपुर जिला जनजातीय बाहुल्य क्षेत्र है। यहां की सम्पूर्ण जनसंख्या में जनजातियों का प्रतिशत ज्यादा है तथा अन्य जाति की संख्या कम है। इन जन जातियों का सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक विकास काफी पिछड़ी अवस्था में है साथ ही जिले का भी आर्थिक विकास काफी पिछड़ा है। शासन स्तर पर किए जा रहे कार्यो से अब इसमें सुधार हो रहा है।जिले में अनुसूचित जाति का पृथक से अध्ययन इसलिए आवश्यक है, क्योंकि जिले में अनुसूचित जाति का सामाजिक स्तर प्राचीन समय से निम्न है।

अध्ययन क्षेत्र –जिला अनूपपुर मध्यप्रदेश के उत्तर-पूर्व में स्थित वनाच्छादित एवं विषम धरातल वाला पहाड़ी क्षेत्र है। इसका भौगोलिक विस्तार 22°38'30' उत्तरी अक्षांश से 23.2530 उत्तरी अक्षांश तथा 81°7'30' पूर्वी देशांतर से 82°12'01' पूर्वी देशांतर के मध्य है। राजनैतिक दृष्टि से अनूपपुर जिला 5 जिलों से घिरा है। इसके उत्तर में शहडोल, पूर्व में कोरिया, दक्षिण-पूर्व में बिलासपुर, दक्षिण-पश्चिम में डिन्डोरी एवं उत्तर-पश्चिम में उमरिया जिला स्थित है। जिले की उत्तर दक्षिण अधिकतम लम्बाई 70 किमी. तथा पूर्व पश्चिम अधिकतम चौड़ाई 80 किमी. है। जिले का वर्तमान कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 3746.71 वर्ग किमी है। अनूपपुर जिले को चार तहसील (अनूपपुर, कोतमा, जैतहरी, पुष्पराजगढ़) एवं 9 राजस्व निरीक्षक मण्डल (अनूपपुर, फुनगा, कोतमा, बिजुरी, जैतहरी, भेजरी, खमरौध, गिरारी, दमेहरी) में बांटा गया है। 2011 के जनगणनानुसार अध्ययन क्षेत्र की कुल जनसंख्या 749237 व्यक्ति है, जनसंख्या की दृष्टि से अनूपपुर मध्यप्रदेश का 45वां जिला है। जिले की स्थिति मानचित्र क्रमांक - 1 से स्पष्ट होता है।

शोध विधि –प्रस्तुत शोधपत्र में वर्ष 1991 से 2011 तक की जनसंख्या का विवेचन किया गया है। वर्ष 2011 तक की ग्रामीण, नगरीय एवं कुल जनसंख्या का अन्तराल, वृद्धि दर को राजस्व निरीक्षक मण्डल स्तर पर किया गया है। इस अध्ययन में द्वितीयक आंकड़ों का प्रयोग किया गया है, जिन्हें जिला सांख्यिकीय पत्रिका, जिला जनगणना पुस्तिका एवं सी.डी. तथा जनसंख्या सारणी, मध्यप्रदेश और भारत की जनगणना से प्राप्त किया है। मानचित्रण में वर्णमात्री विधि का प्रयोग किया गया है।

ग्रामीण एवं नगरीय वितरण –अध्ययनक्षेत्र के ग्रामीण एवं नगरीय दोनों क्षेत्रों में अनुसूचित जातियाँ पायी जाती है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इन्हें अलग-अलग (ग्रामीण एवं नगरीय) कर अध्ययन किया गया है।

ग्रामीण वितरण –अनूपपुर जिले की अनुसूचित जातियों के वितरण में क्षेत्रीय विभिन्नताएँ होना आवश्यक है, जब हम जनसंख्या के अध्ययनमें विवरण का अध्ययन करते हैं तो उस समय स्पष्ट हो जाता है कि जनसंख्या सभी स्थानों में एक समान न पायी जाकर अलग-अलग स्थानों में अलग-अलग पायी जाती है जिसका मुख्य कारण भौतिक, सामाजिक, एवं सांस्कृतिक कारण हो सकता है। अध्ययन के लिए जिले की अनुसूचित जाति जनसंख्या के वितरण को तीन भागों में बाँट कर अध्ययन किया गया है-

1. **प्रथम श्रेणी –** इस श्रेणी के अन्तर्गत वे राजस्व निरीक्षक मण्डल के क्षेत्र आते है, जहाँ अनुसूचित जातियों की संख्या 10प्रतिशत या उससे अधिक

* डागा गर्ल्स हॉस्टल के पीछे, आर.डी.ए. कालोनी के पास, कांदुल रोड, बेरियाखुर्द, जिला - रायपुर (छ.ग.) भारत

पायी जाती है। इस श्रेणी के राजस्व निरीक्षक मण्डलों में बिजुरी राजस्व निरीक्षक मण्डल प्रथम स्थान पर है जहाँ 15.42 प्रतिशत लोग अनुसूचित जाति के रहते हैं। इसके अतिरिक्त भेजरी, फुनगा, कोतमा राजस्व निरीक्षक मण्डल में क्रमश प्रतिशत 13.47 प्रतिशत, 11.97 प्रतिशत, 11.72 प्रतिशत अनुसूचित जाति की जनसंख्या निवास करती है। बिजुरी राजस्व निरीक्षक मण्डल में अनूपपुर जिले की सर्वाधिक प्रतिशत अनुसूचित जाति की जनसंख्या निवास करती है।

2. **द्वितीय श्रेणी प्रतिशत –** इस श्रेणी में उन क्षेत्रों को रखा गया है जिनमें अनुसूचित जाति की जनसंख्या 5प्रतिशत से 10 प्रतिशत तक है जिले में इस तरह के राजस्व निरीक्षक मण्डलों में जैतहरी, गिरारी और अनूपपुर राजस्व निरीक्षक मण्डल आते हैं। जैतहरी राजस्व निरीक्षक मण्डल में 7.53 प्रतिशत, गिरारी में 7.08 प्रतिशत और अनूपपुर राजस्व निरीक्षक मण्डल में 6.25 प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग रहते हैं। इन क्षेत्रों में मध्यम अनुपात में अनुसूचित जाति के लोग पाए जाते हैं।

3. **तृतीय श्रेणी प्रतिशत –**इस श्रेणी में उन राजस्व निरीक्षक मण्डलों को रखा गया है। जिनमें अनुसूचित जातियों की संख्या 5प्रतिशत से कम पायी गई है। जिले में इस श्रेणी के राजस्व निरीक्षक मण्डलों में दमेहरी और खमरौध राजस्व निरीक्षक मण्डल आते हैं। इन राजस्व निरीक्षक मंडलों में अल्प मात्रा में अनुसूचित जाति के लोग रहते हैं। दमेहरी निरीक्षक मण्डलों में 4.45 प्रतिशत और खमरौध राजस्व निरीक्षक मण्डल में 2.61 प्रतिशत लोग अनुसूचित जाति के रहते हैं। इन क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों का अनुपात अपेक्षाकृत कम पाया जाता है। खमरौध राजस्व निरीक्षक मण्डल में सबसे कम अनुसूचित जाति के लोग निवास करते हैं।अनूपपुर जिले में अनुसूचित जातियों का राजस्व निरीक्षक मण्डलावार ग्रामीण वितरण सारणी क्रमांक 1 एवं 2 द्वारा व्यक्त किया गया है।

(मानचित्र देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक –1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक–2

जिला अनूपपुर – अनुसूचित जातियों का ग्रामवार वितरण(2011)

जनसंख्या की श्रेणी	गाँवों की संख्या	प्रतिशत
निरंक	8	1.33
0.5	32	5.32
6.15	81	13.48
16.25	122	20.30
26.35	98	16.31
36.50	112	18.64
51 से अधिक	148	24.63
कुल	601	100

स्त्रोत – प्रतिशत जनगणना कार्य निदेशालय, भोपाल, मध्यप्रदेश (2011)

अनूपपुर जिले की अनुसूचित जाति की जनसंख्या का ग्रामवार अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि 2011 की जनगणना के अनुसार अनूपपुर जिले के चार तहसीलों का विभाजन 601 ग्रामों में हुआ है। जिले के 8 गाँव ऐसे है, जहाँ की आबादी निरंक है, तथा 32 ग्रामों में जिले की 5.32प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है, इसके अतिरिक्त 81 गाँवों में जिले की 13.48 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है, जिले के 122 ग्रामों में 20.30 प्रतिशत जनसंख्या है, और इन गाँवों में 16 प्रतिशत से लेकर 25 प्रतिशत तक अनुसूचित जाति के लोग निवास करते हैं। 98 गाँवों में जिले की 16.31 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है तथा इन गांवों में 26प्रतिशत से 35 प्रतिशत तक अनुसूचित जाति के लोग निवास करते हैं। 112 गाँवों में जिले की 18.64 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है तथा इन गाँवों में 36प्रतिशत से 50 प्रतिशत तक अनुसूचित जाति के लोग निवास करते हैं। 148 गाँवों में जिले की 24.63 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है और इन गाँवों में अनुसूचित जाति की जनसंख्या लगभग 50 प्रतिशत से अधिक है।

नगरीय वितरण – यह स्पष्ट है कि अनूपपुर जिले में नगरों का अभाव है। शत प्रतिशत नगरीय अनुसूचित जाति की जनसंख्या अति अल्प मात्रा में पायी जाती है। जिले के नगरीय वितरण में दृष्टि डालने से स्पष्ट होता है कि 2001 तक अनुसूचित जाति की 9.78 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती थी जिसमें 52.25 प्रतिशत पुरूष एवं 47.75 प्रतिशत स्त्रियाँ है। 2011 की जनगणना के अनुसार 24408 जनसंख्या है जिसमें 12661 पुरूष एवं 11747 स्त्रियाँ है। अर्थात् कुल नगरों में 11.89 प्रतिशत जनसंख्या है। जिसमें 51.87 प्रतिशत पुरूष और 48.13 प्रतिशत स्त्रियाँ है।जिले की नगरीय अनुसूचित जाति की जनसंख्या में विभिन्नता को देखते हुये नगरीय अनुसूचित जाति की जनसंख्या को तीन श्रेणियों में बांट कर अध्ययन किया गया है–

1. **प्रथम श्रेणी –** इस श्रेणी में उन नगरों को रखा गया है जिनकी जनसंख्या 20 प्रतिशत से अधिक है। जिले में इस श्रेणी वाले नगरों में मुख्य रूप से बदरा एवं देवरी के नगरीय क्षेत्र आते हैं। जहाँ मुख्य रूप से अनुसूचित जाति की जनसंख्या निवास करती है। बदरा में 29.32 एवं देवरी में 25.57प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग निवास करते हैं।

2. **द्वितीय श्रेणी –** इस श्रेणी में उन नगरों को रख कर अध्ययन किया गया है, जिनमें अनुसूचित जाति की जनसंख्या 10 से 20प्रतिशत के बीच है जिले में इस श्रेणी वाले नगरों में अनूपपुर जिले के बिजुरी राजस्व निरीक्षक मण्डल का बिजुरी, डोला, बनगवाँ, डुमर कछार नगरीय क्षेत्र, अनूपपुर राजस्व निरीक्षक मण्डल का केल्होरी नगरीय क्षेत्र और फुनगा राजस्व निरीक्षक मण्डल का अमलाई पार्ट और पासन नगरीय क्षेत्र आते हैं, जहां अमलाई पार्ट में 18.41, डुमर कछार में 13.47, बनगवाँ में 13.22, बिजुरी में 13.20, पासन में 12.77 एवं केल्होरी में 11.86प्रतिशत अनुसूचित जाति की जनसंख्या निवास करती है।

3. **तृतीय श्रेणी –** इस श्रेणी में उन नगरों को सम्मिलित किया गया है जिनकी अनुसूचित जाति की जनसंख्या 10 प्रतिशत से भी कम है जिले में इस प्रकार के नगरों में कोतमा राजस्व निरीक्षक मण्डल का कोतमा नगरीय क्षेत्र, बिजुरी का डोला नगरीय क्षेत्र, अनूपपुर का देवहरा एवं अनूपपुर नगरीय क्षेत्र, भेजरी का अमरकंटक नगरीय क्षेत्र और जैतहरी राजस्व निरीक्षक मण्डल का जैतहरी नगरीय क्षेत्र आता है, जहाँ कोतमा में 8.63, अनूपपुर में 8.43, डोला में 8.10, देवहरा में 7.83, जैतहरी में 7.34 और अमरकंटक में 6.17प्रतिशत अनुसूचित जाति के लोग निवास करते हैं।

सारणी क्रमांक–3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

कार्यशील मानव संसाधन में अनुपात – अनूपपुर जिले की अनुसूचित जातियों का अध्ययन के साथ–साथ कार्यशील जनसंख्या में अनुपात का अध्ययन करना आवश्यक है। कार्यशील जनसंख्या के अध्ययन से अनूपपुर जिले की अनुसूचित जाति की आबादी में समाजिक जीवन स्तर स्पष्ट हो जायेगा। मूलत प्रतिशत अनुसूचित जातियों के व्यवसाय परंपरागत होते हैं, और वे उस व्यवसाय को करके अपना जीवन यापन करते हैं।

साधारणत प्रतिशत आधुनिक समाज में सभी परंपरागत जातिगत व्यवसाय के अतिरिक्त थोड़ा बहुत खेती का कार्य होता है। वर्तमान में परंपरागत जातिगत व्यवसाय बहुत कम पाया जाता है। परंपरागत जातिगत व्यवसायों में चमारों का चमडे क़ा काम, कुम्हारों का मिट्टी के बर्तन बनाने का काम एवं बसारो का बांस की टोकनी बनाने का काम दिखाई देता है।किसी क्षेत्र या समाज के स्तर का संबंध उस क्षेत्र के कार्यशील जनसंख्या से होता है, जिस समाज या जाति में लोग अधिक कार्यशील होते है। उस समाज का अर्थिक एवं समाजिक स्तर अच्छा होता है। सामाजिक स्तर को जानने के लिए अनुसूचित जाति कार्यशील जनसंख्या के अनुपात का अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

अनूपपुर जिले की अनुसूचित जातियों में 47.86 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या है, जिसमें 78.35 प्रतिशत पुरूष एवं 21.65 प्रतिशत स्त्रियाँ है। तथा अकार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत 52.14 प्रतिशत है। जिसमें 50.87 प्रतिशत पुरूष एवं 49.13 प्रतिशत स्त्रियाँ है। राजस्व निरीक्षक मण्डलानुसार कार्यशील जनसंख्या में 38.45 प्रतिशत काश्तकार हैं जिसमें काश्तकारों का प्रतिशत क्रमश:प्रतिशत अनूपपुर 35.31, फुनगा 25.77, कोतमा 30.68, बिजुरी 19.25, जैतहरी 25.96, खमरौध 41.25, गिरारी 37.46, दमेहरी 31.89 और भेजरी में 39.88 है। खेतिहर मजदूरों का प्रतिशत 35.37प्रतिशत है 2011 के आधार पर खेतिहर मजदूरों का प्रतिशत क्रमशप्रतिशत अनूपपुर 24.57, फुनगा 19.78, कोतमा 22.35, बिजुरी 24.59, जैतहरी 17.35, खमरौध 30.84, गिरारी 33.22, दमेहरी 38.40 और भेजरी में 33.53 है। पारिवारिक उद्योगों में जिले की अनुसूचित जाति की जनसंख्या का 2.78प्रतिशत कुल कार्यशील जनजाति जनसंख्या है। जिले में इसके अन्तर्गत राजस्व निरीक्षक मण्डलावार प्रतिशत अनूपपुर 2.75, फुनगा 1.59, कोतमा 1.47, बिजुरी 1.08, जैतहरी 2.69, खमरौध 0.97, गिरारी 1.75, दमेहरी 1.98 और भेजरी में 1.77 है। अन्य कार्यों में जिले की अनुसूचित जाति जनसंख्या का 23.40 प्रतिशत कार्य करती है जिसमें अनूपपुर 37.37प्रतिशत, फुनगा 52.86 प्रतिशत, कोतमा 45.50प्रतिशत, बिजुरी 55.08 प्रतिशत, जैतहरी 54.00 प्रतिशत, खमरौध 26.94 प्रतिशत, गिरारी 27.57 प्रतिशत, दमेहरी 27.73 प्रतिशत और भेजरी में 24.82 प्रतिशत है।

अध्ययन क्षेत्र में अनुसूचित जाति की कार्यशील जनसंख्या का अनुपात अनुसूचित जाति की कुल जनसंख्या का 2.35 प्रतिशत है। इसी प्रकार कोतमा में अनूपपुर 2.54 प्रतिशत, फुनगा 2.12 प्रतिशत, कोतमा 2.38 प्रतिशत, बिजुरी 1.97 प्रतिशत, जैतहरी 2.49 प्रतिशत, खमरौध 1.97 प्रतिशत गिरारी 1.59 प्रतिशत दमेहरी 1.72 प्रतिशत और भेजरी में 1.96 प्रतिशत कार्यशील मानव संसाधन में अनुपात है।

सारणी क्रमांक -4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

निष्कर्ष - अनूपपुर जिले की अनुसूचित जाति जनसंख्या का मानव संसाधन के रूप में विकसित नहीं हो पायी है। जिले में अनुसूचित जाति का बहुत छोटा अंश मानव संसाधन के रूप में विकसित है। उनमें से अधिकांश अपने पारंपरिक व्यवसाय में लगे हुए हैं। महिला अनुसूचित जाति संसाधन के रूप में अपना योगदान देती है। अशिक्षा यहाँ के मुख्य जातियों को अपने पारम्परिक व्यवसायों से दूर कर रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों से नौकरियों के लिए सस्ते श्रमिक शहर की ओर जाते हैं और शहरों में निर्माण कार्य में विशेष योगदान देते है।अनुसूचित जाति के लोग ज्यादा शिक्षित नहीं हैं। जिस कारण इन्हें ऊँचे पद पर काम नहीं मिलता है परन्तु अब शासन द्वारा अनुसूचित जाति को आरक्षण प्रदान किया गया है। जिससे वह सरकारी नौकरियाँ प्राप्त कर रहे हैं और देश के विकास में सहयोग प्रदान कर रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में अनपढ़ व अकुशल श्रमिक जनसंख्या का प्रतिशत अधिक है और वे अपनी अजीविका चलाने के लिए मजदूरी करते हैं यह खेतों में, घर बनाने का, लोहे का इत्यादि कार्यो में संलग्न होते हैं।

अनुसूचित जाति का अल्प भाग जिले में मानव संसाधन के रूप में है। जिसका प्रतिशत कुल जनसंख्या से 9.93 प्रतिशत है। कुल अनुसूचित जाति में काश्तकार 38.45 प्रतिशत, खेतिहर मजदूर 35.37 प्रतिशत, पारिवारिक उद्योगों में 2.78 प्रतिशत, और अन्य कार्यो में 23.40 प्रतिशत जनसंख्या संलग्न है। संसाधन के रूप में अनुसूचित जाति जिले में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। परन्तु अशिक्षा के कारण इनका गुण समाज में सर्वोच्च स्थान नहीं पा रहा है, और मानव संसाधन के रूप में पूर्ण रूपेण विकसित एवं परिवर्तन नहीं हो पा रहे हैं।अनूपपुर जिले के अनुसूचित जाति के अवलोकन से पाया गया कि जिले में इनकी संख्या अधिक नहीं हैं फिर भी इनका स्तर अच्छा नहीं हैं जबकि जनसंख्या संसाधन के रूप में क्षेत्रीय विकास में अपकी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चान्दना, आर. सी., 1999, जनसंख्या भूगोल, कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
2. मौर्य एस. डी., 2005, जनसंख्या भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, पब्लिशर्स एन्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद, पृ. 92-104.
3. डॉ. चतुर्भुज मामोरिया एवं डॉ. बी. एल. शर्मा, 'संसाधन भूगोल' साहित्य भवन आगरा 1990, पृ. 36
4. डॉ. एस. डी. कौशिक एवं डॉ. अल्का गौतम, 'संसाधन भूगोल' रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ 1999, पृ. 196-200
5. करन महेश्वर प्रसाद, 'संसाधन भूगोल' किताब घर कानपुर 1991, पृ. 175-177

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

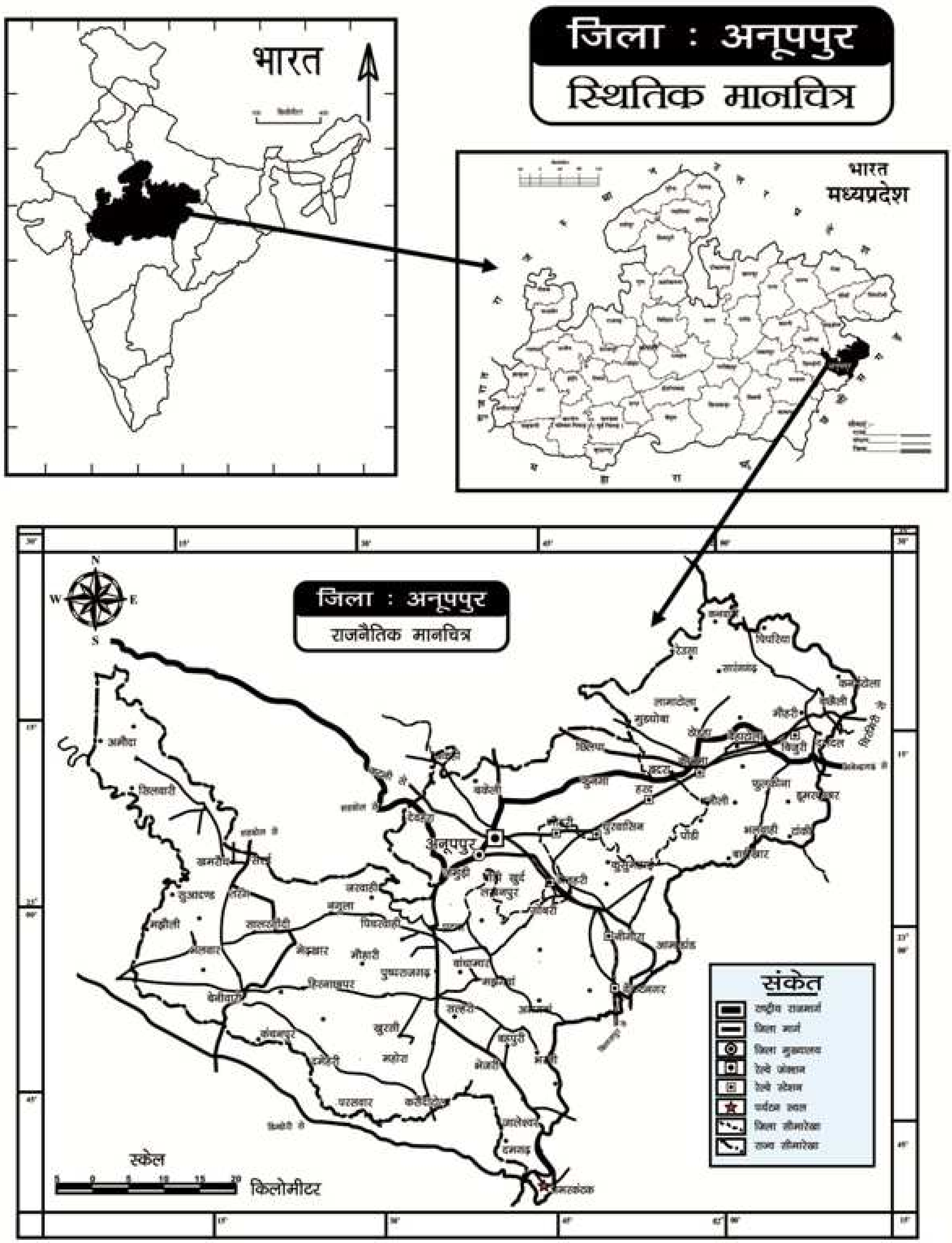

स्त्रोत : स्थलाकृतिक मानचित्र, भारत

मानचित्र क्रमांक :- 1

सारणी क्रमांक – 1

जिला अनूपपुर : अनुसूचित जातियों का ग्रामीण वितरण–2011

राजस्व निरीक्षक मण्डल	अनुसूचित जाति जनसंख्या	अनुसूचित जाति	पुरूष जनसंख्या	पुरूष प्रतिशत	स्त्री जनसंख्या	स्त्री प्रतिशत
अनुपपुर	3366	6.25	1712	50.86	1654	49.14
फुनगा	7304	11.97	3685	50.45	3619	49.55
कोतमा	6512	11.72	3271	50.29	3241	49.77
बिजुरी	10412	15.42	5192	49.87	5220	50.13
जैतहरी	6354	7.53	3205	50.44	3149	49.56
खमरौध	1311	2.61	679	51.79	632	48.21
गिरारी	3512	7.08	1805	51.40	1707	48.60
देमहरी	2559	4.45	1309	51.15	1250	48.85
भेजरी	8647	13.47	4322	49.98	4325	50.02
कुल	49977	9.19	25180	50.38	24797	49.62

स्त्रोत – प्रतिशत जनगणना कार्य निदेशालय, भोपाल, मध्यप्रदेश (2011)

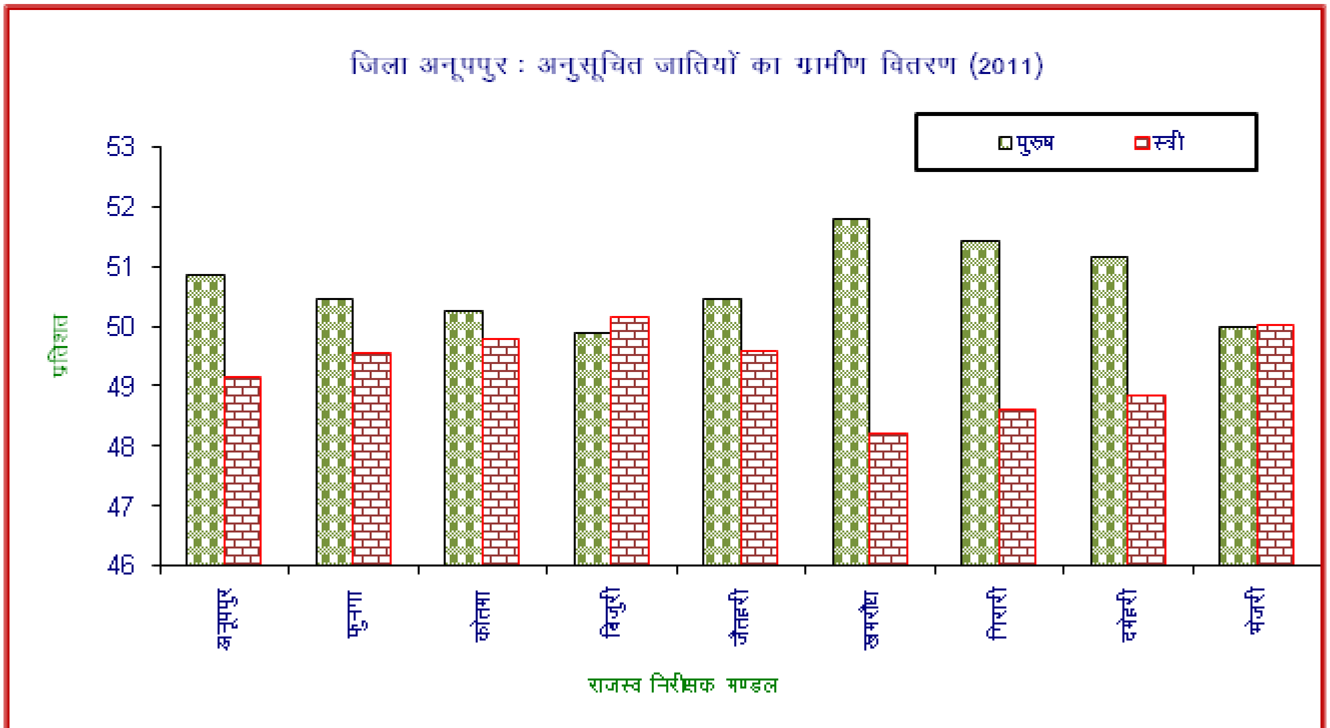

आरेख क्र 1

सारणी क्रमांक-3

जिला अनूपपुर : अनुसूचित जाति जनसंख्या का नगरीय वितरण-2011

नगर का नाम	**अनुसूचित जाति जनसंख्या**	**अनुसूचित जाति**	**पुरूष जनसंख्या**	**पुरूष प्रतिशत**	**स्त्री जनसंख्या**	**स्त्री प्रतिशत**
कोतमा	2564	8.63	1330	51.87	1234	48.13
बिजुरी	4315	13.20	2207	51.15	2108	48.85
डोला	751	8.10	389	51.80	362	48.20
बनगवाँ	2759	13.22	1448	52.48	1311	47.52
डूमर कछार	1277	13.47	675	52.86	602	47.14
जैतहरी	616	7.34	330	53.57	286	46.43
अमरकंटक	519	6.17	297	57.23	222	42.77
अनूपपुर	1678	8.43	895	53.34	783	46.66
केल्होरी	1043	11.86	545	52.25	498	47.75
देवरी	1311	25.57	683	52.10	628	47.90
देवहरा	758	7.83	404	53.30	354	46.70
पासन	3632	12.77	1837	50.58	1795	49.42
अमलाई पार्ट	1782	18.41	904	50.73	878	49.27
बदरा	1403	29.32	717	51.10	686	48.90
कुल	24408	11.89	12661	51.87	11747	48.13

स्त्रोत - प्रतिशत जनगणना कार्य निदेशालय, भोपाल, मध्यप्रदेश (2011)

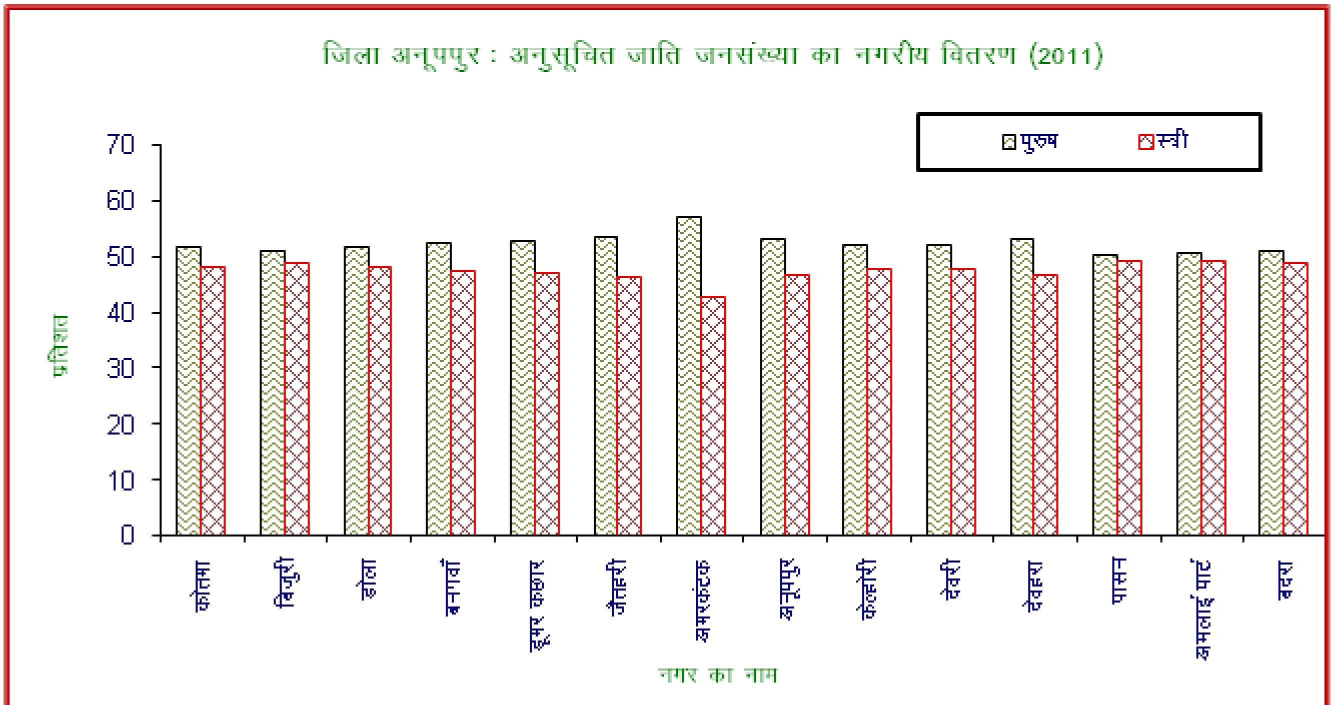

आरेख क्र 2

सारणी क्रमांक -4

जिला अनूपपुर - अनुसूचित जातियों की कार्यशील जनसंख्या एवं अनुपात -2011

राजस्व निरीक्षक मण्डल	काश्तकार	खेतिहर मजदूर	मुख्य पारिवारिक उद्योग	अन्य कार्य	अनुपात
अनूपपुर	35.31	24.57	2.75	37.37	2.54
फुनगा	25.77	19.78	1.59	52.86	2.12
कोतमा	30.68	22.35	1.47	45.50	2.38
बिजुरी	19.25	24.59	1.08	55.08	1.97
जैतहरी	25.96	17.35	2.69	54.00	2.49
खमरौध	41.25	30.84	0.97	26.94	1.97
गिरारी	37.46	33.22	1.75	27.57	1.59
दमेहरी	31.89	38.40	1.98	27.73	1.72
भेजरी	39.88	33.53	1.77	24.82	1.96
कुल	38.45	35.37	2.78	23.40	2.35

स्त्रोत - प्रतिशत जनगणना कार्य निदेशालय, भोपाल, मध्यप्रदेश (2011)

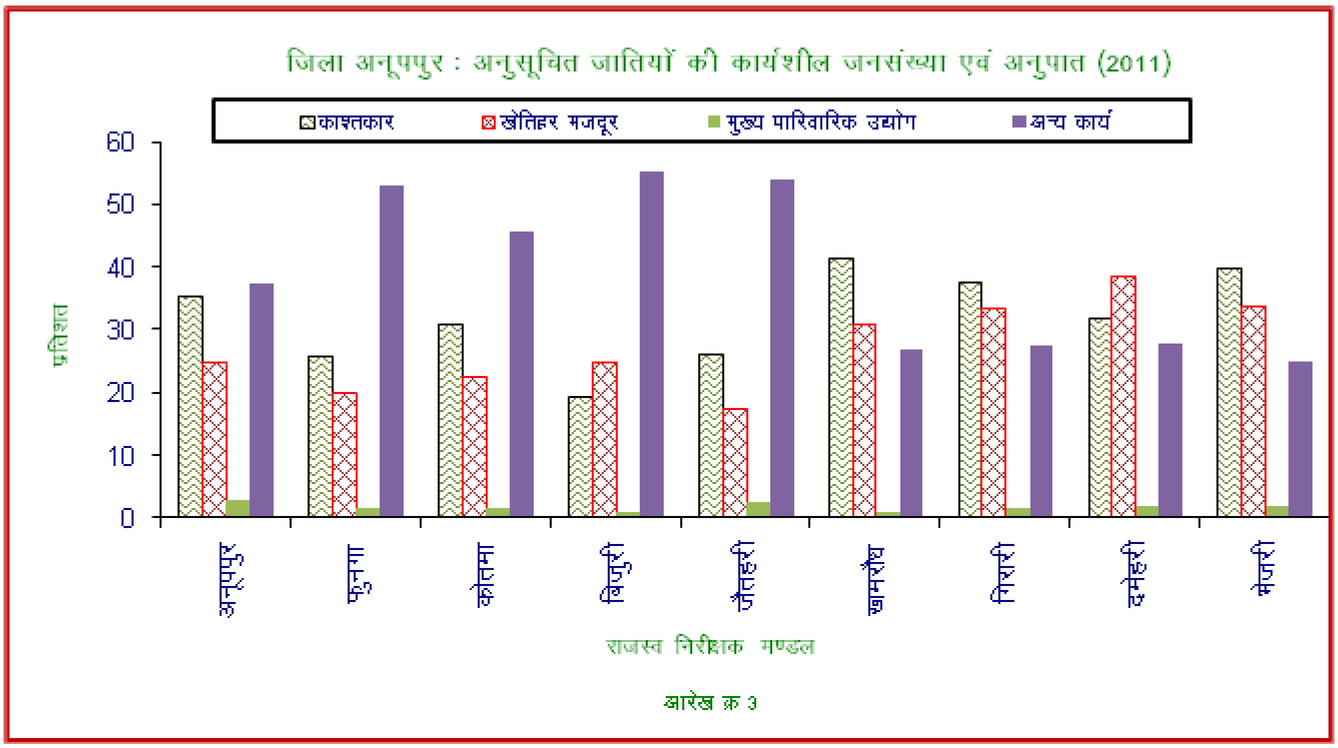

****

बहुस्तरीय नियोजन एवं ग्रामीण विकास बलरामपुर-रामानुजगंज जिला (छ.ग.) के विशेष संदर्भ में

प्रेमचन्द यादव * डॉ. काजल मोईत्रा **

शोध सारांश - छत्तीसगढ़ के नवोदित जिला बलरामपुर-रामानुजगंज है। बलरामपुर-रामानुगंज जिला छत्तीसगढ़ राज्य के उत्तरी भाग में स्थित है। जो उत्तर में उत्तर प्रदेश, उत्तर पूर्व में झारखण्ड, दक्षिण-पूर्व में जशपुर और पश्चिम में सूरजपुर तथा दक्षिण में मातृ जिला सरगुजा से घिरा हुआ है। आर्थिक विकास की प्रक्रिया में अभिवृद्धि करने के लिए नियोजन का महत्व तथा भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। विशेषकर विकासशील देशों में जहाँ अनेक कारणों से आर्थिक विकास की गति को उच्चतम स्थान पर पहुंच रहा है। भारतीय नियोजन में तीव्र आर्थिक विकास एवं वितरण का न्याय दोनों ही नियोजन प्रक्रिया को जटिलता प्रदान करते है। जिससे देश को आर्थिक रूप से विकसित देशों की गिनती में आता है। इसी संदर्भ में शोधकर्ता द्वारा बलरामपुर-रामानुगंज जिले को चुना है। इस जिले के रामानुगंज के बहुस्तरीय नियोजन से ग्रामीण विकास के बारे में अध्ययन किया। जिसमें पाया कि विभिन्न प्रकार के बहुस्तरीय कार्यो से ग्रामीणों का विकास हो रहा है। केन्द्र एवं राज्य सरकारों की योजनाओं का पुरा लाभ उठा रहे है। चाहे वो मनरेगा हो या कृषि कार्य के अंतर्गत कृषि ऋण एवं विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ।

प्रस्तावना - बलरामपुर-रामानुगंज जिला छत्तीसगढ़ राज्य के उत्तरी भाग में स्थित है। जो उत्तर में उत्तर प्रदेश, उत्तर पूर्व में झारखण्ड, दक्षिण-पूर्व में जशपुर और पष्चिम में सूरजपुर तथा दक्षिण में मातृ जिला सरगुजा से घिरा हुआ है। बलरामपुर जिला 23^0-23^{0}51' उत्तरी अंक्षाश एवं 82^{0}44'-8401' पूर्वी देशान्तर के बीच फैला हुआ है, इस जिले का कुल क्षेत्रफल 7139 कि.मी. है जबकि यहाँ की कुल जनसंख्या 730491 है। किसी भी क्षेत्र की भू-गर्भिक संरचना का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष प्रभाव वहाँ के धरातलीय स्वरुप मिट्टियों के प्रकार वनस्पति और भूमिगत जल इत्यादि पर पड़ता है। इसलिए किसी भी भौतिक लक्षण उसकी संरचना में घनिष्ठ सम्बध होता है। इस कारण भूगर्भिक संरचना का प्रभाव क्षेत्र विशेष के जल संसाधन कृषि प्रतिरुप तथा मानव अधिवास में स्पष्ट रुप से दिखाई देता है। जनजतीय बहुल इस जनपद में शिक्षा एवं नगरीकरण का स्तर सामान्य है, जहाँ साक्षरता दर 57.98 प्रतिशत, वहीं नगरीय केन्द्र राजपुर, कुसमी, बलरामपुर, रामानुजगंज, वाड्रफनगर में विकास के सामान्य लक्षण दिखाई देते है।

नियोजन संकल्पना की वास्तविक रूपरेखा का उदय कब हुआ, इस सन्दर्भ में निश्चित एवं प्रमाणित रूप से कुछ कहना कठिन प्रतीत होता है, फिर भी ऐसा विश्वास किया जाता है कि प्राचीन काल में क्षेत्र में विद्यमान संसाधनों को आर्थिक विकास हेतु क्षेत्रीय नियोजन आम तौर पर एक उपागम के रूप में अपनाया जाता था। भारतीय सन्दर्भ में समन्वित ग्रामीण क्षेत्रीय विकास की अवधारणा वर्तमान शताब्दी के सातवें दशक की देन है।
आज जिस प्रकार के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक माहौल में हम है, उसमें नियोजन उपक्रम का एक अभीष्ठ जीवन साथी बन चुका है। यदि सामूहिक प्रयासों को प्रभावशाली बनाना है, तो कार्यरत व्यक्तियों को यह जानना आवश्यक है कि उनसे क्या अपेक्षित है ओर इसे केवल नियोजन की मदद से ही जाना जा सकता है। इसीलिए तो कहा जाता है कि प्रभावशाली प्रबन्ध के लिए नियोजन उपक्रम की समस्त क्रियाओं में आवश्यक है। लक्ष्य निर्धारण एवं उस तक पहुँचने तक का मार्ग निश्चित किए बिना संगठन, अभिप्रेरणा, समन्वय तथा नियंत्रण का कोई भी महत्व नहीं रह पायेगा।

नियोजन का महत्व - व्यवसायिक क्षेत्र में अनेक परिवर्तन आते रहते है जो उपक्रम के लिए विकास एवं प्रगति का मार्ग ही नही खोलते है वरन अनेक जोखिमों एवं अनिश्चितताओं को भी उत्पन्न कर देते है। प्रतिस्पर्द्धा, प्रौद्योगिकी, सरकारी नीति, आर्थिक क्रियाओं, श्रम पूर्ति, कच्चा माल तथा सामाजिक मूल्यों एवं मान्यताओं में होने वाले परिवर्तनों के कारण आधुनिक व्यवसाय का स्वरूप अत्यंत जटिल हो गया है। ऐसे परिवर्तनशील वातावारण में नियोजन के आधार पर ही व्यवसायिक सफलता की आषा की जा सकती है।

शोध का उद्देश्य - शोध शीर्षक 'बहुस्तरीय नियोजन एवं ग्रामीण विकास बलरामपुर-रामानुजगंज जिला छ.ग. के विशेष सन्दर्भ में' स्थानीय संसाधन एवं मानव शक्ति के आधार पर क्षेत्र के सर्वांगीण विकास हेतु बहुस्तरीय उपागम को आधार बनाया गया है। विश्लेषण के लिए सामाजिक विज्ञान एवं भूगोल में प्रचलित गुणात्मक एवं मात्रात्मक प्रविधियों का प्रयोग करते हुए अध्ययन क्षेत्र के वर्तमान एवं भावी विकास क्षमता का मूल्यांकन किया गया है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य इस प्रकार है-

1. स्थानीय या पंचायत स्तर पर बहुस्तरीय नियोजन को बढ़ावा देना।
2. अध्ययन क्षेत्र में उपस्थित मूलभूत समस्याओं का अध्ययन कर ग्रामीण नियोजन के महत्ता को स्पष्ट करना।
3. गाँधीवादी ग्रामीण नियोजन को ग्राम स्तर पर स्थायित्व प्रदान करना।
4. जिले में पाये जाने वाले प्राकृतिक संसाधनों की खोज करके उच्च तकनीक एवं प्रशिक्षण द्वारा अधिकतम लाभ प्रदान करना।
5. वृद्धि जनक केन्द्रों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक विकास की महत्ता को स्पष्ट करना।

शोध की परिकल्पना - हम किसी भी कार्य को प्रारंभ करने से पहले उसका लक्ष्य निर्धारित करते है। वैज्ञानिक प्राक्कलपना के द्वारा सामाजिक अनुसंधान का लक्ष्य, क्षेत्र और सम्बन्धित तथ्यों आदि को निश्चित करता है। प्रस्तुत शोध निम्नलिखित परिकल्पनाओं पर आधारित है-

1. ग्रामीण एवं जनजतीय बहुल जिला होने के कारण विकास की स्थिति निम्न है। अत: यहाँ ग्रामीण नियोजन बहुस्तर पर आवश्यक है।

* शोधार्थी (भूगोल) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, जिला - बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एसोसिएट प्राध्यापक (भूगोल) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, जिला - बिलासपुर (छ.ग.) भारत

2. इस जिले में परिवहन एवं संचार का माध्यम विरल है। अत: बहुस्तरीय अध्ययन कर पिछड़े हुए ग्राम में कच्ची एवं पक्के सड़क मार्ग का जाल निर्मित करने होंगे।
3. कृषि का विकास हुआ है किन्तु कृषि पर आधारित लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना अति आवश्यक है।
4. वनों की सघनता तो उपलब्ध है, लेकिन सम्बन्धित बड़े उद्योगों का अभाव है।
5. वृद्धि जनक केन्द्रों का वितरण प्रतिरूप अत्यंत विरल है। अत: इस जिले में प्रमुख तहसील एवं नगरों में वृद्धि के रूप में विकसित कर आर्थिक विकास को गति प्रदान की जा सकती है।

ग्रामीण विकास – आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति किसी भी नियोजन प्रक्रिया के दो महत्वपूर्ण लक्ष्य होते है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति भू-क्षेत्रीय संसाधन, सर्वेक्षण एवं सेवाओं के वैज्ञानिक नियोजन से की जा सकती है। समन्वित क्षेत्रीय विकास का दर्शन नियोजित आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है। इस उपागम को लागू करने के लिए तकनीकी सुधारों एवं नवीन प्रवर्तनों की आवश्यकता होती है। इसके अन्तर्गत भू-मानव संबंध, विभिन्न वर्गो के मध्य सामाजिक संबंध, संसाधनों और आय का वितरण सम्मिलित है। समन्वित उपागम में संस्थागत, सामाजिक और आर्थिक अवरोधों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए, जो विकास के मार्ग एवं गति को रोकते है। अनेक वृद्धि बिन्दुओं से बहुमुखी प्रभाव वाली विकास की तरंगे निकलनी चाहिए, जो अपने संलग्न क्षेत्र को विकसित एवं प्रकाशित कर सके।

इस संकल्पना में निहित तत्व कृषि एवं संयुक्त प्रखण्ड, लघु, कुटीर एवं गृह उद्योग समाजिक सुविधाए जैसे- स्वास्थ्य, शिक्षा, संचार विद्युत एवं बैंक सम्मिलित है। इसके अन्तर्गत विकास दर को गति प्रदान करने वाले संस्थागत परिवर्तन भी सम्मिलित है। इस उपागम के द्वारा स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों की क्षमता का पूर्णतम उपयोग कर अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकेगा। कृषि एवं उद्योग का घनिष्ठ संबंध है, यह संबंध कच्चे पदार्थो की आपूर्ति का ही नहीं वरन् यह उपभोग, बाजारों, श्रम आदि से भी संबधित है। यह पारस्परिक अन्तनिर्भरता एवं उत्पादकता तभी संभव है जबकि शिक्षा, स्वास्थ्य और अनेक सामाजिक सुविधाओं का एक न्यूनतम स्तर ग्रामीण जनसंख्या के लिए उपलब्ध हो।

विगत पंचवर्षीय योजनाओं में कुछ इस प्रकार के लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास किया गया है, जैसे- बरोजगारी एवं अद्धबेरोजगारी को दूर करना, सामाजिक निर्धनतम व्यक्तियों का जीवन स्तर समुन्नत करना, लोगों को आधारभूत सुविधायें जैसे- स्वच्छता, पेयजल, प्रौढ़ एवं प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं, ग्रामीण सड़के, भवन, परिवहन एवं संचार की सुविधाए प्रदान करना।

ग्रामीण विकास योजना के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए चार क्षेत्रों पर विशेष बल देना है। यथा- कृषि, कुटीर एवं लघु उद्योग, समन्वित ग्रामीण विकास के लिए भूक्षेत्रीय नियोजन और न्यूनतम आवश्यकताओं का प्रावधान। समन्वित क्षेत्रीय विकास की योजना के अन्तर्गत इन सभी पक्षों को सम्मिलित किया गया है। समन्वित ग्रामीण विकास के इस बिन्दु पर बहुस्तरीय आर्थिक विकास योजना परिवार एवं ग्राम से लेकर तहसील स्तर तक बनायी जानी चाहिए। इसके बाद इस योजना का उचित क्रियान्वयन एवं जन सहभागिता का विकास करना महत्वपूर्ण पक्ष बन जाते है। पंचायतीराज एवं बहुस्तरीय तथा अनुशासनिक तंत्र को भी पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है। यह कार्यक्रम उत्साहपूर्वक क्रियान्वित किया जाना चाहिए, जिससे कि सामाजिक आर्थिक विकास के लिए वांछित लक्ष्य की प्राप्ति हो सके।

ग्रामीण विकास का तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्र की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में संरचनात्मक परिवर्तन से लगया जाता है, जो ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले निम्न आय वर्ग के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए किए जाते है। इससे एक ओर तो देश के आर्थिक विकास में अवरोध उत्पन्न करने वाले तत्वों जैसे अत्यधिक गरीबी, अत्याचार, अत्यन्त निम्न उत्पादकता एवं ग्रामीण समाज का शोषण और उत्पीड़न से मुक्ति दिलाई जाती है। तो दूसरी ओर उनके विकास की प्रक्रिया को तीव्र करने एवं स्वत: सम्प्रेषणीय बनाने के लिए उन्हें बुनियादी सेवाएँ प्रदान की जाती है तथा आधारभूत ढाँचे को सुधारा जाता है। जैसे सिंचाई हेतु पर्याप्त विद्युत आपूर्ति, उचित दामों में उर्वरकों और कीटनाशकों को उपलब्ध कराना, यातायात एवं भण्डारण सुविधाओं का विकास करना, सरकारी खरीद मूल्य कृषकों के अनुकूल होना, कृषि ऋण, कृषि बीमा और अनुदानों को आसानी से सुलभ कराना और इसके साथ यह भी आवश्यक है कि कृषि अनुपूरक व्यवसायों जैसे पशुपालन, मत्स्य पालन का विकास हो। भारत जैसे देश के लिए ग्रामीण विकास का महत्व और भी बढ़ जाता है जहाँ देश का 60 प्रतिशत आबादी लगभग 115 मिलियन परिवार कृषि क्षेत्र में नियोजित है और यह भारतवर्ष का सबसे अधिक रोजगार प्रदान करने वाला क्षेत्र है।

संयुक्त प्रशिक्षण, भूमि व आर्थिक गतिविधियों के माध्यम से जमीनी स्तर की महिलाओं का विकास किया गया, साथ ही गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के तहत् महिलाओं के लिए प्रेरक प्रयास किए गए व कुछ स्थान आरक्षित किए गए हैं।

- राजनैतिक भागीदारी को बढ़ावा दिया गया तथा पंचायती राज अधिनियम 1993 के तहत् स्थानीय निकायों में 33 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है।
- राष्ट्रीय साक्षरता मिशन व महिला समाख्या के माध्यम से महिलाओं को औपचारिक शिक्षा प्रदान की गयी।

ग्रामीण विकास कार्यक्रम – गाँवों के विकास के लिए सरकार ने अनेक कार्यक्रम एवं परियोजनाएँ क्रियान्वित की। सन् 1952 में सामुदायिक विकास परियोजना प्रारंभ की गई। 1953 में राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम, 1957 में ग्रामीण आवासीय परियोजना, बहुउद्देशीय अनुसूचित जनजाति विकास खण्ड कार्यक्रम 1957, पैकेज कार्यक्रम 1960, गहन जिला कृषि कार्यक्रम 1960, व्यावहारिक आहार कार्यक्रम 1962, ग्रामीण उद्योग परियोजना 1962, गहन कृषि 1964, कृषक प्रशिक्षण एवं शिक्षा कार्यक्रम 1966, ग्रामीण जनशक्ति कार्यक्रम 1969, सूखा क्षेत्र पीड़ित कार्यक्रम 1970, ग्रामीण रोजगार नकदी योजना 1971, जनजाति क्षेत्र विकास कार्यक्रम 1972, ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम 1972, सम्पूर्ण ग्रामीण विकास कार्यक्रम 1979, अन्त्योदय कार्यक्रम 1979, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम 1979, स्वरोजगार हेतु ग्रामीण युवा प्रशिक्षण कार्यक्रम (ट्राइसेम) 1979, राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम 1981, बीस सूत्रीय कार्यक्रम 1982, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम 1983, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम 1983, आदि योजनाएँ प्रारंभ की गई।

अन्य योजनाएँ – ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में क्रियान्वित उपर्युक्त परियोजनाओं के अलावा इंदिरा आवास योजना, ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम, फसल-बीमा योजना, सामाजिक सुरक्षा कोष, सामूहिक बीमा योजना,

जवाहर रोजगार, पर्यावरण सुधार परियोजनाओं का कार्यक्रम, जलधारा एवं कुटीर ज्योति कार्यक्रम आदि प्रारम्भ किए गए। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में समय-समय पर इन परियोजनाओं, कार्यक्रम तथा योजनाओं ने भारी योगदान दिया है। इन कार्यक्रमों को और अधिक प्रभावी तथा गतिमान बनाने के लिए इन्हें पंचायती राज व्यवस्था से जोड़ने की योजना है। देश के अधिकांश गांव वैज्ञानिक, तकनीकी एवं औद्योगिक प्रगति का समुचित लाभ नहीं उठा पाए हैं। आठवीं योजना (1992-97) में ग्रामीण विकास की गति को तीव्र करने के लिए विकास कार्यक्रमों को जिला विकास खण्ड एवं ग्राम स्तर तक ले जाने का प्रयास किया गया किन्तु फिर भी जन सहयोग के अभाव में लक्ष्य तक नहीं पहुंचा जा सकता है।

सामुदायिक विकास परियोजना - ग्रामीण विकास में सामुदायिक विकास परियोजनाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। वस्तुत: परियोजनाओं के मुख्य उद्देश्य-ग्रामीण जनता में प्रगतिशील दृष्टिकोण का विकास करना, सहकारी ढंग से कार्य करने की आदत विकसित करना, उत्पादन तथा रोजगार में वृद्धि के उद्देश्य की पूर्ति के लिए गांवों में शिक्षा का प्रसार, स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार, कुटीर एवं ग्रामीण उद्योग, गृह-निर्माण, वृक्षारोपण, भूमि सुधार, ग्रामीण विकास, ग्रामीण सड़कों के निर्माण आदि कार्यो पर बहुउद्देशीय कार्यक्रम है, जो ग्रामीणों के सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक एवं नैतिक उत्थान को प्रेरित करता है।

लघु एवं कुटीर उद्योग - पंचवर्षीय योजनाओं के 58 वर्षो तथा आजादी के 60 वर्षो में देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के आधारभूत उद्योगों के साथ ही लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर भी पर्याप्त ध्यान दिया गया। औद्योगिक विकास को गति देने के लिए औद्योगिक नीतियों में समय-समय पर परिवर्तन किया गया। ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख आधार हैं, इस बात को दृष्टिगत रखते हुए लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर समुचित ध्यान दिया गया। इन उद्योगों को करों में छूट, तकनीकी सहायता, वित्तीय सहायता तथा विपणन आदि की पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान की गई। देश में सैकड़ों वस्तुओं को लघु एवं कुटीर उद्योगों के लिए सुरक्षित कर दिया तथा इन उद्योगों के क्षेत्र में सहकारिता को भी बढ़ावा दिया गया, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक लोग इसमें संलग्न होकर रोजगार के असंख्य अवसर प्राप्त कर सके।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम -स्वतंत्रता के बाद गरीबी उन्मूलन ओर कल्याण कार्यक्रम आम तौर पर हमारे ग्रामीण विकास प्रयासों की रीढ़ की हड्डी रहे हैं। ग्रामीण गरीबी उन्मूलन प्रयत्नों को और सुव्यवस्थित करने तथा लघु उद्योगों के विकास तथा विस्तार में स्वरोजगार जुटाने की ओर अधिक ध्यान देने के उद्देश्य से दो अक्टूबर, 1980 से सम्पूर्ण देश में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य गरीबी की रेखा से नीचे जीवन निर्वाह कर रहे चयनित ग्रामीण गरीब परिवारों को उत्पादक परिसम्पत्तियाँ और कच्चा माल मुहैया कराकर आत्मनिर्भर बनाना है ताकि वे अपने कारोबार से आय कमाकर गरीबी की रेखा को पार कर सके। अपेक्षित परिसम्पत्तियाँ सरकार द्वारा वित्तीय सहायता और वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋण मुहैया कराई जाती है। समन्वित ग्रामीण विकास एजेंसियों द्वारा कार्यान्वित किया जाता है, जिसका वित्त पोषण केन्द्र और राज्यों द्वारा 50:50 के अनुपात में किया जाता है। केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय केन्द्रीय हिस्से की निधियों को जारी करने, नीति निर्माण, समग्र मार्गदर्शन, निगरानी और कार्यक्रम के मूल्यांकन के लिए उत्तरदायी है।

वस्तुत: समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का उद्देश्य उत्पादक परिसम्पत्तियों के आधार पर ऋण प्राप्त करके स्थायी आधार पर स्वरोजगार प्रदान करना एवं चिन्हित गरीब परिवारों को अपनी आय में वृद्धि करने और गरीबी रेखा से ऊपर आने में सहायता करना है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सहायता प्रदान किए गए परिवारों में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति परिवारों के लिए 50 प्रतिशत का आरक्षण प्रदान किया जाता है। इसमें 40 प्रतिशत महिलाओं के लिए और 3 प्रतिशत विकलांगों के लिए आरक्षित है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत गरीबी की रेखा को परिभाषित करने के लिए वार्षिक पारिवारिक सीमान्त आय को 1984-85 में 6,400 रूपए निर्धारित किया गया, जिसे 1991-92 की कीमतों के आधार पर 11,000 रूपये वार्षिक कर दिया गया।

बलरामलपुर-रामानुजगंज के विभिन्न सामाजिक एवं बहुल आदिवासियों को वस्तुत: समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम से ग्रामीण गरीब परिवारों को निश्चित ही लाभ हुआ है परन्तु इन कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में कुछ कमियाँ होने के कारण ग्रामीण विकास में अपेक्षित योगदान प्राप्त नहीं हो सका है। इस कार्यक्रम में ऋण और अनुदान के आधार पर मिलने वाली परिसम्पत्तियाँ सही व्यक्तियों को नहीं पहुंचती हैं। यही इनके विकास में बाधक है। अत: ग्रामीण विकास के लिए समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का प्रभावी क्रियान्वयन आवश्यक है।

निष्कर्ष- भारत सरकार का ग्रामीण विकास मंत्रालय ऐसी अनेक योजनाएँ कार्यान्वित कर रहा है। जिनका उद्देश्य ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना है। इन योजनाओं का उद्देश्य गरीबी का पूर्ण रूप से उन्मूलन तथा तीव्र सामाजिक-आर्थिक विकास करना है। तदानुसार समाज के अत्यन्त उपेक्षित लोगों पर केन्द्रित बहुआयामी नीति के माध्यम से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में चतुर्दिक आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन लाना है। ग्रामीणों को स्वच्छ पेयजल, ग्रामीण बेघर लोगों का घर तथा सभी ग्रामों को ग्रामीण सड़कों से जोड़ने को उच्च प्राथमिकता दी जा रही है।

हमने पाया कि रामानुजगंज में ग्रामीण विकास कार्यक्रम का मूल उद्देश्य गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों की आवष्कतानुसार उपयुक्त रोजगार का अवसर उपलब्ध कराकर उनके आर्थिक जीवन में सुधार लाना और ग्रामीण विकास को योजनाबद्ध तरीके से विकास के पथ पर अग्रसरित करना है। इस कार्यक्रम की उपयोगिता केवल ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में ही महत्वपूर्ण नहीं है, वरन् देश के औद्योगिक विकास को गति प्रदान करने में भी इसका विशेष महत्व है। ग्रामीण विकास कार्यक्रम में ग्रामीण समुदाय की शक्ति बढ़ाने का प्रयास चयनित परिवारों को उत्पादक साधन मुहैया कराकर किया जाता है। कार्यक्रम का प्रमुख लक्ष्य ग्रामीण क्षेत्रों के साधन हीन परिवारों को स्वत: रोजगार के उत्पादक कार्य उपलब्ध कराना है। परिवारों के चयन के लिए गरीबी रेखा को आधार माना गया है। हमारे ग्रामीण क्षेत्र का अध्ययन करने पर मालूम होता है कि सरकार को कार्यक्रम में अधिकाधिक परिवारों को लाभान्वित करने के अपने लक्ष्य के स्थान पर परियोजना को कार्यन्वित करने वाले परिवारों को पर्याप्त मात्रा में सहयता देनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कपुर सुदर्शन कुमार (1974): भारतीय कृषि अर्थव्यस्था, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ, आकादमी जयपुर।
2. कमलेश एस. आर. (1996): कृषि भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।
3. पाण्डेय, जगत नारायण, कमलेश, एस. आर. (1999): कृषि भूगोल

वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।
4. शर्मा बी.एल. (1987): कृषि भूगोल साहित्य भवन आगरा।
5. सिंह ब्रजभूषण (1979): कृषि भूगोल तारा प्रकाशन वाराणसी।
6. सायमन्स, एल. (1968): कृषि भूगोल अनुवादक श्याम सुन्दर कटारे, हिन्दी संस्करण, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ आकादमी भोपाल।
7. डॉ. मामोरिया चतुर्भूज भारत का भूगोल साहित्य भवन पब्लिकेशन हास्पिटल रोड आगरा।

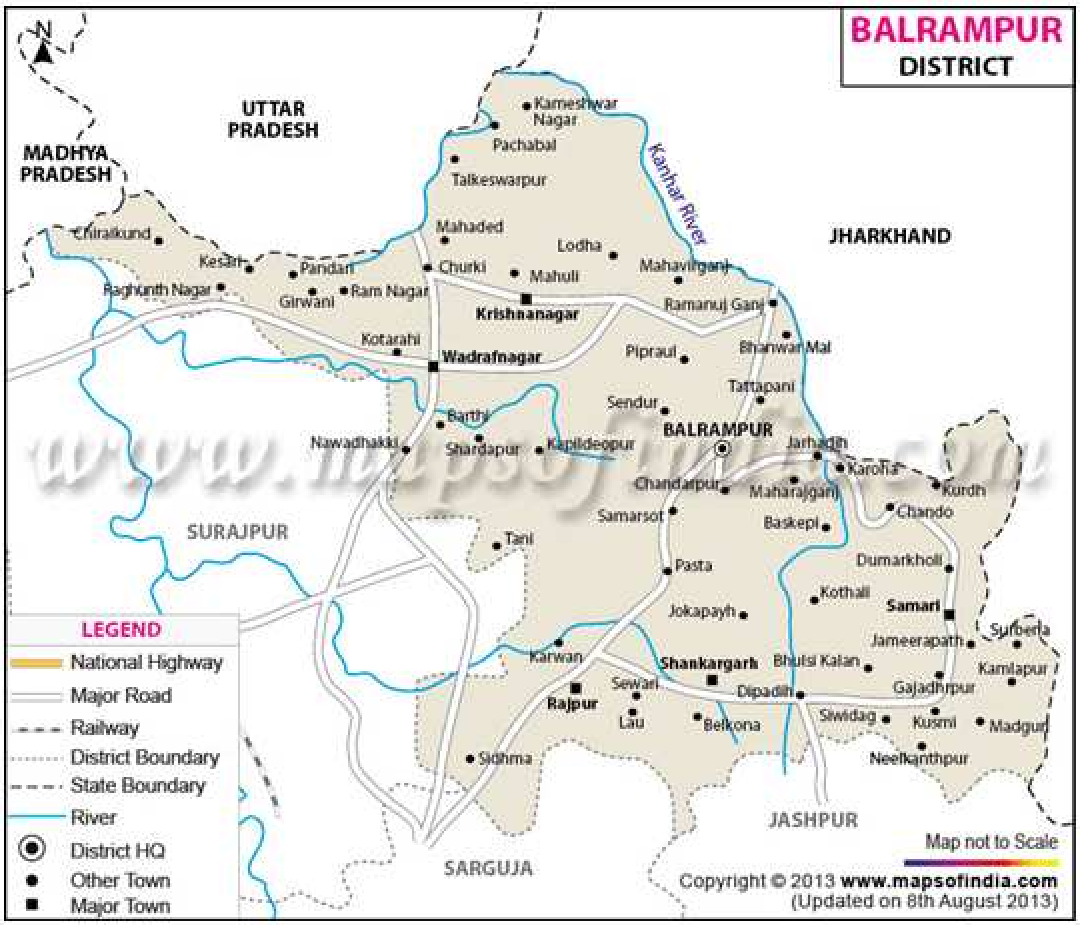

****

रायगढ़ जिले में अनुसूचित जनजातीय जीवन पर शिक्षा का प्रभाव

डॉ. काजल मोइत्रा * सत्यप्रकाश खडबन्धें **

शोध सारांश –शिक्षा के फलस्वरूप आदिवासी जगत में अनगनित परिवर्तनों का अनुभव होने लगा है। शिक्षा अपने साथ कुछ विशेष और नवीन सामाजिक जीवन का निर्माण करता है, जो अधिकतर परम्परागत आदिवासी रीति रिवाजों और मूल्यों से मेल नहीं खाते है और कहीं कहीं बिलकुल ही विरूध्द रहते है। शिक्षा के फलस्वरूप कुछ जनजातियों का जीवन स्तर ऊॅंचा उठा है, कुप्रथाओं के प्रभाव में कमी आई व्यक्तिगत स्वतंत्रता में वृद्धि हुई है। सामाजिक, राजनैतिक चेतना बढ़ी है, वहीं दूसरी ओर इस तथ्य को भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि शिक्षा ने नगरीय मनोवृत्तियों को बढ़ावा देकर व्यक्तिवादी लाभ की भावना अनावश्यक प्रतिस्पर्धा, औपचारिक संबधों तथा भौतिकवादी जीवन शैली के प्रति आर्कषण पैदा कर जनजातीय समाज में अनेक समस्याओं को भी उत्पन्न किया है। परम्परा तथा आधुनिकता का संघर्ष हो रहा है। सम्पर्क तथा मिश्रण से आदिवासी समाज एक नया रूप ले रहा है। शहरी सभ्यता के सम्पर्क से वे लोग अपनी भाषा से ज्यादा बाहरी भाषा को अपनाने लगे है।

प्रस्तावना – शिक्षा अपने चारों ओर की चीजों की सीखनें की एक प्रक्रिया है, यह हमें किसी भी वस्तु या परिस्थिति को आसानी से समझने, किसी भी तरह की समस्या से निपटने और पूरे जीवनभर विभिन्न आयामों में सन्तुलन बनाये रखने में मदद करती है। शिक्षा सभी मनुष्यों का सबसे पहला और आवश्यक अधिकार है। शिक्षा हमें अपने जीवन में एक लक्ष्य निर्धारित करने और बढ़ने की लिए प्रेरित करती है।शिक्षा हमारे ज्ञान, कुशलता आत्मशिला और व्यक्तित्व में सुधार करती है, और समाज के बदलते परिवेश में रहना सिखाती है। शिक्षा सामाजिक विकास, आर्थिक वृद्धि और तकनीकी उन्नति का रास्ता है।

अध्ययन क्षेत्र – अध्ययन क्षेत्र रायगढ़ जिला छत्तीसगढ़ का पूर्वी जिला है, जिसकी सीमाएँ पूर्व में उड़िसा प्रांत उत्तर पूर्व में झारखण्ड गुमला जिले से लगती है। जिसका अक्षांश 21'55'' से 22'48'' डिग्री उत्तर की ओर तथा देशांश 84'52'' से 84'48'8 पूर्व की ओर है। जिले का कुल क्षेत्रफल 683635 वर्ग किमी. फैला हुआ है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य रायगढ़ जिले के अनुसूचित जनजाति शिक्षा स्तर को प्रकाश में लाना है, जिसके आधार पर जनजातीय विकास की दिशा को सुनिश्चित किया जा सके।

विधि तंत्र – प्रस्तुत अध्ययन विश्लेषणात्मक विधि तंत्र का उपयोग किया गया है। आकड़ों का समग्र संकलन द्वितीयक आकड़ों पर आधारित है।

विश्लेषण एवं व्याख्या – (सारणी देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

शिक्षा रायगढ़ जिले के अनुसूचित जनजाति समाज में परिवर्तन के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारक रहा है। शिक्षा में लोगों के जीवन स्तर उठने लगा किन्तु इनके साथ ही पराम्परागत जनजाति संस्कृति ह्रास के लक्षण परिलक्षित होने लगे शिक्षा के कारण यहॉ जनजाति समाज में कई परिवर्तन देखने को मिले जैसे सांस्कृतिक अस्थिरता उनके राजनैतिक एवं सामाजिक सरंचना बदलाव एवं सामाजिक मूल्यों के रूप में देखा जा सकता है। यह प्रभाव अनेक क्षेत्रों में रचनात्मक है, वहीं इसके फलस्वरूप आदिवासियों का जीवन स्तर ऊॅंचा उठा है, एवं रूढ़ियों के प्रभाव में कमी आई है। सामाजिक एवं राजनैतिक जागरूकता बढ़ी है, वैयक्तित्व स्वतंत्रता में वृद्धि हुई है तथा जनजाति पर आधारित आसमानताकारी संस्तरण टूट रहा है, शिक्षा ने नगरीय मनोवृत्तियों को बढ़ावा देकर व्यक्तिवादिता, लाभ की भावना, अनावश्यक प्रतियोगिता, घनी बस्तियों, औपचारिक सम्बन्धों तथा भौतिकवाद के प्रति आर्कषण पैदा कर जनजातीय समाज में जटिल समस्याओं को भी जन्म दिया है।

तालिका – 1 अनुसूचित जनजाति साक्षर जनसंख्या (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

यद्यपि शिक्षा के फलस्वरूप जनजाति जीवन स्तर में काफी सुधार हुआ है। शिक्षा से जनजातीय समाज में व्यापक परिवर्तन हुए है जो निम्न हैं–

1. **कुरीतियों का विरोध –** शिक्षा के प्रसार के साथ ही समाजों में व्याप्त कुरीतियों का विरोध होने लगा, जिसका परिणाम है कि आज अनेक कुरीतियों समाप्त हो चुकी है जैसे – सती प्रथा, बाल विवाह, बाल श्रम, दहेज प्रथा आदि।
2. **जनचेनता का विकास –** सामाजिक परिवर्तन के द्वारा समाज में जनचेतना का विकास होता है, समाज में रहने वाले सभी व्यक्ति साामाजिक समस्याओं के प्रति अपने विरोध का दर्ज कराते है, तथा विभिन्न समस्याओं पर अपने विचार रखते हैं।
3. **तकनीकी ज्ञान का विकास –** शिक्षा के द्वारा तकनीकी ज्ञान का विकास अत्यंत ही तेजी से हुआ है, केवल तकनीकी ज्ञान ही सभी प्रकार के ज्ञान का विकास शिक्षा के माध्यम से हुआ है।
4. **जाति बंधन की समाप्ति –** शिक्षा के द्वारा सभी लोगों के विचारों में व्यापक परिवर्तन आया है, तथा लोग जाति–पाति के बंधन को भूलकर कर योग्यता को आधार मानने लगे है। रोजगार, उद्योग, विवाह इत्यदि में जाति बंधन की समाप्ति के साथ ही विभिन्न वर्गो का उदय होने लगा।
5. **छुआछुत की समाप्ति –** छुआछुत की भावना व्यापक रूप में जनमानस में थी लेकिन शिक्षा के प्रचार प्रसार के द्वारा सभी व्यक्तियों में समानता का भाव जागृत होने लगी, सभी लोग एक साथ शिक्षा प्राप्त करने लगे तथा समाज में व्याप्त सामाजिक बुराई धींरे धींरे समाप्त होने लगी।

* एसोसिएट प्राध्यापक (भूगोल) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

6. तर्क का विकास – शिक्षा के द्वारा तार्किक दृष्टि का विकास आम जनता में हुआ है, पुरातन रीतियाँ तथा कुरीतियों को जैसे ही अपनाने के बजाए उसे तर्क की कसौटी में कसी जाती है। यह तार्किक दृष्टिकोण सामाजिक परिवर्तन में सहायक होती है।

निष्कर्ष – उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि आज शिक्षा फलस्वरूप जनजातीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन की प्रक्रिया आरंभ हो गई है, शिक्षा में व्यक्तियों के जीवन में व्यापक परिवर्तन किया है। शिक्षा ने जनजातीय जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रभावित कर जनजाति समुदाय में महत्वपूर्ण संरचनात्मक तथा संस्थात्मक परिवर्तन उत्पन्न किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जनगणना 2011
2. जिला कलेक्टर संख्यिकी विभाग।
3. रायगढ़ जिला प्रोफाइल।
4. पण्डा बी. पी. (2004) जनसंख्या भूगोल हिन्दी साहित्य ग्रंथ अकादमी मध्यप्रदेश।

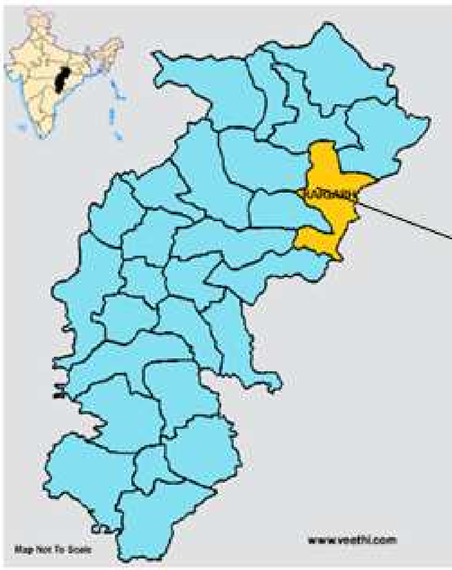

तालिका – 1 अनुसूचित जनजाति साक्षर जनसंख्या

कंवर
उॅराव
गोंड
भैंना
कमार
कोरवा
नगेरिया
मंझवार पारधि
खारीया
गांडाबा

क्र.	जिला / तहसील	कुल संख्या	कुल साक्षर	पुरूष	स्त्री
1	2	3	4	5	6
जिला रायगढ़		**505609**	**257995**	**151392**	**106603**
1	धरमजयगढ़	136915	64270	38387	25883
2	लैलूंगा	82923	41495	24330	17165
3	घरघोड़ा	46718	22116	13083	9033
4	तमनार	47818	27472	16089	11383
5	रायगढ़	56498	24582	14246	10336
6	पुसौर	28775	17552	10045	7507
7	खरसिया	44105	26521	15519	11002
8	सारंगढ़	31402	17190	10036	7154
9	बरमकेला	30455	16797	9657	7140

2011 जनगणना

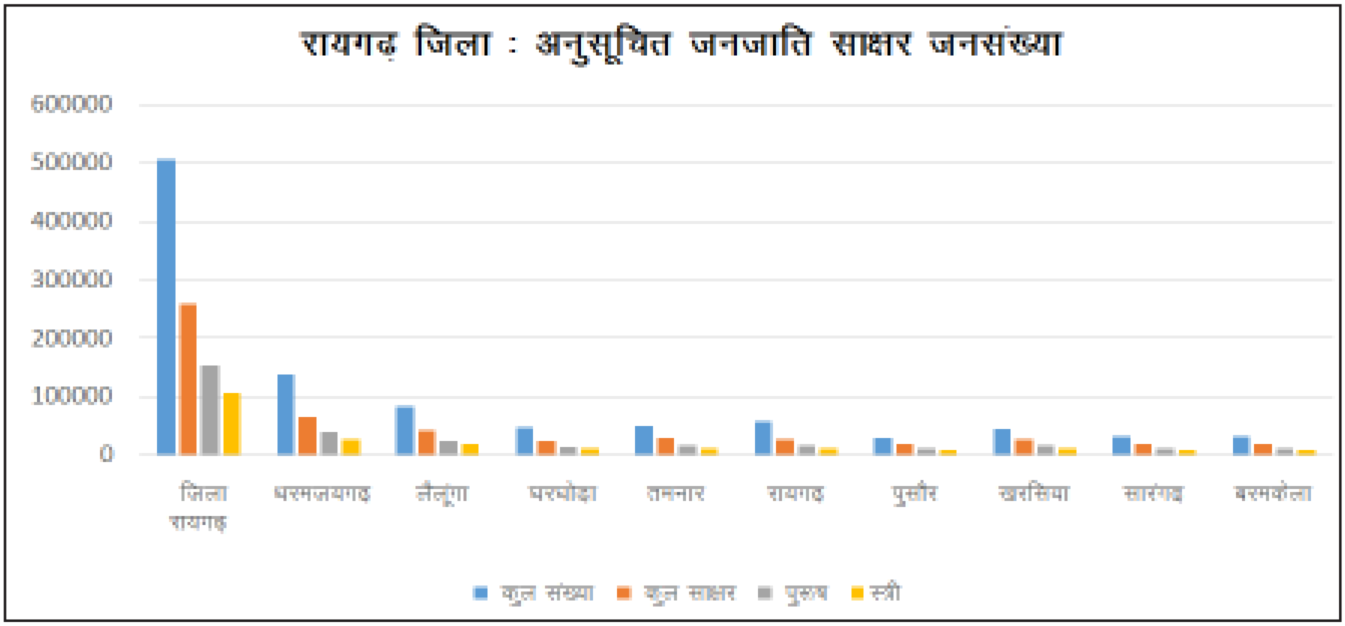
रायगढ़ जिला : अनुसूचित जनजाति साक्षर जनसंख्या
600000
500000
400000
300000
200000
100000
0
जिला रायगढ़
धरमजयगढ़
लैलूंगा
घरघोड़ा
तमनार
रायगढ़
पुसौर
खरसिया
सारंगढ़
बरमकेला
कुल संख्या
कुल साक्षर
पुरूष
स्त्री

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

स्वस्थ मृदा से स्वस्थ भारत का विकल्प - जैविक कृषि

डॉ. सुखचैन सिंह धुर्वे *

शोध सारांश - सिन्धु घाटी की सभ्यता हो या नील नदी की सभ्यता, हमें आलोकित करती हैं कि स्वस्थ एवं उर्वर मृदा की बुनियाद पर मानव सभ्यता अपने शिखर को स्पर्श करती है। स्वस्थ मृदा किसी देश की अमूल्य सम्पदा होती है। यह मृदा देश की जनसंख्या के लिए भोजन का आधार है। कहा जाता है- 'स्वास्थ्य ही धन है।' (Health is Wealth)। स्वस्थ मानव संसाधन देश की उन्नति के लिये अनिवार्य है।उत्तम मानव स्वास्थ्य स्वस्थ भोजन पर निर्भर है तथा स्वस्थ भोजन स्वस्थ मृदा पर। हमारे देश की बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आपूर्ति हेतु खाद्यान्न उत्पादन के लिए हरित क्रान्ति अच्छा कदम साबित हुई किन्तु इस क्रान्ति में रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों का बेतहाशा प्रयोग, एक ही किस्म के फसलों की खेती आदि ने खेतों की मृदा को विषाक्त करने पर तुला है। इसका परिणाम हमारा गिरता स्वास्थ्य है, जो हमारे देश के लिए चिन्ता का विषय है। सम्पोषित विकास की अवधारणा के अनुसार मृदा संसाधन के संरक्षण द्वारा स्वस्थ नागरिकों के निर्माण हेतु जैविक कृषि एक अच्छा विकल्प हो सकता है। इसके लिये सरकार के साथ कृषकों, व्यापारियों तथा आम नागरिकों का ईमानदारी से सहयोग चाहिए। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार मानव को माटी का खिलौना भी कहा जाता है। अत: माटी के इस मानव को स्वस्थ रहना है, तो अपनी माटी(मृदा) को भी स्वस्थ रखने की जरूरत है। नगरीय प्रदूषण को रोकते हुये रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों का अत्यल्प प्रयोग कर जैविक खेती से मृदा को निरोग व नैसर्गिक रखा जा सकता है।

प्रस्तावना - मृदा मानव का मूलभूत संसाधन है। मनुष्य की सभी बुनियादी आवश्यकताएँ यथा-भोजन, वस्त्र और मकान आदि मिट्टी से ही पूर्ण होती हैं। पृथ्वी तल पर पाया जाने वाला जीवन मिट्टी पर निर्भर करता है। समस्त प्राणियों का भोजन मिट्टी से ही प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्राप्त होता है। यदि यह कहा जाए कि मानव मिट्टी का संतान है, तो अतिशयोक्ति न होगा। विलकाक्स (Wilcox) ने कहा है-'मानव सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है और प्रत्येक व्यक्ति की शिक्षा मिट्टी से ही प्रारंभ होती है।' व्हाइट एवं रेनर ने भी कहा है कि-'पृथ्वी तल पर यदि मिट्टी न होती तो यहाँ जीवन कदापि संभव न था।'

मृदा वास्तव में जीवमण्डल या जीवन परत का हृदय (क्रोड) है क्योंकि यह उस मण्डल का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें पौधों के पोषक तत्वों का उत्पादन तथा रख रखाव होता है तथा ये पोषक तत्व पौधों को उनकी जड़ों के माध्यम से प्राप्त होते हैं तथा सूक्ष्म जीव भी इन पोषक तत्वों को अपने निर्वाह के लिए प्राप्त करते हैं। इस तरह मृदा तंत्र जीवमण्डल में ऊर्जा के स्थानान्तरण मार्ग तथा पोषक तत्वों के गमन, संचरण तथा चक्रण के लिए आवश्यक होता है। मृदा विभिन्न प्रजातियों तथा किस्मों के जीवित जीवों (पौधों, मानव तथा जन्तुओं) के लिए अनुकूल आदर्श पर्यावरणीय दशाएँ, आवश्यक पोषक तत्व एवं आवास प्रदान करती है। मानव भी अपने भोजन के लिये पूर्णत: पौधों व जन्तुओं पर आश्रित है। स्वस्थ भोजन के लिये आवश्यक है कि पौधे व जन्तु भी स्वस्थ हों किन्तु इनकी स्वस्थता मृदा की गुणवत्ता पर निर्भर होती है। भोजन प्राप्ति के लिए हम मृदा पर कृषि करते हैं। कृषि निर्भर है, मृदा पर और कृषि पर निर्भर है, हमारा भोजन तथा भोजन हमारे स्वास्थ्य का सबसे महत्वपूर्ण स्तम्भ है। बढ़ती आबादी के भरण पोषण हेतु की जाने वाली रासायनिक कृषि से मृदा के गिरते स्वास्थ्य एवं कुपोषण ने कृषि, खाद्य सुरक्षा और मानव स्वास्थ्य के समक्ष गंभीर चुनौतियाँ खड़ी की हैं। इनका निदान कृषि की उन्नत तकनीकों के साथ हमें जैविक खेती को अपनाने में होगा तब असल मायने में भारत स्वस्थ देश बनेगा।

उद्देश्य - शोध अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. हमारे जीवन में मृदा की महत्ता का अध्ययन करना।
2. जीवनदायिनी मृदा में हमारी गतिविधियों से बढ़ते प्रदूषण का अध्ययन करना।
3. इस प्रदूषित या अस्वस्थ मृदा से उत्पादित गुणवत्ताहीन भोज्य पदार्थों का मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।
4. स्वस्थ भारत के लिये स्वस्थ मृदा हेतु विकल्प के रूप में जैविक कृषि की सम्भावनाओं का अध्ययन करना।

विधि तंत्र - प्रस्तुत शोध पत्र की विषयवस्तु एवं शीर्षक से सम्बन्धित तथ्य विभिन्न प्रकार की प्रकाशित पत्रिकाओं, समाचार पत्रों व सन्दर्भ ग्रन्थों से संग्रहीत की गयी हैं। कुछ सामग्री इन्टरनेट, निरीक्षण विधि से क्षेत्र अध्ययन व किसानों से वार्तालाप द्वारा संग्रह की गयी है। शोध पत्र के शीर्षक का चयन क्षेत्र भ्रमण के आधार पर किया गया है।

मृदा एवं उसका स्वास्थ्य - पृथ्वी के धरातल की ऊपरी परत जिस पर वनस्पति ऊगती है, मृदा (मिट्टी) कहलाती है। दूसरे शब्दों में-'सामान्य रूप से शैलों के विघटन व विनियोजन से प्राप्त ढीले व असंगठित भूपदार्थों को मृदा कहते हैं।'धरती माँ एवं इस देश की मृदा की हमारे राष्ट्रगीत *'सुजलाम् सुफलाम्, शस्य श्यामलाम्'* के अन्तर्गत वन्दना की गयी है। यह मृदा हमें जीवन का आधार देती है। स्वस्थ मृदा के आधार पर हम सौ वर्ष तक स्वस्थ जीवन की कामना करते हैं। मिट्टी यदि स्वस्थ होती है, तो स्वस्थ फसलों या खाद्यानों के रूप में सोना, हीरा व मोती उगलती है। आज का आर्थिक मानव गहन व व्यापारिक खेती में अंधाधुन्ध रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों के प्रयोग तथा औद्योगीकरण व नगरीकरण से जीवनदायिनी मृदा के स्वास्थ्य

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, बरही, जिला - कटनी (म.प्र.) भारत

पर कुठाराघात किया है। दिनोंदिन मृदा प्रदूषित हो रही है। यह हमारे देश की एक गंभीर समस्या है। जब 'प्राकृतिक स्रोतों या मानव जनित स्रोतों अथवा दोनों से मृदा की गुणवत्ता का ह्रास होता है, उसे मृदा प्रदूषण कहते हैं।' इस प्रदूषण के कारक हैं– (1) मृदा का अपरदन, (2) मृदा में रहने वाले लाभकारी सूक्ष्म जीवों की कमी, (3) मृदा में रोगजनक सूक्ष्म जीवों की वृद्धि, (4) मृदा में नमी की कमी या वृद्धि, (5) मृदा में ह्यूमस की कमी तथा (6) मृदा में विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों का प्रवेश व सांद्रण। वन विनाश, रासायनिक खेती, औद्योगिक व नगरीय अपशिष्ट से मृदा में प्रदूषकों के प्रवेश ने मृदा की मृदुता व शुचिता का ह्रास किया है। हरित क्रान्ति से मृदा की उपज क्षमता में कमी आई है, जैवविविधता का नाश हुआ है, मिट्टी की क्षारीयता वढ़ी है। इस तरह स्वस्थ मृदा रोग ग्रस्त हो चुकी है। भारत सरकार के वन मंत्रालय का अनुमान है कि देश के कुल क्षेत्रफल के लगभग 47 प्रतिशत भूमि पर कृषि होती है, जिसके लगभग 56–57 प्रतिशत भाग की उर्वरा शक्ति बहुत ही कम हो गयी है। मानवीय गतिविधियों के कारण देश की कुल भूमि का लगभग 57 प्रतिशत भाग क्षरित हो चुका है। 'रचना पत्रिका' जनवरी - अप्रैल 1999 में प्रकाशित लेख के अनुसार अनुमान है कि देश की 17.5 करोड़ हेक्टेयर भूमि प्रदूषण से ग्रस्त है, जो कि देश के क्षेत्रफल का लगभग 53 प्रतिशत है। ये तथ्य मृदा प्रदूषण की भयावहता को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करते हैं।

अस्वस्थ या प्रदूषित मृदा एवं मानव स्वास्थ्य – प्रदूषित मृदा पौधों, जन्तुओं और सूक्ष्म जीवों के साथ मानव को भी प्रभावित करती है। इससे कृषि पारिस्थितिकी एवं जैवविविधता का नाश होता है। मिट्टी प्रदूषण लोगों के बीमार होने का एक बहुत बड़ा कारण है। प्रदूषित मिट्टी में पैदा होने वाली फसलें और पौधे प्रदूषकों को अधिक अवशोषित करते हैं और भोजन श्रृंखला के द्वारा मानव जाति को स्थानान्तरित कर देते हैं, इसके परिणाम स्वरूप छोटे एवं भयंकर रोगों में वृद्धि हो सकती है। इस तरह की मिट्टी से लम्बे समय तक सम्पर्क में रहने से मानव शरीर की आनुवांशिक बनावट प्रभावित हो सकती है, जिसके परिणामस्वरूप जन्मजात बीमारियाँ और लम्बे अवधि के लिए स्वास्थ्य समस्या बन सकती हैं। वास्तव में ऐसी मृदा काफी हद तक पशुधन को भी बीमार कर सकती है और इसके कारण खाद्य विषाक्तता हो सकती है। जल भराव क्षेत्रों से उत्सर्जित होने वाली विषाक्त गैसें पर्यावरण को प्रदूषित करती हैं, मच्छरों का प्रकोप बढ़ता है और इसके कारण लोगों के स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव पड़ता है।

कृषि रसायन तथा इनसे दूषित मृदा मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। इनसे होने वाली कुछ प्रमुख बीमारियाँ हैं – अपच, विविध चर्मरोग, प्रजनन तंत्र का विकार, कैंसर, बाँझपन, याद्दाश्त का घटना, सिरदर्द, चक्कर आना, उबकाई, दृष्टिदोष, श्वांस रोग तथा तंत्रिका तंत्र का नाश आदि। मृदा में रासायनिक खादों के प्रयोग से खाद्यानों में सीसा, ताँबा, जस्ता आदि की मात्रा बढ़ने से यकृत सम्बन्धी रोग तथा जलभराव से मलेरिया, डेंगू आदि रोग बढ़ रहे हैं। डी.डी.टी. और कीटनाशक दवाओं का दुधारू जानवरों के दूध में पाया जाना मानव स्वास्थ्य के लिए घातक संकेत है। आधुनिक कृषि के अन्तर्गत प्रयोग किया जाने वाला यूरिया उर्वरक हमारे स्वास्थ्य के लिए खतरा है जैसे –

1. यूरिया के प्रयोग से निकलने वाली गैस (नाइट्रस आक्साइड) से ओजोन परत के ह्रास से अल्ट्रा वायलट किरणों द्वारा मनुष्यों में त्वचा कैन्सर हो जाता है।
2. यूरिया का अवशेष प्रभाव श्वसन तंत्र व आहार तंत्र को प्रभावित करता है। फसल उत्पादों में नाइट्रोजन मुख्यतः नाइट्रेट के अत्यधिक संचय से ब्ल्यू बेबी सिन्ड्रोम नामक बीमारी हो जाती है। यह बीमारी धान उगाने वाले क्षेत्रों में अत्यधिक प्रचलित है।
3. यूरिया सहित अन्य रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से सतही व भूमिगत जल स्रोत प्रदूषित हो रहे हैं। ऐसे दूषित जल का पेयजल के रूप में उपयोग व सिंचाई से उत्पादित खाद्यानों के उपयोग से विविध रोगों का खतरा बढ़ रहा है। दूषित जल व मृदा के सम्पर्क से बच्चों व किसानों को त्वचा रोगों का खतरा बना रहता है।

स्वस्थ मृदा से स्वस्थ भारत का विकल्प – जैविक कृषि – जैविक कृषि एक सम्पोषित कृषि है। इस कृषि में उत्पादन के साथ मृदा, मानव व पर्यावरण की सुरक्षा मुख्य लक्ष्य है। जैविक कृषि, कृषि की वह विधि है, जिसमें संश्लेषित (रासायनिक) उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग नहीं या न्यूनतम प्रयोग किया जाता है। इस कृषि में मृदा की शुचिता का संरक्षण किया जाता है। मृदा की उर्वरा शक्ति को बचाए रखने के लिए फसल चक्र, हरी खाद तथा कम्पोस्ट आदि का प्रयोग किया जाता है तथा प्राकृतिक कृषि के सिद्धान्तों का पालन करते हुए रोगों एवं कीटों से फसल की रक्षा की जाती है। यह कृषि कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्तों पर आधारित है वे इस तरह हैं –

जैविक खेती के सिद्धान्त – जैविक खेती के लिए कुछ तय नियम बन चुके हैं। सन् 1972 में गठित आर्गेनिक कृषि आन्दोलन के अन्तर्राष्ट्रीय महासंघ (आईएफओएएम) के मानकों के आधार पर जैविक खेती के चार मुख्य सिद्धान्त हैं।

1. **स्वास्थ्य –** जैविक खेती से मिट्टी, पौधों, पशु, इंसान और पृथ्वी के स्वास्थ्य का संरक्षण और वृद्धि होनी चाहिए।
2. **पर्यावरण –** जैविक खेती पारिस्थितिक तंत्र और चक्रों पर आधारित होनी चाहिए, उनके साथ सामंजस्य में काम करनी चाहिये और उन्हें संरक्षण देने वाली होनी चाहिए।
3. **ईमानदारी –** जैविक खेती सामान्य पर्यावरण और जीवन के अवसरों के बीच स्वस्थ सम्बन्ध बनाने और उनमें ईमानदारी सुनिश्चित करने वाली होनी चाहिए।
4. **देखभाल –** खेती सतर्कता और जिम्मेदारी के साथ ऐसे व्यवस्थित की जानी चाहिए कि वर्तमान और भावी पीढ़ियों एवं पर्यावरण का स्वास्थ्य व हित सुरक्षित रख सकें।

जैविक खेती के तकनीक – जैविक या सावयविक खेती में अनेक ऐसे तरीके अपनाए जाते हैं, जिनसे मृदा की उर्वरा शक्ति बनी रहती है और फसल के शत्रु, खरपतवार, रोगों तथा कीटों आदि से उनकी रक्षा होती रहती है। जैविक खेती में इन तकनीकों की अहम भूमिका होती है।

1. **फसल चक्र –** फसल चक्र का अर्थ है, एक ही खेत में विभिन्न मौसमों में भिन्न फसलों को उगाने का क्रम। इस चक्र में दलहनी फसलों का समावेश मृदा की उर्वरा शक्ति बनाए रखने में सहायक होता है।
2. **गहरी जुताई –** गर्मियों में खेत की गहरी जुताई से खरपतवार के बीज, कीटों के लार्वा, अण्डे आदि नष्ट हो जाते हैं।
3. **स्वच्छ खेत –** खेत को खरपतवार से प्राकृतिक तरीके से मुक्त रखने, रोगग्रस्त व सूखे पौधों को तुरन्त हटा देने तथा जैविक कीटनाशकों के प्रयोग द्वारा रोगों व कीटों से फसल व खेत की सुरक्षा होती है।
4. **बुवाई का समय–** फसलों के बोने के समय में परिवर्तन से रोगों व कीटों से फसल की रक्षा संभव है।
5. **सही किस्म –** स्थान और परिस्थिति के अनुरूप रोग और कीट प्रतिरोधी

किस्मों के फसलों का चुनाव महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

6. **जाल फसल (ट्रैप क्रॉप)** – एक ट्रैप फसल नजदीक ऊग रही फसल से कीड़े आकर्षित करती है और कीटनाशकों के उपयोग के बिना मुख्य फसल को कीटों द्धारा नाश से बचाती है।
7. **फेरोमोन और प्रकाश ट्रैप** – फसल को कीटों से बचाने के लिए फेरोमोन ट्रैप को गंधपाश भी कहते हैं।फेरोमोन एक प्रकार की विशेष गंध है जो मादा पतंगा छोड़ती है। इस गंध से नर पतंगे आकर्षित होते हैं। नर कीट इस गंध से आकर्षित होकर फंदे की तरह बने डिब्बे में बन्द होकर नष्ट हो जाते हैं। प्रकाश ट्रैप में सौ या दो सौ वॉट का बल्ब लगा रहता है।इसकी रोशनी से फसलों को हानि पहुँचाने वाले कीट आकर्षित होकर आते हैं और ट्रैप में नीचे की ओर लगे डिब्बे के नीचे बंधे कपड़े में इकट्ठा होकर नष्ट हो जाते हैं।
8. **सुरक्षा फसल** – मिट्टी में सुधार के तीन तरीके हैं–सुरक्षा फसलों को उगाना, आसानी से सड़ने वाली वानस्पतिक सामग्री का प्रयोग और जैविक मिट्टी शोधन (जैसे खाद, घास तथा फसल अवशेष आदि मिलाना)।

जैविक खेती पद्धति का केन्द्र बिन्दु मृदा को स्वस्थ व जीवित रखते हुए मृदा में उपस्थित लाभकारी जीवाणुओं की जैविक क्रियाओं को बढ़ावा एवं प्रोत्साहन देना है। इसके अन्तर्गत जैविक खादों के संतुलित प्रयोग से मृदा की भौतिक, रासायनिक व जैविक सेरचना में गुणोत्तर वृद्धि होती है। इस तरह जैविक कृषि के सिद्धान्त व तकनीक मृदा, पौधों एवं पर्यावरण के स्वास्थ्य की सुरक्षा के पोषक हैं।

जैविक कृषि और मानव स्वास्थ्य – जिस तरह स्वस्थ माँ से स्वस्थ शिशु की कल्पना की जाती है, ठीक उसी भाँति स्वस्थ मृदा से ही स्वस्थ मानव का निर्माण हो सकता है और स्वस्थ मृदा की कल्पना जैविक कृषि से सच हो सकती है। जैविक कृषि पौधे, पृथ्वी, मृदा और मानव के स्वास्थ्य की संरक्षक और संवर्धक होती है। इस प्रणाली से प्राप्त कृषि उत्पादों जैसे– अनाज, सब्जी, फलों आदि के सेवन से देश के नागरिकों के स्वास्थ्य की सुरक्षा व संवर्धन किया जा सकता है। इस कृषि से भूगर्भिक व सतही जल स्त्रोत दूषित होने से बच सकते हैं और हमें पेयजल व सिंचाई हेतु शुद्ध जल उपलब्ध हो सकता है। इससे हम दूषित जल पीने से होने वाले रोगों तथा दूषित पानी की सिंचाई से प्रदूषित खाद्य पदार्थों के सेवन से हाने वाले रोगों से बच सकते हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से जैविक उत्पाद सर्वश्रेष्ठ होते हैं एवं इनके प्रयोग से कई प्रकार के रोगों से बचा जा सकता है। इन उत्पादों से उपभोक्ताओं को स्वादिष्ट व पोषक मूल्यों के साथ स्वस्थ आहार मिलता है। जैविक खेती में यूरिया का प्रयोग नहीं या न्यूनतम कर ओजोन क्षरण को कम करके अल्ट्रा वायलट किरणों से होने वाले रोगों को नियंत्रित किया जा सकता है। इस कृषि से मृदा की मृदुता की रक्षा कर दूषित मृदा के सम्पर्क से होने वाले त्वचा रोगों से बचा जा सकता है। जैविक खेती अपनाकर रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से होने वाले रोगों जैसे–आहार व प्रजनन तंत्र के विकार, कैन्सर, बाँझपन, दृष्टि दोष, श्वांस रोग, तंत्रिका तंत्र का नाश आदि रोगों से बचा जा सकता है।

जैविक खेती से उत्पन्न खाद्य पदार्थों में रासायनिक अवशेष न होने से एक ओर तो कई बीमारियों से बचाव होता है, तो दूसरी ओर इन उत्पादों के कई प्राकृतिक पोषक तत्व भी नष्ट होने से बच जाते हैं।इस खेती से उपलब्ध पशुचारे से पशुओं का दूध बढ़ता है तो वहीं उन्हें बीमारियों की सम्भावना कम रहती है। इसका लाभ पशु पालकों के अलावा दूध उपभोक्ताओं को शुद्ध दूध के रूप में मिलता है। इस खेती से किसानों के खेतों की अमूल्य मृदा की नैसर्गिकता बनी रहती है। जैविक खेती का उद्देश्य मृदा संरक्षण के साथ भुखमरी, भूख व दूषित खाद्य उत्पाद जनित रोगों और कुपोषण आदि से वचाने के लिए उच्च पोषक गुणवत्ता युक्त एवं स्वास्थ्यवर्द्धक खाद्य पदार्थों को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराना है, जिससे मानव स्वास्थ्य उत्तम बना रहे और स्वस्थ देश का निर्माण हो सके।

निष्कर्ष – स्वतंत्र भारत में राष्ट्रीय स्वास्थ्य की दिशा में सन् 1983, सन् 2002 तथा सन् 2014 में नीतियाँ निर्धारित की गईं। 'सबका स्वास्थ्य' इन नीतियों का लक्ष्य रहा है। स्वस्थ राष्ट्र हेतु वांछित परिणामों के अनुपात में हर वर्ष बजटीय खर्च को बढ़ाने की माँग खड़ी कर भारत के स्वास्थ्य क्षेत्र के नीति निर्माताओं के लिए बड़ी चुनौतियाँ प्रस्तुत की है। स्वास्थ्य के लिए धन की व्यवस्था करना, स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने का प्रमुख घटक है। भारत सरकार राष्ट्रीय स्वास्थ्य के लिये प्रति वर्ष करोड़ों रुपये व्यय करती है, किन्तु परिणाम संतोषजनक नहीं रहते हैं। सरकार रोगियों के उपचार पर अधिक व्यय करती है किन्तु रोगोत्पादक कारकों की रोकथाम भी निहायत जरूरी है। मानव को अधिकतर रोग दूषित पेयजल व दूषित खाद्य पदार्थों से होते है। अन्य कारकों के अलावा आधुनिक कृषि पद्धति से जल व खाद्य पदार्थ रोगोत्पादक तत्वों से ग्रसित हो जाते हैं। यह सर्वविदित है कि स्वास्थ्य का सम्बन्ध आहार से, आहार का सम्बन्ध कृषि से तथा कृषि का सम्बन्ध मृदा से है। अत: हमारे स्वास्थ्य व आहार की बुनियाद हमारी मृदा है। 'किसी राष्ट्र की मृदा उसकी अनमोल संपदा होती है, जिससे वहाँ की संस्कृति व सभ्यता निर्मित होती है।' अत: देश के नीति निर्माताओं के लिये आवश्यक है कि 'सबके लिये स्वास्थ्य' का लक्ष्य प्राप्त करने हेतु स्वास्थ्य की बुनियाद मृदा का संरक्षण किया जाय और इसका अच्छा विकल्प जैविक खेती हो सकती है। रासायनिक खेती को नियंत्रित करने की आवश्यकता है। जैविक कृषि से उत्पादन में 25–30 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इससे भारतीय अर्थव्यवस्था को लाभ होगा, उच्च पोषक गुणवतता युक्त खाद्य पदार्थों का उत्पादन व उपभोग होगा । नागरिकों का स्वास्थ्य उत्तम व उन्नत होगा, जिससे देश स्वस्थ व समृद्ध होगा।

सुझाव – मृदा संरक्षण हेतु निम्नलिखित कदम सार्थक हो सकते हैं –

1. शासन द्वारा किसानों को रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर कम दामों पर जैविक खादों की उचित समय पर पर्याप्त आपूर्ति की जानी चाहिए।
2. किसानों को अनिवार्य रूप से जैविक कृषि तकनीक का नि:शुल्क प्रशिक्षण आवश्यक है।
3. जैविक कृषि उत्पादों की अधिक कीमत व गुणवत्ता के बारे में किसानों को अवगत कराने चाहिए।
4. इस कृषि से प्राप्त उत्पादों को खरीदने की उचित व्यवस्था के साथ सम्बन्धित किसानों को सम्मानित कर प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है।
5. रासायनिक उर्वरकों व कीटनाश्कों के उत्पादन को हतोत्साहित करना आवश्यक है।
6. रासायनिक खेती के उत्पादों के उपभोग से होने वाले रोगों की जानकारी के प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है।
7. रासायनिक खेती से किसान व खेत की मृदा को होने वाली हानियों से किसानों को अवगत कराना चाहिए।
8. जैविक कृषि उत्पादों के उपभोग से स्वास्थ्यगत लाभों को आम नागरिक को बताकर इन उत्पादों के उपभोग को प्रोत्साहित करने की जरूरत है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सविन्द्र सिंह, पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद, संस्करण 2011
2. पाण्डे, चन्द्रमोहन, औषधीय कृषि तकनीकी, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि. नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ. 218,219
3. 'विज्ञान प्रगति' पत्रिका, अंक 1, जनवरी 2016, राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवे सूचना स्त्रोत संस्थान, नई दिल्ली।
4. 'योजना' पत्रिका अंक 2,फरवरी 2016 एवं अंक 4,अप्रैल 2016, सूचना भवन, लोधी रोड, नई दिल्ली।
5. 'साइन्स इण्डिया' राष्ट्रीय विज्ञान पत्रिका, अंक 2,3 जनवरी-फरवरी 2016, विज्ञान सदन 105,आराधना नगर भोपाल।
6. 'कुरूक्षेत्र' पत्रिका अंक 11, सितम्बर 2015 एवं अंक 5, मार्च 2015, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
7. 'रचना' पत्रिका, अंक 12, मई-जून 1998 एवं अंक 18, जनवरी-अप्रैल 1999,पृ.39, म.प्र.शासन उच्च शिक्षा विभाग एवं मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
8. 'पत्रिका' समाचार पत्र, जबलपुर संस्करण, 22.07.2011 पृ.11, 01.08.2016 पृ.12, 21.10.2016,पृ.06
9. 'दैनिक भास्कर' समाचार पत्र, जबलपुर संस्करण,06.05.2016, पृ.11
10. www.organicfarming.hindi.article.

****

कबीर धाम जिले के पण्डरिया तहसील में कृषि भूमि उपयोग का वितरण प्रतिरुप

डॉ. काजल मोइत्रा * बद्री सिंह चौहान **

शोध सारांश – जो भूमि हमें उपलब्ध है। उसका उपयोग कृषि,चारागाह,वन,भवनों,बॉधों एवं सड़कों के निर्माण,पार्क,खेल के मैदान आदि अनेक कार्यो के लिए किया जाता है। भू-उपयोग संबंधी अभिलेख भू-राजस्व विभाग रखता है। यहां यह जानना आवश्यक है कि प्रतिवेदन (Reporting) क्षेत्र तथा भौगोलिक क्षेत्र में अंतर होता है। भू-उपयोग संवर्गो का योग कुल प्रतिवेदन क्षेत्र के बराबर होता है। दूसरी ओर भारत की प्रशासनिक ईकाइयो के भौगोलिक क्षेत्र कि जानकारी भारतीय पत्रों के अनुसार रिपोर्टिंग क्षेत्र पर आधारित है, जो कि कम या अधिक हो सकता है। कुल भौगोलिक क्षेत्र भारतीय सर्वोक्षण विभाग के सर्वेक्षण पर आधारित तथा यह स्थायी है।

प्रस्तावना – कृषि जीवन निर्वाह् का सबसे बडा माध्यम है। मानवीय अर्थव्यवस्थाओं में कृषि का विशेष महत्व है। जीविकोपार्जन कि प्रक्रिया में आखेट,पशुपालन एवं वन्य संसाधनों पर दीर्घकाल तक निर्भरता के उपरांत मनुष्य धीरे-धीरे कृषि विधियों को अपनाने लगा और कालांतर में वह इन्ही के द्वारा जीविकोपार्जन करने लगा। आज मानव के भरण-पोषण में कृषि का प्रमुख योगदान है, इसी पर आधारित अन्य व्यवसाय भी मानवीय क्रियाओं से जुड़कर उसकी आधुनिक सभ्यता के प्रतिक बन गऐ है।

कृषि के प्रचलन में मनुष्य कि विभिन्न आवश्यकताओं कि पूर्ति की। कृषि कार्य के लिए उसके यायावर जीवन में स्थायित्व आया। उसे गृह निर्माण करना पडा तथा कृषि में पशु शक्ति का सहारा लेना पडा। इस प्रकार धीरे-धीरे सभ्यता का विकास हुआ एवं मनुष्य पशुचारण युग से वर्तमान अंतिरिक्ष्य युग में प्रवेश किया।

कृषि का श्री गणेश भी मानव सभ्यता कि भाँति ही अति प्राचीन प्रतीत होता है। यद्यपि यह कहना कठिन है। कि कृषि का सुव्यवस्थित कार्य कब प्रारंभ हुआ, किन्तु इतना तो संभव है कि आखेट,वन, क्रिया कलाप एवं पशुपालन के उपरान्त ही कृषि कार्य प्रारंभ हुआ होगा, पहले अव्यवस्थित रूप में और तत्पश्चात् धीरे-धीरे सुव्यवस्थित रूप में।

अध्ययन क्षेत्र – छत्तीसगढ राज्य में छाया वृष्टि क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाली कबीरधाम(कवर्धा) जिले के पण्डरिया तहसील मे कृषि भूमि उपयोग का प्रतिरूप के संदर्भ में हैं। पण्डरिया तहसील मे 85 प्रतिशत् जनसंख्या कृषि कार्यो पर निर्भर है। अत: हम पंण्डरिया तहसील में कृषि भूमि उपयोग का विश्लेषण करेगें। **(चित्र देखें अन्तिम पृष्ठ पर)**

पण्डरिया तहसील का भौगोलिक विस्तार 22013 उत्तर से 21082 उत्तरीय अक्षांश 81024 पूर्व से 81040 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। जिसका कुल क्षेत्रफल 884.23 वर्ग किलोमीटर पर फैला है। पण्डरिया तहसील में पटवारी हलको कि संख्या 59 है। एवं 117 पंचायत जिसमें 287 गॉव एवं 2 नगरपंचायत है। समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 348 मीटर है। कबीरधाम जिले में 4 तहसील है। क्षेत्रफल की दृष्टि से पण्डरिया तहसील दूसरे स्थान पर है। पण्डरिया तहसील निम्न जिलों के तहसील की सीमाओं को स्पर्श करती है जिसमे उत्तर में मध्यप्रदेश के डिडौरी जिला, दक्षिण में बेमेतरा तहसील तथा पूर्व में लोरमी तहसील तथा दक्षिण पूर्व में मुंगेली तहसील एवं पश्चिम में बोडला दक्षिण-पष्चिम मे कवर्धा आदि तहसीलो को स्पर्श करती है। पण्डरिया तहसील के उत्तर भाग में मैकल पर्वत श्रेणी का विस्तार है। जहां से नर्मदा एवं सोन नदी का उद्गम स्थल है। नर्मदा नदी दक्षिण भारत में नर्मदा अपवाह् तंत्र की रचना करती है।

विधि तंत्र – प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र में पण्डरिया तहसील के कृषि भूमि उपयोग प्रतिरूप लिए राजस्व विभाग से भू-पत्र द्वारा क्षेत्रीकरण किया गया है। कृषि भूमि उपयोग के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्त्रोत में साक्षात्कार प्रश्नावलियॉ,क्षेत्र भ्रमण से एकत्रित किये गये। द्वितीयक स्त्रोंतो में जिला मुख्यालय कृषि विभाग एवं विकासखण्ड,तहसीलो व राजस्वविभाग तथा ग्राम सेवक एवं सांख्यांकिक पुस्तको से प्राप्त किया गया है।

कृषि भूमि उपयोग – कबीरधाम जिले के पण्डरिया तहसील में कृषि भूमि उपयोग का प्रतिरूप इसे निम्न भागों में बॉटा गया है। कुल भौगोलिक क्षेत्र 89019.205 हेक्टेयर है। जिसमे सम्पूर्ण फसलों का क्षेत्रफल 783116.196 या 87.96 प्रतिशत् है। जहां वन का क्षेत्रफल 10703.09 हेक्टेयर कृषि के लिए उपर्युक्त भूमि 56526.233 हेक्टेयर, कृषि योग्य पडति भूमि 2823.433 हेक्टेयर चारागाह 8343.472 पडति भूमि 10623.058 हेक्टेयर के रूप में मिलता है। जिसे सम्पूर्ण फसलों का का क्षेत्रफल में इसकी प्रतिशत् मात्रा को तालिका क्रमांक 1.1 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 1.1

पंण्डरिया तहसील में कृषि भूमि का वितरण प्रतिरूप

क्रमांक	विवरण	ईकाइ हेक्टेयर में	प्रतिशत
1	कृषि के उपर्युक्त भूमि	56526.233	72.17%
2	कृषि योग्य पडति भूमि	2823.472	3.61%
3	चारागाह भूमि	8343.472	10.65%
4	पडती भूमि (अ) वर्तमान पडती भूमि (ब) अन्य पडती भूमि	10623.058 7108.758 3515	13.58%
योग	फसलो का कुल क्षेत्र	78316.196	100%

* एसोसिएट प्राध्यापक (भूगोल) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) डॉ. सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

स्त्रोत – कृषि विभाग कार्यालय, विकासखण्ड पंण्डरिया।

मानवीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन समय से वर्तमान समय तक प्राथमिक स्वरूप बदलता रहा है। कृषि का आधुनिक विकास व्यापारिक रूप में दिखने लगा है। तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या के परिणामस्वरूप मानव ने वनो को काट कर उसे कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित कर लिया। समय के साथ साथ नदी धाटि के अतिरिक्त मरू भूमि पठारी भागो तथा पर्वती ढालों पर भी कृषि कार्य फैलता गया। वर्तमान समय में कृषि भूमि के फैले क्षेत्र के परिणाम स्वरूप जंगलो का बढी मात्रा में ह्रास हुआ है, क्योंकि मानव द्वारा जंगलो को काट कर या नष्टकर कृषि योग्य भूमि का निर्माण किया गया है।

तालिका क्रमांक 1.2

पण्डरिया तहसील में खरीफ एवं रबी फसलों का क्षेत्र

क्र.	विवरण	ईकाइ हेक्टेयर में	प्रतिशत्
1	खरीफ फसलों का क्षेत्रफल	45981.196	58.71
2	रबी फसलों का क्षेत्रफल	32335	41.29
योग	सम्पूर्ण फसलों का क्षेत्रफल	78316.196	100

स्त्रोत – कृषि विभाग कार्यालय, विकासखण्ड पंण्डरिया।

निष्कर्ष – उपरोक्त शोध विवरणों के अनुसार कृषि भूमि उपयोग का सिद्धांत इस संदर्भ पर निर्भर है। कि भूमि के निश्चित क्षेत्र से किन विधियों द्वारा अधिक उत्पादन प्राप्त किया जाए और कृषि कार्य में प्रयुक्त लागत अपेक्षाकृत निम्नतम हो जिससे उत्पादन के अधिकतम लाभ सुलभ हो सके ऐसा संभव होने के लिए निम्न पक्षों में से एक या अधिक का होना आवश्यक है।

1. उन्नत बिजों एवं नविन तकनिकों का प्रयोग करना।
2. मृदा कि रासायनिक तत्वों का जांच कराकर उन्हीं फसलों का चुनाव करना जिससे अधिक उत्पादन प्राप्त हों
3. उस क्षेत्र में भूमि के प्रकार परिवहन प्रणाली श्रमिक संसाधन एवं बाजार कि प्रक्रिया के विस्तार पर अधिक जोर देना चाहिए।
4. उस निश्चित क्षेत्र में सिंचाई सुविधा विकसित कराना।
5. खाद्यों का उचित एवं संतुलित प्रयोग कर कृषि औजारों कि कुशलता बढ़ाकर फसलों कि उचित अनुकुलता को निर्धारित कर अधिकतम कृषि उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।
6. उस निश्चित क्षेत्र में मिश्रित फसलों तथा द्विफसलीय क्षेत्र में वृद्धि करना ताकि अधिकतम कृषि उत्पादन प्राप्त किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. तिवारी, आर.सी एवं सिंह,बी.एस (2000) – 'कृषि भूगोंल' 'प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद' ।
2. यादव, चन्द्रशेखर (2012) – 'कृषि भूगोल' विश्वभारती पब्लिकेशन नई दिल्ली ।
3. यादव, जिलाल (2012) – 'कृषि भूगोल' रावत प्रकाशन नई दिल्ली।
4. खुल्लर, डी.आर (2015) – 'भूगोल' न्यू सरस्वती हाउस नई दिल्ली।
5. पटेल, डी.सी (2015) – 'छत्तीसगढ'– प्राकृतिक भाग–1 मुस्कान आफसेट बिलासपुर ।
6. डॉ. अल्का गौतम (2008) – 'भारत का वृहद भूगोल' सारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद ।

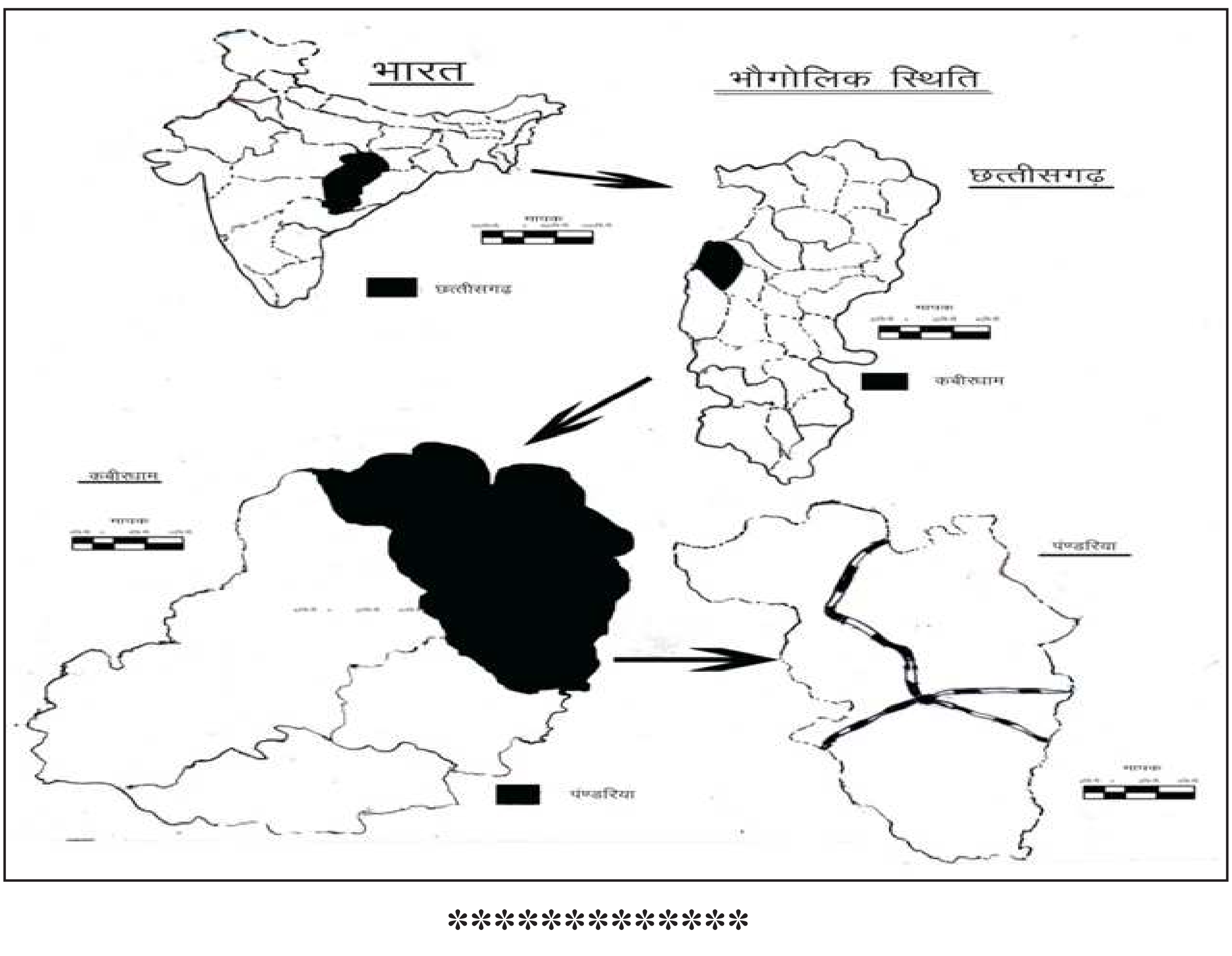

****

अपराधी बालकों की आर्थिक स्थिति तथा शिक्षा की समस्याओं का अध्ययन

अंतिमबाला पाण्ड्रेय *

प्रस्तावना – प्रत्येक समाज और समुदाय अपने अंदर शांति और व्यवस्था बनाए रखने के लिए कुछ सामाजिक तथा नैतिक मापदण्ड और मूल्य निर्धारित करता है। इनका ठीक प्रकार पालन करने के लिए वह कानून, आचार संहिता तथा विधान तैयार करता है। निर्धारित मूल्यों और मान्यताओं के विरूद्ध जो भी कार्य किया जाता है उसे समाज विरोधी व्यवहार अथवा अपराध माना जाता है। इस व्यवहार के फलस्वरूप या तो समाज में सम्मिलित सदस्यों या सम्पत्ति को हानि पहुँचती है, समाज इस प्रकार के समाज विरोधी तत्वों और अपराधियों से बचने के लिये कानून की शरण लेता है और प्राय: ऐसे व्यक्ति बंदीगृह की सिखियों के अंदर रखे जाते है इस प्रकार समाज विरोधी व्यवहार और अपराधी प्रवृत्ति वयस्कों में नहीं पायी जाती बल्कि छोटे बच्चों और किशोर भी इस सामाजिक बुराई का शिकार होते हुए दिखाई देते है। इन अल्प वयस्क किशोरों और बालकों को किशोर अपराधी या बाल अपराधी के नाम से संबोधित किया जाता है। इस प्रकार बाल अपराधी निश्चित रूप से अल्प वयस्क अधिकारी होते है। वे कानुन का उल्लधन करते है और चोरी करना, जुआ खेलना, धोखा देना, जेब काटना, हत्या करना, डाका डालना सम्पत्ति को आग लगाना अथवा किसी ओर तरह से हानि पहुँचाना, मारपीट करना, शराब आदि मादक द्रव्यों का सेवन करना, भीख मांगना, अपहरण बलात्कार और अन्य यौन संबंधी अपराध करना आदि समाज विरोधी कामों में फँसे हुए पाए जाते है।

अपराधी बालक व आर्थिक स्थिति – कई बार बालक आर्थिक रूप से सम्पन्न होने के बावजूद भी इस प्रकार का व्यवहार करता है वातावरण या उसका माहौल उसे इस प्रकार बना देता हैं। वास्तव में देखा जाए तो परिवार पास –पड़ोस ,सामाजिक परिवेश में व्याप्त प्रतिकूल परिस्थितियाँ तथा समाज विरोधी कार्यो की छाप बालक पर अवश्य पड़ती है व जाने –अनजाने अपने परिवेश से ही ये सभी बाते ग्रहण कर लेता है। कुछ निम्न प्रकार की पारिवारिक परिस्थितियों को बाल अपराध के लिए अधिक उत्तरदायी ठहराया जा सकता है –

1. अरूचिकर और रूखा घरेलू वातावरण
2. बालकों को पर्याप्त स्वतंत्रता प्रदान न करना।
3. घरेलू लड़ाई –झगड़े और अशान्ति
4. माता पिता का बालकों पर उचित नियंत्रण न होना।

कारण – काफी समय से मनोवैज्ञानिक यह जानने का प्रयत्न कर रहे है कि बाल अपराध के मूल में क्या कारण होते है। उन्होंने अपने विचार से विभिन्न कारणों को उत्तरदायी ठहराया है जो निम्न है –

1. वंशानुकरण संबंधी कारण – वंशानुक्रमवादियों ने बाल अपराध के लिये वंशानुक्रम को उत्तरदायी ठहराया है। इनमें से हेनरी, मॉडस्ले, ट्रेडगोल्ड, और डगडेल जैसे वंशानुक्रमवादियों ने यह मत व्यक्त किया है कि बाल अपराध संबंधी विशेषताएँ व प्रवृतियाँ ऐसा बालक अपने माँ–बाप से विरासत में प्राप्त करता है। बाद में मनोवैज्ञानिकों जैसे विलियम हेले , साईरल बर्ट, कानरैड तथा जौन्स, विगफिल्ड तथा सेन्डी इत्यादी ने परीक्षणों के आधार पर इस बात का खण्डन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि बाल अपराध वंशानुगत नहीं होता और इसलिए वंशानुक्रम को बाल–अपराध को बाल अपराध प्रवृति के लिये उत्तरदायी ठहराया नहीं जा सकता।

2. शरीर रचना और शरीर विज्ञान संबंधी कारण – कुछ मनोवैज्ञानिकों ने शारीरिक रचना संबंधी दोषों को ओर शारीरिक अस्वस्थता इत्यादि को बाल अपराधी व्यवहार के लिए उत्तरदायी ठहराया है। इस बारे में प्रो. उदय शंकर अपने अध्ययनों द्वारा निष्कर्ष निकालते हुए लिखते है –

शारीरिक अस्वस्थता अथवा कमजोरी , बहुत छोटा या बहुत लम्बा कद डील या डौल शारीरिक अंग प्रत्यंगों में कोई गम्भीर दोष अथवा खराबी बच्चे में प्राय: हीन भावना को जन्म देती है। फलस्वरूप अपनी कमियों की क्षतिपूर्ति के लिए वह अधिक आक्रमक हो उठता है और इस तरह धीरे–धीरे उसमें अपराध मनोवृति घर करने लगती है। ऊपर से देखने पर इस प्रकार की बात ठीक लगती है। लेकिन सदैव ऐसा नहीं होता है अभी तक इस प्रकार के वैज्ञानिक प्रमाण उपस्थित नहीं हुए है कि अपराध प्रवृति के लिए शारीरिक न्यूनताएँ अथवा शरीर रचना संबंधी दोष उत्तरदायी ठहराया जा सकता है।

बौद्धिक कारण – बाल अपराधी व्यवहार के लिए बौद्धिक न्यूनताओं को दोषी ठहराया जाए अथवा नहीं इस विषय पर मनोवैज्ञानिकों में काफी मतभेद है। लाम्ब्रोसो और गोडार्ड आदि मनोवैज्ञानिक इस मत के है कि बुद्धि संबंधी न्युनताएँ और दोष ही पूरी तरह से बाल अपराध के लिए उत्तरदायी है। उनके अनुसार मानसिक रूप से विकसित व्यक्ति ही अपराध करते है लेकिन बर्ट, हीले, ब्रोनर, और मैरिल आदि मनोवैज्ञानिक बाल अपराधियों को मंदबुद्धि अथवा बौद्धिक न्युनता दोषों में स्थायी संबंध ढूढ़ना भूल ही है। अधिक बुद्धिमान व्यक्ति सदैव अच्छा व्यवहार करते है। इस बात की कोई गारंटी नहीं प्राय: यह भी देखा जाता है बहुत से समाज विरोधी संगठनों चोर , डाकू , लुटेरे, तथा तस्करों के नेता कोई न कोई बुद्धिमान व्यक्ति भी होते है दूसरी ओर यह कहना कि मूर्ख अथवा कम बुद्धिलब्धि वाले होते है अपराध नहीं कर सकते यह भी गलत है जहां कम बुद्धि का होना एक परिस्थिति में अपराध करने में बाधक सिद्ध हो सकता है। वही दूसरी परिस्थिति में ऐसा होने से अपराधी बिना कुछ सोचे समझे अपराध कर सकता है। इसलिये बुद्धि संबधी कमियों को किसी भी तरह निश्चित रूप से बाल अपराध के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।

* शोधार्थी (शिक्षा) पी.जी.वी.टी. कालेज, उज्जैन (म.प्र.) भारत

समाज में विद्यालय का दायित्व – बाल अपराध के क्षेत्र में होने वाली विभिन्न खोजों ने यह सिद्ध किया है कि बाल अपराधी व्यवहार एक अर्जित प्रवृति है। बाल अपराधी –अपराध संबंधी मनोवृति और विशेषताओं को अपने माँ–बाप अथवा पूर्वजों से विरासत में ग्रहण नहीं करते बल्कि प्रतिकूल सामाजिक परिस्थतियाँ और वातावरण उन्हें अपराधी बना देती है, इस संदर्भ में प्रो. उदय शंकर द्वारा निकाला गया निष्कर्ष उल्लेखनीय है। वे लिखते है बाल अपराध इसलिए वंशानुगत नहीं होता यह आर्थिक और सामाजिक परिस्थतियों का परिणाम है और आवश्यक रूप से व्यक्ति पर पड़ने वाले सामाजिक परिस्थितियों का परिणाम है और आवश्यक रूप से व्यक्ति पर पड़ने वाले सामाजिक प्रभाव द्वारा उत्पन्न होता है। समाज विरोधी व्यवहार करने से अधिक महत्वपूर्ण कारण सामाजिक और वातावरणजन्य ही होते है।

रोकथाम संबंधी उपाय – बालकों के माता–पिता को बाल अपराध मनोविज्ञान का कुछ ज्ञान अवश्य कराया जाना चाहिए ताकि वे अपने बच्चों के साथ उचित व्यवहार कर सके तथा उनकी आवश्यकताओं और मूल प्रवृतियों की संतुष्टि के लिए आवश्यक सुविधाएँ तथा अवसर प्रदान कर सके। इस कार्यो के लिये निर्देशन सेवाओं, मनोविज्ञान क्लीनिक और समाज सेवी संगठनों से सहायता प्राप्त की जा सकती है।

बालकों को बुरी संगति और समाज विरोधी तत्वों से बचाना – माँ बाप सदस्यों तथा अध्यापकों आदि को बालकों के ऊपर उचित निगरानी रखनी चाहिए ताकि उन्हें किसी भी बुरी संगति में पड़ने से रोका जा सके। कई बार कुछ समाज विरोधी तत्व तथा अपराधी लोग बच्चों को बहला – फुसलाकर उनसे गलत कार्य करवाने का प्रयत्न करते है। एक बार आदत पड़ जाने अथवा पुलिस के हाथ पड़ जाने पर इन अपराधियों द्वारा पूरी तरह शोषण किया जाता है। अत: बालकों को इनके चुंगल में न पड़ने देने के लिए समाज को अपनी ओर से प्रयास करने ही चाहिए साथ में बालकों को भी इनसे दूर रहने के लिए पूरी तरह शिक्षा दी जाना चाहिए।

दोषपूर्ण परिवेश का कोई विकल्प प्रस्तुत करना – कई बार वातावरण में सुधार लाना असंभव हो जाता है तो कई बार पास –पडोस के मित्र – मण्डली में व्याप्त बुराईयों के प्रभाव से बालक को बचाना कठिन हो जाता है ऐसी परिस्थितियों में बालक को उनके मूल परिवेश से निकालकर किसी उपयुक्त परिवेश में रखने का प्रयत्न किया जाता है। शिशु केन्द्र , सुधार गृह, विशिष्ट शिक्षालय तथा गोद लेने वाले घर इस दिशा में काफी उपयोगी सिद्ध हो सकते है।

शिक्षा की समस्या – विद्यालय के वातावरण को भी स्वस्थ्य और उपयुक्त बनाया जाना चाहिए। शिक्षण विधियों, पाठ्यक्रम, अनुशासन, अध्यापकों के बालकों के साथ किए जाने व्यवहार और विद्यालय में व्याप्त सामाजिक वातावरण को इस प्रकार व्यवस्थित किए जाने की आवश्यकता है कि बालकों को बिना किसी संवगात्मक और सामाजिक कुसमायोजन की समस्या का शिकार हुए अपना विकास करने में उपयुक्त अवसर उपलब्ध होते रहे। उन अध्यापकों के दृष्टिकोण में सुधार लाए जाने की परम आवश्यकता है, जो बालकों को हर समय डाँटने –फटकारने तथा उनके ऊपर अनुचित अधिकार जताने का प्रयत्न तो करते रहते है परंतु उन्हें या उनकी आवश्यकताओं को समझने का कोई प्रयास नहीं करते। इसके अतिरिक्त अध्यापकों तथा मुख्याध्यापक को वैयक्तिक भेदों तथा बाल अपराध से संबंधित मनोविज्ञान का भी उचित ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि वे बालकों में अपराधी प्रवृतियों को पनपने न देने के बारे में पूरी–पूरी चेष्ठा कर सके।

सुधार संबंधी उपाय – बाल अपराध या किशोर अपराध की समस्या किसी भी तरह एक कानूनी वैधानिक समस्या नहीं मानी जानी चाहिए। यह एक शैक्षणिक और मनोवैज्ञानिक समस्या है। इसलिए बाल अपराधियों को अपराध के अनुपात में दंड देकर सुधारने की बात सोचना बहुत बड़ी भूल है वास्तव में ऐसे बालकों को दण्ड देने की आवश्यकता नहीं होती बल्कि उचित व्यवहार, स्वस्थ वातावरण और उपयुक्त शिक्षा दीक्षा की आवश्यकता होती है, इसलिए बाल अपराधियों से निपटने के लिये देश की कानून व्यवस्था में अलग ही उपाय होने चाहिये। विश्व के अधिकांश प्रगतिशील देशों में दण्ड देने के स्थान पर ऐसे बच्चो को सुधारने के कार्यक्रम अपनाए जा रहे है इस दिशा में इंग्लैड़ द्वारा चिल्ड्रेन एण्ड यंग पर्सन्स एक्ट के अंतर्गत अपनायी गई व्यवस्था विशेष रूप से उल्लेखनीय है कुछ आवश्यक परिवर्तनों के साथ हम भी अपने देश में इसे अपना सकते है। इस व्यवस्था के अंतर्गत कुछ निम्न बाते आती है –

1. बाल अपराधियों से निपटने के लिए विशेष बाल न्यायालय और न्यायाधीशों की नियुक्ति।
2. बाल अपराधियों को बंदीगृह में न भेज कर प्रशिक्षित समाजिक कार्यकर्ताओं जिन्हें सुधार अधिकारी या परिवीक्षण अधिकारी कहा जाता है – की देखरेख में रखने की व्यवस्था।
3. बालक के अपराधी व्यवहार को समझने के लिए मनोवैज्ञानिक और मनोविश्लेषणकर्ताओं की सहायता लेना।
4. विशेष सुधार शिक्षालयों की व्यवस्था करना।
5. अपराधी बालकों में सुधार लाने के प्रयत्नों को करने के पश्चात इन्हें योग्य व्यक्तियों अथवा सामाजिक संस्थाओं को सौंपना।
6. रिमाण्ड होम्स की व्यवस्था करना जहां बाल अधिकारियों को अपने मुकदमें की सुनवाई के समय अथवा सुधार शिक्षालयों में भेजने का इंतजार करते समय अथवा किसी योग्य व्यक्ति के सौपे जाने का इन्तजार करते समय ठीक प्रकार से रखा जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. American Phychiatric Association Diagnostic and Statistical Manual of Mental Deficiency (2nd ed.) DSM-II Washington D.C.1968
2. Telford, C.W. and Sawrey J.M. The Exceptional individual (3rd.ed.) Englewood Cliffs. New Jersey;prentice Hall 1977.
3. Verma, S.C., The young Delinquents ; Lucknow Pustak Kendra 1970.
4. Grossman H.G. (E.D), classification in Mental Retardation, Washington D.C. American Association in Mental deficiency , 1983.
5. Barton , Hall Phychiatric Examination of the school Child , London ` Edward Arnold, 1947.
6. Lermer , J Children with Learning Diabilities , Boston Houghton Miffillin 1976
7. Crow and Crow Alice , Educational Psychology , New Delhi Eurasia Publishing House 1973

****

The Tribals of India

Dr. Mahipal Singh Rao * Dr. Mehzbeen Sadriwala **

Introduction - Tribal studies have been traditionally pioneered by anthropologists over the last hundred years. However, the purpose of the studies were different in those times than what they are conceived now. European Scholars studied the tribes for understanding the evolution of human institutions which were imagined to have originated in the primitive cultures of the tribes. Some of the Westerners were interested in spreading the gospel of their religion. From the methodological point of view, it has been easier to study simpler tribal cultures as compared to the urban complex cultures. The British and Indian civil – servants – turned – anthropologists studied castes and tribes were not meant to be scientific ethnographic studies of tribes but were meant to provide the basic information of Indian cultural groups to facilitate administration by indirect rule.

However, the situation has changed after Independence. The tribes Were designated as Scheduled Tribes with a view to bring them on par with the main stream citizens by providing them with facilities and schemes for educational, economic and political development, by encouraging them to share power and administration. The political forces and the complexities of geographical, historical, economic and other pressures have prompted several non-tribal groups to successfully claim the Scheduled Tribe status thereby increasing their population beyond the normal growth rate. This has created all round problems for the development administration and the real tribal. The genuine concern of the policy planners about development of the tribal is foiled by the problem of pseudo-tribal, who appropriate the facilities meant for the genuine tribal groups.

Beteille (1992) argued that when anthropologists speak of tribes, they mean communities of people who have remained outside of the state and civilization, whether out of choice or necessity, which was the reason of calling them 'non-civilized,' but not uncivilized. In India, 'they all stood more or less outside of Hindu civilization.

Fernandes (1995) writes in his article that the tribes are called Adivasi in Sanskrit and Hindi which literally means the original settlers. The fact that most of them were still live in rural, forest and mountain areas proves that they have been living here from the beginning or from very ancient times. The Government of India, however, do not recognize thetribals as "Indigenous People" and have not signed the ILO Convention 169 of 1989 which restricts the displacement of the tribals, demands adequate rehabilitation and safeguards for the tribal's culture. Several Indian scholars have expressed disagreement with the UN definition of the "Indigenous People"

Singh K.S. (1995) has given a detailed account in his work on Tribalism and Sanskritazation phenomena. Due to long association with the tribal people, the minority non-tribal communities also adopted many social customs and traditions of tribal culture which clearly had distinct advantage over their own tradition and social customs e.g., cross cousins marriage of tribal tradition has been adopted by the non-tribal castes to win over the dowry problems. Tribalism of larger society is the function of upper hand of tribal culture.

Singh A.K. (1997) explains in his article on concept of tribe. He is of view that the colonial period witnessed the transformation of forest dwellers into tribes and the process of transformation of tribes into castes.

All the ethnographers earlier described communities as tribe. But the distinction between tribe and caste did not fully emerge until the census of 1901. D. Hobetson in Punjab was aware of all pervasiveness of caste structures and caste values. And make a distinction between caste and tribe. Occupation was the primary basis of castes, reinforced by status and caste values. A tribe was bound by the notions of 'Common origin, common habitat, common customs and modes of thought'. A tribe particularly a clan was strongly linked with territory. The tribes successively were described in the censuses and ethnographic literature as hill tribes, forest tribes, primitive tribes and backward tribes. It was under the government of India Act of 1935 and the constitution of India that the nomenclature of the Scheduled Tribes fully emerged. Soon after Independence the tribes were somewhat differently defined for administrative reasons. It should be noted that primitiveness and backwardness were the tests applied in preparing the list of Scheduled Tribes in 1950 and 1956. In revising the list in

*Lecturer (English) Shri Guru Govind Government College, Baswara (Raj.) INDIA
**Asstt. Professor (English) J.R.N.R.Vidyapeeth University (Raj.) INDIA

1965 other criteria looked for were indications of primitive traits, distinctive culture, geographical isolation, shyness of contact with communities at large and backwardness.
In different language area the tribes started defining themselves locally and nationally as adimjati, adivasi, janajati, etc. Globalization paradoxically has highlighted identity of all groups particularly tribes and galvanized their resistance and consolidation. The basic problem today is to guarantee the rights of tribal people over their resources and to create an apparatus that will ensure their own benefit.

Srivastava (2006) in his article 'A note on the Tribal Situation in India' reveals that the all tribal societies were pre-literate scantily dressed, relatively out off from other societies of the wider world, had few personal effects, lived in similar types of habitations and the values of accumulation, investment, gain, profit and surplus were largely alien to them. Consensus does not exist on the number of communities in India that could actually classified as 'tribal' because of the changes that have occurred (and are occurring) among them, are line of argument is that Indian tribes do not subscribe to their textbook definitions. Aphale and Bairagi (1984) observed that there is high percentage of disparity among the tribals and the general population due to their backwardness, ignorance and poverty. The yields of the tribals are poor because they continue to cultivate land in their traditional primitive manner. Fragmentation of land is another problem in this area. Much of the land is situated on slopes which results in the erosion of soil. Lack of improved seeds, lack of manure and chemical fertilizers, lack of cash resources on easy terms, lack of working livestock, lack of innovation in the methods of cultivation and lack of other supporting enterprises like dairying and transfer of lands from the tribal to non-tribal have disarranged the entire life of the tribal persons. Agriculture is among the most crucial activities of the tribal. Several years ago the tribal people owned most of the land is areas where they predominantly lived and cultivated it. But several factors such as poor economic conditions, poor fertility of land, and increase in population let the tribal people fall the prey to indebtedness. The most convenient way to be relieved of this situation appeared to the tribal people in the form of alienating their lands. The process of alienation started several decades back and it remained unimpeded till very recent times. It needs to be mentioned that despite the healthy enactments with regard to the land restoration referred to above, there have been reported instances of land grabbing by non-tribal. Land alienation over the years has been the single biggest cause of the acute backwardness of the tribal economy. This problem will have to be tackled more deep from all concerns to protect the interests of the tribal.

Approaches and Policies of Government and Constitutional -

Safeguards for Scheduled Tribes - Verrier Elwin (1959) says that keeping the sketchy general background of the tribes in mind we may now pass on to the tribal policies of the colonial Government and the present Independent Government, the exposition of which would automatically justify the usefulness of assigning safeguards to the Scheduled Tribes by the National Government. The approaches of these two administrative machineries show a striking difference in terms of deep motivational principles while the approach adopted by the British Government was fundamentally political being purely guided by their colonial interest, the present Government's attitude prompted by a desire of welfare and an uncompromising concern for the socio-economic upliftment of our tribal folk. This basic difference in attitudes is, thus, an important point to note which should not be lost sight of while assessing the nature of their respective policies towards our tribal brethren.

Sahay (1968) write about their general policy of isolation characterized by non-intervention or limited intervention under dire political need was their often covert and sometimes direct encouragement to the Christian missionary activities, in the tribal areas. It is of course, an undeniable fact that the Christian missionaries had done something for the wellbeing of the tribes, the scope of which was wide. That was an activity of high spirited social service and reforms as a result of which many of the tribal areas had schools, hospitals, etc. The missionaries, therefore, must be deemed as the pioneers who initiated the process of socio-economic transformation in the hitherto stagnant tribal life. Although the "service for the suffering humanity, is considered to be a duty for the Christian missionaries but at the same time it is coupled with the right of conversion".

Shrinivas M. N. (1944) stated that the large-scale conversion of many tribal groups, especially of the States in Eastern India, which had far reaching implications. With the passage of time it became more and more apparent to the people here that the primary goal of the missionaries was conversion and "the opening of schools, hospitals and either welfare agencies (were) only bait in the trap of conversion". Instances are not lacking about their resorting to unfair means of all sorts including material inducement, political favor, etc., for conversion. A careful analysis of the missionary activities thus leads to the conclusion that under the garb of humanitarianism, the obnoxious political motives of the colonial rulers were rampant. It was a sort of intellectual and moral aggression on Indian life strongly patronized by the British Government which aimed gradually, to alienate a chunk of the population from the main national stream by generating a kind of "sentimental and emotional detachment with the rest of the people – a process which could be effectively carried out under the auspices of the policy of Isolation.

Indian Attitudes to the Tribals in Early Post-Independence India Dube (1982) writes that one can very well understand in the contextas to why the British Government's creating the "excluded" and partially excluded" areas and giving separate political representation to the tribes

had invited criticism of the Nationalists who "viewed both these measure as part of a diabolic conspiracy to create a new separatist minority".

However, with the independence of the country, this policy had undergone a qualitative change. Contrasted with the British policy, the present Government of India's foremost concern which molded its policy was securing the welfare and socio-economic upliftment of the tribal people. The polity imbued with a high sense of respect for the tribal cultures and traditions is stoutly opposed to any kind of interference by outside agencies which are likely to contribute to the destruction of the tribal art, culture and so on. This has amply been demonstrated in the five fundamental principles of the tribal development evolved. Government decided to implement a new strategy, i.e., 'Tribal Sub Plan' during the Fifth Five Year Plan to concentrate on their needs in tribal regions.

Gare (1983) writes in research study, the exploitation of tribal in land and forest is major cause of tribal's economic underdevelopment and improvement. The majority of tribal hold small and limited agriculture lands and cultivate through traditional seeds method without irrigation.

The tribal's' forest wealth has been ruined due to excessive cutting of timber by the forest labour co-operative societies. Hence, the tribes today survive on agriculture land and farm labour practices. The tribal's' economic problems are related with unproductive agriculture and hunger. Gaikwad (1990), in his study on 'Role of Minor Forest Produce in Tribal Economy,' noted that the tribal communities in India largely occupy forested regions that for a long period in their history. They lived in isolation but in harmony with the nature. The forests not only provide them food, material to build houses, fuel for cooking, light and warmth, fodder for their cattle, but also satisfy their deep-rooted sentiments. 'Tribal life is connected in a way or the other with forests right from birth to death.

Forests occupy the central position in tribal economy. Tribal life is profoundly affected by whatever happens to the forest. Forest is for them a whole way of life, and hence the development cannot make much headway without the contribution of forestry sector. Minor Forest Produce (MFP) includes all items of forest produce except timber. Collection and sale of (MFP) forms the major economic activity of livelihood for majority of the tribes. Various items of MFP possess the potential of an economic revolution among the tribal. Tribal's collect many items of daily use as well as Minor Food Products items from the forests traditionally, which are necessary for their day-to-day sustenance. During drought and adverse conditions, the tribal households live only on edible products collected from forests. MFP items have a vital role and a viable potential of an economic revolution among the tribes residing in forests. A special drive is necessary for the collection, processing, preservation, storage and marketing of the MFP and their derivatives.

The article written by Gare (1983) found that the Tribal backwardness in the field of Education, Social and Economical life was responsible for continuous exploitation of tribal in various areas. He found that the enrolment rate of Tribal students has risen to 2 percent from 1 – 2 percent through educational program.

References :-

1. Basu, A.R. (1985), Tribal Development Programs and
2. Adminstration, National Book Organization, New Delhi.
3. Behura, N.K. (1995), Tribes in India: Planned development. In
4. Singh, A.K. and Jabbi, M.K. (Eds) Tribals in India: Development,
5. Deprivation and discontent, HarAnand, New Delhi.
6. Beteille, Andre (1992), Society & Politics in India: Essay in a
7. Comparative perspective, Oxford University Press, Delhi.
8. Chaudhury, Bhagirathi (1996), Tribes and Development, Orissa
9. Today, An Annual Survey, Sun Times, Bhuvaneshwar.
10. Chaudhuri, N.C. (1965), The Continent of circle, Bombay.
11. Deogaonkar, S.G. (1982), TheMadias of Bhamragad, Inter- India
12. Publications, New Delhi.
13. Devalle, SBC (1992), Discourses of ethnicity: Culture and protest in Jharkhand, Sage,New Delhi

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

Cultural Clashes In The Novels Of Arun Joshi

Dr. Ajay Bhargava * Batul Attarwala **

Abstract - The present work is aimed to highlight a prominent point in Arun Joshi's fiction that is Cultural Clashes, which deals with Indian culture vs Westernization, the warring culture of East and West and idealism vs pragmatism. Arun Joshi, like Raja Rao, ascertains his deep-rootedness in his cultural traditions. Like Raja Rao who has lived much of his life in abroad, Arun Joshi too holds firmly to an Indian cultural identity and to Indian mode of thinking that shapes his content and coloures his vision. It is his Indian moorings that conditions his response to experience

Cultural Clashes -

1. Indian culture vs Westernization
2. Warring culture of East and West
3. Idealism vs pragmatism

Introduction - Arun Joshi's novels demonstrate that he has been preoccupied with the problem of twentieth century man's dilemma and its results. In an age when religious faith is fast disappearing and man feels culturally uprooted and socially alienated on account of his own misdoings, the message of serious artists like Joshi is most welcome and called for. In fact the gravity of spiritual crisis coupled with material prosperity has created an unusual situation where cynicism has faded the long cherished values of life. For lack of an intuitive discipline implanted in an affirmative attitude to the universe and its happenings, modern man seems convinced of the purposelessness of his existence and its activities. Joshi's protagonists represent a cross-section of humanity and this lends an authentic quality to his creative world.

Modern man is illusioned to think that he is getting his heights in the wake of modernization and industrialization. But, in fact, it is leading our civilization to disaster. Joshi finds man in the contemporary society totally frustrated, separated and alienated because of being detached from his fellow-beings. Arun Joshi's novels are the revelation of human predicament in an indifferent and mysterious universe. The present society is full of exploitations. There is only chaos, confusion and anarchy in social life…Arun Joshi was pained to see the chaotic conditions of the society. He, therefore, took into his hand the task of providing a solution to the society, to escape from the vicious circle of rapid industrialization. Thus, through the struggles of his protagonists he aims to achieve a good society and happy and joyful individuals.

The first person narrative technique most suitably injects the inner cry of a man into the reader's mind. The novelist tries to explore the reasons behind the inner crisis of modern man who is uprooted from his cultural, social and spiritual roots. The Strange Case of Billy Biswas depicts the conflict between modern civilization and primitive life. Billy's experiences are intellectual and psychic and he is a lonely quester. "I sometimes wonder whether civilization is anything more than the making and spending of money. What else the civilized men do?"(The Strange Case of Billy Biswas 96). His irksome attitude towards the so-called elite society is expressed through the imagery of dogs with furred paws and large teeth. The tribal life fills him with a sense of security and complete fulfillment.

Romi, the only link of Billy with the civilization, turns out to be betrayer. Though, Romi tries his best to keep information of Billy a secret, things go beyond his command when through his wife the secrets of Billy's reappearance is disclosed to Billy's father and wife. Billy's father and wife are determined to get him back. His father uses his power. In one of the police confrontation with the tribal Billy is shot dead and only his ashes reach the civilized world. His strange case is disposed of in the manner that a humdrum society knows of disposing its rebel, its true lovers. While the civilized world destroys him, the tribal world seeks to perpetuate the memory of the man-god by offering him a shrine. R. K. Dhawan rightly states: "The clash between the primitive and the modern civilization is a recurrent theme in Arun Joshi.".

In The Foreigner, Sindi shows his irksome behavior towards the materialistic life: In The Strange Case of Billy Biswas, the protagonist feels suffocated in the technically

* Professor & Head (English) Govt. College, Barnagar, Distt. Ujjain (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

advanced society governed only by money: "Ratan Rathore, in The Apprentice, is a child of double inheritance; his mother considers money as the supreme power in this world while his father believed in a life of respect. But in the end, he comes to the realization that her mother was incorrect and a man of money can also be assailed. The truth is that money is "law in another sense: it dictated not only the world but the possessor of money as well. It was the jinn in the bottle. " He further writes: "In money's kingdom…only money is king. All others are slaves. And none a greater slave than its proud possessor. " Som Bhaskar, the protagonists in The Last Labyrinth, also reckons in the end that materialistic success alone cannot fill life with happiness. To resolve the inner crisis, one must work for spiritual healings. Arun Joshi's last novel, The City and the River, is a great novel as it depicts the two categories of the people; the first category forms a group of the people who consider money and power as the summom bonnum of life and support The Grand Master who rules the city while the other group consists of the people whose allegiance is only to the River, a symbol of life and divinity. The issues raised by Arun Joshi are serious and need our attention to survive in the modern world. We must make a choice between the materialistic values and spiritual affirmation.

Arun Joshi is such an artist who takes us to the surface of the East and the West. In all his four novels we have descriptions of warring cultures of East and West. The Foreigner by Joshi presents the two cultures side by side. In The Foreigner Sindi Oberoi, the protagonist is a product of cross roads of the West and the East. His dilemma is socio-psychological. Sindi Oberoi is denied parental love, family affection and cultural roots. He grows into a wayward man and finally becomes a wanderer alien to his own culture. He has no longer any sense of security because of his isolation from his own family and the society. His cut out relation and his sense of being an outsider remains to be static.

In the split personality of Sindi Oberoi, Arun Joshi surveys the prejudices and illusions of the East and the West. The thinking of Sindi Oberoi reaches the depths of human problems of socio-cultural existence. The word foreigner finds a symbolical value in the larger context of human existence. It provides ample opportunity for the study of cross cultures. We also come to know individual and human problems against the background of different culture. There are also differences of cultures in respect of marriages. In India marriage is an institution. Majority of people like traditional marriage than the marriages based on advertisement. But in American culture marriage is a sort of temporary association for sexual gratification. It is not binding on the partners for life long. It may break on the discretion of either of two. Those who visit America and accept American culture does not care for the sanctity of marriage. In America, Sindi does not mix with the culture of the people there. When he has an opportunity to attend a party or to go to public path, or to buy a ticket, he remains himself as an ex-officio host or an alien. He has the only feeling of alienation, loneliness and insecurity:

In The Strange Case of Billy Biswas, Billy finds peace and happiness in the woods and with the tribals. The conflict of cultures arises in his mind. He leads a life of fuehrer. The complexity of his thoughts compels him to think a lot for his being in that very society where he is disappointed to reach his goal. He looks like a stranger. Billy is satisfied with the tribal's culture. He is happy because he is far from the world that hangs on the peg of money. Thus, Billy meets Bilasia and unifies himself with her and culture.

The characters of Arun Joshi possess double inheritance. His Sindi Oberoi is a product of cultural multiplicity, his Billy carries both legacy of urban aristocracy and tribal primitivism. His Ratan Rathore has divided soul. He finally becomes a careerist. Thus, the parallel cultures of the rich and the poor moves in his mind. He feels that money culture has poisoned the entire society. Money makes friends and it succeeds where all else fails.

The clash of Culture in The Apprentice is different from that of The Strange Case of Billy Biswas. Billy is not a victim of corrupt society but Ratan Rathore is concerned with corruption. Billy rejects the material civilizations and money-mindedness. Bilasia has nothing to do with money or money culture or materialism but in The Apprentice Arun Joshi presents omnipresent corruption in the country. We find that at every shift in his life Ratan Rathore has a deviating tendency but this deviation from the ideals torments him. He has to suppress the voice of his soul. Falsity, hypocrisy and corruption are the things which teach him to be a faker. The Western culture teaches him to disbelieve God and God's existence.

In The Last Labyrinth two opposite cultures inflict Som Bhaskar. He inherits the miseries of both of them. Born and brought up in India Som Bhaskar has his studies abroad. He has his education at some of the best Universities of the world and has also spent many years outside India. Therefore, it is natural to him to imbibe something of Western outlook. He has come to rely on reason, scientific temper, materialistic outlook, intellectual appetite and other gifts of the west. In fact inflictions of contradictions are in his blood. Through Som Bhaskar, Joshi explores the possibility of an equation between two cultures and self-realization. In between the cultures of the two worlds Som Bhaskar suffers. He reveals that Western values do not provide peace, sublimity and self-fulfillment. Traditional Indian culture and values give us enlightment and greater force. Billy is dissatisfied with the modern civilized culture, its standards and its mores which are perennially being imposed by its corrupt agents on creatures aching with listlessness. The modern civilized society had its corrupting effect on Billy as well.

Billy's quest for self begins and he knows that he will be able to peep into dark cells of his soul by fleeing from the suffocating modern civilized society. When he finds his

real self among the forest people, he is a different being, refuses to do anything with the modern civilized world. In rejecting modern society he rejected all wrong self-images to recognize his true aspects. For the representatives of modern society like Meena, Billy's father, Billy is somebody being caught hold of by the tribal world and the man needs to be saved. This clash between modern day world and somebody who wants to make a change in it prevails till the end. That the protagonist is killed in the end reflects the indifference of the civilized society. The Strange Case of Billy Biswas as professor O. P. Mathur and Professor G. Rai interpret represents "the universal myth of the primitive in the heart of man ever alienating him from the superficial and polished banalities of modern civilization."

References :-

1. O. P. Mathur and Rai, The Existential Note in Arun Joshi's The Strange Case of Billy Biswas and The Apprentice, (Common Wealth Quarterly, December 1980)
2. R. K. Dhawan, The Fictional World of Arun Joshi, (Introduction). The Novels of Arun Joshi, (New Delhi: Classical Publication, 1992)
3. Tapan Kumar Ghosh, Arun Joshi's Fiction: The Labyrinth of Life. (New Delhi: Prestige Books, 1996)

****

The Socio Psychological Crisis Of Eunuchs In Seven Steps Around The Fire

Dr. Shweta Singh Baghel *

Abstract - Present paper explores condition of eunuchs in Indian society.The play Seven Steps Around The Fire, is the first authentic representation of the community of Eunuchs in theatre.Dattani makes a bold attempt to give central space in the mainstream drama to the community of Eunuchs in his play Seven Steps Around the Fire. Dattani investigates the human aspect of eunuchs who are socially neglected and even humiliated. For being sexually handicapped, they are not permitted to share the normal life conditions and they are often identified with their obscene patterns of behaviour including their speech, clapping and singing. Dattani deals with the problem with socio-psychological paradigms related to the existence of Eunuchs. The play Seven Steps Around the Fire is the mockery of gender oriented social system where dramatist sympathetically accepts human identity of eunuchs and struggles to construct their voice so that they might identify their oppressors and register their voice of protest.
Keywords- Hijras(Eunuchs), genders, unacceptable, invisible, marginalized, victimized.

Introduction - The play 'Seven Steps Around the Fire' depicts deplorable condition of hijra (eunuch) in our society. Transsexual is neither he nor she. It is neuter gender. So pronoun 'it' is used for denoting their neuter gender. The human identity of the eunuch is enveloped under the cloaks of myths and conventions. It is probably one of the best plays of Dattani that discusses the socio-psychological crisis of the hijras who are torn between the social taboos and their personal desires.

It dramatizes the conflicts, anguish,dilemmas, insecurities, fears and frustration of the hijra community that is granted no honourable social space.

Dattani is probably the first playwright who has written a full length play about them. For the very first time they get a depiction in the theatre as human beings with their individuality who crave for space in the society. Remarking on the theme of the play, Dr. Beena Agarwal remarks: "Dattani in the process of engineering the current of Indian drama by bringing it closer to the real life experiences tried to articulate the voice of the oppressed sections of the society whose identity is shrouded in the cover of myths and social prejudices." It is a protest play against the social exclusion of the hijras. Such exclusions can be found everywhere in the Indian society like the caste, class, religion or inclination based bias, but the hijras suffer this on the basis of their neutral gender. Dattani underlines the fact that other than the social customs and bindings, the hijras have a 'self' that longs for dignity and when it is denied the same, it tries to break free of such customs. When they protests, most of the times their voice is suppressed by the established order that prevails in the society. Dattani has added a new dimension to the theatre by taking up such themes in his plays. It is remarked: "Dattani has done a good job by introducing a new theme to Indian English drama. Conservatives and social activists should not turn a blind eye to reality...We have to accept the reality of life, however, painful that might be."

The plot of the play revolves around the investigation of murder mystery of Kamla, a beautiful eunuch. Uma Rao, the daughter of vicechancellor and wife of superintendent of police, Suresh Rao is a student of sociology and doing her research on the life of the eunuch. She goes to the jail to meet Anarkali, another eunuch who is falsely accused as murderer.Uma gets interested in the murder mystery of Kamla and feels sympathy for Anarkali in particular and enough community in general. She is a very sensitive lady. She develops emotional affinity and bondage with the eunuch.

Suresh doesn't have any sympathy for the eunuch and advises her wife not to develop good relationship with Anarkali. He calls them liar. But Uma is greatly interested and believes that Anarkali is not a liar. She hasn't killed Kamla. There is no separate prisons for the hijras and she is put in the male cell. The play reveals the chain of injustices that a hijra has to encounter in the society that has inborn bias against them. Anarkali is physically, mentally, verbally and sexually abused in the lock up but nobody bothers about her. She even refuses to meet Uma at first as she mistakes her for a journalist. But Uma is able to win her confidence and assures her of her release. She is the mouthpiece of the playwright and Dattani has projected an image of modern Indian woman through her who fights against the

*A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA

traditional useless values and questions the patriarchal system. It is attributed: "Dattani credits her with intelligence, sensitivity and determination enabling her to fulfil the task. Thus she becomes the agent of change. This social agent is cauterised by an open mind, a consciousness that dares to think differently, reacting against social conditioning, questioning the existing social norms and their rationality and merit." The eunuch is also human beings like us. They also long for human relationships. They want to bind themselves in the relationships of brother, mother, sister, father etc.

Uma symbolizes the centre and Anarkali symbolizes the margin.The play presents social dichotomy through their characters in an interesting way. Anarkali is hopeless and frustrated. However, after befriending with Uma, she starts anticipating her release. Anarkali believes that Uma has got wealth and power. So she can help her get herself released from the jail. She is disappointed when Uma expresses her inability to help her.

In the play, Dattani explores plurality of subalternity. The two dimensions of marginalization-the one sexual subaltern and the other gendered subaltern are explored dexterously in the play. Anarkali and Uma Rao represent these two facets of subalternity. If Anarkali is biological subaltern, Uma is gendered subaltern. Uma wants to help and pay for the bail of Anarkali, but she has no money. She can't demand money from her husband for this purpose. She has no such liberty as such.

If we observe very minutely, we'll find that the condition of Uma is also not much better than that of Anarkali. Both of them are sailing in the same boat which is swayed by the winds of social myth and pride. Uma tries to unmask the real condition of Anarkali. But surprisingly, she unveils her own subaltern hood before her husband. Anarkali points it to her in a very subtlest way.

Uma is deeply attached to eunuch community and receives acute pain after knowing the pathetic plight of the eunuch community. After her meeting with Anarkali, decides to visit Champa, the head hijra and ponders over the nature of Uma hijra community and their isolation.

Her visit to Champa's house reveals the remoteness of the hijras from the social stream. Here Dattani has exposed the multiple layers of realities that co-exist in the Indian society. The reality of hijra existence is invisible to the society. Isolated and humiliated, they are considered as the lowest of the low, but they crave for love and family. The invisible chains of the society deny them family and love. The same thing happened with Kamla, who loved Subbu and secretly married him, but was eventually murdered on the bidding of Mr.Sharma, who is an influential politician and Subbu's father.

The play appears more like a detective fiction as the theme of the main plot consists of the investigation of the murder case. As the play progresses, the suspicion of murder shifts from Anarkali to Champa to Salim to Salim's wife and then to Mr. Sharma. Dattani very cleverly weaves the net of suspense to keep the audience on the edges of their seats. The play is not only about the murder investigation of a hijra but also about their social positioning and the social setup where a hijra cannot crave his feelings and emotions beyond the patterns and boundaries recommended by the society.

When Uma and Champa are conversing, Salim comes over there for getting one particular portrait. Champa informs her that Salim is the bodyguard of the minister, Mr. Sharma. He used to come for Kamla every day. Surrendering to the Uma's threat, Champa reveals that Salim was searching for the photograph. This adds more complexity and element of suspense to the plot of the play. Uma is very restless and anxious to meet Salim.

Mr. Sharma has arranged Subbu's marriage with a beautiful lady. But he is unwilling to marry any one else. Uma tries to talk with him in a friendly manner. Subbu's utterances and behavioral patterns also create some more complications. The end of the play is very depressing and disgusting. It reveals the truth of murder of Kamla. The dramatist unveils the mystery of Kamla's murder during the wedding ceremonies. It is revealed that Mr. Sharma got Kamla murdered as his son, Subbu loved her. Displeased by this, he got Kamla murdered.

The dilemma that Anarkali faces in jail is whether to tell the truth that none would believe or to bear everything silently. If she keeps silent, she will be convicted for Kamla's murder, a crime that she has not committed. But if she speaks out the names of the murderers, she will be surely killed by those influential people. Finding herself in a checkmated position, she resigns to fate till Uma turns up by chance in the jail.The play ends with Uma Rao's voice.Uma(Voice-over):They knew.Anarkali,Champa and all the hijra people knew who was behind the killing of Kamla.They have no voice. The case was hushed up and was not even reported in the newspapers. Champa was right. The police made no arrests. Subbu's suicide was written off as an accident. The photograph was destroyed.So were the lives of two young people….. (CP: 42)

The play depicts the social space of hostility faced by them and the vindictive social responses that they experience.The play gives the message that the eunuch is human being as man and woman can be. Their hearts are full of milk of human love and sympathy. It is a grave crime that they are denied human love and identity.Their hearts also throb for love and joy of life. Nature curses them with denial of sexual competency, but society curses them more cruelly with their social boycott. Longing for love and relationship is the keynote voice of this artistic work.Mahesh Dattani projects the pathetic plight of the eunuch community without offering any suitable solution. The play highlights the creator's awareness of social hierarchical structure, scenario and changing perceptions.

Works cited -

1. Agarwal, Beena, Mahesh Dattani's Plays: A New

Horizon in Indian Theatre. Jaipur India:Book Enclave,2011, p.34
2. Das, Bijay Kumar. (2008). Form And Meaning in Mahesh Dattani's Plays. New Delhi: Atlantic, p. 17
3. Dattani, Mahesh, Collected Plays, Penguin, New Delhi,2000
4. George, Miruna. "Constructing the Self and the Other: Seven Steps Around the Fire and Bravely Fought the Queen." Mahesh Dattani's Plays: Critical Perspective Ed. Angelie Multani. New Delhi:Pencraft International, 2007. p.147.
5. Mee, Erin B. Drama Contemporary India. New Delhi : Oxford University Press, 2002
6. Mortimer,Jeremy, "A Note on the Play"Seven Steps Around the Fire,Mahesh Dattani,Collected Plays Volume-II New Delhi:Penguin Books India 2005.p.3.
7. Spivak, Gayatri. Subaltern Studies. (ed.) R. Guha Vol. I, Delhi : Oxford University Press, 1982

****

Fostering Inquisitiveness Amongst Students - A Research Attitude

Vinay Dubey *

Introduction - Students of today lack in inquisitiveness or a research attitude. They wish to pass an examination only to be qualified for a job. A research attitude is absent out and out from their mind. Teachers too fail to inculcate inquisitiveness in their attitude and students remain aloof from research in their respective fields. They have gone far away from reading or studying and stick to what is necessary to obtain a qualification. Thus they become only qualified, not educated. The students may be so if a research culture is maintained in HEIs (Higher Education Institutions). The term Research means 'an inquiry into the subject to discover facts by study on investigation' or an investigation undertaken in order to discover new facts (as per the Oxford dictionary). Thus research has the following distinct factures :

- Its aim is to discover the new facts ; It adds to already established facts.
- It is the acceptance of the established laws or theories in the light of the discovery of new facts ;
- It may draw new conclusions.

Literary research is a little but different from subject to subject. It is the product of the creative writer. In such a research, the object of study is the creative writer and sometimes there is text the object of study which is based or certain established theories and principles which are modified with the passage of time Literary research is of four kinds -

i. Bibliography (with text real criticism)
ii. Biographical
iii. Theoretical
iv. Interpretive

Literary research is a composite whole and a researcher must know all its aspects. It is possible only when a specific field is selected for study that he is confined to any one of the biographical, textual theoretical or interpretive research.

Students must be made to understand that higher education has three main objectives ;

(i) Teaching (ii) Research (iii) Extension

In the very first phase the knowledge is imparted to pass on to the posterity. The posterity is introduced to the treasure of knowledge, out of which he/she has to make or mar the future of Life. A student must be led to literary research in order to make access to new deeper things of his or her object & topic as Literary research has four main objective's ;

(i) Addition of knowledge ;
(ii) Inquisitiveness of the researcher to be developed.
(iii) Recreation of a genuine & intelligent interest in literature
(iv) A researcher made to feel himself being a member of a community of intelligentsia.

Research means finding out the unknown. So he must know the known. He is subjected to vast reading and then proceed to the unknown. The next phase of the researchis the fresh interpretation of the known facts An inquisitive attitude may be developed amongst students. They must be taught to read between the lines ; and find out the deeper meaning in the work. Students on own accord should desire to know the inside story of chosen work or topic with an interest in the same. Research is more than a degree or not for name's sake. It is to develop the power of the researcher to appreciate and comprehend the literature. This would develop the critical insight and analytical ability. Every researcher should be aware of the fact that he/she belongs to the community of intelligentsia is dedicated to the enrichment of culture, to better understanding of man's feelings, emotions and problems through literature and to creation of an ideal environment in the university where we are working. It may be concluded in the words of Dr. F R Leavis -

"Research should be able to generate in the university a Centre of human consciousness, perception, knowledge, judgment and responsibility. Research has to be thought of in relation to the whole idea of university. It must aim establishing a creative front and doing, creative work on the contemporary intellectual frontier".

References :-

1. Research Methods in English by MP Sinha.
2. Leavis F R English Litt. In our time and the University (London ; CUP, 1967.)

***Asst. Professor (SL. Gr.) Govt. Girls College, Bina (M.P.) INDIA**

Women Empowerment At The Grassroots Level

Dr. Rashmi Nagwanshi *

Introduction - Women will play a vital role in contributing to the country's developments. Women power is crucial to the economic growth of any country. In India this is yet to meet the requirements despite reforms. Little has been achieved in the end of women empowerment, but for this to happen this sector must experience a chain of reforms though India could well become one of the largest economics in the world, it is being hindered due to the lack of women's participation.

The main creative competencies of women relate to innovation, judgment, opportunity recognition, relationship building and protectiveness which give women a district competitive advantage, creative opportunities are derived from awareness access to education and social networks, and previous and recent problems.

Women Empowerment is verity at the centre of great attention among economists, sociologist, and politicians and of course, national and state strategies.

According to Awartya Sen, "women are less likely to secure favorer able outcomes for themselves in household decision making processes. They feel that there long term security lies in subordinating their wellbeing to that of male authority figures."

The question that needs to be answered is that, in a society where men control the dusting of women how is it possible to empower women?

Through entrepreneurship a woman can not only generate income for herself but also will generate employment for herself but also will generate employment for others women in the locality.

A number of innovative schemes have been launched for the uplifting of women in India. The Indian Government has taken a lot of initiatives to strengthen the institutional rural credit system and development programmes however, formal sector credit agencies find it difficult to reach the vast majority of rural people. Thus the Indian government adopted the approach of self help groups (SHGs) to uplift the rural poor women focusing on the following aspects.
Direct involvement of women in programming and management, Effective collaboration with community organizations, Organizing and strengthening of women self help groups, Sensitization and advocacy of gender just society.

Organizing women in different groups to undertake certain activities to earn their livelihood and a develop rural community.

Empowerment of women through SHGs leads to benefit not only to the individual woman and to women groups, but also to the families and communities as whole through collective action for development.

How to empower women? This question which is need to answered. Improving women's opportunities in the area of decision making required long term strategies. They have to be systematic and they must aim at challenging prevailing structures some such strategies can be stated as follows -

1. Women representatives should form into a critical group, so as to act as a pressure group in the legislature. It can bring to the agenda issues of crucial concern to women which are often otherwise neglected or relegated to second place, such as contraception, abortion, violence against women, gender discrimination, maternity leave, child care, etc., for women legislators are more responsive than men to the needs of all persons in society.
2. Devise, launch and promote public campaigns to alert public opinion to the usefulness and advantages for society as a whole of balanced participation by men and women in decision making.
3. Women should form their own pol parties, such as those existing in Canada, Germany, Iceland, Nigeria, the Philippines, Russia and Spain. Their aims should be to increase the pol participation of women at various levels of the power structure and to support women eager to take part in politics.
4. Women should organize and establish networks at different levels to influence the decision-making process. There is a great need to increase solidarity among women's group for the cause of women.
5. Forming a women's shadow cabinet, as was the case with the Csech women. The women promptly formed a shadow cabinet, to show that there were just as many women as men qualified to head departments.
6. Expansion of educational opportunities for women, greater recognition of their unpaid work, wider representation in electoral politics, legislatives and legal mechanism to safeguard their rights and equal opportunities for participation in the decision making process are some other things which would strengthen the process of empowerment.

References:-

1. Meena kelkar and Deepti (Eds), Feminism in search of an Identity. The Indian context.
2. Baig, T.A. India's women power, S.S. Chand and Co. Pvt. Ltd. 1976.
3. Jaspreet kaur soni, Women Empowerment. The substantial challenges, 2008, Authors press Delhi.

***Asst. Professor (English) Govt. College, Junnardeo, Distt. Chhindwara (M.P.) INDIA**

मालवी लोक साहित्य की प्रमुख कवयित्री – रानी रूपमती

डॉ. वन्दना जैन * कादम्बिनी जोशी **

शोध सारांश – महलों की नगरी माँडव धरोहरों तथा पर्यटन के लिए प्रसिद्ध है। यह बाजबहादुर और रूपमती की प्रेमकहानी के लिए भी प्रसिद्ध है। रूपमती अनंत रूप राशि वाली एवं अद्‌भूत गायिका थी। रूपमती उत्कृष्ठ संगीतज्ञ तथा श्रेष्ठ कवयित्री थी। उन्होंने श्रृंगार के साथ ही अनेक कृष्ण भक्ति परक साखियों की रचना की। उनके पदो को आज भी लोक से लेकर सिद्धहस्त संगीतकारों द्वारा गाया जा रहा है। उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से मालवी साहित्य में अपना विशेष योगदान दिया है। उनका नाम हमारे सांस्कृतिक इतिहास को रूपायित करता है। वह हमारी संस्कृति की प्रतिनिधि तथा इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठो की धरोहर है। मालवा को उन पर गर्व है।

प्रस्तावना – मालवाँचल का लोक साहित्य प्राचीन काल से समृद्ध रहा है। यह हमारी संस्कृति और इतिहास को जोड़ने वाला एक मजबूत बांध है। लोक साहित्य को समृद्धशाली बनाने में यहाँ के कवि, कवयित्रियों तथा संतो का योगदान अविस्मरणीय है। इन सभी ने मालवी लोक साहित्य को कहीं बडे स्तर पर तो कहीं स्थानीय स्तर पर प्रभावित किया है।

मालवा लोक साहित्य को वैभवशाली बनाने में कंई कवयित्रियों का योगदान रहा है। उनमें से एक है– श्रृंगार एवं भक्ति की समरस कवयित्री : **रानी रूपमती –** महलों की नगरी माँडव धरोहरों तथा पर्यटन के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ का विशाल किला, पूरी पहाड़ी पर व्याप्त है। जिसके तीनों और भीषण खाई और दक्षिण में एकदम गहराई में जाकर निमाड़ी भूमि का आरम्भ और विस्तृत मैदान है। यहीं से सुदूर नर्मदा की धारा धुंधली लकीर सी दिखाई देती है। माँडव बाजबहादुर और रूपमती की प्रेमकहानी के लिए भी प्रसिद्ध है। बाजबहादुर माँडव का सुल्तान था और संगीतज्ञ भी। रूपमती अनंत रूप राशि वाली एवं अद्‌भुत गायिका थी। नर्मदा दर्शन किए बिना जिसका सवेरा न होता था। कहते है, कि अगर तानसेन दीपक राग गाकर सैकड़ो दीपक जला दे और भीषण लौ में जलने लगे, तब रूपमती राग मल्हार गा कर वर्षा करवा दे।

मालवा की रानी रूपमती पर सारे संसार में पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है। उन्हें रीतिकालीन भवधारा की श्रृंगार कवयित्री के रूप में पहचाना जाता है। किंतु रानी रूपमती ने श्रृंगार के साथ ही कृष्ण भक्ति से भरपूर रचनाओं का सजृन भी किया है, उनका पूरा जीवन शिव पूजन, कृष्णभक्ति और रेवा पूजन में ही बीता था।

मालवा में नर्मदा के तट पर बसे धर्मपुरी (ब्रह्मपुरी) गाँव में रूपमती का जन्म हुआ था। आपके पिता सांरगपुर के निवासी थे। रूपमती की माता का नाम सरस्वती तथा पिता का नाम जादवराव था ऐसा उनके द्वारा लिखे गये एक पद से प्राप्त होता है–

ब्रह्मपुरी, सारंगपुरी, माँ बाबा को गाम।
रूपमती माँ सरसताँ जादौराय सुनाम।।

पिताजी के युद्ध भूमि में मारे जाने के पश्चात् रूपमती की माताजी उनको सारंगपुर से लेकर वापस धर्मपुरी लौट आई, वहीं रहकर उन्होंने उनका लालन–पालन किया। रूपमती के नानाजी ने उन्हें शस्त्र विद्या सिखाई तथा हाथों में और कमर में कटार थमा दी। संगीत का ज्ञान उनको अपनी माताजी से मिला। उनकी माताजी सुरीली आवाज में गीत गाती थी। रूपमती भी बाँसुरी तथा वीणा बजाकर सुर–साधना किया करती थी। स्वयं रूपमती ने अपने एक पद में कहा है–

ब्रहमपुरी में मामरो, नरबद तीर कछार।।
जनम लियों मामा घरे वढें हुइ मुटिआर।।
सारंगपुर की कोठडिया, पूरबजाँ का द्वार।
दादो सा धाराँ लग्या, सारंग दियो बिसार।।
मीठा सुर की मायड़ी , नतदन गीता चार।
नानो सा सस्तर दिया हाथों कमर कटार।।
खूब बजाऊँ बाँसुरी, मीठा सुराँ सितार।।

रूपमती को कुछ विद्धान गुजर जाति का कहते है, तो कुछ उसे ब्राह्मण बताते है। वे गोचारण करती थी, इसलिए उन्हें गुजर जाति का समझा जा सकता है परन्तु अपने एक पद में उन्होंने स्वयं को बामन गुजर जात कहा है। इसलिए अगर वे ब्राह्मण थी, तो संभवत: गुजर गौड़ ब्राह्मण रही होगी। वे कहती है–

गाया चारूँ नरबदा, बामण गुजर जात।
रूपमती घर एक लो, बाकी जाताँ सात।।

गोचारण गुजर जाति के लोगो में परम्परागत रूप से होता है। इसी कारण वे अपनी गाएँ चराती होगी। इससे रूपमती का गुजर जाति का होना अधिक सत्य लगता है। डॉ. सहगल के अनुसार केवल गोचारण के कारण उसे गुजर कहना तर्क संगत नहीं लगता हो तब भी उसका गुजर जाति का होना अधिक सत्य लगता है। धर्मपुरी या ब्रहमपुरी गाँव में रूपमती की जाति का एक ही घर था तथा बाकी सभी जातियों के घर वहाँ पर थे। नर्मदा तट की निवासी होने के कारण वह नियम से शिव की पूजा करती थी। नर्मदा स्नान एवं दर्शन उसके जीवन के अंग थे किंतु उसके हृदय में तो कृष्ण बसते थे। उसने कृष्ण को कभी साजन तो कभी प्रीतम कहा है, कृष्ण को इस प्रकार से

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सम्बोधित करना भी उसकी आस्था का एक रूप है। वह कहती है–

सिव पूजूँ नरमद नमूँ, हिरदा में सिरमोर।
रूपमती सुर साधताँ, संगत नंद किशोर।।

रूपमती स्वामी हरिदास की शिष्या थी। स्वामी हरिदास तानसेन तथा बैजूबावरा के संगीत गुरू थे। इन्हीं से संगीत की शिक्षा रूपमती ने भी प्राप्त की थी। रूपमती नर्मदा के किनारे अपनी गाएँ चराती और मीठी बाँसुरी बजाती, तो कभी छायादार पेड़ के नीचे बैठकर सुर साधती थी। उनकी सुर–साधना दूर–दूर गाँवों तक सुनाई देती थी–

रूपमती हूराँ परी, गायाँ चारे रोज
मधर बजावे बंसरी, वन में होवे मोज।।
रेटाँ बेठे बिरछ रे, ठंडी सीतल छोंह।
राग अलापे सुर सधा, सुन धुन पहुँचे गाँव।।

माँडव सुल्तान बाजबहादुर ने रूपमती को एक दिन नर्मदा स्नान करते देखा, फिर दूसरे दिन गाए चराते हुए देखा उसके पश्चात् एक दिन उसने उसे सुर साधना करते देखा। बाजबहादुर रूपमती के सुन्दर व आकर्षक रूप और संगीत पर मोहित हो गया। तथा उसने रूपमती के सामने सीधे–सीधे शादी का प्रस्ताव रख दिया। यदि बाजबहादुर का प्रस्ताव नहीं माना जाता तो वह बल पूर्वक रूपमती को ले जाता। इसलिए उनके घर वालो ने अपनी और से स्वीकृति दे दी। परन्तु रूपमती ने बाजबहादुर के समक्ष अपनी चार शर्ते रखी और कहा की यदि आपको मेरी ये शर्ते स्वीकार हो तो में शादी के लिए सहमत हूँ–

मैं धर्म परिवर्तन नहीं करूँगी।
नित्य नर्मदा के दर्शन करूँगी।
मेरे महल में कृष्ण की मूर्ति स्थापित होगी।
मैं अपनी नियमित पूजा में बाधा नहीं मानूँगी।
नतदन दरसूँ नरमदा, सुण लो साह सुजान।
धरम न बदलूँ, जीवताँ, पक्की करो जुबान।।
अतरी वातां जाण लो, मांडव साह सुजान।
मूँ म्हारी गीता पढ़ूँ, थे वाँचो कुरआन।।

बाजबहादुर ने रूपमती की सभी शर्ते मान ली। उसने दिन–रात एक करके नर्मदा की धारा को मोड दिया तथा ऐसा प्रबंध करवाया कि रूपमती अपने महल से नर्मदा के दर्शन कर सके। गाथा में इसका उल्लेख मिलता है। रूपमती को माँडव में खूब सम्मान मिला । गाथा के अनुसार इस प्रकार दोनों की जोड़ी बनी। वे हर रोज साथ–साथ सुर–संगीत की साधना करते थे।

रूपमती को मालवा की पद्मनी भी कहा जाता है। कहते है कि वह बैजू से प्रेम करती थी। इसका वर्णन उसकी रचनाओं में कहीं–कहीं पर हुआ है। बैजू से प्रेम करते हुए भी उन्होंने बाजबहादुर के प्रति अपनी पूर्ण निष्ठा बनाए रखी। वह मरते दम तक बाजबहादुर के प्रति वफादार रही। **सुलताने मालवा, तारीखे फरिश्ता, रूइन्स आफ माडूँ** आदि ऐतिहासिक दस्तावेजों में रूपमती का वर्णन मिलता है। **लेडी आफ द लोटस** में रूपमती के गीतो का अंग्रेजी रूपांतर प्रकाशित हुआ था। रूपमती उत्कृष्ठ संगीतकार तथा श्रेष्ठ कवयित्री थी। उसने श्रृंगार के साथ ही अनेक कृष्ण भक्ति परक सखियों और पदो की रचना की । आज भी उसके पदों को लोक से लेकर सिद्धहस्त संगीतकारों द्वारा गाया जा रहा है। प्रतिक्षा में आतुर नायिका का चित्र साकार करता हुआ उनका एक पद–

थने किन बेरनिया बिलमायो।
ऊबी थारे कारणे भड–भड जोऊँ बाट।
साँझ पडयो दन आथम्यों उठ ग्यो सारो हाट।
रूपमती को बाजबहादुर रसिया सिरो ठाट।

रूपमती की बाजबहादुर के प्रति वफादारी अटूट थी। उसने भले ही बैजू से प्रेम किया हो परन्तु मरते दम तक वह बाजबहादुर के प्रति निष्ठावान बनी रही। अपने प्राणो की आहूति देकर उसने अपनी वफादारी को निभाया। बाजबहादुर के प्रति अपनी वफादारी के लिए उसने कहा भी है–

वफा नी तोडूँ, तन तृण करदूँ, छोडूँ नही ईमान।
रूपमती का बाजबहादुर हे म्हारा दिलजान।

रूपमती उच्च कोटि की संगीतकार थी। उसने श्रृंगार के कंई पदों एवं सखियों की रचना की थी। उनके अनुसार मन भंवरे के समान होता है, और यह सदैव रूप रस का पान करने के लिए लालायित रहता है। जब कमल इसके पास ही में है तो वह भँवरा रूपी मन रस पान करने से भला पीछे क्यों रहे–

रस लोभी मन मधकरो, बिलमायों बेभान।
रूपमती नाभी कमल, क्यूँ न करे रसपान।।

रूपमती चन्देरी निवासी बैजू से प्यार करती थी (ऐसी मान्यता है) इसलिए वह कहती है कि उसकी साँसो में बैजू बसता है। उसका मन चन्देरी में रमा हुआ है। मेरे ऐसे मन को चोर चुराकर ले गया है–

साँसों में बैजू बसे, चन्देरी चित कोर।
रूपमती मन वाटको, चुरा ले गयो चोर।।

रूपमती कहती है कि यह तन तो नाशवान है। परन्तु मन और चित्त सदैव अमर रहते है। मालव पति ने अपनी झोली में राख भर ली है अर्थात् वे मेरा बिना मन और चित्त वाला शरीर अपने साथ ले जा रहे है, मेरा मन नहीं ले जा पाए है–

मन चित्त तो रेहसी अमर, नासवान हे देह।
रूपमती मावला धणी, खोरे भल ली खेह।।

रूपमती ने अपने एक पद में पूरे मालवा के भूगोल कों समेट लिया है वह कहती है–

चित चंदेरी मन मालवो हियो हिडोती माय।
पलंग बिछाऊँ रणतभँवर में पोढूँ मांडव माय।।

मालवा के प्रति उसने सदैव वंदन का भाव रखा। वह अपने सद्गुरू माता सरस्वती तथा भगवान गणेश के साथ अपने देश मालवा को भी प्रणाम करती है वह कहती है।

पेहलाँ सिंवरू सदगुरू, पूजूँ रणत गणेस।
रूपमती सरसत नमूँ प्रणमूँ मारव देस।।

रूपमती ने अपनी रचनाओं में बाजबहादुर के प्रति निष्ठा, मालवा के प्रति वंदन के साथ ही कृष्ण के प्रति अपनी आस्था का वर्णन किया है। वह कहती है कि उसके हृदय में कृष्ण बसे है, वह पहले उनकी मुरली को मस्तक पर चढाती है, फिर सद्गुरू को प्रणाम करती है, उसके पश्चात ही हाथो में सितार धारण कर सुर–साधना करती है–

कान्हा ने हिरदै धरूँ, मुरली धरूँ, लिलाट।
रूपमती सदगुरू सिमर, हाथा धरूँ सितार।।

रूपमती कहती है कि जब मैं राधा के समान संयम रखूगी और कृष्ण के समान सुरो की साधना करूँगी। तभी मुझ पर मुरलीधर प्रसन्न होगे। वह कहती है कि बाँस ने जरूर कड़ी तपस्या की होगी। उसने अपनी छाती में गर्म सलाखों से छेद करवाए तब जाकर उसकी सांसो में सुरों का वास हुआ है अर्थात् उसकी कठीन तपस्या का फल उसे प्राप्त हुआ है। तप की अग्नि में वह धधकती

है, तब जाकर उस तपस्वनी को कृष्ण के अधरो पर स्थान प्राप्त होता है। इससे यह स्पष्ट होता है, कि् बिना तपस्या के किसी को भी सफलता प्राप्त नहीं हो सकती है–

छाती बिंध जावे जदै, भीतर तप धधकायं
रूपमती तह कान्ह के, मुरली अधर धराय।।

रूपमती कहती है कि उसकी और श्रीकृष्ण की जोड़ी तो सात जन्मो से जुड़ी है। मेरे हृदय में कृष्ण का रूप और नाम बस गया है, मैं जिधर भी देखती हूँ उधर मुझे कन्हैया ही नजर आता है। क्योंकि वह मेरी आँखो में बस गया है। उसके इस प्रकार मेरी आँखो में निश्चित होकर सो जाने से मैं नयनो में काजल भी नहीं लगा पा रही हूँ।

सैयाँ म्हारे सात जनम की धीच।
किण बिच आँजू है सखी काजर नयना मीच।
रूपमती काजर किण आँजू, रेह–रेह आवे रीच।।

रूपमती के काव्य में श्रृंगार एवं कृष्ण भक्ति की झलक देखने को मिलती है। वैसे भी कृष्ण के बिना श्रृंगार फीका तथा निष्प्राण होता है। कृष्ण श्रृंगार के प्रेरक है, उनकी बांसुरी में श्रृंगार की झंकार सुनाई देती है।

माँडव एक स्वतंत्र राज्य था। यह बात अकबर को पसंद नही थी। उसने आदमखाँ को विशाल सेना के साथ माँण्डू को जीतने के लिए भेजा। आदमखाँ और बाजबहादुर के बीच सारंगपूर के पास ऊदरखेडी में युद्ध हुआ, जिसमें बाजबहादुर को शिकस्त मिली। बाजबहादुर युद्ध का मैदान छोड़कर भाग गया। आदमखाँ ने जब रूपमती को अपने अधिकार में करना चाहा तो उसने हीरे की कनी चाटकर अपने प्राण त्याग दिए। इन बातों का उल्लेख उनके द्वारा लिखे गए पदों तथा सखियों में मिलता है।

अकबर को जब इस बात का पता चला तो वह स्वयं माँडव आया और उसने रूपमती की लाश को मस्जिद के तहखाने से निकलवाकर सारंगपुर में ससम्मान दफनवा दी। अकबर ने वहाँ एक सुन्दर मजार बनवा दी और कब्र पर खुदवाया–**शहीदे वफा।**

रूपमती री कबर पे, अकबर करयो सलाम।
शहीदे वफा लिखा दियों, इज्जत रो यो नाम।।

कुछ वर्षो के पश्चात् बाजबहादुर सारंगपुर आया और रूपमती की कब्र से लिपट कर रोता रहा। इस अवस्था में उसने भी अपने प्राण त्याग दिए। अकबर ने रूपमती की कब्र के पास ही उसे भी दफनाने का हुकुम दिया तथा उसकी कब्र पर लिखवाया–**आशिके सादिक।** मध्यकालीन इतिहास के दो संगीताकारों की प्रेम–कहानी इस प्रकार दफन हो गई।

रूपमती केवल तन की ही नहीं अपितु मन एवं विचारों से भी सुन्दर थी। इतिहास के पन्नो में रूपमती का नाम हमारे सांस्कृतिक इतिहास को रूपायित करता है। वह हमारी संस्कृति की प्रतिनिधि तथा इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठो की धरोहर है। **मालवा को उस पर गर्व है।**

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. पूरन सहगल–मालवा की ऐतिहासिक लोक कवयित्रियाँ।
2. डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा – हिन्दी नाटक निबंध तथा स्फुट गंद्य विधाएँ एवं मालवी भाषा साहित्य।

****

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' के काव्य में मानवतावादी एवं जीवनमूल्य का दृष्टिकोण

डॉ. संगीता मरावी * डॉ. दीपक कुमार गुप्ता **

प्रस्तावना – अठारहवीं शताब्दी के अंतिम दशकों से साहित्य में मानवतावादी स्वर नवजागरण का ही परिणाम है। पूंजीपतियों ने अपने स्वार्थ लाभ के लिए असत्य, हिंसा, का मार्ग अपनाकर, मानवता को सताना आरम्भ कर दिया था। उससे समाज के दो वर्ग हो गये–पूंजीपति वर्ग एवं शोषित वर्ग। उन्नीसवीं शताब्दी के चिन्तकों एवं दार्शनिकों ने भी मानवतावाद को प्रोत्साहित किया। कार्ल मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, डार्विन के विकासवाद एवं फ्रायड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त ने श्रमिकों अथवा शोषित वर्ग को संगठित कर पूंजीवाद से डटकर मुकाबला करने की प्रेरणा दी। इससे शोषित वर्ग में मानवाधिकारों की रक्षा की भावना प्रबल होती गयी। इन सिद्धांतों ने मानव के अस्तित्व को नयी दिशा एवं नई प्रेरणा मिली। इन सबका प्रभाव भी साहित्य पर पड़ा – 'उन्नीसवीं शताब्दी की राजनीतिक और औद्योगिक अनुसंधानों, मनोवैज्ञानिक उपलब्धियों, डार्विन के विकासवाद, मार्क्स के द्वन्द्त्मक भौतिकवाद, फ्रायड के स्वप्नवाद सभी ने जन–जीवन और साहित्य दोनों में पर्याप्त परिवर्तन उपस्थित कर दिया। साहित्य जीवन के अधिक निकट आ गया।'

मानवता का विकसित रूप हिन्दी काव्यधारा में छायावाद – काल से दिखाई देता है। डॉ. रांगेय राघव ने इसके उद्‌भव पर अपने विचार प्रस्तुत किए है – 'छायावाद ऐसे देश में जन्मा था, जहाँ इग्लैंड की–सी स्वतन्त्रता नहीं थी, वरन् भारत परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। यह परतन्त्रता केवल राजनीतिक ही नहीं थी, इसके साथ एक सामन्तीय जर्जर व्यवस्था भी थी, जो संपूर्ण रूप से भारत की असंख्य–असंख्य जनता में फैली हुई थी, क्योंकि अंग्रेजों ने मध्यमवर्गीय उत्थान तथा मशीनों के साथ–साथ भारत में पदार्पण करने पर भी यहाँ का सामन्तीय जीवन सुरक्षित छोड़ दिया था। अत: इसी सामन्तीय संस्कृति, सामन्तीय रूढ़िवादिता और विलासिता के प्रति विद्रोह एवं आक्रोश की भावना ने छायावादी मानवता को जन्म दिया। इस मानवतावाद के प्रेरणास्रोत विवेकानंद, रवीन्द्र, महात्मा गांधी एवं योगिराज अरविन्द है। इन विश्व मानवता वादियों ने भारतीय चिन्तन को विशेष रूप से प्रश्रय दिया। स्वामी विवेकानंद सर्वधर्म समन्वयवादी थे। गांधी जी ने मानव में निहित मानवत्व को प्यार करने का संदेश दिया। अरविन्द अपनी कल्पना को अतिमानव रूप में प्रस्तुत करके मानवता के विकास के लिए भू स्वर्ग बसाने के इच्छुक थे। वे समस्त मानवों को समान अधिकार से जीने का संदेश देते थे। इन्होंने सबको ब्रह्मा का अंश माना। स्वयं अरविन्द जी के शब्दों में 'इस विराट–सृष्टि के यदि दो अर्थ माने जाएं तो परार्द्ध में सत्–चित् आनन्द एवं सुपरमैन अधीनस्थ शक्ति के रूप में अपरार्द्ध में उन्हीं के प्रतिबिम्ब क्रमश: जड़, प्राण, चैत्य, पुरूष एवं मन हैं। इस प्रकार सत् यदि अपने को प्रकाशित करना चाहता है, तो उसे जड़ात्मक आवरण धारण करना होगा।' उनके दर्शन में व्यक्ति को ऊँचा स्थान प्राप्त है।

आधुनिक युग की इन्हीं विचारधाराओं ने मानवतावाद को जन्म दिया। आज के युग के कवियों ने समाज में पुरानी जर्जरित रूढ़ियों परम्पराओं का विरोध कर संसार में स्वतन्त्रता समता एवं मनुष्य को एकता के स्वर को मुखरित किया है।

अंचल जी का प्रगतिशील रचनाओं का एक पक्ष मानवतावादी दृष्टिकोण पर आधारित है। यहां पर कवि ऐसे समाज की कल्पना करने का आकांक्षी है जो किसी वर्ग विशेष पर आधारित न होकर सम्पूर्ण मानवता की आर्थिक समानता और विराट सामाजिक परिवर्तन पर आधारित हो। सामाजिक शोषण, पीड़ा, अत्याचार को देखकर कवि का हृदय विकल हो उठा है 'दानव, 'हवेली इसी प्रकार की कविता है, जिसमें उन्होंने मानवता के हित के लिए उसके विभिन्न पक्षों को चित्रित कर उसका सजीव रूप प्रदान किया है –

'रोज सुबह उस पथ से जाती मिल के मजदूरों की पातें।
वे अधजले युवक अधपके बालकों की खामोश जमातें।
चरमर करते भूखों–सूखों चीमड़–चीमड़ वे नर–नारी।
रहते ही कुछ रात मिलों की करने लगते जो तैयारी।
झूल रहे फाँसी के तख्ते पर शव–सी जिनकी मुस्कानें।
अन्धी है मानवता जिनकी, भाग्य समझ जो जुल्म न आने।
आँखें फाड़ निहार रहे है कैसी जगमग सजी नवेली।
जिधर राजपथ से कुछ हटकर शोणित से तर खड़ी हवेली।'

उनके हृदय में मानवता के प्रति असीम प्यार है। उनके लिए मानव ही सब कुछ है। वे मानते हैं कि विश्व में सभी मनुष्यों के सुख–दुख एक समान होते हैं। कवि ने उनके सुख–दुख को अपना ही समझकर जीवन के पीड़ित सुख–दुख का सन्तुलन भी आवश्यक माना है –

'सदियों का सोया स्वत्व मानव का जागेगा।
जीवन तटों पर फिर फूंकेगा
अपनी अकर्मण्यता 'औ' निरूत्साह की चिता
दूर फिर होगा उसके ऐकान्तिक अह्म का,
प्रतिक्रिया–मूलक पलायन की रूढ़ि का
आत्मघाती कालाधन
आज कवि को है उसी दिन की प्रतीक्षा,
जब होगा यह मानवता का सिंहनाद
सब सुखी और सब समान।'

कवि ने दलित और उपेक्षित वर्ग के प्रति मानवता की अनुभूति जगायी

* (हिन्दी) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
** (हिन्दी) शासकीय नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बुढार, जिला – शहडोल (म.प्र.) भारत

है। वे मानते हैं आज भारत में विदेशी शासन के अधिकार कर लेने के कारण एक प्रकार जीवन में विषमता की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। इसी स्थिति को देखते हुए उन्होंने वर्तमान की करूणा दशा पर क्षोभ प्रकट करके समाज के दलित, उपेक्षित वर्ग और आज के नवयुवकों को नूतन अभियानों से जर्जर मार्ग बदलने को कहा है –

'गंगा–यमुना का मेल नहीं–यह युद्ध पुरातन नूतन का;
फिर तुम तो वह आँधी हो जो उन्माद छिपाए यौवन का,
जो प्रतिद्वंदी आशाएँ ले जग की जड़ता खंडित करती,
जिसके आते प्रतिहिंसा भी कातर होती मिन्नत करती,
लाशों–सी लटक रही हैं बूढ़े वृक्षों की सूखी शाखें,
तुम उन निष्प्राण समूहों के चिर जर्जर मार्ग बदल डालो।'

'बापू' शीर्षक कविता में भी मानवतावाद का प्रभाव परिलक्षित होता है। राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति के लिए कवि ने गीत को ही माध्यम बनाया है। उनका हृदय देश की वर्तमान अवस्था को देखकर पीड़ित है। देश की दुर्दशा पर क्षुब्ध होकर कवि ने करूण भावों की अभिव्यक्ति भी की है –

'जग की शोषित मानवता जिस पर आस लगाए बैठी थी
दलितों की आर्तपुकारों पर जो घर–घर दौड़ा जाता है।
नर उसका ही घातक होता।
कल तक जिसको पूजा
अपने हाथों से आज उसे खोता।'

और उनके जीवन नवीन विचारों और आदर्शो, अहिंसा से प्रभावित होकर कवि ने अपने भावुकतापूर्ण संवेदनाओं के माध्यम से लिखा है –

'तुम मानवत के शुभ मुहूर्त, निर्मलता को निर्मल करते,
करते पवित्रता को पवित्र आशीर्षो के निर्झर झरते।'

कवि ने गांधी जी से संबंधित कविताओं में उनकी मृत्यु पर क्षोभ प्रकट करते हुए साम्राज्यवादी व्यावस्था के प्रति आक्रोश तथा कारूणिक स्थिति का अंकन किया है –

अंचल जी ने दलितों के उत्पीड़न को केन्द्र में रखकर कविता में जिस मानवतावादी दृष्टि को आधार बनाया है उसमें मानव–मानव के बीच बनी कृत्रिम खाई को पाटने की लालसा प्रतिध्वनित है। जन एकता का गौरव गान और लोगों को जोड़ने का मधुर संकल्प है –

'दलित उत्पीड़िन मनुज सुन ले जरा,
राजपथ की धूल में बिखरे पड़े ये गान,
ओ निराशा से पराजय स्वप्नदर्शी सुन,
देख अपना ही बंटा खंडित हृदय,
जोड़ सकता हूँ जिसे मैं,
एक कर देंगे जिसे ये गीत मिट्टी के अजस्त्र अजेय,
आ चला आ साथ इस गतिशील युग के।'

अंचल जी ने दमन, उत्पीड़न आदि को कविता में बड़ी संजीदगी से अवतरित किया है। इस भाव को उन्होंने 'चलचित्र' शीर्षक में बहुत गहराई से प्रस्तुत किया है। मैकू नाम के मजदूर के जीवन को आधार बनाकर जिस क्रांति के बीज का चित्रण उन्होंने किया उसका प्रतिबिम्ब वर्तमान समाज में यदा–कदा दिखाई पड़ता है। इस कविता के संबंध में वे स्वयं कहते है – 'इस कविता में मैंने अत्याचार, दमन, उत्पीड़न पर जीवन की विजय का निष्कर्ष निकाला है। मैकू नाम का मजदूर अपनी गर्भवती स्त्री को अत्यन्त हृदयहीनता और पाशविकता के साथ मारता है। यहाँ तक कि पेट का पूरे दिनों का बच्चा पैदा हो जाता है और जीवित रहता है। उसी प्रकार क्रांति की भावना और नव–जीवन की प्रसरणशीलता अमर है।'

विद्रोह और विप्लव की परम्परा अमर है। निरंकुश शासन सत्ता उसे मसलने के लिए चाहे जितने अत्याचार, दमन, शारीरिक यातना और उत्पीड़न दे परन्तु क्रांति की लपट कभी–बुझती नहीं।

अंचल जी ने कविता में सामान्य सी बात को भी संवेदना के स्तर पर इस तरह से भावनात्मक गहराई दे दी है कि उसमें तमाम मानवीय पक्ष समाहित हो जाते हैं। ऐसे भाव को उन्होंने कहीं बिजली की चमक कहा है, तो कहीं जलती हुई कवित्त शिखा, मानवीय पीड़ा को उन्होंने मजदूर की अंधी लड़की, दोपहर की बात, रोती हो शोषिता, कवि का स्वप्न, धरती की आग, नैश जागरण, दलित उत्पीड़ित मनुज आदि कविताओं में अभिव्यक्त किया है। उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि इस प्रकार की अनेक कविताओं की प्रेरणा मुझे अपने चारों ओर फैली सामाजिक विषमता और अभाव की वेदना से मिली है।

अंचल जी ने जीवन की अनुभूतियों को जन–सामान्य की अनुभूतियों में देखा है। उन्होंने सौन्दर्य का चित्रण कहीं गांधीवादी दृष्टि से कहीं, मानवतावादी दृष्टि से किया है। गांधीजी की पर पीड़ा के प्रति संवेदना को उन्होंने धरती की नवचेतना के रूप में अंगीकार किया है। उनके मानवता प्रेम को उन्होंने निर्मलता को निर्मल करने वाली और पवित्रता को पवित्र करने वाली आशीष मानकर बार–बार स्मरण किया है। जब कभी कवि का आत्मविश्वास डगमगाता है, वह तब गांधीजी का शांति, अहिंसा की ओर दृष्टि ले जाता है–

समग्रत: यह कहा जा सकता है कि अंचल की कविता में उत्पीड़न, शोषण, अत्याचार, आदि के प्रति आवाज उठायी गयी है। उनकी प्रणय भावना मात्र स्त्री पुरूष के मांसल प्रेम तक सीमित नहीं है, अपितु उसका व्यापक प्रभाव जन–जन के आंगन तक है।

वादों का प्रवाह इतना तीव्र होता है कि जीवन–दृष्टि संस्कारों का ग्रहण परिमार्जित रूप में करने लगती है। काव्य दृष्टि जीवन के वास्तविक विषयों पर आधारित रहती है। रामेश्वर शुक्ल 'अचंल ने लिखा है कि – नरक्षेत्र में भीतर बद्ध रहने वाली काव्य–दृष्टि की अपेक्षा सम्पूर्ण जीवन क्षेत्र और समस्त चराचर के क्षेत्र मार्मिक तथ्यों का चयन करने वाली दृष्टि उत्तरोत्तर अधिक व्यापक और गंभीर कहीं जाएगी।' जीवन के सत्य का जिस प्रकार चित्रांकन होता है, वैसी ही दृष्टि चेतना, काव्य–विधान तैयार करती है। जहाँ मार्क्सवादी जीवन–दृष्टि जीवन की उचित व्याख्या तो कर सकी किन्तु 'जीवन–मूल्य' का वास्तविक निदान एवं चरम परिधि प्रस्तुत करने में असमर्थ रहीं, वहीं समाजशास्त्रीय जीवन दृष्टि सामाजिक जीवन की उचित व्याख्या के साथ ही 'जीवन–मूल्य' का वास्तविक निदान प्रस्तुत करती आ रही है।

जब जीवन की विकृतियों को परिमार्जित करने का समय आता है, तब उस समय पूर्ववर्ती जीवन दृष्टि धूमिल पड़ जाती है, तथा तत्कालीन चिंतन धारा मानवीय चेतना को प्रभावित करने लगती है। मानवीय चेतना एक और नए मूल्यों का अन्वेषण करती है, वहीं तत्कालीन चिंतन धारा से प्रभाव चित्र भी ग्रहण करती है।

इस संदर्भो में यदि जीवन मूल्य की व्याख्या करते हुए, कविता में अभिव्यंजित सत्यों का परीक्षण किया जावे तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इस काव्यधारा में जीवन की प्रत्येक विधा को यथार्थवादी दृष्टि से देखने का प्रयास किया गया है।

कविता में जीवन–मूल्य को अनेक रूपों में स्वीकार किया गया है। कविता के उन्नायकों ने जीवन के सभी संदर्भो की व्याख्या प्रस्तुत की है।

जीवन के संघर्ष भी मानसिक जीवन को प्रभावित करते है।

'अंचल' जी के काव्य में भाव-सत्यों का उन्मेष अधिक हुआ है, जब कवि आत्मस्थ होकर गहरे चिंतन में लीन हो जाता है, तब उजाले का बाहरी आकर्षण ही सब कुछ नहीं होता। अँधेरे में भी शक्ति होती है, तल्लीन कर लेने की, इसलिए कवि हल्के अंधेरे में डूबना चाहता है। जीवन के समूचे आशय को समझने का उपक्रम कवि के आत्म चिंतन का विषय है। यहाँ अंधेरा मन जीवन के वास्तविक अर्थ को गहरी समझ दे रहा है -

कवि किरणों की रंगीन आशाओं के बहाने सहज भाव से शुद्ध अंधेरे को और सामान्य जीवन के दु:खी चेहरे को देखते हुए सोचता है कि हमारी जिन्दगी अधिक मानवीय और सार्थक चिन्तन के व्यापक धरातल पर आधृत होगी -

जीवन बहुत अज्ञेय और अनंत घटनाओं से निर्मित है - 'जीवन मूल्यों का वास्तविक धरातल अन्तर्जीवन ही है।' अंचल जी अपनी तमाम कठिनाइयों के बावजूद भी निरन्तर संघर्ष कर अनुभवों के व्यापक क्षेत्र को लाँघ जाने के लिए जीवंत संघर्ष करना चाहते है। गाँव के गरीबों के पास ठंड से बचने के लिए कपड़े भी नहीं है, जबकि ठंडी से बचने के लिए कपड़ों की बहुत आवश्यकता होती है। उनका शरीर इतना कमजोर है कि वे पैर भी जहाँ रखते है, तो कम्पन के कारण कहीं और पड़ते है। अपने देश के ग्रामीणों का जीवन इसी प्रकार है -

अंचल जी मृत्यु से साक्षात्कार करके जीवन के ठोस सत्य को समझते है। मौत के धंसते हुए काले नाखून व्यक्ति को चोट पहुँचाकर भी खून के रंग जैसे नहीं होते। अर्थात् पूंजीपतियों द्धारा शोषण और हिंसा करने के बाद भी कालापन नहीं जाता। यह भी सच है कि दम और साहस की खोज में घूमने वाली मौत की आँखे व्यक्ति की यथार्थ स्थिति भाँप लेती है -

वस्तुत: अंचल जी के काव्य में ऐसी तमाम कविताएँ दृष्टिगोचर होती है जो जीवन मूल्य के परिप्रेक्ष्य में खरी उतरती हैं या यह कहे कि इस प्रकार की कविताओं में सामाजिक जीवन की वास्तविक व्याख्या है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत- डॉ शांति स्वरूप गुप्त।
2. तुलसीदल, अरविंद विशेषांक- अगस्त 1970
3. अंचल समग्र- संपादक डॉ देवीप्रसाद कुँवर।
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ नगेन्द्र।
5. छायावादोत्तर हिन्दी काव्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि- डॉ कमला प्रसाद पाण्डेय।

****

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का योगदान

डॉ. पी. एस. परमार * सुशीला देवी परमार **

प्रस्तावना – साहित्य का इतिहास वह है, जिसमें हम साहित्यिक रचनाओं का अध्ययन ऐतिहासिक दृष्टि से करते हैं। **इतिहास शब्द का शाब्दिक अर्थ है–**ऐसा ही घटित हुआ।[1] अतीत की घटनाओं का विवरण इतिहास है। विस्तृत अर्थ में इतिहास अतीत की प्रत्येक स्थिति, परिस्थिति, घटना, प्रक्रिया एवं प्रवृत्ति की व्याख्या है। संक्षिप्त अर्थ में अतीत के किसी भी तथ्य, तत्व एवं प्रवृत्ति का वर्णन कालक्रम की दृष्टि से करना ही इतिहास है।

इतिहास लेखन के सम्बन्ध में प्राचीन भारतीय मनीषियों के विचार – हमारे प्राचीन मनीषियों ने नैतिक मूल्यों के प्रति अपनी आस्था दिखाई है। वेद व्यास के अनुसार–'इतिहास वह है, जिसके माध्यम से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का उपदेश दिया जा सके।'[2]

पौराणिक मत–'ऋषियों और महापुरूषों के चरित्र का ज्ञान ही इतिहास है। जिसमें घटना की अपेक्षा चरित्र पर बल हो।'[3]

कल्हण के अनुसार–'इतिहास में आध्यात्मिक, नैतिक, चारित्रिक तत्त्वों की अपेक्षा यथार्थ परक वस्तु एवं तथ्यों को महत्व देना चाहिए पर काव्य रूप में सुन्दर होना चाहिए।'[4]

इस प्रकार हमारे प्राचीन मनीषियों ने उसी इतिहासकार को सफल माना है जिसमें सत्यं, शिवं और सुन्दरम के समन्वय की चेष्टा हो।

साहित्य के इतिहास लेखन सम्बन्धी पाश्चात्य एवं भारतीय विचारकों के मत– फ्रैन्च विद्वान तेन के अनुसार– 'किसी भी साहित्य के इतिहास को समझने के लिए उससे सम्बन्धित जातिय परम्पराओं, राष्ट्रीय और सामाजिक वातावरण एवं सामाजिक परिस्थितियों का अध्ययन, विश्लेषण आवश्यक है।'[5]

हडसन के अनुसार– 'साहित्य के इतिहास में काव्य रचयिता के व्यक्तित्व एवं प्रतिभा को भी महत्व देना चाहिए।'[6]

हेराल्ड पी. सिमन्सन के अनुसार– 'साहित्य के इतिहास–लेखन की समस्या केवल यह नहीं है कि वह किसी कृति में व्यक्त विचारों को पहचाने, बल्कि यह भी कि एक प्रक्रिया के रूप में इतिहास के व्यापकतर संदर्भ में उनका स्थान निर्धारण करें–साहित्य के इतिहास की अपनी कुछ माँगे होती हैं जिनमें प्रमुख है– रचना कब, कहाँ, कैसे और क्यों की गयी। साहित्य का इतिहासकार यह पता लगाने की चेष्टा करता है कि किसी लेखक ने अपने समय और अतीत से क्या प्राप्त किया और बदले में उसने अपने समय तथा परवर्तीकाल को क्या दिया।'[7]

डॉ. सुमनराजे के अनुसार–'साहित्य के इतिहास में मूल्यपरक दृष्टि की आवश्यकता है। एक बात, जो मैं समझती हूँ। सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, जिसकी सबसे बड़ी उपेक्षा की है। वह है–मूल्यों का संयोजन, इसके बिना मानविकी इतिहास लिखा ही नहीं जा सकता और साहित्य का तो बिल्कुल नहीं। साहित्य मानव की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धियों का कलात्मक संश्लेषण है। इतिहास के सम्बन्ध में मूल्यों की उपेक्षा किसी हद तक खतरनाक हो सकती है।'[8]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार– 'प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है। तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परम्परा को परखते हुए साहित्य परम्परा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही साहित्य का इतिहास कहलाता है। जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है।'[9]

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार– 'युगचेतना और साहित्य चेतना के समन्वय पर आधृत साहित्य के इतिहास के संश्लिष्ट स्वरूप को ही हमें स्वीकार करना चाहिये।'[10]

इस प्रकार भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार साहित्य के इतिहास का लक्ष्य सदा अतीत की व्याख्या करते हुए विवेच्य वस्तु के विकास क्रम को स्पष्ट करना होता है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन के स्त्रोत – हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन के स्त्रोतों को दो भागों में विभाजित किया गया है –

1. **अन्त:साक्ष्य –** इसके अन्तर्गत उपलब्ध सामग्री को तीन रूपों में बाँटा जा सकता है– (अ) भक्त एवं संत व्यक्तियों से सम्बद्ध आधार भूत ग्रंथ। (ब) कवियों विषयक काव्य संग्रह। (स) साहित्यकारों की प्रकाशित व अप्रकाशित रचनाएँ तथा कवियों के परिचय से सम्बद्ध पुस्तकें।
2. **बाह्य साक्ष्य–** इसके अन्तर्गत प्राप्त सामग्री को चार भागों में बाँटा गया है– (अ) साहित्यिक सामग्री (ब) प्राचीन ऐतिहासिक स्थान, शिलालेख, वंशावलियाँ व प्रामाणिक उल्लेख (स) जन–श्रुतियाँ (द) विभिन्न युगों की आंतरिक व बाह्य परिस्थितियों की ज्ञापक सामग्री।

हिन्दी साहित्य के विविध इतिहास ग्रंथ – 19 वीं शती के पूर्व के विभिन्न कवियों, लेखकों द्वारा परिचयात्मक ग्रंथ– गोकुलदासकृत– **चौरासी वैष्णवन की वार्ता**ब **दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता**, नाभादासकृत–**भक्तमाल**, ध्रुवदासकृत– **भक्त नामावली**, मातादीन मिश्रकृत– **कवित्त रत्नाकर** इनके अलावा तुलसीकृत– **कवि माला** (75 कवियों की कविताएँ) कालिदास त्रिवेदीकृत–**कालिदास हजारा** (292 कवियों की एक हजार कविताओं का संग्रह), अधमकृत– **सतबानी संग्रह**,

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

बलदेवकृत- **सत्कविगिरा विलास**, सरदार कविकृत- **शृंगार संग्रह**, वेणीमाधोदासकृत-**मूल गोसाईं चरित्र,** सूदनकृत-**कवि नामावली**, देवीप्रसाद मुंसिफकृत- **कविरत्न माला** आदि।

हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथ कालक्रमानुसार -

1. **हिन्दी का प्रथम इतिहास ग्रंथ-फ्रेंच विद्वान गार्सा -द- तासी** का है। इनकी पुस्तक का नाम है- **इस्तवार द ला लितरेत्युर ऐन्दुई ऐन्दुस्तानी**-11 प्रथम भाग 1839, द्वितीय भाग 1847 में प्रकाशित हुआ। दूसरा संस्करण 1871 में प्रकाशित हुआ । जिसमें तीन खण्ड है। इसमें 72 कवियों के परिचय के साथ ही कवियों को अंग्रेजी वर्णक्रम के अनुसार प्रस्तुत किया गया है। इसमें कवियों को कालक्रम के अनुसार नहीं रखा गया है लेकिन इस इतिहास ग्रंथ का ऐतिहासिक महत्व है।

2. **हिन्दी का दूसरा इतिहास** ग्रंथ उर्दू में मौलवी करीमुद्दीन ने '**तज्किारां एं शुअरां एं हिन्दी'** जो सन् 1848 में प्रकाशित हुआ। इसमें कालक्रम का ध्यान रखा गया है, पर हिन्दी कवियों का नाम गार्सा -द- तासी की अकारादि शैली के अनुसार है। इसका भी ऐतिहासिक महत्व ज्यादा है।[12]

3. **हिन्दी का तीसरा इतिहास ग्रंथ-** महेशचन्द्र शुक्ल का है। जिसका नाम **भाषा काव्य-संग्रह** है। जो 1873 ई. में प्रकाशित हुआ है।[13]

4. **हिन्दी का चौथा इतिहास ग्रंथ -** शिवसिंह सेंगर का है। जिसका नाम **शिवसिंह सरोज** है, जो सन् 1883 में प्रकाशित हुआ है। जिसमें एक हजार कवियों के जीवन चरित्र का उल्लेख किया गया है।[14]

5. **हिन्दी का पांचवाँ इतिहास ग्रंथ -** जॉर्ज अब्राहिम ग्रियर्सन का है जिसका नाम '**द मॉडर्न वर्नाक्युलर लिट्रेचर ऑफ हिन्दुस्तान' है।** जो सन् 1889 में एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल की पत्रिका के विशेषांक के रूप में लिखा गया था। यह वैज्ञानिक ढंग से हिन्दी साहित्य के इतिहास लिखने का प्रथम प्रयास था। जिसमें 952 कवियों का परिचय कालक्रमानुसार दिया गया है।[15]

6. **हिन्दी का छटवाँ इतिहास ग्रंथ -** डॉ. श्यामसुन्दर दास का है। जिसका नाम- **हिन्दी कोविद रत्नमाला** है। जो सन् 1909-सन् 1914 में प्रकाशित हुआ है।

7. **हिन्दी का सातवाँ इतिहास ग्रंथ-** मिश्रबंधुओं का **हिन्दी नवरत्न** सन् 1910 ई.तथा **-'मिश्रबंधु विनोद'** है। **मिश्र बन्धु विनोद** चार भागों में विभाजित है। प्रथम तीन भाग सन् 1913 ईसवी में **हिन्दी ग्रंथ प्रसारक मण्डली** द्वारा प्रकाशित हुआ। चतुर्थ भाग सन् 1934 ईसवी में प्रकाशित हुआ है। जिसमें लगभग पांच हजार कवियों का परिचय दिया गया है। और जिसमें काल विभाजन का प्रयास मात्र किया गया है। (मिश्रबन्धुओं के नाम-गणेश बिहारी मिश्र, श्याम बिहारी मिश्र- एम.ए. तथा शुखदेव बिहारी मिश्र -बी.ए. है।)[16]

8. **हिन्दी का आठवाँ इतिहास ग्रंथ -** पंडित रामनरेश त्रिपाठी का है। जिसका नाम **कविता कौमुदी** है। जो सन् 1917 ई. में प्रकाशित हुआ है।[17]

9. **हिन्दी का नवाँ इतिहास ग्रंथ-** विदेशी इडविन ग्रीब्स का है। जिसका नाम **ए स्केच ऑफ हिन्दी लिटरेचर** सन् 1918 ई. है। इसका केवल ऐतिहासिक महत्व है। यह प्राय: ग्रियर्सन के ग्रंथ पर ही आधारित है। इसमें कोई मौलिकता या नवीनता नहीं दिखाईदेती है।[18]

10. **हिन्दी का दसवाँ इतिहास ग्रंथ-** एफ.ई.के. का है। जिसका नाम- **ए हिस्ट्री ऑफ हिन्दी लिटरेचर** है। जो सन् 1920 ई. में प्रकाशित हुआ है।

11. **हिन्दी का ग्यारहवाँ इतिहास ग्रंथ-** वियोगी हरि का है। जिसका नाम- **ब्रजमाधुरी सार** है। जो सन् 1923 ई. में प्रकाशित हुआ है।

12. **हिन्दी का बारहवाँ इतिहास ग्रंथ-** पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का है। जिसका नाम **हिन्दी साहित्य विमर्श** है। जो सन् 1923 ई. में प्रकाशित हुआ है।

13. **हिन्दी का तेरहवाँ इतिहास ग्रंथ-** गंगाप्रसाद अखोरी का है। जिसका नाम **हिन्दी का मुसलमान कवि** है। जो सन् 1926 ई. में प्रकाशित हुआ है।

14. **हिन्दी का चौदहवाँ इतिहास ग्रंथ-** गौरीशंकर द्विवेदी का है। जिसका नाम **सुकवि सरोज** है। जो सन् 1927 ई. में प्रकाशित हुआ है।

15. **हिन्दी का पन्द्रहवाँ इतिहास ग्रंथ- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** का है। जिसका नाम **हिन्दी साहित्य का इतिहास** है। जो सन् 1929 ई. में लिखा गया है। जो मूलत: नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित '**हिन्दी शब्द सागर'** की भूमिका के रूप में लिखा गया था। बाद में यह स्वतंत्र ग्रंथ के रूप में प्रकाशित हुआ। यह हिन्दी साहित्य का पहलाइतिहास ग्रंथ है जिसमें सूक्ष्म व्यापक दृष्टि, विकसित दृष्टिकोण, स्पष्टविवेचन-विश्लेषण और प्रामाणिक निष्कर्ष दिये गये है। इसमें हिन्दी साहित्य के 900 वर्षों के इतिहास को चार सुस्पष्ट कालखण्डों में विभक्त किया गया है-[19]

1. **वीरगाथा काल या आदिकाल संवत् 1050 से संवत् 1375 तक।**
2. **भक्तिकाल या पूर्व मध्यकाल संवत् 1375 से संवत् 1700 तक।**
3. **रीतिकाल या उत्तरमध्यकाल संवत् 1700 से संवत् 1900 तक।**
4. **आधुनिक काल या गद्य काल संवत् 1900 से निरन्तर।**

इसमें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने चुने हुए 1000 कवियों का परिचय इनके काव्य का उदाहरण सारगर्भित रूप में दिया है। इसमें कवियों एवं साहित्यकारों के जीवन चरित्र सम्बन्धी इतिवृत के स्थान पर उनकी रचनाओं के साहित्य मूल्यांकन पर जोर देते हुए विभिन्न काव्य धाराओं युगीन प्रवृत्तियों के निर्धारण में इनको असाधारण सफलता मिली है।[20]

आचार्य रामचन्द्र शुक्लजी को इतिहास ग्रंथ लिखते समय बहुत-कुछ कल्पना तथा अनुमान का सहारा लेना पड़ा। वीरगाथा काल की अनेक रचनाएँ जो उन्होंने गिनाई, अस्तित्व में नहीं है, कुछ अप्रमाणिक भी है। शुक्लजी का भक्तिकाल को पराजित मनोवृत्ति का परिणाम मानना, संत मत में ऐकेश्वरवाद (इस्लाम) का प्रभाव देखना, प्रेमाख्यान काव्य को सूफी, मसनवी की छाप मानना आदि अनुमानाश्रित है। रीतिकाल में रीतिमुक्त प्रेममार्गी कवियों, वीररसात्मक काव्यों, नीति व वैराग्य सम्बन्धी मुक्तकों के साथ शुक्लजी ठीक से न्याय नहीं कर पाए हैं। **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने स्वयं स्वीकार किया है कि-'कवियों के परियात्मक विवरण मैंने प्राय: मिश्र बन्धु विनोद से ही लिए है।'**[21]

सन् 1938 ई. में **रामकुमार वर्मा** का ग्रन्थ **'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास'** प्रकाशित हुआ। इसमें भक्तिकाल तक के साहित्य की आलोचना की गई है। पर कोई नवीनता विशेष नहीं, अधिकांशत: शुक्लजी का ही पिष्टपेषण हुआ है। इसमें सन् 693 ई. से सन् 1693 ई. तक की कालावधि का इतिहास लिखा गया है। यह सात प्रकरणों में विभाजित है। युगों व धाराओं के नामकरण का सरलीकरण किया गया है, जैसे निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा को संतकाव्य तथा प्रेमाश्रयी शाखा को सूफी काव्य। आदिकाल का नामकरण चारण काल किया गया है।

सन् 1940 ई. में हजारीप्रसाद द्विवेदी की पुस्तक **'हिन्दी साहित्य की भूमिका'** प्रकाशित हुई। क्रम, पद्धति की दृष्टि से देखा जाए तो यह इतिहास-ग्रन्थ नहीं है, पर कुछ लेख इतिहास- लेखन के लिये नयी दृष्टि, नयी सामग्री और नयी व्याख्या प्रदान करते हैं। यह ग्रंथ हिन्दी साहित्य का महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। साहित्य में क्रांतिकारी कदम इसमें उठाया गया है। इसमें

कुछ प्रवृत्तियों के उद्गम को खोजने का प्रयास किया गया है, पर साहित्य की पूरी गतिविधि का पता इस पुस्तक में नहीं चलता। इस पुस्तक के कुछ निष्कर्ष काफी महत्त्वपूर्ण है जैसे-

1. इस्लाम न आया होता तो भी भक्ति साहित्य का बारह आना वैसा ही होता जैसा आज है।
2. हिन्दी-संतकाव्य पूर्ववर्ती सिद्धों व नाथपंथियों के साहित्य का सहज विकसित रूप है।
3. प्रेमाख्यान काव्य की कथावस्तु, कथानक रूढियाँ, रचना-शैली, छंद योजना आदि संस्कृत, प्राकृत व अपभ्रंश की काव्य परम्पराओं पर आश्रित है।

इसी इतिहास लेखन की परम्परा में डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी के दो इतिहास ग्रन्थ प्रकाशित हुए- **हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास। सन् 1952 ई.**, **हिन्दी साहित्य का आदिकाल- सन् 1952 ई.**22 हजारीप्रसाद द्विवेदी पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने शुक्लजी की अनेक धारणाओं और स्थापनाओं को चुनौती देते हुए उन्हें सबल प्रमाण देकर खण्डित किया है। उन्होंने युग रूचिवादी एकांगी दृष्टिकोण के समानान्तर अपने परम्परागत दृष्टिकोण को स्थापित करके व्यापक संतुलित इतिहास-दर्शन की भूमिका तैयार की है। **आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी** ने परम्परा पर बल दिया है, यही कारण है कि **आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी** ने इतिहास की रूपरेखा, कालविभाजन, पद्धति व काव्यधारा का नियोजन इतिहास के अनुरूप ही किया है।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन में अनेक विद्वानों ने हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन का कार्य किया। लेकिन इस क्षेत्र में **आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी** का योगदान सराहनीय और अमिट है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास- सं. डॉ. नगेन्द्र- पृष्ठ क्र. 21
2. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 9
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 9
4. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 9
5. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 10
6. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 10
7. स्ट्रेटेजीज इन क्रिटिसिज्म-हेराल्ड पी. सिमन्सन-पृष्ठ क्र. 12
8. साहित्येतिहास : संरचना और स्वरूप (हाशिये पर)-डॉ. सुमन राजे-पृष्ठ क्र. 5
9. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल- पृष्ठ क्र. 3
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास- सं. डॉ. नगेन्द्र- पृष्ठ क्र. 42
11. हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास- प्रो. वशिष्ट अनूप- पृष्ठ क्र. 2
12. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 12
13. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 12
14. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 12
15. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास-डॉ. कुसुम राय-पृष्ठ क्र. 13
16. हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास- प्रो. वशिष्ट अनूप- पृष्ठ क्र. 2, 3
17. हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास- प्रो. वशिष्ट अनूप- पृष्ठ क्र. 3
18. हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास- प्रो. वशिष्ट अनूप- पृष्ठ क्र. 4
19. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल- पृष्ठ क्र. 1
20. हिन्दी साहित्य का इतिहास- पूरनचन्द टण्डन, डॉ. विनीता कुमारी- पृष्ठ क्र. 19
21. हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास-प्रो. वशिष्ठ अनूप-पृष्ठ क्र. 3
22. हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास-प्रो. वशिष्ठ अनूप-पृष्ठ क्र. 5
23. हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
24. हिन्दी साहित्य का इतिहास सम्पादक डॉ. नगेन्द्र।
25. हिन्दी साहित्य विमर्श पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी।
26. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास डॉ. रामकुमार वर्मा।
27. हिन्दी साहित्य की भूमिका डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी।
28. आधुनिक हिन्दी साहित्य डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय।
29. हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास डॉ. कुसुम राय।
30. साहित्येतिहास : संरचना और स्वरूप (हाशिये पर) डॉ. सुमन राजे।
31. हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास प्रो. वशिष्ठ अनूप।
32. हिन्दी साहित्य का सुगम इतिहास डॉ. हरेराम पाठक।
33. हिन्दी साहित्य का इतिहास विजयेन्द्र स्नातक।
34. हिन्दी साहित्य का इतिहास पूरनचन्द टण्डन ।डॉ. विनीता कुमारी ।
35. स्ट्रेटेजीज इन क्रिटिसिज्म हेराल्ड पी. सिमन्सन।
36. हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी।
37. हिन्दी साहित्य का आदिकाल डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी।

****

मालवी बोली का तुलनात्मक व्याकरण

अशोक बैरागी *

प्रस्तावना –किसी भी भाषा का अपना एक व्याकरण होता है, जो नियम क्रम पर आधारित होता है। भाषा की नियमावली को उसका व्याकरण कहा जाता है। हिन्दी भाषा या इससे मिलती जुलती भाषा या बोलियों के व्याकरण में ध्वनि, वर्तनी, विराम चिह्न, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, अव्यय, शब्द रचना, संरचना, रस, अलंकार एवं छंद आदि भेद प्रयुक्त होते है। चूँकि मालवी हिन्दी भाषा के समान राजस्थानी भाषा की एक बोली के रूप में प्रचलित है, तो इसका व्याकरण भी हिन्दी के व्याकरण से मिलता जुलता ही होगा, लेकिन मालवी बोली के ऊपर अन्य भाषा बोलियों के प्रभाव एवं अपनी मौलिकता के कारण कुछ परिवर्तन हुआ है। मालवी के व्याकरण पर भी यह परिवर्तन दिखाई देता है। मालवी बोली के व्याकरण की तुलना हिन्दी और अन्य भाषा बोलियों के साथ करने पर हमें इनके साथ मालवी की समानता और भिन्नता दिखाई देती है।

प्राचीन काल से ही मालवी हमें अनेक भाषा बोलियों के साथ अपना तालमेल बिठाती दिखाई देती है। चाहे वह संस्कृत हो, पालि हो, प्राकृत हो या अपभ्रंश से होती हुई हिन्दी हो। **'हिन्दी की अनेक बोलियों में प्रचलित शब्द 'मोर' (मयूर) का अशोक के शिलालेखों में पाया जाना जन-भाषा की प्राचीन, सजीव परम्परा के उद्घाटन में विशेष महत्व रखता है।'**[1] इस तरह मालवी के शब्दों की तुलना हम संस्कृत एवं पालि से करें तो बहुत समानता दिखाई देती है–

पालि	संस्कृत	मालवी
अग्नि	अग्नि	आगि
पियु	प्रिय	पिय
रूक्खो	रूक्ष	रूखो
ओट्ठ	ओष्ठ	होंठ
रूक्ख	वृक्ष	रूंखड़ो/रूंख
खीर	क्षीर	खीर
लोण	लवण	लूण

'छन्दस की वैदिक भाषा ने तत्कालीन देशी भाषा से संस्कृत का रूप ग्रहण किया। फिर संस्कृत ही समय-समय पर देशी भाषा के सहयोग से प्राकृत में ढली। अवसर आने पर प्राकृत को भी अपनी आन्तरिक रूढ़ि दूर करने के लिये लोकभाषा की सहायता लेनी पड़ी। फलत: भारतीय आर्य भाषा की अपभ्रंश अवस्था उत्पन्न हुई, जिसने आगे चलकर गुजराती, राजस्थानी, पंजाबी, ब्रज, अवधी, आदि का रूप धारण किया।'[2] मालवी के व्याकरण के विकास के बीज हमें यही प्राप्त होते हैं। आधुनिक देशी बोलियों के मिश्रण का आभास हेमचन्द्र के प्राकृत व्याकरण के रचना काल से अवश्य मिलने लगता है। उनकी 'देशी नाममाला' में अनेक ऐसे शब्दों का संग्रह है, जो प्राकृत ही नहीं संस्कृत साहित्य में भी अप्रयुक्त हैं। ऐसे शब्दों का प्रयोग बोलचाल की भाषा में होता रहा होगा, यह सहज ही सोचा जा सकता है। हेमचन्द्र की 'देशी नाममाला' में आये हुए कुछ शब्द यहाँ द्रष्टव्य है, जो किंचित् ध्वनि परिवर्तन के साथ आज भी मालवी में प्रचलित है–

उक्खली (औखली)	गग्गरी (गागरी)
उड़िदो (उड़दा)	गुत्ती (गाँती)
छिण्णालों (छिनाल)	औड्ढणं (औढणी)
जोवारी (धान्य)	औसरिया (ओसारी)
झाड़ (लतागहनम्)	उंबी (बक्क गोधूम)

अपभ्रंश या हिन्दी भाषा में जहाँ उकार बहुल प्रवृत्ति परिलक्षित होती है, प्रचलित मालवी में ओकार बहुल शब्दों का ही अधिक्य है।

1. सर्वाधिक रूप से प्रचलित 'ड' का प्रयोग मालवी में 'ड' के रूप में होता है।
2. शब्द के अन्त में 'ड' अथवा 'ड़' जोड़कर तद्भव शब्दों को देशी प्रभाव में अनुकूल बनाने की प्रवृत्ति भी उल्लेखनीय है– गौरी-गोरड़ी, रात-रातड़ी आदि।
3. 'श' 'ष' के स्थान पर प्राय: 'स' का ही प्रयोग होता है।
4. 'न' के स्थान पर 'ण' का प्रयोग भी दिखाई देता है।
5. वर्ण, विपर्यय का भी एकाध उदाहरण मिल जाता है।
   ल-न लीम्ब-निम्ब
   लीमड़ी-नीमड़ी
   द-ध दुद्-दूध
6. निर्विभक्तिक पदों में परसर्गो का प्रयोग– तणे, केर, केरा।
7. सर्वनाम में महारा (म्हारा) एवं 'हउं' का प्रचलन।
8. जो, सो, किं, काइं, क्यां, (क्या), के (अथवा) ज् (निश्चयबोधिक) आदि का प्रयोग अपभ्रंश और मालवी में समान रूप से पाया जाता है।
9. नकारात्मकता का द्योतक शब्द 'ण' मालवी में 'नी' 'नई' के रूप में प्रचलित है।
10. संख्या-सूचक कुछ शब्दों का स्वरूप और उच्चारण भी समान है–
    सउ (100) बत्तीसड़ा (32) दुइ/दोई (2)
11. संयुक्त व्यंजनों में सरलता लाने की दृष्टि से किया गया क्षतिपूरक दीर्घीकरण भी वैसा ही है–
    नीसासा-निस्सास ऊसास-उस्सास
    नीसरया-निस्सरइ विसर्‍यो-विस्सरइ

मालवी में बहुधा हिन्दी की प्रचलित नागरी वर्णमाला का उपयोग होता है, परन्तु उसके कुछ अक्षर न्यूनाधिक हो गए हैं। स, श, ष के स्थान पर मालवी में 'स' का उपयोग होता है। मंदसौर क्षेत्र में 'ष' का प्रयोग होता है। रजवाड़ी और सौंधवाड़ी में 'स' का 'ह' भी हो जाता है। हिन्दी के समान मालवी में भी 'ऋ' का उच्चारण 'रि' ही होता है। आदर्श ग्राम्य मालवी में 'ळ'

* शोधार्थी (हिन्दी) नेट-जेआरएफ, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

का भी उच्चारण होता है।

मालवी ओकारान्त भाषा है। इसका उल्लेख आचार्य भरत ने भी अपने नाट्यशास्त्र में भी किया है। लिंग, वचन, के अनुसार उनके उच्चारण में परिवर्तन होता रहता है। जैसे–रामो, घोड़ो, लाड़ो, गयो, रोयो, बोयो आदि। बहुवचन में ये शब्द आकारान्त हो जाते हैं। मालवी में प्रतिपादक स्वरान्त और व्यंजनात होते हैं– ओगो, धरड़, जनोई, आरो आदि स्वरान्त हैं और न्याव्, वराप्, भाँत्, निरांत्, राम् आदि व्यंजनात हैं। **'मालवी में 'और' शब्द के लिए 'अने', 'अन' आदि शब्दों का प्रयोग व्यापक रूप से होता है– रोटी अने दाल, माँ अन बाप आदि। इसके अतिरिक्त शब्द विकृत करने की प्रवृत्ति भी पाई जाती है– किसन–किसन्यो, बालक–बालूड़ो, रूपया–रूपट्टी आदि।'**[3] मालवी में संज्ञा रूप बहुधा हिन्दी जैसा ही है। हीनता, लघुता या घृणा प्रकट करने वाले संज्ञा शब्दों में 'ड़ा' प्रत्यय लगाया जाता है। टुकड़ो, गामड़ो, बापड़ो आदि, किंतु इनके पानड़ो, पछोड़ो, उगाड़ो, कराड़ो जैसे अनेक अपवाद भी प्राप्त होते है। मालवी में हिन्दी के समान एकवचन और बहुवचन हैं। बहुवचन बनाने के लिए 'होन' और 'ना' प्रत्यय लगाया जाता है। स्त्रीलिंग में 'या' प्रत्यय लगाते हैं जैसे–लोगहोन, लोगाना, या लोगायाँ आदि।

कर्त्ता सम्बंध और सम्बोधन कारक के अतिरिक्त मालवी के सब कारक हिन्दी से भिन्न होते हैं। जैसे–

कारक	कारक चिह्न
कर्ता	ने
कर्म	के
करण और आपदान	से, ती
सम्प्रदान	सारू, वास्ते, कारणे, ताँइ लोकगीतों में प्रयुक्त होते हैं।
अधिकरण	में, पर, उप्पर, पे
सम्बन्ध	का, के, की/रा, रे, री
सम्बोधन	अरे, ए, ओ

मालवी में भी हिन्दी के समान दो लिंग होते हैं– पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। पुल्लिंग और स्त्रीलिंग के प्रयोग के नियम भी हिन्दी के समान ही हैं। कई बार स्त्रीलिंग बहुवचन का प्रयोग पुल्लिंग जैसा होता है– बेन तम काँ से आया?, वी काँ से आया?

मालवी के विशेषण में हिन्दी के समान लिंग, वचन, कारक के अनुसार परिवर्तन होते हैं। जैसे कालो, गोरो, लंगड़ो, टुंटो, खरो, खोटो आदि। मालवी में सर्वनाम छ प्रकार के होते है–

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरूष	म्हूँ, मैं	हम म्हें
मध्यम पुरूष	तम, थू, थने	तम, तमारे, आपके
अन्य पुरूष	ऊ (उ)	वी
निश्चयवाची सर्वनाम	यो, ऊ	इ, वी
प्रश्नवाची सर्वनाम	किने, कुण	किनाने
सम्बंधवाची सर्वनाम	जो	जिन, जिनाने
अनिश्चयवाची सर्वनाम	कोई	कोई
साकल्यवाची सर्वनाम	एकलो	सब, सगला

मालवी क्रियापद ओकारान्त होता है। प्रेरणार्थक में 'आव' प्रत्यय जोड़ा जाता है– भणनो–भणावनो कभी–कभी 'आड' प्रत्यय भी जोड़ा जाता है– जीमनो–जीमाड़नो। नाम धातु के लिए 'नो' प्रत्यय भी संज्ञा या विशेषण के अन्त में जोड़ा जाता है। जैसे– घोल–घोलनो।

मालवी में संयुक्त क्रियाएँ दो प्रकार से बनाई जाती है– 1. धातु से धातु मिलाकर, जैसे– कई ग्यो, रई ग्यो, पोंची ग्यो आदि। 2. धातु से पहले कोई संज्ञा, क्रियाजात विशेष्य या कृदन्त पद जोड़कर। जैसे– बुलावो देनो, खूँटे बांधनो, आड़ो फरनो आदि। वचन, काल, पुरूष, लिंग, वाच्य के कारण क्रिया का रूप विकार होता है। उदाहरणार्थ–

1. वाच्य–कृतवाच्य– हमने न्हइल्यो है। छोरी रोटी पोइरी है।
   कर्मवाच्य– कपड़ा सिवई रिया है।
   भाववाच्य– म्हार से चल्यो नी जावे।
2. काल– मालवी में भूत, वर्तमान और भविष्य काल प्रयुक्त होते हैं।
   मालवी में सामान्य क्रियाएँ ओकारान्त होती है।

अन्तिम 'अ' को 'य' में बदलकर सामान्य भूतकाल की क्रियाएँ बनाई जाती हैं।

एकाक्षरी धातुओं से सामान्य भूतकाल बनाने के लिए उसमें 'या' लगा देना पड़ता है।

सामान्य भूतकाल की क्रियाएँ लिंगों, वचनों और पुरूषों में अपरिवर्तीत बनी रहती हैं।

किसी भी काल के बहुधा क्रियाओं के तृतीय पुरूष के दोनों वचन समान रूप होते हैं।

सामान्य भूतकाल की क्रिया में 'हें' लगाने से वह आसन्न भूतकाल की क्रिया बन जाती है, जो सभी लिंग, वचन और पुरूष में समान रूप में रहती है।

मालवी में तात्कालिक वर्तमानकाल के रूप पड़ीयों, जइयों, लिखियों होते हैं, जो हिन्दी और राजस्थानी से भिन्न है। अविकारी या अव्यय बहुधा हिन्दी के समान है।

मालवी तत्सम/तद्भव शब्दों में जब उपसर्ग लगाते है तो ऐसी स्थिति बनती है–

तत्सम	उपसर्ग	तद्भव	उपसर्ग
अप	अपजस	निर	निरमोइलो
को	कोजस	अद	अदवेंड्यो
अ	अजाण्यो	स	सभाव

मालवी का सामासिक रूप भी हिन्दी जैसा ही है और उससे समानता रखता है।

मालवी के व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन करने पर हमें ज्ञात होता है कि मालवी की अपनी वृहद शब्दावली है। उसका व्याकरण हिन्दी से साम्यता रखता है, किंतु वह उससे अलग और मौलिक है। आज मालवी के व्याकरण को सहेजना और उसे परिभाषित करना अत्यंत दुष्कर कार्य है। मालवी बोली कई बोली–भाषाओं के शब्दों की खिचड़ी है। इसमें कई बोलियों के शब्द आ जाने से यह व्याकरणिक दृष्टि से पूर्ण हो पाई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अशोक – आर. के. मुखर्जी, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 245
2. मालवी एक भाषा शास्त्रीय अध्ययन – डॉ. चिंतामणि उपाध्याय, पृष्ठ 12
3. मालवा की उपबोलियाँ और उनका सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य – डॉ. शशि निगम, पृष्ठ 36

****

नक्षत्रों के साथ खेती

डॉ. अनुसुईया अग्रवाल *

प्रस्तावना – विश्व के मानचित्र पर भारत एक कृषि प्रधान देश के रूप में अपनी पहचान अंकित किए हुए है। दरअसल भारत भूमि के संस्कारी जनों का अपनी जड़, अपनी जमीन और अपनी जम़ीर से गहरा लगाव है। भारतवासी के लिए यहां की धरती जमीन का एक टुकड़ा मात्र नहीं है; वे इस पर खेती कर, इसकी उर्वरा शक्ति का उपयोग कर, इसके सीने को हरा- भरा कर, इसकी अंतर्निहित शक्ति का उपयोग कर इसके प्रति अपने कर्ज को चुकाने का अनूठा भाव रखते हैं और यहाँ की धरती भी धान के रूप में सोना ऊगल कर अपनी संतानों का मान रखती है।

यूं तो भारत के अनेक प्रदेशों में धान की खेती की जाती है तथापि छत्तीसगढ़ के सर्वाधिक क्षेत्रों में धान की खेती किए जाने के कारण, इस राज्य को 'धान का कटोरा' के नाम से जाना जाता है। यह विशेषण कृषि क्षेत्र में इसकी मुकम्मल पहचान का परिचायक है। '1,35,000 वर्ग कि. मी. क्षेत्र में फैले छत्तीसगढ़ में 2,07,95,956 लोग निवास करते हैं। जिनमें से मुख्य कार्यशील व्यक्तियों में 80 प्रतिशत से ज्यादा लोग खेती पर निर्भर हैं। इस आंकड़े के आधार पर यदि कहें कि छत्तीसगढ़ का अतीत, वर्तमान और भविष्य का पूरा तापमान कृषि पर केन्द्रित है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।'[1] कृषि और धान हमारी संस्कृति में इस तरह रचे- बसे हैं कि इसके बिना अपने होने की कल्पना भी हम नहीं कर सकते।

तथापि आज जब मॉल संस्कृति का आकर्षण सिर चढ़कर बोल रहा है। इंटरनेट घर- घर में ही नहीं है अपितु मोबाईल के जरिये पूरी दुनिया जेब- जेब में लोगों के है। आज जब पिज्जा, बर्गर और कटलेट जैसे लज़ीज़ व्यंजन लोगों की पॉकेट ही ढ़ीली नहीं कर रहे हैं अपितु उनके सेहत के साथ भी मनमाने खिलवाड़ कर रहे हैं। आज जब आत्मीयता खत्म होने लगी है, रिश्ते बेमानी और क्षणिक होने लगे हैं; तब देश का एक बड़ा वर्ग ऐसा भी है जो पूरी तरह आज भी 'खेत के कोना को सोना मानकर' पूरी निष्ठा के साथ धरती के साथ अपने अटूट और आत्मीय रिश्ते को निभा रहा है। उसे अपनी उस जमीन से सर्वाधिक लगाव है और उनके लिए खेती कर्म या धंधा नहीं बल्कि जीवन शैली है। कोई प्रलोभन और कोई लालच उन्हें अपने इस धरोहर से अलग नहीं कर पा रहा है।

यद्यपि वे खेती बेहतर ढंग से हो इसके लिए अनेक तरीके अपना रहे हैं। इसलिए नैसर्गिक और प्राकृतिक संपदा से परिपूर्ण इस क्षेत्र में उन्नत किस्म के बीजों के इस्तेमाल और तकनीकी तरीकों से किए जाने वाले प्रयासों के फलस्वरूप अल्प अवधि में ही उन्नत कृषि कर भरपूर फसलें और धान की अनेकानेक किस्में प्राप्त की जा रही हैं। संजय त्रिपाठी के अनुसार 'देश में जनता की कृषि पर निर्भरता तथा उनके लिए कृषि के महत्व को इस बात से ही समझा जा सकता है कि जनसाधारण के उपभोग बजट में कृषि उत्पाद का हिस्सा लगभग 85 प्रतिशत होता है। विश्व के मुख्य विकासशील देशों में अग्रणी होने के बाद भी भारत आज कृषि प्रधान देश है।[2] तथापि इस उपलब्धि प्राप्ति के अनेक कारणों में एक कारण हमारे पूर्वजों की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति और तर्को के द्वारा की गई नीतियों, विश्वासों और धारणाओं का भी है। जिन्हें यदि विज्ञान के ढंग से भी देखें तो इनकी वैज्ञानिकता और प्रमाणिकता को महसूस कर दांतों तले अंगुली दबा लेने को विवश होना पड़ता है।

यथा- खेती के मास्टर माइंड हमारे पूर्वजों ने कम लागत में बढ़िया फसल प्राप्ति के लिए नक्षत्रों पर निर्भर होने की बात कही थी; तद्नुसार नक्षत्रों के आधार पर यदि खेती की जाए तो धरती सोना उगलती है। नक्षत्रों पर केन्द्रित एक उक्ति का अवलोकन करें-

रोहिनी बरसै, मृग तपै, कुछु कुछु अदरा जाय,
घाघ कहे सुन घाघिनी, कुकूर भात न खाय।

अर्थात रोहिणी नक्षत्र में खूब वर्षा हो, मृगशिरा नक्षत्र में खूब गर्मी पड़े और आद्रा नक्षत्र में कुछ- कुछ वर्षा हो तो अन्न की पैदावार इतनी अधिक होती है कि कुत्ता भी भात नहीं खाता।

नक्षत्रों के आधार पर कृषकों के लिए ऐसी ही ज्ञानपरक, नीतिपरक, शिक्षाप्रद अनके तथ्य प्रतिपादित किए गए हैं; जिसे तालिका रूप में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है; जिसका ध्यान रखकर कृषक अपना धर्म और बेहतर ढंग से निभा सकते हैं। [3] -

ग्रीष्म नक्षत्र के शतभिषा, पूर्वाभाद्रा, उत्तराभाद्रा, रेवती, भरणी, कृतिका व रोहिणी तथा शीत के ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, घनिष्ठा नक्षत्र में धान से संबंधित कोई कार्य नहीं किया जाता है। **(तालिका देखे अगले पृष्ठ पर)**

तालिका में हर नक्षत्र के प्रारंभ एवं पूर्ण होने की दो तिथियों का आशय यह है कि यदि फरवरी 28 दिनों की होती है तो नक्षत्र लगने की तिथि पहली होगी और यदि फरवरी 29 दिनों की है तो नक्षत्र लगने की तिथि बाद की होगी। इस तरह अंग्रेजी माह की तारीखों के साथ नक्षत्रों के लगने और पूर्ण होने का अनूठा सामंजस्य इस तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

नक्षत्रों से जुड़ी एक घटना का भी तालिका लेखक ने स्मरण किया- कि जब वर्षाकालीन धान की खेती के लिए 10 जून की सुबह धान का थरहा डालना तय था किन्तु मौसम की प्रतिकूलता के कारण काम करने वाले 'कामदार' बार- बार पुनर्विचार हेतु कह रहे थे; पर पूर्व निर्धारित समय पर ही जब लेखक ने काम किए जाने के संबंध में अपनी दृढ़ता दिखाई तो मन मारकर निर्धारित समय पर उन्होंने काम किया और शाम होते- होते मौसम ने करवट बदली और झमाझम बारिश से पूरी धरा तरबतर हो गई, मानों सुबह डाले गए 'धान के थरहा विषयक कार्य पर' विधाता ने अपनी मुखर स्वीकृति का सील मोहर लगा दिया हो और औचक रह गए वो कामदार; जो मना कर रहे थे बाद में अपनी खीझ छिपाते हुए उन्होंने कहा- 'भगवान घलव बड़े आदमी के सुनथे गा।'

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शा. म. व. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महासमुंद (छ.ग.) भारत

जबकि वास्तविकता यही है कि गाँव का कृषक समुदाय इन नक्षत्रों को देखकर ही कृषि कर्म प्रारंभ करते हैं। ये नक्षत्र कृषकों के लिए पथ संकेत है। इन नक्षत्रों पर केन्द्रित अनेक उक्तियाँ जन सामान्य के बीच प्रचलित और लोकप्रिय है जो ग्रामीण कृषकों का 'मौसम शास्त्र' है। यथा–

'अदरा धान पुनरबसु बदरईया, मरे किसान न खाय चिरईया।'

अर्थात यदि आद्रा नक्षत्र में धान नहीं बोया गया तो समझो किसान चूक गया क्योंकि बाद में बोये जाने वाले धान झड़ जाते हैं और उसे पक्षी खाते हैं।

'चित्रा गहूं अदरा धान, ओखर सेंदरी न येखर घाम।'

अर्थात चित्रा नक्षत्र में गेहूँ और आद्रा नक्षत्र में धान बोने से न तो गेहूँ को सेंदरी नामक बीमारी लगती है न ही धान को धूप से नुकसान पहुँचता है।

'मघा के बरसे अऊ ढाई के परसे।'

अर्थात मघा नक्षत्र में भरपूर जल वृष्टि होती है जो किसान के लिए वैसा ही पर्याप्त और तुष्टिदायक होता है जैसे माता के द्वारा परोसा भोजन संतान के लिए तुष्टिपूर्ण होता है। यानि मघा नक्षत्र की जल वृष्टि से किसान को और माता के परोसने से संतान को भरपूर तृप्ति मिलती है।

'एक घाव जब बरसे स्वाति, कुरमिन पहिंरे सोन के पाती।'

अर्थात स्वाति नक्षत्र में एक बार भी वर्षा हो जाए तो इतनी बढ़िया फसल होती है कि उससे प्राप्त भरपूर आमदनी पर गौटनींन (गौटिया (संपन्न किसान) की पत्नी) सोने की पाती पहनती है।

'हाथी बरसे तीन भय, उरदा तिली कपास।'

अर्थात हस्त नक्षत्र की वृष्टि से उड़द, तिल और कपास की कम फसल होती है।

'अदरा के धान, स्वाति के गहूँ, गोसईया रहे चाहे कहूँ।'

अर्थात यदि धान को आद्रा नक्षत्र का और गेहूँ को स्वाति नक्षत्र का जल मिल जाये तो किसान को अन्न की भरपूर पैदावार मिलेगी ही; चाहे वो कहीं भी क्यों न रहे।

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि यदि इन नक्षत्र रूपी पथ संकेतों को कृषि कर्म से जुड़ा कृषक अनदेखा करता है तो संभव है कि ऐसी स्थिति निर्मित हो जाये कि अनावृष्टि या अतिवृष्टि के कारण अकाल, आर्थिक दुर्दशा, भुखमरी एवं पलायन जैसे अभिशाप ग्रामीण कृषकों का भाग्य बन जाये। जबकि यदि नवोन्मेषी/ प्रगतिशील कृषक नवाचार के साथ इन परंपरागत संकेतों को ध्यान रखकर कृषि कर्म में प्रवृत होते हैं तो अच्छा उत्पादन और वर्ष भर की खुशहाली प्राप्त कर सकते हैं। यदि कृषकों के द्वारा अनुभव प्रसूत इस तालिका को आधार मानकर खेती की जाती है तो निसंदेह कृषक समृद्धि में नवाचार को और अधिक सुदृढ़ता प्राप्त होगी तथा कृषक उन्नत और श्रेष्ठ खेती कर कृषि को लाभदायी व्यवसाय बना सकेंगे। इतना ही नहीं कृषकों के जीवन स्तर में सुधार के अवसर में भी वृद्धि होगी और कृषि कर्म से जुड़े प्रगतिशील कृषकों, कृषि वैज्ञानिकों, स्वयं सेवी संस्थाओं और कृषि अध्येताओं को इनके माध्यम से कृषक जीवन की अंतरंग गतिविधियों के अनुशीलन के लिए नई दिशा भी मिल सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उत्तर औपनिवेशिक समय में किसान– सं. डॉ. राम किंकर पाण्डेय, जे. टी. एस. पब्लिकेशन्स दिल्ली, प्र. सं. 2016, पृ. 246
2. छत्तीसगढ़ वृहद संदर्भ– संजय त्रिपाठी, उपकार प्रकाशन आगरा, पृ. 50
3. छत्तीसगढ़ी संगठन युग– सं. बद्री विशाल अग्रवाल, लेखक– डॉ. संतोष अग्रवाल, जुलाई 2013, पृ. 10

नक्षत्रों का चार्ट

क्र.	**नक्षत्र के नाम**	**अंग्रेजी माह में अवधि**	**क्या करें**
1	मृगशिरा	7/8 जून से 20/21 जून	थरहा डालने का समय
2	आर्द्रा	21/22 जून से 4/5 जुलाई	धान की बोनी का समय
3	पुनर्वसु	5/6 जुलाई से 18/19 जुलाई	थरहा संरक्षण
4	पुश्य	19/20 जुलाई से 1/2 अगस्त	बियासी/ रोपाई
5	अश्लेशा	2/3 अगस्त से 15/16 अगस्त	निंदाई/ बियासी
6	मघा	16/17 अगस्त से 29/30 अगस्त	पौध संरक्षण
7	पूर्वाफाल्गुनी	30/31 अगस्त से 12/13 सितम्बर	बौना प्रजाति गभोटकाल
8	उत्तराफाल्गुनी	13/14 सितम्बर से 25/26 सितम्बर	ऊँची प्रजाति गभोटकाल
9	हस्त	26/26 सितम्बर से 9/10 अक्टूबर	अनिवार्य पौध संरक्षण
10	चित्रा	10/11 अक्टूबर से 22/23 अक्टूबर	बाली निकलना और परागण
11	स्वाति	23/24 अक्टूबर से 4/5 नवम्बर	बाली संभरण
12	विशाखा	5/6 नवम्बर से 18/19 नवम्बर	बौनी प्रजाति तैयार
13	अनुराधा	19/20 नवम्बर से 1/2 दिसम्बर	ऊँची प्रजाति तैयार

****

जीवनानुभूतियों से जुड़े त्रिलोचन जी

डॉ. सरोज जैन *

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्य जगत के यशस्वी विद्वान, साहित्यकार, जनवादी कवि श्री त्रिलोचनशास्त्री प्रगतिशील कवि रहे। श्री त्रिलोचन केदारनाथ अग्रवाल और नागार्जुन की भांति प्रगतिशील खेमे से नयी कविता में आए। उनकी कविताओं में जन सामान्य की दैनन्दिन अनुभूतियों की बड़ी सफल अभिव्यक्ति हुई है। सानेटों उनका प्रियाछन्द रहा है। जिस प्रकार तुलसीदास को हम उनकी चौपाइयों से, बिहारी को उनके दोहों से मैथिलीशरण गुप्त को उनकी हरिगीतिका से पहिचानते है उसी प्रकार त्रिलोचन जी को उनके सानेटों से पहिचाना जा सकता है। स्वभाव से सरल, सहज, दो टूक कथन शैली उनके व्यक्ति की विशेषता रही है। मुक्तिबोध सृजन पीठ के अध्यक्ष रहे बहुभाषाविज्ञ श्री त्रिलोचन जी ने अपने कार्यकाल में अनेक कार्यषालाएं आयोजित कर छात्रों को कविता और साहित्य से परिचित कराया। उनका निधन निश्चय ही हिन्दी साहित्य के लिए अपूरणीय क्षति है। वे साहित्य मर्मज्ञों के लिए चिरस्मरणीय रहेंगे।

त्रिलोचन शास्त्री देश के उन बड़े कवियों में थे, जिनका वास्तविक महत्व नहीं पहचाना गया है। किसान परिवार में जन्मे वासुदेवसिंह कवि के रूप में त्रिलोचन जी के नाम से प्रसिद्ध हुए। त्रिलोचन जी हिंदी में सॉनेट के रचयिता के रूप में ही अधिक प्रसिद्ध हुए। 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में त्रिलाचन जी ने प्रचुर सॉनेट रचे। राजकिशोर के अनुसार– 'त्रिलोचन जी हिंदी में सॉनेट के रचयिता के रूप में ही अधिक जाने जाते हैं। उन्होंने 20वीं सदी के संपूर्ण उत्तरार्द्ध में इतने सॉनेट रचे हैं कि उतने स्पेंसर, शेक्स पियर और मिल्टन ने भी नहीं रचे।' सॉनेट के अलावा उन्होने गीत, बखै, गजल, चतुष्पदियां और कुछ कुण्डलियां भी रची है। मुक्त छंद की अनेक लघु और दीर्घ कविताएं भी उनके काव्य संसार को समृद्ध करती है। सॉनेट धुन के साथ गायी जाने वाली कविता है। ऐसी छोटी धुन जो मे डोलिन या ल्यूटर (एक प्रकार का वाद्य यंत्र) पर गायी जाती है।

अमर साहित्यकार त्रिलोचन जी ने अनेक काव्यों का सृजन किया धरती (1945) दिगन्त (1957) ताप के ताय हए दिन 1980 उस जनपद का कवि हूं 1981 अरघान 1983 गुलाब और बुलबुल 1985 अनकही भी कुछ कहानी है 1985, तुम्हें सौपता हूं 1985 फूल नाम है एक 1985 चैनी 1987 , सबका अपना आकाश 1987 अमोला 1990। इनके अतिरिक्त देशकालकथा 1986 काव्य और अर्थ बोध 1995 आलोचना का सृजन किया गया। ताप के ताए हुए दिन (कविता संग्रह) क लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरूष्कार से नवाजा गया।

त्रिलोचन जी का सागर विश्वविद्यालय से गहरा रिष्ता था विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों को और छात्रों से उनका आत्मीय लगाव था। प्रो. सुरेश आचार्य के अनुसार– त्रिलोचन हिंदी में सॉनेट का प्रयोग करने वाले महत्वपूर्ण कवि थे। ताप के ताए हुए उनकी चर्चित कविता संग्रह है। संस्मरणों का तो उनके पास भंडार था। प्रो. गोविंद द्विवेदी के अनुसार– सागर में रहते हुए त्रिलोचन जी यहां के नई पीढी के कवियों, साहित्यकारों के प्रेरणा स्रोत रहें।' उनमें गहरी संवेदनशीलता और समझदारी विद्यमान थी। वे जितने अच्छे कवि थे उतने ही जनप्रिय विद्धान। लेकिन उनकी विद्धता कविता में अवरोधक नहीं बनी। त्रिलोचन जी ने उस समय छंद में कविताएं लिखी जिस समय छंद का प्रयोग बहुत कम होने लगाथा। वे शब्द के पाखी थे। उन्होने अपनी कविताओं में जन सामान्य की बोली से लोकजीवन का सारांश प्रस्तुत किया। उनका पूरा जीवन ही सत्य के लिए समर्पित था। त्रिलोचन जो देश के उन बड़े कवियों में सेथे जिनका वास्तविक महत्व पहचाना नहीं गया । वे हिंदी के मूर्धन्य कवियों में से एक थे, जिनका व्यक्तित्व इतना विशाल था कि उसकी उपेक्षा या अनदेखी करना किसी के लिए भी संभव न था।

त्रिलोचन जी का व्यक्तित्व सहज भारतीय का व्यक्तित्व था। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों में ही भारतीयता कूट–कूट कर विद्यमान थे। परंपरा से जुड़े रहने के बाद भी उनकी कविता में आधुनिकता की सुंदरता विद्यमान थी। तुलसीदास की कविताओं में अक्खड़पन मिलता है, जो उन्हें दीनतावाले कवियों से अलग करता है। त्रिलोचन जी के व्यक्तित्व और लेखन जो बेलौसपन अक्खड़ता और प्रगतिशील आग्रह था, उसका सार तत्व उन्होंने अपनी परंपरा से लिया था, शेष उनका अपना बनाया हुआ था। त्रिलोचन जी खांटी देशी आदमी थे। यहां तक कि उनका उच्चारण भी बिलकुल देशी था, जिसमें किसी प्रकार की आधुनिकता या कृत्रिमता नहीं थी। मैं इसके लिए ठेठ शब्द का प्रयोग करना चाहूंगा। इसका एक साक्ष्य यह है कि त्रिलोचन की कविता तद्‌भव प्रधान है। हिंदी दर असल तत्सम की नहीं तद्‌भव की भाषा है। तत्समता प्रधान कविता लोकचित्त से दूर होती है।

त्रिलोचन जो प्रकाश और उल्लास के कवि है। 1935 के संकलन 'मै तुम्हें सौपता हूं' लेकर 1983 के बीच लिखी गई कविताओं में धरती की महिमा का बखान है इस काव्य संकलन में त्रिलोचन जी की काव्य यात्रा के उतार–चढ़ाव, मनोभावों के बदलाव और मानसिक तनाव से कविता सृजन के भाव को समझाा जा सकता है। संग्रह में छोटी–छोटी कविताएं संकलित है। 'शांतिपर्व में वे घर आते दिखाई दे रहे हैं एक अन्य 'काथ रूपक' में ऐतिहासिक रचना यात्रा इस बात को स्पष्ट उजागर करती है कि कवि की रचना में विषय और स्वभाव में समय ने कैसे परिवर्तन किए है। संग्रह की कविताएं उनकी काव्य यात्रा का भीतरी इतिहास है। 1935 के हंस मासिक में छपी 'अंकुर य का वृत्त नामक कविता इस संग्रह की प्रथम कविता है। इस कविता हरित अंकुर ले उठा उभार/प्राप्त कर जग का मृदु व्यवहार में आस्था

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

और धैर्य के साथ मृदुता को सींचने का संकल्प लिया। इन कविताओं में निहित भारतीयता जीवन से संप्रक्त है। ललक नामक कविता में त्रिलोचन जी लिखते है– बड़े फलों की प्रतीक्षा है। डर नहीं है। हसाँ जाऊँगा। दूसरों के हंसने से जो सहमते है वे कायर है। इसलिए वह हर प्रकार के जोखिम उठाने का तैयार है। गरीबी, भूख और अपमान की मार से वह टूटते नही तनकर खडे हो जाते है। तमसो मा ज्योतिर्गमय, चरेवैति, मूलमंत्र गीत जैसी कविताओं में उपनिषदीय ज्ञान धारा का वह प्रवाह है, जो गति को ही जीवन मानता है। उनकी कविताएं इस बात का संकेत देती है कि दृष्टि अपने भीतर के साथ बाहरी जगत की ओर भी है। बाहर की आंच में तपकर प्राप्त अनुभव शब्दाकार ले लेते है। संचय प्यास, निर्झर, क्या कभी एकता आएगी, युग की पुकार, ललक, आत्मालोचन, कर्त्तव्य कर्म, ज्ञान की अग्नि आधुनिक अभिमन्यु, कवि का स्वर, जीवन का रस ऐसी ही कविताएं है। झिझक छोड़ दो । जान छोड़ दो । तन मन का जंजाल तोड़ दो। मन मन जीवन से जीवन। कच्चे कल्पित पात्र फोड़ दो।

1944–45 के मध्य लिखे गए 'शांतिपर्व' खण्ड काव्य में चार काव्य रूपक सम्मिलित है। द्वितीय विश्वयुद्ध की चेतना लिए हुए ये काव्य हंस में प्रकाषित हुए थे। द्वितीय विश्वयुद्ध मानव की विद्रूप भावनाओं का प्रतिफल था। इस युद्ध ने भारत के पड़ोसी देशों को रौंद डाला और भारत को नए ढंग से सोचने पर मजबूर किया। वे घर आ रहे है, कविता में युद्ध के बाद घर लौटते सैनिकों के विचारों का काव्यबद्ध किया गया है। शैतान और इंसान' में एथेंस की ऐतिहासिक घटना है, जिसमें वे ब्रिटेन के हुणों से मुक्ति खोज रहे है। इन सभी काव्य रूपकों में मुख्य रूप से एक बात नजर आती है। कि त्रिलोचन में जनता, स्वतंत्रता और मानवता के जन अधिकारों के लिए एक तड़प है। यही उनकी उनके सृजन का कारण है।

त्रिलोचन जी की कविता में रोजमर्रा जीवन की घटनाएं मित्र मंडलियां भी सहज रूप से सम्मिलित हो जाती है। कृष्ण दत्त पालीवाल के अनुसार– त्रिलोचन जी की कविताओं में कवि का अंतरंग जीवन भी लिखा गया है। कोई चाहे तो इन कविताओं के भीतर से त्रिलोचन जी की जीवनी भी लिख सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि उनमें ' काव्य–ममता' का बोझ नहीं है। कविता हँसती रोती अपने आप आती है और हर चीज में कवि को एक सौंदर्य दिखाई दे जाता है। प्रगतिवादी कवियों में त्रिलोचन का अध्ययन चिंतन जितना व्यापक और तर्कपुष्ट है उतना अन्य किसी कवि का नहीं।

जनसत्ता, दैनिक समाचार पत्र कृष्णदत्त पालीवाल 8 जून जीवन के दृष्य सौंदर्य की अभिव्यक्ति के लिए त्रिलोचन जी किसी प्रकार की शर्तो से समझौता नहीं करते। वे जनकवि बने रहने में ही गौरव का अनुभव करते है। लोक धुनों और लोकव्यापी छंदों की जैसी सिद्धि त्रिलोचन को प्राप्त है वह हिंदी के बहुत कम कवियों में मिल पाती हैं, स्वयं त्रिलोचन जी के शब्दों में– कविता मेरे लिए समझने– बूझने या समझाने का विषय नहीं, जीने का विषय है। कवि नहीं हो सका यह कसक सदैव कलेजे को सालती रहेगी और अगर वहीं कवि हो जाता तो त्रिलोचन नहीं हो पाने का मलाल जीवन भर रहता।

निश्चय ही त्रिलोचन जी की अनुभूतियां जन जीवन से जुड़ी है और उन जीवनानुभूतियों को अपने सॉनेट के माध्यम से प्रस्तुत करने वाले अन्यतम कवि है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. क्रांति कुमार जैन, नयी कविता, पृ. 128
2. राजकिशोर, दैनिक भास्कर (समाचार पत्र) दि. 16.12.07
3. सुरेश आचार्य, दैनिक भास्कर।
4. गोविंद द्विवेदी दैनिक भास्कर।
5. राजकिशोर दैनिक भास्कर 16.12.07
6. कृष्ण दत्त पालीवाल, जनसत्ता, 8.6.07
7. फणीश्वर नाथ रेणु, दैनिक भास्कर, 16.12.07

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

हिन्दी समकालीन कहानी - भारतीय समाज का विभिन्न स्वरूप

डॉ. रागनी चौहान *

प्रस्तावना - हिन्दी कहानी ने समय के साथ साथ चलते हुए आदि से लेकर आज तक राजनीति, सामाजिक आर्थिक आदि स्थितियों और जीवन के परिवेष में हुए बदलावों से सामना किया और मानव जीवन के चारो तरफ के वातावरण को देखा और इन सभी परिस्थियों को कहानीकारों ने महसूस किया, उसे अनुभव कर अपने चिंतन को रचनात्मक मोड़ दिया, जिसके परिणाम स्वरूप समकालीन कहानी का उदय हुआ। समकालीन कहानी में कहानीकारों ने अनेक तनावों और विचारों की टकराहट के बीच होते हुए अपनी पहचान बनाई। हिन्दी समकालीन कहानी के प्रवर्तक के रूप में गंगा प्रसाद विमल का नाम लिया जाता है। समकालीन कहानीकारों में उदय प्रकाश, अरूण प्रकाश, अखिलेश, अब्दुल बिस्मिलाह, असगर वजाहत, काशीनाथ सिंह, कृष्णा सोबती, गोविंद मिश्र, गिरिराज किशोर, चित्रा मुगदल, जवाहर सिंह, नासिरा शर्मा, प्रियवंद, पंकज बिष्ट, मालती जोशी, मृणाल पांडे, मेहरून्निसा परवेज, अलका सरावगी, चंद्रकाता, राजेश जोशी, रमेश चंद्र शाह, रूपसिंह चंदेल, राजी सेठ, शैवाल, विजय, श्रवण कुमार, सुरेश कंटक, सुनील सिंह, सुरेश उनियाल, सृंजय सतीष जमाली आदि का नाम लिया जाता है।

समकालीन कहानी में भारतीय समाज के विविध रूप/आयाम -

1. **समकालीन कहानी मानवीय संवेदनाओं का भण्डार -** समकालीन कहानी मानवीय संवेदनाओं का भण्डार है। उसमें आज के समय के गहन विचारों, दबावों, कुटिलताओं, निराशा, आशाओं, भय-आशंकाओं, प्रेम-घृणा, आकांक्षाओं और संभावनाए है। समकालीन कहानी ने जीवन के यथार्थ के छोटे से लेकर बड़े बदलाव को उजागर किया है। देश और समाज से संबंधित अनेक गंभीर और बेबाक चिंताजनक सवालों को खड़ा किया। समकालीन कहानी ने मानवीय जीवन को यथार्थ के धरातल में अनेक विचारों को अनुभवों को, भावनाओं को व्यक्त किया है।

2. **समाज से जुड़ी हुई कहानी -** समकालीन कहानी की विशेषता यही है कि वह समाज से जुडी हुई कहानी है अर्थात वह समाज से जुडे हर वर्ग के व्यक्ति, उसके अस्तित्व और उसकी सोच की कहानी है। समकालीन कहानी ने कमजोर मजलूम आदमी को जीवन जीने के लिये ऐसा दृष्टिकोण दिया, जिससे वह असहाय जीवन के बदले एक सार्थक जीवन पा सके। अपनी सोच को सकारात्मक रूप दे सके।

3. **समकालीन कहानी यथार्थ की कहानी -** समकालीन कहानी देश, समाज व मानवीय जीवन की यथार्थ की कहानी है। इसने यथार्थ के परे यथार्थ को प्रकट किया है। सच को बिना किसी लाग लपेट के प्रस्तुत किया है। मानवीय संबंधो में गिरावट आना, रिश्तों में अलगाव, करूणा सहानुभूति के स्थान पर स्वार्थपरकता, नगरों महानगरों में बसने वाले आम आदमी से लेकर धनवान तक की मन मस्तिष्क की पीडाओं, निराशा आदि एवं देश व समाज में फैले भ्रष्टाचार कालाबाजारी, घूस प्रवृत्ति, बेईमानी को परत दर परत समकालीन कहानी ने खोला है।

4. **समकालीन कहानी : दलित विमर्श -** समकालीन कहानियों में दलितों के जीवन से जुडी हुई हर अच्छी-बुरी, श्रेष्ठ-न्यूनतम स्थितियों को दिखाया गया है। भारतीय समाज में हर जाति और धर्म के दलितों की स्थिति एक जैसी ही रही है। इसे समकालीन कहानीकारों ने अपनी कहानियों में आत्मबोध और विशिष्ट सामाजिकता के साथ- बखूबी प्रस्तुत किया है कि किस तरह समाज आज भी परंपरागत जातिगत भेद-भाव, छुआ-छूत, उंच-नीच की लकीर पार ही नहीं कर पाया है।

5. **समकालीन कहानी : आम आदमी की कहानी -** आम-आदमी समकालीन कहानी का प्रमुख पात्र या केन्द्र बिन्दु रहा है। इसी आम-आदमी के चारों ओर के वातावरण को समकालीन कहानी दिखाती है। यह आम - आदमी वो है, जो सर्वाधिक त्रस्त है, दुखी, इसे जीवन में ज्यादा संघर्ष को झेलना पड़ता है, कितना टूट जाता है इन संघर्षो से और कभी - कभी तो जीवन यापन की दैनिक जरुरतों के लिए अनैतिक राह में चलना भी स्वीकार लेता है।

6. **समकालीन कहानी में विरोध की गूंज -** समकालीन हिन्दी कहानी में विरोध करने की प्रवत्ति रही है। समकालीन कहानी का यह विरोध व्यक्तिगत स्तर पर और सामूहिक स्तर का भी रहा है। समकालीन कहानी न व्यक्ति के प्रति भी विरोध प्रकट किया और समूह के प्रति भी।[1] समकालीन कहानीकारों ने अपनी माध्यम से राजनीति, सामाजिक, शिक्षा, न्याय-व्यवस्था आदि में जो भी बुराईयां और कुरितियां-कमियां नजर आयी उसके प्रति विरोध प्रकट किया।

7. **समकालीन कहानी : स्त्री विमर्श -** समकालीन कहानी में नारी व्यक्तित्व को खुलकर प्रस्तुत किया है। उच्च वर्गीय, मध्यवर्गीय, निम्नवर्गीय नारी स्थिति को सिर्फ अबला ही नहीं सबल रुप में दिखाया। इस कहानी ने स्त्री के दूसरे पक्ष/रुप को भी दिखाया, जो पर - पुरुष प्रेम को बुरा नहीं मानती, अपने भविष्य के लिए मातृत्व सुख को भी नजर अंदाज करती है। विवाह पूर्व या विवाह उपरांत पर पुरुष से यौन संबंध बनाने में संकोच नहीं करती। समकालीन कहानी में हर वर्ग स्त्री के संघर्षो, पीड़ाओं, सकारात्मक, नकारात्मक दोनों रुपों को स्पष्ट : चित्रित किया है।

उपरोक्त कारणों से ही समकालीन कहानी की खास पहचान बनी है। यही वजह रही है कि 'कहानी को फिर कहानी की तरह लिया जा रहा है कोई वाद या नारा नहीं दिया गया। आठवें दशक की कहानी की पहचान 'समकालीन कहानी के नाम से पहचानी जा रही है।[2] इन कहानीकारों में मालती जोशी की पिया-पीर न जानी, पंख तोलती चिड़िया, कहानियां सामाजिक, पारिवारिक वातावरण एवं स्त्री जीवन के संघर्षो को व्यक्त करती

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला-उमरिया (म.प्र.) भारत

है। असगर वजाहत की कहानी किरच-किरच लड़की, बेरोजगारी के चलते युवाओ में किसी भी प्रकार की नौकरी करके जीवन यापन करने को मजबूर जिससे वह संवेदनहीन हो लड़की एक डमी (लकडी का बूत) में परिवर्तित होने को दिखाया है। नासिरा शर्मा की कहानी अपनी कोख, चित्रा मुगदल की प्रेतयोनि कहानी, मृदुला गर्ग की कहानी अब तक विमलाएं, स्त्री के सशक्त रुप को दिखाती है।

निष्कर्ष – समकालीन कहानी ने अनेक सोपनों को पार कर अपना एक नया आयाम बनाया है, और इन्हीं आयामों में चित्रित किया है। यह कहानियां मानवीय संवेदनाओं का विपुल भण्डार है। समाज से जुडी हुई कहानियां है, क्योंकि इसमें समाज के निचले स्तर से लेकर उच्च स्तरीय लोगों के जीवन का रुप दिखाई देता है। मानवीय जीवन के मन-मस्तिष्क में चलने वाले भावों एवं संवेदनाओं के बढ़ते-घटते क्रम को, स्वार्थ निस्वार्थ के कारण बनते-बिगडते रिश्तों के जाल को आम-आदमी के संघर्षो को, जात-पात के खेल एवं दलित-जीवन के उतार-चढ़ाव को, समाज में नारी अधिकारों व उन्नति के खिलाफ होते विरोधी स्वरों को तो कभी इन्हीं अधिकारों के लिए नारी की बुलंद होती आवाज आदि को कहानियों में दिखाया गया है। यह कहानियाँ विभिन्न वर्गो का प्रतिनिधित्व करती है, विभिन्न धर्म, जाति, प्रांत-भाषा एवं सम्पूर्ण भारतीय समाज की तस्वीर दिखाती है। यह भारतीय समाज की व्यवस्था और मानवीय जीवन की गुणवत्ता को बेबाक ढंग से प्रस्तुत करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी कहानी : परंपरा और प्रगति – डॉ. हरदयाल पृ.सं. – 179
2. बीसवीं सदी के अंत में हिन्दी कहानी – डॉ. नीरज खरे, पृ. सं. – 210 से पुन: उद्धर्त।
3. कहानी : स्वरुप और संवेदना – राजेन्द्र यादव, पृ.स. – 45

****

सामाजिक परिवर्तन में मीडिया की भूमिका

डॉ. एस. एस. राठौर *

प्रस्तावना – प्रत्येक समाज की अपनी एक संरचना होती है। अपने व्यवहार प्रतिमान होते है और सामाजिक कार्यो को सम्पादित करने की विभिन्न विधियॉ होती है। इस संरचना, व्यवहार प्रतिमान तथा कार्य विधियों में सदैव परिवर्तन होता रहता है। इसी प्रक्रिया को हम 'सामाजिक परिवर्तन' कहते है। मीडिया सामाजिक ढाँचे को बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देती है। संविधान का अनुच्छेद 19 धारा 1(अ) इसे अपने विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देता है। लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ होने के कारण मीडिया का यह दायित्व है कि वह अपने अधिकारों को उचित ढंग से प्रयोग करें। उनकी जिम्मेदारी और अधिक बढ़ जाती है क्योंकि उन्हीं के पास जनता के मतों को आकार देने की सामर्थ्य होती है। मीडिया एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी बात को समाज के लोगों तक आसानी से पहुंचाने में सक्षम होता है।

मीडिया का उद्देश्य एक बड़े जनसमूह तक पहुंचना एवं मूक जनता की आवाज बनना है। यह 'मीडिया' शब्द पहले किताबों व समाचार पत्रों के लिए ही प्रयोग किया जाता था, जिसे प्रिंट मीडिया कहते थे। तकनीकी विकास के साथ मीडिया का स्वरूप बदलता चला गया। अब रेडियो, टेलीविजन, फिल्म, इन्टरनेट सभी मीडिया के महत्वपूर्ण घटक बन गए है। मीडिया वर्तमान परिपेक्ष में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए समाज को सुदृढ़ बना रहा है।

प्रिंट मीडिया अत्यन्त प्राचीन समय से ही जनचेतना व सामाजिक परिवर्तन में अपना योगदान दे रहा है। प्रिंट मीडिया के अंतर्गत आने वाली पुस्तकें, समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ तथा सामाजिक पुस्तिकाएँ सभी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। 'रोजगार' समाचार पत्र तथा समाचार पत्रों में प्रकाशित होने वाली विज्ञप्तियाँ समाज के बेरोजगार लोगों को रोजगार दिलाने में बहुत सहायता करते है। विभिन्न प्रकार के विज्ञापन लोगों को उनकी रूचि व आवश्यकता के अनुसार उचित वस्तुओं के चयन में सहायता प्रदान करते है। इसके साथ ही सामाजिक पुस्तिकाओं व समाचार पत्रों में विभिन्न प्रकार की सामाजिक योजना के विषय में भी जानकारी दी जाती है। इन योजनाओं में मुख्य रूप से 'अटल पेंशन योजना', 'प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना', 'सांसद आदर्श ग्राम योजना,' 'बेटी बचाओ-बेटी पढाओ', 'रक्षा-बंधन सामाजिक सुरक्षा योजना', 'जन धन योजना', 'स्वास्थय सुरक्षा योजना' आदि आती है। इन सभी योजनाओं के विषय में समाचार पत्रों से मुख्य जानकारी प्राप्त हो जाती है और इससे सामान्य जनता भी इन योजनाओं का समुचित लाभ उठा पाती है। इसके साथ ही समाचार पत्रों से समाज में रह रहे व्यक्तियों की भिन्न-भिन्न प्रकार की मानसिकता का पता चलता है और व्यक्ति अनैतिक कार्यो समाज में रह रहे व्यक्तियों की भिन्न भिन्न प्रकार की मानसिकता का पता चलता है और व्यक्ति अनैतिक कार्यो के विरूद्ध आवाज उठाने हेतु अपनी सोच को परिष्कृत रूप प्रदान करने का प्रयास करता है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर प्रकाशित होने वाली साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक तथा वार्षिक पत्रिकाएँ लगातार समाज को परिवर्तित करने का कार्य करती रहती है। इन पत्रिकाओं में कुछ विशेष रूप से महिलाओं के लिए ही होती है जैसे- गृहशोभा, वनिता आदि। ये पत्रिकाएँ उन्हें उनके जीवन के विभिन्न पहलुओं के विषय में जानकारी प्रदान करती है , जिससे वह एक सफल गृहिणी, कुशल कार्यकारिणी व जिम्मेदार नागरिक बन सके तथा 'समाज की अर्द्धशक्ति' के रूप में प्राप्त सम्मान को सिद्ध कर सके।

तकनीकी विकास के साथ बदलते मीडिया के स्वरूप को 'इलेक्ट्रानिक मीडिया' कहा गया। इसके अंतर्गत रेडियो, दूरदर्शन, इंटरनेट व डॉक्यूमेंट्री फिल्म आदि समस्त इलेक्ट्रॉनिक साधन आते है, जो समाज को अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से परिवर्तित करने की सामर्थ्य रखते है। रेडियो का प्रयोग काफी समय पूर्व ही प्रारंभ हो गया था। उस समय रेडियों ही एक सशक्त माध्यम था, जिससे लोगों को विभिन्न प्रकार की जानकारियॉ मिलती थी। मनोरंजन का भी एक मात्र साधन रेडियो ही था। सामान्य कार्यक्रमों में धर्मप्रधान, संस्कृति प्रधान, व्यवसाय प्रधान एवं मनोरजन प्रधान कार्यक्रमों का प्रसारण होता था तथा शैक्षिक कार्यक्रमों में बी.बी.सी.लंदन से प्रसारित अंग्रेजी पाठो का प्रसारण एवं आकाशवाणी से अनेक भाषाओं के शिक्षण के कार्यक्रम का प्रसारण हो रहा था। अशक्त हो चुके इस जनसंचार के सधान को पुन: सशक्त करने हेतु वर्तमान समय में प्रसारित 'मन की बात' कार्यक्रम अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इससे समाज का प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को प्रधानमंत्री से जुड़ा महसूस करता है व उनकी प्रेरणादायी बातों पर विचार कर आत्मसात करने का प्रयास करता है। यही कारण है कि इस कार्यक्रम को प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों को सुनाने की प्रथा प्रारंभ हुई है। इससे समाज में बहुत परिवर्तन आया है। जनसंख्या नियंत्रण, परिवार नियोजन तथा धूम्रपान निषेध जैसे सरकार द्वारा जनहित में जारी सूचनाओं का प्रसारण भी लोगों को अपने व्यवहार को परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है।

टेलीविजन मीडिया के सभी साधनों में सबसे सशक्त माध्यम है। दूरदर्शन प्रत्येक आयु वर्ग जैसे बच्चों, युवाओं, प्रौढ़ों व वृद्धों को उनकी रूचि का चैनल उपलब्ध कराता है, इसी कारण यह सामाजिक परिवर्तन का प्रभावी माध्यम है। साथ ही सरकार द्वारा प्रसारित 'मतदान के लिए जागरूक हों' व 'जागो ग्राहक जागो' से जनता को अपने अधिकारों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। समय समय पर प्रसारित होने वाली डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म लोगों को प्रेरित करने में अपनी भूमिका निभाती है। टेलीविजन पर प्रसारित धार्मिक कार्यक्रम समाज के लोगों को स्वयं से जोडकर उसे सबसे

* प्राध्यापक (हिन्दी) छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.) भारत

अधिक प्रभावित करते है। ऐसे कार्यक्रम व्यक्ति को सकारात्मक दृष्टिकोण प्रदान करते है, जिससे उसकी सोच परिष्कृत व उच्च कोटि की हो जाती है। इन कार्यक्रमों को देखते हुए व्यक्ति अपने आदर्श को .... स्वयं विचार कीजिए' कहते सुनकर अनायास ही विचार करने के लिए प्रेरित हो जाते है।'स्वच्छ भारत अभियान' जैसे विशेष कार्यक्रमों से अपने आदर्श एवं विशेष व्यक्तियों को जुडे देखकर प्रेरित होते है। इससे उनमें जागरूकता व सहभागिता की भावना जागृत होती है। इस तरह टेलीविजन ने सामाजिक परिवर्तन में बहुत योगदान दिया है।

इंटरनेट ने तो सामाजिक परिवर्तन में मानो क्रान्ति ही ला दी है। बच्चे विभिन्न प्रकार की जानकारियॉ इससे प्राप्त करते है, जो उनके मानसिक विकास में सहायक होती है। अब सूचना प्राप्त करने में घंटो, दिनों, महीनों का इंतजार नहीं करना पड़ता। वह हमें एक 'क्लिक' से प्राप्त हो जाती है। युवा पीढ़ियों में सोशल नेटवर्किंग साइट का बहुत अधिक बोलबाला है। प्रत्येक व्यक्ति के हाथ में एक ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा समाज के बड़े भू-भाग को प्रभावित किया जा सकता है। फेस बुक, यू-टयूब, व्हाट्स एप एवं ट्वीटर आदि ऐसी अनेक सोशल नेटवर्किंग साइट्स है, जिससे समाज का एक बड़ा हिस्सा जुड़ा हुआ है। इन सभी गुणों के बावजूद मीडिया के कुछ ऐसे दोषी है, जो समाज में नकारात्मक परिवर्तन लाते है। कई बार समाचार पत्र व चैनल प्रतिस्पर्धा के कारण अपने अधिकारों का गलत प्रयोग करते है। विशेष व्यक्तियों के व्यक्तिगत जीवन में आवश्यकता से अधिक हस्तक्षेप करते है। कई बार मीडियाकर्मी घटनाओं में जोड़ तोड़ करके उसे दिखाते है। राजनीतिक पार्टियो में स्थान पाने लिए मीडिया हाउसेस के उच्च सम्पादक भेदभावपूर्ण नीति को अपनाते है और सामाजिक परिवर्तन को नकारात्मक दिशा प्रदान करते है। सोशल नेटवर्किंग साइट का नकारात्मक रूप आसानी से से समाज में परिलक्षित हो जाता है। समाज में महिलाओं के साथ होने वाले अन्यायों को रोकने, समाज के भावी निर्माता युवा पीढ़ी को अधंकार के गर्त से निकालने के लिए इस प्रकार की साइट्स पर प्रतिबंध लगा देना चाहिए।

इस प्रकार मीडिया समाज के हर क्षेत्र को स्पर्श करता है। वह समाज में सकारात्मकता का प्रचार करता है एवं जागरूकता फैलाता है। अत: विभिन्न 'मीडिया हाउसेस' एवं समाचार पत्रों के उच्च अधिकारियों को समाज एवं राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों का समझना होगा, जिससे समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Works Of Sushen Ghosh - Through The Eyes Of A Viewer

Dr. Pinak Pani Nath *

History always constitutes the relation between present and its past, we accept this relation through our own observation of people, gestures, faces and traditions. This is happenings because we still live in a society with social relations and moral values (Berger, 1972). Thus, the study on the works of Sushen Ghosh is based on that relation, but is not an attempt to say various things about historical extensions or to compare and criticize the features of different phases of art history, but it is focused on the great and quality sculptures of Sushen, which makes significant for contemporary Visual Arts. Sushen Ghosh is a well-known eminent artist of recent time, who was born in 1st May, 1940s at Srihatta (Present Bangladesh) and then later his family shifted to Silchar. He left Silchar for Shantiniketan to study the Fine Arts at Kala Bhavana, Visva-Bharati, from 1959 to 1963.Though he never met Rabindranath Tagore, but deeply rooted his ambiances as a life-giving force (Nandi, 2014).

Tagore was influential educationist and founder of the holistic experimental University, Visva-Bharati situated in West Bengal. Sushen was privileged to study in this University with the scholarship provided by Assam Government. Tagore never rejected modern science and technology at Santiniketan, adapting modern educational methods in the University environment. These advanced thoughts of Tagore have seen in the works of Sushen, as he got these eclectic notions through the tradition of Kala Bhavana. When Sushen has completed his course from Kala Bhavana, he was joined as a faculty member in the same department; he was a direct and devoted student of Ramkinkar Baij.Ramkinkar's associations with Deviprosad Roy Chowdhury, Kramrisch, Austrian Lisa Von Pott and Margaret Milward as well as Ramkinkar's fascination with the works of Edouard Lanteri, Emile-Antoine Bourdelle and Rodin is transformed to Sushen Ghosh, when he was student at Kala Bhavana (Mitter, 2007).Rodin's personality and his way of representing figures, especially full figures and portraits had influenced the Ramkinkar's thought, which gradually shifted to the works of Sushen as well (Champigneulle, 1967).

Since 1969 to1970, Sushen was in London for Advance Diploma at Goldsmith College of Art. His exposure to a wide range of original art in Tate Gallery of British Museum and his close proximity with a certain main section of modern art that rated the abstract over figuration, but his journey of abstract art had started from Santiniketan itself, especially with the works of Ramkinkar Baij and later with the Sankho Chaudhuri as well.Ramkinkar Baijwas a path braking sculptor who broke the conventional sculptural styles inIndia, which always reflects throughout his sculptures, those mostly appealed to Sushen Ghosh.The teachers of Kala Bhavana were always pointing out the abstract pictorial qualities intrinsic to the language of art in different mediums. In this regards Nandalal Bose would speak about the rhythm as the guiding principle of art. Ramkinkar Baij described about the artistic freedoms and Benode Behari highlighted the architectonic and tension as the two important aspects in art. The Kala Bhavana's pedagogy includes the craft traditions and functional arts, which includes regular design practice in the areas of textile; stage-decoration, mural and floor designs (known as *Alpona* in West Bengal) nurtured a sense of abstract and shaped its broader aesthetic ideas.

During Sushen's study at Goldsmith, he was motivated to see the Constructivist and Minimalist works of Theo Van Doesburg, Kenneth Maartin, Max Bill, Constantin Brancusi,Jean Arp, Noam Gabo, Anton Pevsner and others.But, Brancusi's précised geometrical simplicity frequently influenced to Sushen's art works. In early 1970; Ben Nicholson and Barbara Hepworth were the chief exponents of abstract sculpture in Great Britain, which equally inspired the young Sushen. His years at Goldsmiths helped him to gather experience in different materials and when he returned to Kala Bhavana,Ghosh's practice witnessed a great transformation (http://www. artnewsnviews. com: 20/11/16). Constructivist's works are the first and foremost expression of a deeply motivated belief that the artist could contribute to improve the physical and intellectual needs of the society by entering directly into a relationship with machine production, architectural engineering and with the graphic and photographic means of communication. These intellectual thoughts of constructivists have influenced the works of Sushen in many ways, which in present days we can see in the environment of Visva-Bharati.

All art is expressive and is intended to move us through

*Assistant Professor (Visual Art) Banasthali University, Banasthali (Raj.) INDIA

visual gestures that transmit emotions and emotionally charge messages (Stangos, 1974).Investigation and the quest for identity continued after the demise of the Progressive Artists Group, but it has presently become the quest with a difference. In the year 1960, Indian artists were engaged to assimilate the roots of western art to forge a new visual language (Khanna and Kurtha, 1998). It is also worth to mention as Sushen Ghosh contemplates for a new vocabulary for his applications of human intelligence by the interaction within and beyond.When Benode Behari Mukherjee lost his vision, still he took some classes in Art History where Sushen assisted some of the classes with Benode Behari, which makes him intellect and more concrete (Mukherjee, 2006). There is hardly any artist in India with the great enthusiasm, like Ramkinkar. He gave true lesson and example for all the artists and especially to Sushen. It is true that intelligence cannot eliminate all doubts of artists, but it may minimize the vagueness between artist and the area of his thrust. That is exactly happened with Sushen Ghosh during his stay at London when Sushen's direct contacted with the grand narrative of the abstract arts of the west which helped him differently, to compare with his contemporaries. Sushen's search for new artistic expression could not be meaningful if its relation with the existing expression has not been examined and discussed. Any art works is never conducted in a vacuum and an attempt should be made to find out what has already been done with the existing work for the search of new, which is exactly done by the Sushen Ghosh throughout his expedition. Notion is an important element of Sushen's art works and thus a very ordinary or rudimentary type of works done by the Sushen is the basis on primary assumption, which is used consciously or unconsciously (Basotia and Sharma, 1999).

Sushen's exercise has been a continuous struggle with art, nature and society. Regarding struggle,Sushen is very much keen about observation, which is involves three processes-sensation, concentration and perception. The combination of great physical alertness and simplicity helped to grow the sensation of art within Sushen in a very positive way for his excellency. Concentration which is largely a matter of will-power which developed within Sushen through self-training and experience and now it is almost impregnated into Susen's life.Will-power is the basic component of sushen's art practice which also reflects through his art works. The third is the perception which comprises the interpretation of sensory reports, which continuously happenings with Sushen's sensitivities (Saravanavel, 1987).

Monumentality in the Sushen's Sculpture is not about largeness but suggests extension into space or into distance, conveying a sense of infinity. His splintered, geometric, constructive and concrete forms, primarily explored the time, space and immensity. His works are informed by science, philosophy, religious and music. Ghosh's involvements into learning to play the flute, reading the Upanishads and Tagore poetry and his continued interest in physics, Ghosh's art practice progressed towards an abstraction (www.cimaartindia.com : 20/11/16).Physics is a natural philosophy and human being learned many things merely by observing the nature. The curiosity of human being regarding learning is as old as his existence. Sushen's creative venture of abstraction is the natural philosophy of physic (Naik, 2001). In this diverse world, music plays the role of a vital link which provides bridge between different cultures and it speaks a type of common language, which could positively change the will and character of the people for life worth living. Therefore, Sushen might use these aesthetical aspects of music into his visual language(Patnaik, 1992).

Abstract art exists in varying degrees and forms. Mostly abstract art is filtered from nature and society; from the starting point to the real world. The artist selects the form and then gradually simplifies its forms into the image which bears only formal similarities with the original. Art is a spiritual function of artist, which aims at freeing him from life's confusion (Moszynska, 1990). Sushen Ghosh, among many others was, established new ways of communication which shaped drastic change in Indian art history and more especially in sculpture. In the works of Sushen an amalgam of eastern philosophy and western beliefs helped to create new routes for exploring abstract ideas. The representation of Sushen's own materials or the process of its construction the sculpture depicts its own autonomy. Autonomy of art works remains irrevocable in Sushen practice. His art works can be understood only by its laws of movement or association,his art exists in relation with others (Adorno, 1997).Therefore abstract principles of mathematics and geometry are nicely molded by him throughout his sculpture.Sushen is interested in the nature of mathematics and his understanding of nature of mathematics helped him to understand his present as well as earlier reactions to the subject. N.A. Court, said that *"Mathematics has given the human race not only the technical tools to bend nature to its uses, not only a great and unequalled storehouse of intellectual beauty and enjoyment, but it also has given mankind a faith in itself and its destinies, hope and courage to carry on this increasing struggle for a better more noble and beautiful life"* (Kapur, 1973).

Sushen's childhood desires and memories lied on in unconscious life, even if they have been erased from his consciousness, but these all reflects within his works. Sushen has traced psychoanalysis in academically, practically, historically and traditionally, which allow him to understand the queries throughout his art practice. The unconscious can be defined in several different ways, but it is primarily the storehouse of desires and needs. The way we see things is affected by what we know or what we believe and that is effectively found in Sushen art practice as well(Thurschewell, 2000). Sushen's large, minimal sculptures are the part of Visva-Bharati's environment, his post minimal sculptures are often existing today only in

photographs and drawings.Post-Minimal aesthetic operated on an enormous scale, not only far beyond the confines of the gallery but far away from the art world. Sushen's geometric forms are loaded with powerful passionate issues. His geometric forms are emphasized conceptual rather than emotional context (Davies et al., 2004).

Here,before going to end this little discussion on Sushen, it is required to say that now Sushen Ghosh lives and works in Santiniketan.At the present time number of artists, critics, curators and research scholars are doing and exploring the unexplored questions related to Sushen. In future, the effort of these researchers will definitely provide the new direction and the new tools to find out the Sushen's great ventures.

References:-

1. Adorno, T., *"Aesthetic Theory",* Continuum, London, 1997, pp.1-3
2. Basotia, G.R. and Sharma, K.K., *"Made Simple Research Methodology",*Mangal Deep Publications, Jaipur, 1999, pp. 1-25
3. Berger, J., "*Ways of Seeing*", Broadcasting Corporation and Penguin Books Ltd, London, 1972, pp.11-14
4. Champigneulle, B. *" Rodin",* Thames and Hudson Ltd, London, 1967, pp.121-169
5. Davies, P. J. E., Denny, W.B., Hofrichter, F.F., Jacobs, J., Roberts, A. M., and Simon, D. L., *"Janson's History Of Art, The Western Tradition",* Pearson **,** London, 2004, pp.1056-1059
6. http://www.artnewsnviews.com:20/11/16
7. Kapur, J.N., *"The Nature of Mathematics",* Ram LalPury, Delhi, 1973, p.13
8. Khanna, B. and Kurtha, A., "*Art of Modern India*", Thames and Hudson, London, p. 24
9. Mitter, P. *" The Triumph of Modernism, India's artists and the avant-grade, 1922-1947",*Reaktion Books Ltd, London,2007 ,pp.65-96
10. Moszynska, A. *"Abstract Art",* Thames and Hudson Ltd, London, 1990, p.7
11. Mukherjee, B. *"Chitrakar: The Artist",*Subramanyam, K. G. (Translated and Introduced), Seagull Books Private Limited Calcutta, 2006, p. xv
12. Naik, P.V. *"Principle of Physics",* Prentice-Hall of India Private Limited, New Delhi, 2001, p. xv
13. Nandi, Dr. G., *"The Fine Arts of Barak Valley in the light of Rabindranath's Artistic Aura",* Islam, Dr. M. (ed.), *Intellection, Bi-Annual Interdisciplinary Research Journal, Vol-II, No-II,* Barak Education Society, Silchar, Assam, 2014, p. 3
14. Patnaik, P., *"Music and Society, Multicultural Issues"*, Commonwealth Publishers, New Delhi 1992, pp. 1-4
15. Saravanavel, P., *"Research Methodology",*KitabMahal, Allahabad, 1987, p.142
16. Stangos, N.(ed.), *"Concepts Of Modern Art From Fauvism To Postmodernism",*Thames and Hudson, Ltd London, 1974, pp. 30-160
17. Subramanyan, K.G. *"Moving Focus, Essays On Indian Art",* Seagull Books, Private Limited Calcutta, 1978, p.102
18. Thurschewell, P., *"Sigmund Freud",* Rutledge, London, 2000, pp.2-8
19. www.cimaartindia.com : 20/11/16

Outdoor Sculpture in Front of Sangit Bhavana, Visva-Bharati University, Medium - Terracotta

****

किरन सोनी गुप्ता की कला यात्रा

डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला * कोमल लुहाच **

प्रस्तावना – कला मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति है या यों कहे कि कला मानवीय भावनाओं को एक सूत्र में बांधने का माधयम है। 'सम्प्रेषण हेतु उपयुक्त भावनाएँ वही हैं, जो साधारण और सार्वभौमिक हों, मानव कल्याण से सम्बन्धित हों। कला हृदय की भावनाओं को रेखा रंगों, ध्वनि, शब्दों एवं शारीरिक भाव-भंगिमाओं द्वारा हृदय में पहुँचाने का माधयम है। इस प्रकार से मानव से मानव में भावनाओं को संचारित करना ही कला है।'[1]

'कला की अनुभूति विश्व तथा प्रकृति के हर कण से होती है। लहलाते वृक्ष, कलख करते पक्षी, कल-कल निनदिनी सरिता, कोयल की कूक, फूलों का मुस्काना, गरीब की आह और मानव की कराह, ये सभी तो संवेदना प्रदान करते हैं, कलाकार को। उसकी यह अनुभूति ही कभी मधुर स्वर में झंकृत होती है, तो कभी शब्दों की नौका में तैरती है तो कभी तूलिका तथा रंगों के माधयम से वह फलक पर उभरती है।'[2]

'राजस्थान की समसामयिक कला में सौंदर्यबोध, कलाभिव्यक्ति तथा रचनाधर्मिता के प्रति कलाकारों की रूचि काफी समृद्ध हुई है। वे अब किसी शैली मात्र का अनुसरण न करके, अपनी निजी संवेदनाओं के साथ तकनीक और माध्यम के औचित्य को सही विस्तार देने का प्रयत्न करते महसूस होते हैं।'[3]

किरन सोनी गुप्ता एक ऐसी चित्रकार है। जिन्होंने दृश्य चित्रण, लोक चित्रण तथा अपने आस-पास के माहौल के विषयों को चित्रित करने का प्रयास किया है। किरन सोनी गुप्ता जी ने सृजन और प्रदर्शनी से लगातार जुड़े रहने से कला जगत में अब तक एक लम्बी दूरी तय कर ली है और अपना एक विशेष स्थान बना लिया है।

किरन सोनी गुप्ता का जन्म 22 जून, 1960 में पंजाब के लुधियाना प्रांत में हुआ। 'किरन सोनी गुप्ता का भारतीय प्रशासनिक सेवा में चयन वर्ष 1985 में हुआ है तथा वे हमेशा से शिक्षा में अव्वल रही हैं। अग्रेंजी में ऑनर्स व मास्टर्स अंग्रेजी साहित्य में अव्वल अंकों से उर्त्तीण किया। इन्होंने मैक्सवैल तथा हावर्ड कैनेडी, यू.एस. स्कूल में भी अध्ययन किया है।'[4]

बाल्यकाल से ही प्रत्येक बालक में कोई न कोई प्रतिभा अवश्य होती है और उसे पहचानने की प्रतिभा भी प्रत्येक बालक में होती है। किरन सोनी गुप्ता को कला प्रेरणा अपनी बड़ी बहन से मिली। 'कला और प्रशासनिक दक्षता का संगम कभी-कभार ही देखने को मिलता है, मगर जिन लोगों ने हिन्दी का लजई उपन्यास पढ़ा हो वे जानते होगें कि इसके लेखक श्री लाल शुक्ल एक आई.ए.एस. अधिकारी थे, बीते कुछ समय से ऐसा ही नजारा कला प्रेमियों को देखने को मिल रहा है।'[5] परन्तु किरन जी द्वारा तूलिका तथा रंगों के माध्यम द्वारा कड़वी सच्चाईयों वाली जिम्मेदारी तथा कोमल कल्पनाओं को अभिव्यक्ति दी गई है।

'किरन जी का कला क्षेत्र में समाहित होना उनके लिए महत्वपूर्ण साबित हुआ जैसे कि उन्होंने मानवता के सभी पहलुओं को अच्छे तरीके से समझा और एक सकारात्मक सामाजिक एवं राजनैतिक बदलाव लाने में सहायक रहा। कला के क्षेत्र में जुनून रखने से उन्हें प्रशासनिक मुद्दों एवं समस्याओं को समझने में काफी सहायता मिली। इसी तरह उनका प्रशासनिक अनुभव उनके कला के क्षेत्र में देख सकते हैं। उनकी संवेदनशीलता अपने लोगों के लिए और समाज के लिए सभी को पंसदीदा बनाती है। इन सभी ने उन्हें एक अच्छे इंसान और एक बहुत अच्छे प्रशासनिक अधिकारी के रूप में निखारने में मदद की हैं। वे कहती है-'मनुष्य की परिस्थितियों से मेरा सामना करना मेरे लिए कला के क्षेत्र में एक प्रेरणा का स्त्रोत बना। कला के टुकड़े पे काम करने से मैं कला को लेकर एक नये जोश और नये पहलू के साथ स्थापित हुई। मनुष्य की समस्याओं का विभिन्न तरीकों से समाधान ही एक सत्य है। मैं इसे एक सामाजिक कार्य कहती हूँ जिसको करने में कला ने मेरा साथ दिया।'[6]

किरन जी द्वारा विभिन्न कला शैलियों में कार्य किया गया है। तंजौर, यर्थाथ तथा अमूर्त शैलियों में किरन जी द्वारा चित्रण किया गया है। किरन सोनी जी द्वारा किसी एक शैली का अनुसरण न करते हुए स्वयं की कला-शैली विकसित की गई है। तंजौर चित्रकला दक्षिण भारतीय चित्रकला का एक महत्वपूर्ण पारम्परिक रूप है। तंजौर स्कूल के कलाकारों द्वारा किरन जी को इस शैली में प्रशिक्षित किया गया। किरन जी द्वारा तंजौर शैली में बनाई गई कलाकृतियों में भगवान श्रीकृष्ण को बनाया गया है। ललित कला अकादमी केरला तथा भारत भवन भोपाल द्वारा इन्हें सम्मानित भी किया गया।

किरन जी द्वारा बनाए यर्थाथशैली के चित्रों को देखकर 'सहसा राजा रवि वर्मा की याद भी ताजा हो उठती है। सद्य स्नान कर आयी युवती या फिर गंतव्य से घर लौटती आकृति, या फिर इंतजार करती राजस्थानी महिला और या चक्की चलाती और ऐसे ही दूसरे कार्य करती औरत के उनके चित्रों की रूपंकर दक्षता देखने वाले को मोहित करती है।'[7] किरन जी द्वारा वस्तुओं या प्राणियों के सादृश्य का विचार किए बिना रंगों, रेखाओं एवं ज्यामितीय आकारों की सहायता से कला निर्मित की गई है। इसके लिए अमूर्त शैली का प्रयोग किया गया है। अमूर्त शब्द अकारहीनता की और संकेत करता है। परन्तु फिर भी इन चित्रों का आकार तो होता ही है। किरन जी द्वारा यर्थाथ तथा अमूर्त शैली ने बनाऐ गऐ चित्रों में विभिन्न विषयों का अंकन किया गया है। विषय के अनुरूप नारी-चित्रण, व्यक्ति-चित्रण, प्रकृति-चित्रण,

* सहायक प्राध्यापक (दृश्य कला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** शोधार्थी (दृश्य कला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

सामाजिक-चित्रण किया गया है। रंग और उंमग से भरे चटख रंगों से सजे किरन जी के ये चित्र एक और जहां उल्लास से भर देते हैं, वही राजस्थान की नारियों के विभिन्न रूपों को दशाते हैं। किरन जी के चित्रों में राजस्थान की ग्रामीण महिलाओं के दैनिक जीवन के साथ-साथ उनके परिधानों तथा आभूषणों का भी बखूबी चित्रण किया गया है। व्यक्ति-चित्रण में ग्रामीण क्षेत्र के पुरूषों तथा महिलाओं को चित्रित किया गया है। प्रकृति-चित्रण में फूलों, बारिश, बर्फ के ढ़के पेड़ों तथा घरों एवं बारिश में पानी से भरी सड़कों में पड़ते प्रतिबिम्ब को चित्रित किया गया है। किरन सोनी जी द्वारा बनाए गए प्रकृति चित्रण को देखकर अविरल शान्ति मिलती है। किरन जी द्वारा बनाए गऐ ये चित्र रंगों के चुनाव और संरचनाओं के कारण बहुत पंसद किए गए हैं प्रकृति के विभिन्न रंगों तथा ऋतुओं को सृजित किया गया है। चयनित विषयों में सामाजिक चित्रण में ग्रामीण जीवन के विभिन्न परिदृश्यों को चित्रित किया गया है। इन सभी विषयों को किरन जी द्वारा विभिन्न माध्यमों द्वारा सयोजित किया गया है। किरन जी का पंसदीदा माधयम तैल रंग है। किरन सोनी गुप्ता द्वारा तैल रंगों के साथ-साथ विविध माधयमों में चित्रण किया गया। किरन जी ने तैल रंग, जल रंग, पेस्टल रंग, चारकोल, पेंसिल, स्टेन ग्लास; कांच चित्रण, कैलीग्राफी तथा प्रिंट में भी चित्रण किया गया है।

किरन सोनी गुप्ता के बहुमुखी रचना संसार में कला, लेखन तथा प्रशासनिक अधिकारी की प्रतिभा को देखा जा सकता है। इनके कला संसार के चित्रों में यर्थाथ रूप में चित्रित ऐसे बहुत से चित्र हैं, जिनमें ग्रामीण परिदृश्य देखने को मिलता है। जैसे work is workship (वर्क इज वर्कशीप) जिसमें एक ग्रामीण महिला को टोकरी बुनते दर्शाया गया है। Dancing to the Dunes (डांसिंग टू दा ड्यून्स) जिसमें रेतीले राजस्थान में ऊँट को नाचते हुए चित्रित किया गया है। इसके साथ ही अन्य और भी बहुत से चित्र है जैसे सोलिट्यूड, ए वै टू मैन्स हार्ट, दिस इज माई ऑन नेटिव लैण्ड जो राजस्थान की झलकियाँ प्रस्तुत करते हैं। अमूर्त चित्रों में भी कलाकार द्वारा राजस्थान के परिवेश तथा जन-जीवन को चित्रित किया गया है। डैर्जट वॉक, कन्यादान, राधा-कृष्ण, पुजा टाइम आदि अमूर्त रूप में चित्रित किए गए है। ज्यामितीय रूप में आकारों को रूप दिया गया है।

मानव इच्छाओं की सृजनात्मक अभिव्यक्ति कला है, संवेदना के स्तर पर यही हमें भीतर के हमारे सौंदर्यबोध से जोड़ती है। कलाकार जब कला के जरिए कोई अभिव्यक्ति कर रहा होता है, उस वक्त वह उस पल में अभिव्यक्ति दे रहा होता है, जिसे उसने अपने आस-पास के सामाजिक, प्राकृतिक तथा अन्य से ग्रहण किया होता है। किरन जी द्वारा कला के साथ-साथ लेखन कार्य में भी भावनाओं को अभिव्यक्ति दी है। इनके द्वारा बहुत सी पुस्तकें भी लिखी गई हैं। किरन जी ने महाराणा प्रताप पर भी एक पुस्तक लिखी है- 'महाराणा प्रताप ग्रेट सन ऑफ मेवाड़'। दी हिन्दू, इंडियन एक्सप्रैस, इक्नॉमिक टाइम्स और अन्य पत्रिकाओं द्वारा किरन सोनी गुप्ता पे लेख भी प्रकाशित किए हैं। किरन जी द्वारा एकल तथा सामुहिक प्रदर्शनियों का आयोजन किया गया। किरन जी को विभिन्न पुरःस्कारों से सम्मानित किया गया है। हैरानी तब होती है, जब एक प्रशासनिक अधिकारी का रूझान चित्रकारी की तरफ है। यह सोचकर सभी थोड़ा हैरान होते हैं तब इनके द्वारा बनाऐ चित्रों को देखते हैं तथा इनके बनाए चित्र सहज ही दर्शक का ध्यानअपनी और आकृर्षित करते हैं। किरन सोनी गुप्ता जी के चित्रों में उनकी कल्पनाओं को आकार दिया गया है। जिन अनुभवों को स्मृति रूप में संजोकर रखा है, उन रूपों को तुलिका तथा रंगों द्वारा अभिव्यक्ति दी है। किरन जी की चित्रकला, प्रदर्शनियों का अवलोकन विभिन्न कलाकारों तथा समीक्षाकों द्वारा किया गया है तथा उनकी राय इस प्रकार से है -

जतिन दास-किरन सोनी गुप्ता की चित्रकारी में संवेदना, तकनीक व सामाजिक विषयों की पकड़ काबिले तारीफ है। उनकी प्रतिभा का कोई सानी नहीं है।

मनुप्रकाश - राजस्थानी विषयों पर बनी उनकी पेंटिंग बहुत ही बेहतरीन है। रंगों का चयन बहुत कुशलता के साथ किया गया है।

प्रोफेसर एमली श्रीलंका - उनकी पेंटिग का विषय बहुत विस्तृत है साथ ही कला के प्रति उनका समर्पण काबिले तारीफ है। उनकी पेंटिग बहुत कुछ कहती है।

माईकल ईस्ट वेस्ट सैंटर हवाई - उनकी कला उनके व्यक्तित्व व उनके विचारों को दर्शाती है। पेंटिग बहुत ही बेहतरीन है जो कि संवेदनाओं का प्रतिबिंब है।

चिनमय मेहता, चैयरमैन राजस्थान ललित कला अकादमी- पांरपरिक और आधुनिक कला तकनीकों को सीखने में इन्होंने पूरी ईमानदारी से खुद को समर्पित किया है, एक कलाकार के रूप में इनकी उपलब्धियाँ अद्भूत हैं।

आर.डी. पारिख - इन्होंने बड़ी खुबसूरती से अपने अनुभवों को महिला के विषयों में चित्रित किया है। इनके स्याही चित्रण, ऐचिंग, लिनोकट और तैल चित्रण में संवेदनशीलता एवं स्वाभाविकता झलकती है। बिना किसी औपचारिक प्रशिक्षण के हर तकनीक से इतनी कुशलता पाना प्रंशसनीय उपलब्धि है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नरेन्द्र सिंह यादव- ग्राफिक डिजाइन/प्रकाशन-राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी,जयपुर/प्रथम संस्करण-2006, पृ. सं.-4
2. चमन, किरन- भारतीय चित्रकला का इतिहास, प्रकाशन- नवीन प्रकाशन प्रा0लि0 मेरठ प्रथम संस्करण, 2009, पृ. सं.-130
3 डॉ0 देवदत्त शर्मा-स्वर सरिता ;कला और संस्कृति को समर्पित मासिक पत्रिका वर्ष-6, अंक-5, नवम्बर, 2013, पृ. सं.-26
4 दैनिक नवज्योति-कैनवस पर साकार हुई धोरा-धरती जोधपुर, सोमवार, 29 सितम्बर, 2008
5 इंडिया टुडे-राजस्थान विशेष जोधपुर सीटी कमीशनर की कला, 15 अगस्त, 2007, पृ. सं.-22
6 दा टाइम्स ग्रुप-'फूट प्रिन्टस (किरन सोनी गुप्ता पॉवर पैकड आर्टिस्ट), प्रकाशन-संजीव कुमार, टोंक रोड़, जयपुर, प्रथम संस्करण, अगस्त, 2009 पृ. स.-5, 6
7 डॉ. राजेश कुमार व्यास- कलावाक्, प्रकाशन-नीतू राजेश्वर, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, संस्करण-प्रथम संस्करण-10 पृ. सं.-217

****

डॉ. मणि भारतीय की रचनात्मक अभिव्यक्ति - एक दृष्टि

प्रो. पुष्पा दुल्लर * अमिता देवी **

प्रस्तावना - 'राजस्थान की मरूभूमि का एक-एक कण कला और संस्कृति के सर्वमान्य गुणों से सम्पन्न रहा है।'[1] वर्तमान समय में राजस्थान की समसामयिक कला प्रयोगवादी दृष्टिगोचर होती है। राजस्थानी कला में आश्चर्यजनक विविधता के दर्शन होते हैं। प्रत्येक कलाकार अपनी व्यक्तिगत शैली, माध्यम एवं नवीन तकनीक अपनाता हुआ नजर आता है। आज सौंदर्यबोध और प्रयोगधर्मिता के प्रति कलाकार काफी सजग हैं, जिसके अन्तर्गत वह किसी शैली मात्र का अनुसरण न करके अपनी प्रयोगधर्मी नवीन तकनीकों द्वारा कला को नए आयाम देने में प्रयासरत हैं।

कलाकार एक संवेदनशील प्राणी है और डॉ. मणि भारतीय उनमें से एक हैं। ये अपनी संवेदनशीलता का अध्ययन गहराईयों तक करते हुए, कला की गहराईयों को समझने में सफल रही हैं। इस प्रक्रिया हेतु इनकी कल्पनाशक्ति एवं सृजनक्षमता अत्यधिक प्रभावित हुई। इसलिए इन्होंने अपनी प्रयोगधर्मी प्रवृत्ति हेतु कोलाज कला माध्यम में अपने भावों की अभिव्यक्ति की।

"Collage is the Twentieth Century's greatest innovation"- Robert Mothwell"[2]

'कोलाज शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच भाषा के **'कोले'** शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है चिपकाना।'[3] रंगीन कागज, रद्दी पेपर, व्यर्थ रंग-बिरंगे कपड़ों और अखबारों आदि को फाड़कर इस प्रकार चिपकाया जाता है कि सभी सामग्रियाँ एक-दूसरे में संयोजित होकर कलाकृति के रूप में दृष्टिमान होती हैं। डॉ. मणि भारतीय राजस्थान की समसामयिक कला क्षेत्र में **'कोलाज'** माध्यम द्वारा अपनी पहचान बनाने में सफल रही हैं। ये विलक्षण प्रतिभा की प्रयोगधर्मी कलाकार हैं। इन्होंने कोलाज माध्यम के अतिरिक्त अन्य माध्यमों में भी चित्र रचनाएँ की हैं, परन्तु अपनी मौलिक पहचान कोलाज माध्यम से ही बनाई है।

इनका मानना है कि कला में कोलाज माध्यम अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है, जिसमें कलाकार के अन्तर्मन के विभिन्न कलाभावों और उनकी मौलिक कल्पना की मुलायम उड़ान को सशक्त रूप से अभिव्यक्त किया जाता है। इनका जन्म राजस्थान के सवाई माधोपुर जिले के हिण्डौन नामक स्थान पर हुआ था। कला के गुण इन्हें विरासत में मिले। ये बचपन से ही रंगीन कागजों को पेपर पर चिपकाती थी। परन्तु तब ये कोलाज माध्यम से परिचित नहीं थी। चित्रकला में रूचि होने के कारण इन्होंने राजस्थान के विश्वविद्यालय के चित्रकला विभाग, जयपुर से स्नातकोत्तर किया। तत्पश्चात् सन् 1991 में यहीं से '**जयपुर रियासत के जैन मंदिरों का कला वैभव**' विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया। सन् 1992 में डूँगर कॉलेज बीकानेर में चिकत्रला विषय की प्राध्यापिका के रूप में सर्वप्रथम सरकारी नियुक्ति हुई। यहीं डूँगरपुर में रहते हुए ये प्राकृतिक सौंदर्य के प्रति आकर्षित हुई और अपने कलामय भावों को कोलाज माध्यम में अभिव्यक्त करना प्रारम्भ किया।

'चित्रकार सतत् अभ्यास के बल पर ऐसी प्रविधि एवं विधान को जन्म देता है जो उसके भावों, संवेदनाओं और अनुभवों के प्रकाशन में सशक्त माध्यम बन सके।'[4] इसी प्रकार कलाकार मणि भारतीय ने भी निरंतर अभ्यास एवं प्रयोगों के फलस्वरूप ही कोलाज माध्यम में अपने सौंदर्यात्मक कला भावों को प्रतिपादित किया।

कोलाज सृजन की प्रक्रिया निरंतर इनके मस्तिष्क में गतिमान रहती है। कभी-कभी अपनी कलाकृति को तीन घण्टे में पूर्ण कर लेती हैं तो कभी तीन दिन में पूर्ण करती हैं, क्योंकि यह समय कलाकृति के आकार पर निर्भर करता है। ये प्राकृतिक दृश्यों, काल्पनिक चित्र, यथार्थ चित्रण और समसामयिक घटनाओं आदि से प्रभावित होकर चित्रण करते हुए अपनी कला प्रतिभा को परिभाषित करती हैं।

हर कलाकर के चित्रण की एक निजी शैली होती है और उसी के अनुसार उसके चित्रों को उनकी विशेषताओं के अनुरूप पहचाना जाता है। कोलाज बनाने के लिए मुख्य उपकरण कैंची और गोंद हैं, परन्तु मणि भारतीय मैगजीन के रंगीन कागजों को अपनी सुविधानुसार हाथ से फाड़ते हुए गोंद की सहायता से शीट या कैनवास पर चिपकाती हैं। इनका मानना है कि कागज फाड़ना भी अपने आप में एक कला है। इनके द्वारा निर्मित कलाकृतियों में रंग और रेखाओं की एक विशेष महत्ता है। जब ये रंगीन कागज की कतरनों या टुकड़ों को चित्रतल पर चिपकाती हैं, तो वे उत्कृष्ट रूप में दृष्टिपात होते हैं, क्योंकि ये उन टुकड़ों को इस प्रकार फाड़ती हैं कि चिपकाने पर ये स्वयं ही रेखाओं का निर्माण करते प्रतीत होते हैं। इनके कोलाज माध्यम में सृजित कलाकृतियों में रेखाएँ, पेन, पैंसिल, ब्रश या रंग द्वारा निर्मित न होकर कृत्रिम रेखाएँ होती हैं, जो गतिपूर्ण, सरल, आड़ी-खड़ी, तिरछापन लिए होती हैं।

वर्तमान समय में डॉ. मणि भारतीय ने राजस्थानी समसामयिक कला में कोलाज माध्यम को ठोस आधार देने एवं आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इनके कलाकर्म को अनेकों बार राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर सम्मानित किया जा चुका है, जिसमें मुख्य रूप से राजस्थान के मुख्यमंत्री माननीय श्री अशोक गहलोत ने वर्ष 2003 में राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर द्वारा आयोजित कला में केन्द्रीय ललित कला अकादमी दिल्ली की ओर से दस हजार रूपये का पुरस्कार प्रदान किया और राजस्थान ललित कला अकादमी का वार्षिक कला पुरस्कार 2005 में मिलना आदि

* पूर्व डीन एवं विभागाध्यक्ष (विजुअल आर्ट) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** शोधार्थी (विजुअल आर्ट) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त भी इन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है।

इन्होंने देश में विभिन्न स्थानों पर अपनी एकल एवं सामूहिक कला प्रदर्शनियाँ लगाई हैं, जिसमें कलाकारों और कला समीक्षकों ने इनके कलाकर्म की सराहना की है। इसके अतिरिक्त देश–विदेश के विभिन्न संग्रहालयों में इनकी कला रचनाएँ संग्रहित हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्वर सरिता, वर्ष –5, अंक – 10, अप्रेल 2013, पृ. सं. 16.
2. www.artspace.com/magazine/art-101/art-market/art_101_collage-5622.
3. Kalajagat.blogpost.in/2011/07/blog-post.html.
4. डॉ. आर. ए. अग्रवाल – भारतीय चित्रकला का विवेचन, 2005, पृ. सं. 224.

****

ललित कला में लोककला की भूमिका (चित्रकला के संबंध में)

डॉ. यतीन्द्र महोबे *

प्रस्तावना - लोककला की समयावधि का अंकन स्पष्ट नहीं हो सका है लेकिन इस कला की परंपरा का रहस्योद्घाटन मोहन जोदड़ो एवं हड़प्पा की परंपरा से प्राप्त होता है। लोक कला पर चर्चा करने से पहले हमें 'लोक' शब्द के अर्थ को समझना अति आवश्यक है।' लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम नहीं है, बल्कि नगरों और गांवो में फैली हुई वह समूची जनता है, जिसके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं है।

इस तरह मनुष्य जो भी अपने आसपास देखता है, महसूस करता वह उसे अपने में पूरी तरह समाहित कर लेता है और इसी 'लोक में पारंपरिक रूप से बनाए जाने वाले चित्रों को लोकचित्र की संज्ञा दी जाती हैं, लोक चित्रों में वे सभी रेखांकन और अलंकरण समाहित है जो पर्व-त्यौहार, अनुष्ठान और संस्कार से जुड़े होते है।'

ये लोक चित्र लोक लोककारों द्वारा आंगन (गोबर) दीवार, कागज तथा अन्य माध्यमों में बनाए जाते है। लोक-चित्रों में जो रंगो का प्रयोग किया जाता है वह प्राय: पारंपरिक विधियों द्वारा तैयार किए जाते है। इन लोक-चित्रों में मानव आकृति के शारीरिक अनुपात तथा अन्य आकृतियों के अनुपात को ध्यान में नहीं रखा जाता, साथ ही इनमें प्राथमिक रंग लाल,पीला, नीला, हरा, काला और सफेद जो प्राचीन समय से प्रचलित है, प्रयोग होता है। पतली लकड़ी में बाल या रूई लपेटकर तूलिका के रूप में प्रयोग होता रहा है। आजकल तैयार ब्रुशों का चलन होने से सभी लोक चित्रकार आधुनिक ब्रुशों का इस्तेमाल करने लगे है। लेकिन अभी भी ग्रामीण महिलाएं या पुरूष चित्रकार स्व निर्मित तूलिका का प्रयोग अपनी चित्रकारी में करते है। ये लोक कलाकार मानव आकृति तथा अन्य आकृतियों के तकनीकी ज्ञान से अनभिज्ञ होते है, क्योंकि ये कला किसी शिक्षा पद्धति में शामिल नहीं है, बल्कि ये क्षेत्र विशेष के मांगलिक कार्यक्रम, विवाह, तीज - त्यौहार, जादू-टोना आदि में जन सामान्य के बीच अभिव्यक्ति का एक सरल व सहज माध्यम है। विशेष रूप से स्त्रियां लोक कला के अंतर्गत चित्रांकन कार्य विशेष प्रयोजन से करती है।

'लोक चित्रों के विषय धार्मिक, सामाजिक और आध्यात्मिक होते है। चाहे वह किसी भी क्षेत्र के लोक चित्र हों, इनके अंतर्गत लोक चित्रों में जो आकृतियां प्रयोग में लाई जाती है, वह प्राय: फूल - पत्ते, बेल, तुलसी, चक्र, शंख, स्वास्तिक, बिन्दु, रेखा, त्रिभुज, चतुर्भज, वृत्त, आड़ी-तेड़ी रेखाएं , हाथी, घोड़े, मयूर, तोता, नाग, बिच्छू, चिड़िया, पशु-पक्षी , वृक्ष आदि होते है। जो बड़ी सहजता पूर्वक लोक कलाकारों द्वारा बनाए जाते है। इनमें जो रंगो का प्रयोग होता है वह सपाट पद्धति में होता है।

'लोक चित्रों के पीछे कोई न कोई मिथक, मिथकथा या अनुष्ठान निहित होता है। यहां तक कि लोक चित्रों की आकृति रंग और रेखाओं तक के लिए कोई न कोई मिथ जुड़ा होता है। लोक चित्रों में बनाए जाने वाली आकृतियां यार्थत परख नहीं होती, वे प्रतीकात्मक होती है। इन लोक कलाकारों की पूरी जाति की जाति ही विकसित हो जाती है। ऐसे कलाकार पेशेवर होते है। वे चित्र बनाने के पैसे लेते है और पारंपरिक रूप से मिलने वाला नेग भी प्राप्त करते है। ऐसे जाति कलाकारों का समाज में भी बड़ा मान-सम्मान , प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। धीरे-धीरे ये लोक चित्र शैलियां इतनी शीर्ष पर पहुंचती जा रही है, कि वे आधुनिक चित्रकला के महर्षियों तक को प्रभावित करने में सक्षम होती है।'

भारतीय कला की उन्नति में लोक कला का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, चूंकि इसका विकास किसी राजाश्रयों के पेशेवर कलाकारों द्वारा नहीं हुआ बल्कि यह घरों के आंगनों में, ग्रामों में, अशिक्षित जातियों में, बिना कोई प्रसिद्धि के धार्मिक, सांस्कृतिक व पारंपरिक परंपराओं के साथ बिना बौद्धिक ज्ञान के आगे बढ़ती रही है।' कला का सबसे प्रमुख कार्य है, मानव को आत्मिक शांति प्रदान करना, इस कार्य में कला तभी सफल हो सकती है, जब उसके साथ दर्शक का सहयोग व भावनिक तादात्म्य हो सके। लोक कला का सबसे महान गुण यह है कि वह न केवल लोगों के धार्मिक कार्यो व उत्सवों में बल्कि दैनिक जीवन में भी घुल-मिलकर उनकी धार्मिक एवं मांगलिक भावनाओं व सौन्दर्य प्रियता की पूर्ति करती है। लोक कथाएं, पौराणिक कथाएं व वीर गाथाएं उनके सामने जीवन उपयोगी ज्ञान का भंडार खोलती है, वह प्रेरणा स्रोत होती है।'

आज इस लोक कला से शिक्षित कलाकारों, विद्वानों एवं कलामर्मज्ञों का साक्षात्कार होते ही कला क्षेत्र में एक नया पन्ना जुड़ गया। लोक चित्रकारी से चित्रकारों को बड़ी प्रेरणा मिली है। लोक कला पर आधारित नये प्रयोग आज के कलाकारों को अपूर्व सफलता की ओर ले जा रहे है। लोक कला स्वत: ही अपने सहज और निर्मल रूप में हमारे जीवन का एक अंग बन गई है। लोक कला के प्रकाश में आते ही इसकी विशेषता को कलाकार ने केनवास, कागज तथा कपडे पर अंकित करना प्रारम्भ कर दिया फलस्वरुप यह दर्शकों तथा कला मर्मज्ञों के बीज आकर्षण का केन्द्र बन चुकी है। यह भारतीय संस्कृति की आत्मा व भावात्मक एकता को सजाए हुए है। जिसका आधार सार्वभौमिक सुख समृद्धि तथा दीवारों तथा आगन पर बनाई गई आकृतियां ही नहीं वल्कि पुरुष कलाकारो के लिए भी अपनी कलाशैली मे परिवर्तन का माध्यम बनी है। भारत में मधुवनी, बंगाल उडीसा छत्तीसगढ मालवा ,बुन्देली असम आदि अंचलो मे बड़ी सुन्दता एवं आकर्षक रुप से अपना स्थान बनाये हुए है। लोक कला की ये भावमयी ये आकृतियां आज उपयोगी कला के रूप में भी दिनों-दिन अधिक लोकप्रिय होती जा रही है। वे साड़ी, लंहगा, चादर यहां तक की पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं के मुख्य पृष्ठों पर अंकित होकर अधिक-अधिक लोकप्रियता प्राप्त कर रही है।

आज ये लोक आकृतियां आधुनिक कलाकारों की प्रेरणा बनी हुई है।इन

* सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

आकृतियों को कलाकार अपनी कल्पना एवं विषय के अनुरूप प्रयोग कर प्रशंसा का पात्र बना बैठा है, तथा व्यवसायिकरण की दृष्टि से भी इस सरल एवं सहज रूप की मांग कहीं अधिक है। परंतु आधुनिक कलाकारों द्धारा लोक कला से प्रेरणा लेकर बनाई गई कृतियों में मूल शैली चेतन्य व प्रत्यक्ष जीवनानंद के दर्शन का अभाव दिखाई देता है। जिसके उदाहरण है, यामिनी राय की कालीघाट शैली से प्रेरित कृतियां व पिकासो की नीग्रो कला से प्रेरित कृतियां कलात्मकता के विचार से उत्कृष्ठ होते हुए भी वे मूल शैली की कृतियों के सामने सोची –समझी, कृत्रिम व केवल प्रतिभा प्रदर्शन लगती है। जब कलाकारों में विषय वस्तु के प्रति भक्ति भाव की जगह रचानात्मक समस्या का हल ढूंढने का प्रयास शुरू हो जाता है। तब कला की स्वाभागिता नष्ट होती है।

आज का कलाकार लोक कला की आकृतियों को अपनी शैली जरूर बना चुका है, लेकिन उसकी आत्मा को अपनी कलाकृति में उतारना बेहद कठिन है। लोक कला नव कलाकारों के केनवास पर चित्रित जैसे ही होती है वह लोक कला न रहकर उस कलाकार की शैली बन जाती है। कला कार लोक कला की आकृतियों को केनवास पर उतारकर उसमें मनचाहे रंग लगाकर नवीन प्रसास करने की कोशिश करता है, पर सफल नहीं हो पाता है। चूंकि लोक कला एक परंपरा है, एक प्रक्रिया है और वह जन सामान्य के बीच पनपती है। इसी के द्धारा आज भी हम समाज की परंपरा, सभ्यता एवं भावना एवं इत्यादि का इतिहास क्रमबद्ध रूप में पाते है।

यद्यपि आधुनिक कला लोक कला से प्रेरणा एवं गुण लेकर सम्पन्न तो हो रही है, परंतु दूसरी तरफ अपना प्रभाव लोक कला पर छोड़कर लोक कला के मूल्यों का पतन भी कर रही है। हमें देखना है कि आधुनिक कला के प्रभाव से लोक कला की मौलिकता एवं सादगी अक्षुण्ण बनी रहे।

हमारा बहुत बड़ा दुर्भाग्य रहा कि हमारी आधुनिक कला शुरूआत में पाश्चात्य कला को अनुकरण कर उसके पीछे भागती रही, और आज भी अधिकांश कलाकार बाजारीकरण के प्रभाव में आकर ऐसी कला का निर्माण कर रहे है, जो भारतीय संस्कृति, समाज व कला नियमों पर प्रश्न चिन्ह लगा रहे है। ऐंसे कलाकार लोक कला की आकृति को भी झकझोर रहे है, लेकिन हम कला मर्मज्ञयों को इन युवा कलाकारों को रोकना होगा, जो चंद पैसों के लिये हमारी कला संस्कृति को दांव पे लगाये हुये है,उन्हें सही दिशा दिखानी होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. लोक का प्रत्यक्ष दर्शन – सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति अंक।
2. लोक संस्कृति – बसंत निरगुणे – मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल – 2005।
3. चित्रकला एवं लोक कला, विविध आयाम – शेखर चंद्र जोशी – प्रकाश बुक डिपो, बरेली – 2009।
4. भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास– लोकेष चंद्र शर्मा, गोयल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ – 2005।
5. कला के अंतदर्शन – र. वि. साखलकर, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।

****

Women's Rights In India - Problems And Prospects

Chirag Banthiya *

Abstract - United Nation in its Millennium Summit in 2000 declared 'Gender Equality and Women Empowerment' as one among the eight 'Millennium Development Goal' to be achieved by the year 2016.. However these goals are far from being realized in a country like India. Infact often women in India are deprived of their fundamental right to dignity also, leave alone the question of gender parity. This article attempts to grapple with the few challenges faced by the women in India like the dowry, female foeticide, denial of inheritance rights, sale and trafficking of girls etc.

Keywords - Women's, Rights, Problems, Prospects, Empowerment, Challenges.

Introduction - Women emerged as a distinct interest group in the 19th century primarily because the bourgeoisie democratic revolutions of 17th and 18th century that excluded women from their concept of equality. This distinction was based on gender. Since then women as a commune had waged struggle for recognition of their rights as a human being. Women's execute multilateral role in the society i.e. as a breadwinner of her family, as a care taker of her family as a mother, wife, daughter and service provider to the society. In spite of the fact that the women's contribution to the country's development is equal to that of their male counterpart, still they experience a number of limitations that restrain them from comprehending their potential for expansion. It was against this background that the government's all over the world felt the need to prioritize the interests of women and their participation at every stage of the development process. Women as a core group of concern emerged as a major theme in the Millennium Development Goal. UN stated that 'Gender Equality and Women Empowerment' as one of the Millennium Development Goals to be attained by the year 2015.

Women's Rights Violations In India -

Dowry deaths - In India the unusual dowry deaths of the women at their matrimonial home has been increasing at a startling rate. Dowry disputes are quite a serious problem. The National Crime Records Bureau in India in its report had disclosed that in 2012 around 8233 newly wedded brides were killed for dowry. "The role of husband's reaction to dowry brought at the time of marriage on subsequent experience of marital violence". In spite of the fact that Section 498A of the Indian Penal code strongly deals with the person responsible for marital cruelty and has declared taking and giving of dowry as a crime it is still been widely practised in India. Infact 'The Dowry Prohibition Act' has not been adequately put into operation in India. It has been discovered that mostly a number of states neither have a Dowry Prohibition Officers nor do they made it obligatory to keep the record of things given and received.

Domestic Violence - In spite of the fact that in India we have 'Protection of Women from Domestic Violence Act 2005', domestic violence still remains a serious problem. Infact a major scale of violence that a woman is subjected to in India is linked to the domain of domesticity. The reasons for Domestic aggression are primarily ingrained in the patriarchal nature of the Indian society which supports such violence at home. Besides this the problem of alcoholics of husband or desire for endowments or a male child are some of the other factors liable for household brutalities in India. The domestic violence had taken the form of psychological and physical abuse against women like slapping, hitting, public humiliation, etc. In India the 'Dowry Prohibition Act and the Protection of Women from Domestic Violence Act and cruelty under Section 498 A of the

Indian Penal Code in 1983 declares brutality to a woman in her conjugal house a punishable and non bailable offence that can lead to a sentence of up to three years and fine.

Preference for a son - The preference for a son is a phenomenon which is historically rooted in the patriarchal system of the Indian society. The strong preference for having a son emerged with the transition of the Indian society from primitive stage which used to be primarily a matrilineal to feudal stage where agriculture emerged as the primary established occupation of the people to be controlled by the male. The desires for a son often have an adverse effect on the health of the mother also.

Female foeticide - The low status of women goes on with the practice of infanticide, foeticide, sex-selective abortion which has become common due to the amniocentesis technology, and mal-nourishment among girl children. In

* **Advocate, Ujjain (M.P.) INDIA**

India it is estimated that around "10 million female foetuses have been aborted in the last 20 years".

Education - Education is one of the most critical areas of empowerment for women. Although the right to education under Article 21 of the Indian Constitution have made it compulsory for the government to provide free education to everybody, the high rate of women's education is still a distant dream. In spite of the fact that Sarva Shiksya Abhiyan to an extent has been successful in bringing the girl child back to the schools, yet their retention rate in the school is lower as compared to their male counterpart. In fact it has been found that there is a gradual drop out of the girl students as they move up to the higher classes. This is particularly true in the rural areas in India. The main reasons associated with this is that the parents expects girls to look after the siblings while they are at work, working with the parents as seasonal labour during the cultivation period and managing the household work while the parents are at work, the parents take more interest in boys education as against the girls as they feel that the girls are to be married off, increasing cost of education etc. Thus the universalisation of primary education in India remains a remote daydream for the women.

Sexual harassment at the workplace - The initiative on a discourse on sexual harassment of women at their workplace in India started with Supreme Court's Vishaka guidelines in 1997. However it was the passage of the 'Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Bill 2013' that helped in translating these guidelines into concrete rules that are to be implemented. In India the women are discriminated against in terms payment of remuneration for their jobs. This is true for both urban as well as rural areas. Women entrepreneurs often have to deal with more complications in getting credits to start their independent business.

Rape - According to National Crime Records Bureau, in 2012, 25000 rape cases were reported. In India in the rural areas, particularly in Northern India, the upper caste people use mass rapes as a strategy to have power over the members of the lower caste groups. The brutal gang rape case in Delhi had led to the passage of a stricter Law i.e. The Criminal Law (Amendment) Act 2013 to deal with the rape cases in India.

Protection of Women's Human Rights by the Constitution of India - The constitution makers were well aware of the subordinate and backward position of women in the society. They made some efforts for uplift of women in our society. The state is directed to provide for maternity relief to female workers under Article 42 of the Constitution, whereas Article 51-A declares it as a fundamental duty of every Indian citizen to renounce practices to respect the dignity of women. Indian Parliament over the years have taken significant steps for through legislations to achieve the goal of empowering the women in India. The significant among them are the Equal Remuneration Act, the Prevention of Immoral Traffic Act, the Sati (Widow Burning the rights of) Prevention Act, and the Dowry Prohibition Act etc.

Apart from these, the 73rd and 74th Constitution (Amendment) Acts14 provided for 33% reservation for women in both pachayat and Nagarpalika institutions as well as for the positions of chairpersons of these bodies. Besides this, the government in India have enacted a variety of laws like Dowry Prohibition Act, Sati prevention Act etc to guarantee the rights of the women. Apart from this, National Commission for Women had been established in 1990 to look into the women's problem. NCW have engaged them to deal with the cases relating to the violation of women's rights. They have pressurised the government to pass stricter laws to deal with the rape cases, domestic violence and to create a separate criminal code for the women etc.

Strategies of Women Empowerment in India - The women in India are positioned at a receiving end primarily because they have remained ignorant of their fundamental civil and constitutional rights. Patriarchal system impinges on every sphere of a woman's life. In such a situation often a majority of them are forced to accept the traditional practices that are detrimental for both their and their children's development. Although women have acquired a level of financial and political autonomy and consciousness about their rights, yet they experience helplessness in bringing about basic changes for eliminating gender inequalities from the society.

The National Commission for Women have taken up the cudgels for women's right and have vociferously demanded a separate criminal code for women and enhanced punishment for offences against women. The proposal for creating a separate criminal code for women was designed to provide quick justice to the aggrieved women and speed up the conviction rate.

A multi-layered strategy need to be developed to assess the core causes of violence against women. The state and society must provide instantaneous support to victim-survivors to ensure that the victims can carry on with their daily life. In dealing with the problem of violence against women innovative levels of coordination and integration must be built up between government, civil society and the family. The state occupies a central position in initiating positive policies to end discrimination against women.

In India it was state which initiated the first reform measure when after lot of debate it reformed the Hindu Succession Act in 1956 in which women were given equal right to inheritance. Continuous extensive unconditional financial as well as emotional assistance must be provided to the women by both the formal set-up of the state like legal system, police, medical and health care sectors etc, as well as from the informal networks such as family, friends, and local community groups. The idea of self reliant independent women taking independent decisions of her life can be achieved only by educating women that will help them in achieving economic independence, as well as

knowledge and awareness about their rights. Special emphasis must be provided in educating women on the legal and Human rights provided to them by the constitution. The women's organizations must try to empower women by changing the attitudes of the society towards the harmful traditional practices. One of the most vital tasks of the various women organizations and NGOs is to help women in rebuilding their lives and confidence. These goals can be achieved only if the women are adequately educated about their legal rights and are economically independent enough to take independent decisions of their own life.

Conclusion - Thus in short, the Millennium Development Goal on gender equality and women's empowerment can be realised in India only when the traditional practices like female infanticide, dowry deaths, honour killings by khap panchayats, domestic violence, or sexual abuse is eliminated. It is only then that gender equality and women's empowerment can become a reality.

References :-

1. bonjourplanetearth.blogspot.com.au (2014)
2. Sabharwal Sagun, K.G. Santhya and Shireen J Jejeebhoy, Determinants of Marital violence, Economic and Political Weekly, 47, 41-45 (2013)
3. www.freiheit.org, ielrc.org (2014)
4. www.unhchr.ch (2014)
5. Agarwal Bina, Are We Not Peasants Too? Land Rights and Women's Claims in India, Population Council, (2002)

****

Adolescent and Child Labour under Organised and Unorganised sector

Dr. Deepika Bhatnagar *

Key words - Organised Labour, Unorganised Labour, Potential, Adolescent, Convention.

Introduction - ILO says - **"**In its most extreme forms, child labour involves children being enslaved, separated from their families, exposed to serious hazards and illnesses and/or left to fend for themselves on the streets of large cities – often at a very early age. Whether or not particular forms of 'work' can be called 'child labour' depends on the child's age, the type and hours of work performed, the conditions under which it is performed and the objectives pursued by individual countries."

Child Labour is a term which interferes the regular activity of a child. Labour activities deprive any child to their childhood, their potential and also their dignity. Labour activities are always harmful to his mental and physical development. The work which is labour type is assigned to the child is always dangerous and harmful to the socially and morally also.

According to the ILO - Child labour are works that deprives children of their childhood, their potential and their dignity, and that is harmful to physical and mental development.

According to Gabri A Mistral "We are guilty of many errors and many faults but our worst crime is abandoning the children, neglecting the fountain of life, many of the things we need can wait, The Child cannot. Right now is the time his bones are being formed, his blood is being made and his senses are being developed, to him we cannot answer tomorrow his name is today"

Child labour is classified into many types but broadly is divided into two types:

1. Child Labour in an organised sector - In this sector child is below the age of 14 and working under some organised establishments like mines, Plantations, beedi and cigar industries which are coming under small or large scale industries.

2. Child labour in an unorganised sector - In this sector no prescribed definitions are given. Normally, child who is under the age of 14 and doing labour for financial help for his or her family comes under unorganised sector. These unorganised sectors can be Rag pickers, Supplying and cleaning tea, glasses, working in farm lands etc.

According to the Child & Adolescent Labour (Prohibition) Act, the child who is under the age of 18 and is doing labour work comes under Hazardous activities. India accounts for much larger number of child labourers as against the whole world. Child labour Laws does not permits to work as labour that is under the age of 14. In this connection our Indian Government is working hard to eliminate the concept of child labour and also passed much legislation.

Major National Legislative Developments -

1. Constitution,
2. Children [Pledging of Labour] Act (1933),
3. Employment of Children Act (1938),
4. The Bombay Shop and Establishments Act (1948),
5. Child Labour -Prohibition and Regulation Act,
6. The Indian Factories Act (1948),
7. Plantations Labour Act (1951),
8. The Mines Act (1952), Merchant Shipping Act (1958),
9. The Apprentice Act (1961),
10. The Motor Transport Workers Act (1961),
11. The Atomic Energy Act (1962),
12. Bidi and Cigar Workers (Condition of Employment) Act (1966),
13. State Shops and Establishments Act,
14. Child Labour and Probhition Act 1986

These acts have been introduced for the beneficial purpose of the child labour in organised and un-organised sectors. These acts has scope but in the limited sector and also effective when it is implemented strictly in accordance. In the Factories act, 1948 the prohibition of children below the age of 14 years, The Mines Act, 1952 prohibits the employment of children below 18 years, The Child and Adolescent Labour (Prohibition and Regulation) act ,1986 prohibits the age of 14 years in hazardous occupations. The Child and Adolescent Labour (Prohibition and Regulation) Act, 1986 made it is a crime, punishable for with a prison term anyone to procure or employ a child in any hazardous employment and processes. The Right of Children to Free and Compulsory Education Act, 2009 is to all children 6 to 14 years and also for reservation of seats

* Reader, Shri Vaishnav Institute of Law, Indore (M.P.) INDIA

upto 25 percent in every private school.

At the International platform - India has accepted the Convention on the Rights of the Child concluded by the UN General Assembly on 20th November, 1989. The International Labour Organisation has been playing an important role in the process of gradual elimination of child labour and to protect the child from industrial exploitation. It has focussed on five main issues - prohibiting child labour, protecting child labour at work, attacking the basic causes of child labour, helping children to adapt to future work, and protecting the children of working parents.

Causes - The child Labour in India is running since many years. Year wise the causes behind this problem are different. According to UNICEF - children have no real and meaningful alternatives in rural and impoverished parts of developing and also in the underdeveloped part of India. Many states and villages in have no adequate school facilities, very far from their homes, unaffordable, very poor quality of education. As per the report of ILO, 2008 the harmful factor behind the child labour is lack of availability and quality of schooling.

In the country around, still discrimination between boys and girls is persisting. According to the report of the UNICEF girls are more likely to be out from the school and working in a domestic role.

Uneducated girls tend to be at a lower priority across the world including India. The International labour organisation (ILO) and Spreading Smiles through Education Organisation (SSEO) suggests poverty is the greatest single force driving children into the workplace. Poverty, over population, Parental literacy and want of more income, lack of schools for study, Higher cost of education and living cost, Weak laws to protect, Adult unemployment and Urbanization, Lack of education and exposure, and also wrong intention of factories are also the major factors of child labour. Approximately about 25% of the Indian population live below the poverty line, and other major problem is the illiteracy. When we overcome these two major problems then the problem of the Child Labour will automatically perish from India.

Report by Shri M.S Gurupadaswamy committee has observed, “Extreme poverty, lack of opportunity for gainful employment and intermittency of income and low standards of living are the main reasons for the wide spread prevalence of child labour. Though it is possible to identify the child labour in the organised sector, which form a minuscule of the total child labour, the problem relates mainly to the unorganised sector where utmost attention needs to be paid. The problem is universal but in our case it is more crucial.”

Consequences of Child Labour - In terms of economic welfare the presence of child labour is a serious issue who is not getting the necessary education even they are not getting proper and adequate physical, intellectual, emotional and psychological support from the family, society and also from the government. The child is a vulnerable part of the society. They are not so strong physically and mentally to do all the labours and hazardous activities. But because of the above reasons discussed they are pressurized to indulge in these activities. The presence of a large number of child labourers is regarded as a serious issue in terms of economic welfare. Comparatively children are not ready for exhausted monotonous work than adults. Child labour has long term adverse effects for India.

To keep an economy prospering, a vital criterion is to have an educated workforce equipped with relevant skills for the needs of the industries. The young labourers today will be part of India’s human capital tomorrow. Child labour undoubtedly results in a trade-off with human capital accumulation.

Conclusion and Suggestions - Children are the future assets of our Nation. Their proper nurture and planned development is our prime responsibility. The development of human resources should be an important part of our National policy then only our Indian future will be physically fit, mentally alert, morally healthy.

Equal opportunities for development would serve our large purpose of reducing inequality and ensuring social justice. If a child is a national asset, it is the duty of the state to look after the child with a view to ensure full development But from the beginning of human society children have been exploited mercilessly and indiscriminately.

Child Labour has been the cheapest and readily available due to high population of India. Children were made to work at home and outside, in factories and fields, in hazardous occupations, in hotels, restaurants and as domestic aids. Family burden, financial problem in Indian child compels them to starts working at the age of 6 or sometime at 8.

The Government should strictly implement the laws in the organised sectors and see to it that the un-organised child workers do not erupt at all. As there are Government authorities and departments spread all over the states It is the responsibility to take enough steps to restrict the employment of child worker in unorganised and organised sector. The example of Sri Lanka and Kerala show that compulsory education has worked in those areas and shown better results. The efforts towards preserving the environment and bringing about sustainable development are aimed at giving our children what is naturally theirs. Female education, which Palkiwala calls the priority of priorities, hampered not only by the deep- rooted cultural prejudices but also due to lack of real concern. Initiatives like operation blackboard, Sarva Shiksha Abhiyan and mid-day meal scheme, etc. have been taken so that school dropout rate is curtailed.

Right to live with human dignity, enshrined in article 21, drives its life breath from the directive principles of State Policy and particularly clauses (e) and (f) of article 39 and articles 41 and 42 and at least therefore, it must include protection of state, the health and strength of workers, men

and woman, and of the tender age of children against abuse, opportunities and facilities for children to develop in health and in conditions of freedom and dignity, educational facilities, just and humane conditions of work and maternity relief. These are the minimum requirements which must exist in order to enable a person to live with human dignity. Neglecting or ignoring the welfare of children and their all-round development may create like atmosphere where oxygen is withdrawn making the life of the country miserable over the years. We have a full-fledged ministry of Human Resources Development and numerous agencies engaged in child welfare work. Children are innocent, vulnerable and dependent. Excluding good foundation of life from children is a crime against humanity. Millions of children live under difficult circumstances- as orphans, street children, refugees, displaced persons, as victims of war and other manmade disasters. For the full and harmonious development of his or her personality, a child should grow up in a family environment, in an atmosphere of happiness, love and understanding. There is need to make people aware about rights of children and as to the importance of their growing up and responsible and productive citizens. Educational institutions, Governments, NGOs and media can play a vital role in this regard. Social communication needs to be stimulated at different levels and through multiple channels across the plural society.

This requires sensitive and professional handling in a decentralization manner. The proper growth of our children will be a true tribute to Pandit Jawaharlal Nehru - the builder of modern India. Almost 65 years ago he asked: “who lives if India dies? Who dies if India lives?” If India is to live , children are to live Children are to be looked after and groomed well, not merely on the basis of constitutional to statutory provisions but also with great human touch and concern. We have both obligation and duty towards them.

References:-

1. ”What is child labour”. International Labour Organistion,2012.
2. “International and National Legistation”Child Labour Organisation 2011.
3. www.firstpost.com>India News.
4. unicef.in/whatwedo/21/child-Labour.

****

Judicial Review - Tool To Balance The Suoremacy Of The Constitution

Aprajita Bhargava *

Abstract - In the legal systems of modern democracies it has very wide connotations. The judiciary plays a very important role as a protector of the constitutional values that the founding fathers have given us. They try to undo the harm that is being done by the legislature and the executive and also they try to provide every citizen what has been promised by Constitution. The exercise of each of these powers is a function of the Legislature, the executive and the Judiciary as a separate organ of the State. Deriving their powers from the constitution, the legislatures in India enact statutes possible because of the power of judicial review.

Key words - Judicial Review, Legislative actions, Constitution, Rights, Democracy

Introduction - "I am of the view that if there is one feature of our Constitution which, more than any other is basic and fundamental to the maintenance of democracy and the rule of law, it is the power of judicial review and it is unquestionably, to my mind, part of the basic structure of the Constitution"- Justice Bhagwati

Judicial Review basically is an aspect of judicial power of the state which is exercised by the courts to determine the validity of a rule of law or an action of any agency of the state. India is lucky enough to have a constitution in which the fundamental rights are enshrined and which has appointed an independent judiciary as guardian of the constitution and protector of the citizen's liberties against the forces of authoritarianism. In a true form of democracy, the rule of a fearless independent and impartial judiciary is indispensable and cannot be over-emphasized.

Judicial review of legislation is a result of two of the most fundamental features of Indian constitution. The first is the two-tier system of law with the constitution as the Supreme law and other legislation being the ordinary law which is valid only in so far as is consistent with the constitution. The Second is the separation of the legislative, the executive and the judicial powers of the state. There is a two-fold limitation on the validity of the statues. The Legislatures must have the competence to enact them. Secondly, they must not conflict with the constitution. They would be invalid to the extent of their repugnancy with the constitution. 'Judicial Review' stands for something which is done by a court to examine the validity or correctness of the action of some other agency.

Meaning and Definition of Judicial Review - The word 'review' stands for an act of inspecting or examining something with a view to correct it or to improve it. This meaning shows that there is something which is already done by somebody whose correction or improvement is envisaged in the process of review.The word 'review' in the phrase 'judicial review' stands for something which is done by a court to examine the validity or correctness of the action of some other agency. Thus the power of the Judiciary to review and determine the validity of a law or an order may be described as the power of "Judicial review". It means that the constitution is the supreme law of the land and any law inconsistent therewith is void. 'Judicial Review' legislation or executive action can be defined as "Judicial review is the ultimate power of any court to declare any act of legislatures or of executives as unconstitutional and hence unenforceable as:-

a) Any law.
b) Any official action based upon a law
c) Any other action by a public official that it deems to be in conflict with the constitution."

According to **HOWARD MEBAIN**, an American author judicial review mean, the power possessed by American courts to declare that legislative and executive action are null and void if they are volatile of the written constitution.

Judicial Procedure for judicial Review - The power of judicial review has in itself the concept of separation of powers an essential component of the rule of law, which is a basic feature of the Indian Constitution. Every State action has to be tested on the anvil of rule of law and that exercise is performed, when occasion arises by the reason of a doubt raised in that behalf, by the courts. Though the constitution makers of India have inserted a specific provision under Article 32 of the constitution to go directly to the Supreme Court regarding legislative lapses concerned with infringement of Fundamental Rights.

Article 32 itself is the fundamental right and according

* Faculty, R. D. Public School, Betul (M.P) INDIA

to Dr Ambedkar "it is the soul of the constitution as without which there would be no meaning of inserting the other fundamental rights in the constitution". But there has been no any specific provision in the constitution to move the Supreme court direct on the unconstitutionality arising out of the violation of the constitutional mandate relating to distribution of powers or separation of powers or other constitutional restrictions which is equally vital. If the issue does not involve infringement of fundamental rights guaranteed under part III of the constitution, the aggrieved party has to move first the High court under article 226 and then only in appeal he can go to the Supreme Court if relief is not given by the High Court. Such pitfalls deserves rectification by a suitable provision in the constitution so as to enable an aggrieved person to move the Supreme court directly concerning the unconstitutionality relating to the distribution of powers or delegated legislation or other constitutional restriction.

This speedy remedy would quicken the conscience of the citizen in a more fruitful manner in protection of his rights. The Power of Judicial Review is incorporated in Articles 226 and 227 of the Constitution for the High Courts and Articles 32 and 136 of the Constitution for Supreme Court, the judiciary in India has come to control by judicial review every aspect of governmental and public functions.

Positive consideration for Judicial Review -

(a) Our Constitution is federal constitution and interpretation of the constitution is the constitutional duty of the SC. Through Judicial interpretation judiciary keeps organs and departments of the government within their limits. Without the power of judicial review federal structure may be damaged. Therefore, judicial review is necessary ingredient of our constitution.

(b) It is true that Judicial Review places reliance on judges and their ability and integrity. Judges are part and parcel of the Society. Our experience proved judiciary much more honest than legislature and executive. Day-to day scandal happens in executive and legislature, while no conspicuous scandal has been noticed in Judiciary so far. Judicial Review saves country from arbitrariness and tyranny of executive and legislature. One can very well suppose that when there was no Judicial Review or judicial activism to what extent corrupt executive and legislatures would have spoilt moral and social life of the people.

(c) Legislature and executive are pressurized by vested interests whereas judiciary has no such chances of pressure from vested interests.

(d) Judicial Review not undemocratic rather it keeps the democracy alive through keeping organs of state within their own limits.

(e) Judiciary is a accountable to the people the consumers of the justice as rightly observed by Justice Frankfurter.

(f) Judicial Review affords protection against legislative excesses and executive arbitrariness. The Indian judiciary is the best filled to the role of an umpire for deciding the proper functioning of the constitution. Judiciary has saved the constitution and democracy.

The Supreme courts interpretation of legislative acts to maintain the supremacy of the constitution - The scope of judicial review is present in several articles of the constitution, such as, 13, 32,131-136,143, 226 and 246. The doctrine of judicial review is firmly rooted in India and in this sense it is on a more solid footing than it is in America. The courts in India are under a constitutional duty to interpret the constitution and declare the law as unconstitutional if found to be contrary to any constitutional provisions. It can be appreciated that the protection of the judicial review is crucially inter-connected with that of protection of Fundamental Rights, for depriving the court of its power of judicial review would be tantamount to making Fundamental Rights non-enforceable ' a mere paper provision' as they will become rights without remedy.

In **Keshavananda Bharati vs. State of Kerala -** which is said to have first propounded the Doctrine of basic structure of the Constitution, the Hon'ble 13 Judge Constitution Bench of Supreme Court delivered 11 truncated judgments.

Since 24th April 1973, the date of the judgment of the Keshavananda Bharati case, the debate is, what is the ratio decidendi, viz., the point of law laid down in the said judgment. Fortunately, the present judgment of Supreme Court by providing unanimous verdict saved the Nation from such turmoil of searching for the ratio decidendi with magnified glasses. Fractured Judgments pains the Nation a lot to understand what is the Law and much time and energy of legal fraternity is spent on debating, interpreting and searching laws from such truncated judgments.

In the same case, Bhagwati, J observed "it is for the judiciary to uphold the constitutional values and to enforce the constitutional limitation. That is the essence of the rule of law, which inter alia requires that the exercises of powers by the government whether it be the legislature or the executive or any other authority, be conditioned by the constitution and the law. The power of judicial review is an integral part of our constitutional system and without it there will be no Government of laws and the rule of law would become a teasing illusion and a promise of unreality. I am of the view if there is one feature of our constitution which, more than any other is basic and fundamental to the maintenance of democracy and the rule of law, it is the power of judicial review and it is unquestionable, to my mind, part of the basic structure of the constitution".

Conclusion- The Indian Judiciary has played a remarkable role by the way of Judicial Review to maintain the supremacy of the Constitution. As said by Holmes that life of law is not logic but experience. Hamilton, one of the framers of the constitution of United States of America says that if there is conflict between constitution and the law the judges should prefer constitution. In India it is reflected 100%. After the decision of Keshavananda Bharti's case 42nd amendment was made to the Constitution which inserted Clause 4 and 5 which declared that their shall be no limitation on the amending power of the parliament of what so ever.

Thus, Judicial Review of legislative acts indicates review of legislative actions to judicial restraint on the legislative and executive organs of the Government. The concept has the origin in the theory of limited Government and in the theory of two laws, an ordinary law and the supreme law (i.e. the Constitution). From the very assumption that there is a supreme law which constitutes the foundation and source of other legislative authorities in the body polity, it proceeds that any act of the ordinary law making bodies which contravenes the provision of the supreme law must be void and there must be some organ which is to possess the power or authority to pronounce such legislative acts void."

References:-

1. Deshpande, V.S., Judicial Review of Legislation (1975), Eastern Book Company, Lucknow.
2. Dr. Jha, C.D., Judicial Review of Legislative Acts, (II Edition, 2009), Lexis Nexis Butterworths Wadhwa, Nagpur.
3. Singh, M.P., Shukla V.N.'s Constitution of India (XI Edition, 2008), Eastern Book Company, Lucknow.
4. Dr. Pandey, J.N., Constitutional Law of India (XXXXIII Edition, 2006) Central Law Agency, Allahabad.
5. The Kesavananda Bharati Case : The Untold Story of Struggle for Supremacy by Supreme Court and Parliament- Buy online now at Jain Book Agency, Delhi based book store.

****

सुलह सम्बन्धी विधियाँ और उनका मूल्यांकन

डॉ. सीमा राजपूत *

प्रस्तावना – सुलह वैकल्पिक विवाद निवारण का प्रभावी साधन है। माध्यस्थम् और सुलह, 1996 तथा विवादों का वैकल्पिक विवाद निवारण अधिनियम में भाग में सुलह सम्बन्धी प्रावधानों का वर्णन किया गया हैं। इसे विवादों का वैकल्पिक (अतिरिक्त) निस्तारण भी कहा जाता है। माध्यस्थम् एवं सुलह अधिनियम, 1996 में सुलह की परिभाषा नहीं दी गयी है। धारा 67 में सुलहकर्ता की भूमिका के संबंध में प्रावधान दिया गया है तथा इस भूमिका के आधार पर सुलह की उपरोक्त परिभाषा उचित जान पड़ती है।

विवादों के वैकल्पिक या अतिरिक्त निस्तारण के लिए कोई भी पृथक विधि अधिनियमित नहीं की गई है। अब माध्यस्थम् तथा सुलह अधिनियम, 1996 के भाग 3 में पक्षकारों द्वारा अपने विवादों को सुलह द्वारा निस्तारण (हल) करने की व्यापक व्यवस्था प्रथम बार की गई है। सुलह सम्बन्धी प्रावधान धारा 61 से धारा 81 तक में विस्तार से दिए गए हैं, यद्यपि सुलह, विवाद को अनुकल्पत: निपटाने का एक तरीका हैं तथापि इसे अधिनियम के अंतर्गत सम्मिलित करके सुदृढ़ता प्रदान की गयी हैं, जिससे यह कारगर तरीके से विवादों का समाधान करने में विशेष भूमिका अदा कर सकें।

इंग्लैण्ड़ की हैल्सबरी विधि शब्दावली के अनुसार सुलह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो पक्षकारों को अपने विवाद आपसी समझौते से हल कर लेने हेतु अनुनय करती हैं। अत: इसे न तो माध्यस्थम् कहा जाता है और न सुलह बोर्ड के अध्यक्ष को मध्यस्थ कह सकते हैं।

नि:संदेह ही सुलह वैकल्पिक विवाद निवारण(Alternative Dispute Resolution) का प्रभावी साधन हैं। यह आवश्यक रूप से एक न्यायिक अथवा न्यायातिरेक प्रक्रिया हैं, जबकि माध्यस्थम् का स्वरूप न्यायिक अथवा न्यायातिरेक कुछ भी हो सकता हैं। संक्षेप में सुलह एक ऐसा साधन या उपाय है, जिसके अन्तर्गत न्यायालय या मुकदमेंबाजी का सहारा लिए बगैर पक्षकार आपसी समझौते से अपने विवाद या मतभेद सुलझा लेते हैं।

ज्ञातव्य है कि वैकल्पिक विवाद निवारण के प्रभावी साधन के रूप में सुलह को माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 में समाविष्ट करके वैधानिक मान्यता प्रदान की गई हैं। यह न तो पक्षकारों के मध्य पूर्व करार पर आधारित होता है और न उससे नियंत्रित होता है, जबकि माध्यस्थम् का अस्तित्व एवं नियंत्रण पूर्णत: पक्षकारों के मध्य करार पर आधारित होता हैं। इसके अलावा पक्षकारों का विवाद न्यायालय या माध्यस्थम् में लंबित होने पर भी वे सुलह का मार्ग अपनाते हुए अपना विवाद हल कर सकते हैं जबकि माध्यस्थम् में यह संभव नहीं हैं।

सुलह के अंतर्गत सर्वप्रथम पक्षकारों के बीच विवाद या मतभेद के कारणों को चिन्हित किया जाता है और तत्पश्चात् सुलहकर्ता पक्षकारों के हितों का संरक्षण करते हुए उस विवाद या मतभेद को हल करने का प्रयास करता हैं। यह प्रक्रिया बहुत कुछ अनौपचारिक तथा लचीली होने के कारण पक्षकार इसके लिए सहजता से स्वीकृति दे देते हैं। सुलह द्वारा पक्षकारों के बीच हुए समझौते को माध्यस्थम् के पंचाट के समान मान्यता प्राप्त होती हैं।

सुलह का मूलभूत तत्व यह है कि पक्षकारों के बीच समझौता इस बात पर आधारित नहीं होता है कि विधि के अनुसार क्या उचित एवं युक्ति–युक्त है बल्कि इस बात पर विशेष जोर देता है कि पक्षकार पारस्परिक सहमति से किसी मान्य समझौते पर पहुँच जाए। इस प्रक्रिया में ऐसा भी सम्भव है कि पक्षकारों को अपने–अपने विधिक दावों का कुछ भाग पारस्परिकता के आधार पर त्यागना पड़े। तात्पर्य यह है कि सुलह में पक्षकार किसी तीसरे स्वतंत्र पक्ष के माध्यम से किसी मान्य समझौते पर पहुँचते है तथा समझौते पर पहुँचने के लिये कुछ रियायत भी करते है जिससे विवादों का मैत्रीपूर्ण हल सम्भव होता है। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि सुलह में विधिक नियमों को ताक में रख दिया जाता है। बल्कि यह है कि पक्षकार सुलह के माध्यम से ऐसे समझौते पर पहुँच सकते है, जो विधि के कठोर अर्थो में सही निर्णय नहीं भी हो सकता है।

सुलह कार्यवाही के महत्वपूर्ण लक्षण –

1. **सुलह कार्यवाही की विपक्षहीन प्रकृति –** सुलह की प्रक्रिया में कोई दावेदार या वादी नहीं होता है अर्थात पक्ष और विपक्ष जैसी अवस्था नहीं होती है।
2. **कार्यवाही की स्वैच्छिक प्रकृति –** विवाद का कोई भी पक्षकार सुलह की प्रक्रिया प्रारंभ कर सकता है तथा रोक सकता है, सुलह के माध्यम से पक्षकार आवश्यक खर्चे से भी बच जाते है।
3. **शिथिलयीन प्रक्रिया –** सुलह में अपनायी गयी प्रक्रिया कम खर्चीली होती है और सुलहकर्ता के विवेक पर निर्भर होती है, वह त्वरित और कम खर्चीली प्रक्रिया ही अपनाता है।
4. **सुलह का निर्णय संस्तुति के रूप में होता है –** सुलह के अंतर्गत पारस्परिक समझौते के आधार पर विवाद का निपटारा किया जाता है न कि लादे गए निर्णय के आधार पर।[11]

सुलह संबंधी प्रावधानों का वर्णन – माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम के भाग में धारा 61 से 81 तक सुलह सम्बन्धी प्रावधानों का वर्णन किया गया है।

धारा 61 के अंतर्गत सुलह सम्बन्धी उपबंध कब और किन परिस्थितियों में लागू होते हैं इसमें यह उल्लेख है कि पक्षकारों के मध्य विधिक सम्बन्धों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाले विवादों को सुलह द्वारा निपटाया

* (विधि) शासकीय जे. एन. एस. महाविद्यालय, शुजालपुर, जिला – शाजापुर (म.प्र.) भारत

जा सकेगा बशर्ते कि उनमें अन्यथा कोई करार न हो। ये विधिक संबंध संविदात्मक है अथवा नही, इसका सुलह कार्यवाही पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

धारा 62 में सुलह कार्यवाही के प्रारम्भ की प्रक्रिया दर्शाई गई है।

धारा 63 में सुलहकर्ताओं की संख्या के बारे में उपबंध है।

धारा 64 में यह उल्लेख है कि सुलहकर्ताओं की नियुक्ति पक्षकारों की सम्मति से की जाएगी तथा यदि पक्षकार सहमत हो, तो वे किसी उपयुक्त संस्थान या व्यक्ति द्वारा भी अपने सुलहकर्ताओं की नियुक्ति करा सकते है।

धारा 65 में उपबंधित है कि नियुक्ति के पश्चात् सुलहकर्ता प्रत्येक पक्षकार से निवेदन करेगा कि वे उसे एक संक्षिप्त विवरणी प्रस्तुत करें, जिसमें विवाद की साधारण प्रकृति एवं अंतर्विष्ट बिंदुओं का उल्लेख हो। प्रत्येक पक्षकार ऐसी विवरणी की एक प्रति अपने विरोधी पक्षकार को भी भेजेगा।

धारा 66 यह उपबंधित करती है कि सुलह कार्यवाही के दौरान सुलहकर्ता सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 तथा साक्ष्य अधिनियम, 1872 के नियमों से बाध्य नहीं होंगे।

धारा 67 में सुलहकर्ता की भूमिका को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि पक्षकारों को सुलहनामें के लिए राजी करने में सहायता करते समय सुलहकर्ता को पक्षकारों के अधिकारों एवं दायित्वों को ध्यान में रखना होगा तथा सुलह कार्यवाही में यथार्थता, औचित्य और न्याय के सिद्धान्तों का अनुसरण करना होगा।

धारा 68 के अनुसार सुलहकर्ता, सुलह कार्यवाही के लिए किसी संस्थान या व्यक्ति विशेष से प्रशासनिक सहायता ले सकता है।

धारा 69 में सुलहकर्ता और पक्षकारों के मध्य संसूचना सम्बन्धी उपबंध है, जो मौखिक या लिखित रूप में हो सकती है। इसी धारा में सुलह कार्यवाही हेतु स्थान भी उपबंध है।

धारा 70 में यह उपबंधित है कि पक्षकारगण सुलहकर्ता के अलावा एक दुसरे को भी विवाद की विषय वस्तु के बारे में समुचित जानकारी उपलब्ध कराऐंगे ताकि दोनों ही पक्षकारों को अपना-अपना पक्ष प्रस्तुत करने का उचित अवसर मिल सके। परन्तु यदि कोई पक्षकार विवाद की विषय वस्तु सम्बन्धी कोई जानकारी गोपनीय रखना चाहता है, तो सुलहकर्ता से निवेदन कर सकेगा कि वह ऐसी जानकारी दूसरे पक्षकार को प्रकट न करें।

धारा 71 में उल्लेख किया गया है कि पक्षकारगण सुलहकर्ता से सद्भावनापूर्वक सहयोग करेंगे।

धारा 72 के अधीन प्रत्येक पक्षकार स्वप्रेरणा से अथवा सुलहकर्ताओं के निवेदन पर विवाद के निपटारे हेतु अपने सुझाव सुलहकर्ता को प्रेषित कर सकेगा।

धारा 73 परिनिर्धारण करार से संबंधित है।

धारा 74 में यह बताया गया है कि परिनिर्धारण करार को अधिनियम की धारा 30 के अधीन माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पक्षकारों की सहमत शर्तो पर दिये गये पंचाट के समरूप ही मान्यता प्राप्त होगी और इसका प्रभाव भी पंचाट निर्णय के समान होगा।

धारा 75 में गोपनीयता सम्बन्धी प्रावधान है, जिसमें कहा गया है कि सुलह कार्यवाही के बारे में सुलहकर्ता एवं सभी पक्षकार पूर्ण गोपनीयता बरतेंगे। गोपनीयता सम्बन्धी उपबंध परिनिर्धारण करार के प्रति भी लागू होगा।

धारा 76 में सुलह कार्यवाही की समाप्ति के बारे में वर्णन किया गया है।

धारा 77 के अनुसार सुलह कार्यवाही के दौरान पक्षकारगण अपने विवाद के निपटारे हेतु माध्यस्थम् कार्यवाही या न्यायिक कार्यवाही प्रारंभ नहीं कर सकेंगे। परंतु यदि कोई पक्षकार अपने विधिक अधिकारों को संरक्षण हेतु या न्यायिक कार्यवाही को आवश्यक समझता है, तो वह ऐसा कर सकता है।

धारा 78 एवं 79 में क्रमश: खर्चे और निक्षेप सम्बन्धी प्रावधान है।

धारा 80 यह अधिनियमित करती है कि सुलह कार्यवाही के दौरान सुलहकर्ता मध्यस्थ सम्बन्धी या सलाहकार के रूप में कार्य नहीं कर सकेगा और नहीं उसे पक्षकारों द्वारा साक्षी के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

धारा 81 के अनुसार सुलह कार्यवाही में दी गई साक्ष्य की अन्य कार्यवाहियाँ अर्थात माध्यस्थम् कार्यवाही या न्यायिक कार्यवाही में ग्राह्य नही किया जा सकेगा।

प्रयोज्यता तथा विस्तार –

1. सुलह की प्रक्रिया विवादों तक विस्तारित है चाहे वह संविदात्मक हो या संविदात्मक न हो। परंतु ऐसे विवाद विधिक संबंध से उठने चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि यह विवाद ऐसा होना चाहिए जिससे कि एक पक्षकार को वाद संस्थित करने का अधिकार हो और दूसरा पक्षकार उसके विरूद्ध वाद संस्थित किए जाने के दायित्वाधीन हो।
2. सुलह की प्रक्रिया इससे संबंधित सभी कार्यवाहियों तक विस्तारित है। परंतु अधिनियम का भाग 3 ऐसे विवादों पर लागू नहीं होता है जो कि तत्समय प्रवृत किसी विधि के कारण सुलह के लिये निवेदित नही किए जो सकते है।

इसी प्रकार यदि किसी विवाद को, तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के प्रावधानों के अंतर्गत सुलह को सुपुर्द करने पर प्रतिबंध है या यदि पक्षकारों ने करार द्वारा किसी विवाद को सुलह हेतु सुपुर्द करना उपवर्जित किया है, तो वह विवाद सुलह की विषय-वस्तु नहीं हो सकता। परन्तु यदि किसी विषय-वस्तु को सुलह हेतु सुपुर्द करने पर तत्समय किसी विधि के अंतर्गत प्रतिबंध नहीं है या पक्षकारों ने विवाद की विषय-वस्तु को सुलह हेतु सुपुर्द करने पर करार द्वारा किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं लगाया है, तो ऐसे वाद को सुलह हेतु सुपुर्द किया जा सकता है। भले ही पक्षकारों ने माध्यस्थम् के लिए सहमति व्यक्त की थी। (धारा 61 उपधारा (1))

इस अधिनियम की धारा 30 भी यह प्रावधान करती है कि एक विवाद, जिस पर माध्यस्थम् करार है, माध्यस्थम् अधिकरण पक्षकारों की सहमति से माध्यस्थम्, सुलह तथा अन्य प्रक्रिया द्वारा माध्यस्थम् प्रक्रिया के दौरान भी, विवाद के हल को प्रोत्साहित करने की क्षमता रखता है। परन्तु धारा 71 सुलह कार्यवाही के दौरान अपने अधिकारों की सुरक्षा के अतिरिक्त माध्यस्थम् या न्यायिक कार्यवाही को प्रारम्भ करने से पक्षकारों को प्रतिबन्धित करती है।

माध्यस्थम् के मामले के विपरीत सुलह कार्यवाही के लिए लिखित करार की आवश्यकता नहीं है। यहाँ सुलह स्वैच्छिक तथा अबाध्यकर प्रकृति को परिलक्षित करता है। सुलह की कार्यवाही मौखिक करार द्वारा भी सम्भव है। परन्तु धारा 62 की उपधारा (1) तथा उपधारा (2) यह प्रावधान करती है कि सुलह के लिए विवाद की प्रकृति वाणिज्यिक या गैर वाणिज्यिक किसी भी प्रकार की हो सकती है।

अत: सुलह की प्रक्रिया द्वारा झगड़ों के निस्तारण से पक्षकारों को विपक्षी के वाद के विषय में सूचना तथा ज्ञान प्राप्त होता है जो बहुमूल्य होता है। यह राष्ट्रीय स्तर पर वकीलों तथा राजनीतिज्ञों की स्वतंत्रता तथा योग्य

व्यक्तियों के समुह द्धारा झगड़े के विवादों तथा निस्तारण के लिए प्रस्ताव के मूल्यांकन का अवसर प्रदान करता है और झगड़ों के पक्षकारों की प्रतिष्ठा का ध्यान रखा जाता है और यह पक्षकारों की स्वतंत्रता तथा प्रभुत्व सम्पन्नता को चुनौती नहीं देता है तथा पक्षकार सुलह कमीशन के निर्णय को मानने को बाध्य नही है।

कुछ विवाद ऐसी प्रकृति के होते हैं, जिन्हें सुलह के द्धारा नहीं सुलझाया जा सकता, जैसे संविधान के विभिन्न प्रावधानों या किसी संविधि के निर्वचन का प्रश्न सुलह द्धारा नहीं सुलझाए जा सकते हैं तथा इनके लिए परम्परागत न्यायालयों का आश्रय लेना पड़ता हैं।

इसी प्रकार जो अपराध दण्ड़ प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 320 की सूचियों के अंतर्गत नहीं दिए गए हैं, उनका शमन नहीं किया जा सकता हैं। यह प्रश्न विधि के निषेध का उदाहरण हैं। अत: किसी प्रवृत्त विधि के अंर्तगत यह प्रावधान हैं कि कतिपय विवादों को सुलह के लिए प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है, तो वे विवाद सुलह के माध्यम से नही सुलझाए जायेंगे।

सुलहकर्ता की भूमिका निभाने वाले व्यक्ति की नियमितताएँ होती हैं, जिससे वह विवाद से संबधित माध्यस्थम् या न्यायिक कार्यवाही में मध्यस्थ, साक्षी या परामर्शदाता के रूप में भाग नहीं ले सकेगा। सुलह कार्यवाही में विवाद का हल निर्णय द्धारा नहीं होता है। बल्कि आपसी सहमति या समझौते द्धारा होता है। तथा सुलहकर्ता उसे अधिप्रमाणित करता है। और उसे न्यायालय की डिक्री की प्रास्थिति प्राप्त नहीं होती हैं। अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता हैं कि कुछ कमियाँ होने के बावजूद भी सुलह पक्षकारों के विवादों को निपटाने का एक प्रभावी साधन हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. अवतार सिंह – माध्यस्थम् सुलह एवं अनुकल्पी विवाद निपटान विधि।
2. देवेन्द्र नाथ मिश्र – माध्यस्थम् विधि।
3. डॉ. विनय एन. परांजपे – माध्यस्थम्, सुलह एव वैकल्पिक विवाद निवारण विधि।
4. डॉ. रमण – दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973

****

बिलासपुर जिले के एम. एड. के प्रशिक्षणार्थियों के शोध अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. प्रज्ञा यादव * अजय सिंह ठाकुर **

शोध सारांश – अनुसंधान के प्रति छात्रों में हमेशा नकारात्मक दृष्टिकोण पाया गया है, जिससे शोध कार्य में कठिनाई महसूस होती है। इस अध्ययन में शोध अभिवृत्ति का अध्ययन करने के लिए बिलासपुर जिले के शासकीय एवं अशासकीय शिक्षा महाविद्यालय/विश्वविद्यायलय के एम. एड. के 120 छात्रों का चयन किया गया। इस अध्ययन की परिकल्पना यह है कि बिलासपुर जिले के एम. एड. के छात्र एवं छात्राओं के शोध अभिवृत्ति में सार्थक अतंर नहीं पाया जाता होगा एवं शोध के सामान्य पक्ष एवं शोध प्रक्रिया की अभिवृत्ति का अध्ययन करना। इस शोध की मापनी में 42 प्रश्नों की सूची है, जो 4 आयामों शोध के सामान्य पक्ष एवं शोध प्रक्रिया, व्यवसायिक जीवन में शोध की उपयोगिता, व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में शोध से सम्बंधित एवं शोध कठिनाई एवं शोध दुश्चिंता में निहित है। ऑकड़ों का संग्रहण स्वयं के द्वारा विभिन्न शिक्षा महाविद्यालयों के शिक्षक प्रशिक्षकों से उनके कक्षा कक्ष अध्ययन के दौरान किया गया जिसमें एम. एड. (M. Ed.) के 120 प्रशिक्षणार्थियों को न्यादर्श के रूप में लिया गया। ऑकड़ों का विश्लेषण t - test के द्वारा किया गया। विश्लेषण से यह परिणाम प्राप्त हुआ कि छात्रों की तुलना में छात्राओं में शोध के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति अधिक पाई गयी है। जिसका कारण वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक आर्थिक और सामाजिक जीवन में स्वयं को स्थापित करना है।

शब्द कुंजी – अभिवृत्ति, शोध, दुश्चिंता, शिक्षा महाविद्यालय सकारात्मक।

प्रस्तावना – शोध हमारे दैनिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। शोध के द्वारा ही सभी तरह के अविष्कार सम्भव हुए हैं। शोध वर्तमान समय में समाज के सभी क्षेत्रों को प्रभावित करता है। चाहे वह क्षेत्र विज्ञान, चिकित्सा, शिक्षा, प्रौद्योगिकी, या कृषि का हो। शोध सूचनाओं का संग्रहण एवं विश्लेषण की एक प्रक्रिया है, जो हमारी अध्ययन के अन्तर्गत घटनाओं की समझ को विस्तारित करता है। (Swindoll, 2012) शिक्षा का मुख्य उद्देश्य समाज की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के अनुरूप बालक के व्यवहार को परिमार्जित करना है। व्यवहार के विभिन्न अवयवों में अभिवृत्तियों का अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। किसी वस्तु, व्यक्ति अथवा विचार के प्रति व्यक्ति किस प्रकार का व्यवहार करेगा, यह बहुत कुछ उस व्यक्ति की उनके प्रति बनी अभिवृत्तियों पर निर्भर करता है। व्यवहार ही नहीं व्यक्ति का सम्पूर्ण व्यक्तित्व भी उसके अभिवृत्तियों के अनुकुल ही ढलता है जो कुछ भी व्यक्ति सीखता है, वह सभी आदतों तथा रूचियों आदि को ग्रहण करता है वह सभी उसकी अभिवृत्तियों द्वारा प्रभावित होता है।

अभिवृत्ति, व्यवहार को दिशा प्रदान करने वाली वह अर्जित प्रवृत्ति है जो व्यक्ति को किसी विशेष वस्तु या वस्तुओं के प्रति एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने को तत्पर करती है। बशर्ते की वातावरणजन्य परिस्थितियों में कोई प्रतिकुल परिवर्तन न हो।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. बिलासपुर जिले के एम. एड. के छात्र और छात्राओं के शोध अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. बिलासपुर जिले के एम. एड. प्रशिक्षणार्थियों के शोध के सामान्य पक्ष एवं शोध प्रक्रिया की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना –

1. बिलासपुर जिले के एम. एड. के छात्र एवं छात्राओं के शोध अभिवृत्ति में सार्थक अतंर नहीं पाया जाता होगा।
2. बिलासपुर जिले के एम. एड. के प्रशिक्षणार्थियों (छात्र-छात्राओं) के शोध के सामान्य पक्ष एवं शोध प्रक्रिया का उनके अभिवृति में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता होगा।

अध्ययन की परिसीमन – अध्ययन की परिसीमन से आशय, अध्ययन हेतु निश्चित क्षेत्र से है। जिस क्षेत्र के अदंर इस शोध कार्य को सम्पादित करना है, इस शोध के लिए शोधार्थी द्वारा बिलासपुर जिले के एम. एड. के प्रशिक्षणार्थियों का चयन किया गया है।

शोध विधि – शोध कार्य के लिए प्रमाणीकृत प्रश्नावली (ए. एस. टी. आर.) विधि का प्रयोग किया गया है। इस अध्ययन कार्य को पूर्ण करने के लिए छत्तीसगढ़ राज्य के बिलासपुर जिले में अध्ययनरत एम. एड. के प्रशिक्षणार्थियों का चयन दैव निदर्शन प्रतिचयन पद्धति का प्रयोग किया गया है, जिसकी आवृत्ति कुल प्रशिक्षार्थियों का 120 है।

न्यादर्श – समष्टि के समस्त इकाईयों में से अध्ययन हेतु कुछ इकाईयों को निश्चित अवधि के लिए चुन लिया जाता है। उन संकल्ति इकाईयों के समूह को **न्यादर्श** कहते है।

'न्यादर्श जैसा कि इसके नाम से ही प्रकट होता है कि कुछ वृहद समूह का तुलनात्मक रूप से लघु प्रतिनिधित्व'।

-गुड एण्ड हैट

'न्यादर्श अपने समस्त समूह का का एक लघु चित्र होता है'।

-पी. वी. यंग

* सहायक प्राध्यापक (शिक्षा) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** एम.फिल (शिक्षा) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

न्यादर्श के रूप में शोधार्थी द्वारा बिलासपुर जिले के एम. एड. के प्रशिक्षार्थियों का चयन किया गया है, जिसमें 60 छात्र एवं 60 छात्राएँ हैं।

प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में डॉ. विशाल सूद एवं प्रो. वाय. के. शर्मा द्वारा प्रमाणिकृत ए. एस. टी. आर. (Attitude Scale Towards Research) उपकरण का उपयोग किया गया है।

निष्कर्ष –

परिकल्पना 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

परिकल्पना के जॉच हेतु एम. एड. के 60 छात्र और 60 छात्राओं का चयन किया गया तथा उनके प्राप्तांकों के आधार पर t-test किया गया तथा अंतर किया गया।

व्याख्या एवं विश्लेषण – उपरोक्त प्राप्तांकों के आधार पर छात्रों का मध्यमान 57 तथा छात्राओं का मध्यमान 59.33 रहा तथा इसी तरह छात्रों का SD क्रमश: 9.32 एवं 8.77 है तथा SED = 0.4 है।

गणना से प्राप्त टी–मूल्य परीक्षण का मान 1.41 है। तथा df = 118 पर 0.05 स्तर पर सारणीगत मान 1.96 तथा 0.01 स्तर पर सारणीगत मान 2.59 है, जो कि गणना द्वारा प्राप्त मान से ज्यादा है। अत: दोनों समूह छात्र एवं छात्राओं के शोध अभिवृत्ति में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। इस तरह हमारी पहली परिकल्पना स्वीकृत होती है। जिसका प्रमुख कारण छात्र एवं छात्राओं दोनों वर्गों में शोध के प्रति समान सकारात्मक अभिवृत्ति का होना पाया गया है। वर्तमान समय के बढ़ते प्रतिस्पर्धा में छात्र एवं छात्रा दोनों अपनी उज्ज्वल भविष्य हेतु शोध की उपयोगिता को आवश्यक एवं अनिवार्य मानते हैं। शोध के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का ही परिणाम है कि आज समाज के किसी भी क्षेत्र में चाहे वह आर्थिक, सामाजिक या राजनैतिक हो, छात्रों के साथ ही साथ छात्राओं का भी समान वर्चस्व देखने को मिलता है। आज छात्र एवं छात्राए दोनों शोध कार्य को सिर्फ सैद्धांतिक नहीं मानते बल्कि इनका वे अपने व्यवहारिक जीवन में भी प्रयोग करते हैं।

परिकल्पना 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

परिकल्पना के जॉच हेतु एम. एड. के 60 छात्र और 60 छात्राओं का चयन किया गया तथा उनके प्राप्तांको के आधार पर किया गया तथा अंतर किया गया।

व्याख्या एवं विश्लेषण :– उपरोक्त प्राप्तांकों के आधार पर छात्रों का मध्यमान =62.5 तथा छात्राओं का मध्यमान =54.5 रहा तथा इसी तरह छात्रों का डऊक्रमश : 7.2 एवं 7.00 है तथा SED =1.29 है।

गणना से प्राप्त **टी–मूल्य** परीक्षण का मान 6.80 है तथा वर्ष =118 पर 0.05 स्तर पर सारणीगत मान 1.96 तथा 0.01 स्तर पर सारणीगत मान 2.59 है जो कि गणना द्वारा प्राप्त मान से कम है। अत: इस स्तर पर हमारी परिकल्पना अस्वीकृत है। अत: दोनों समूह छात्र एवं छात्राओं के सामान्य पक्ष एवं शोध प्रक्रिया का उनके अभिवृत्ति में सार्थक अंतर पाया गया। इस तरह हमारी पहली परिकल्पना अस्वीकृत होती है। जिसका प्रमुख कारण सामाजिक, आर्थिक एवं बौद्धिक परिवेश है। इस तरह यह सिद्ध होता है कि एम. एड. के छात्रों में छात्राओं की तुलना में शोध अभिवृत्ति के प्रति अभिरूचि अधिक होती है।

शोध पत्र का शैक्षणिक महत्व – प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय शिक्षा के क्षेत्र में नये आयामों एवं प्रतिमानों को स्थापित करने में सहायक होगी। क्योंकि वर्तमान समय में शिक्षा के क्षेत्र में शोध अभिवृत्ति की न्यूनता पायी जा रही है। जो विभिन्न शोधों के माध्यम से भी स्पष्ट होता है एवं इस शोधपत्र के निष्कर्ष में भी यह बात दृष्टिगोचर होती है।

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन द्वारा शोध अभिवृत्ति का शैक्षिक महत्व इसलिए और अधिक बढ़ जाता है क्योंकि इससे शिक्षक प्रशिक्षकों को शोध के लिए प्रेरित किया जा सकता है। जिससे नवीन विषय तथा शैक्षिक समस्याओं के समाधान सरलता पूर्वक किया जा सकता है।
2. प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोध अभिवृत्ति की शैक्षिक महत्व इसलिए भी है चूंकि इससे शिक्षक प्रशिक्षकों में शोध की गंभीरता व शोध के प्रति जागरूकता जागृत किया जा सकता है।
3. शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त विभिन्न शैक्षिक समस्याओं को खोजने व उनके समाधान के लिए शिक्षक प्रशिक्षकों को प्रेरित करना भी शोध अभिवृत्ति के शैक्षिक महत्व के अंतर्गत आता है।
4. प्रस्तुत शोध का महत्व वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था व उसके परिणामों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि यदि शैक्षिक व्यवस्था में सुधार चाहिए तो उसके लिए शिक्षकों की अभिवृत्ति में सकारात्मक परिवर्तन लाना आवश्यक है। इसके लिए शिक्षक प्रशिक्षकों में शोध के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति का होना अवश्यम्भाव है इस तरह कहा जा सकता है कि शैक्षिक व्यवस्था के विकास के लिए शोध अभिवृत्ति का विशेष महत्व है।
5. शोध अभिवृत्ति का शैक्षिक महत्व इसलिए भी है कि इसके द्वारा शिक्षक प्रशिक्षकों को शोध के महत्व के बारे में जानकारी देने में सहायक होता है।
6. प्रस्तुत शोध अध्ययन द्वारा शिक्षक प्रशिक्षकों के शोध अभिवृत्ति को जानने में सहायक सिद्ध होगी।
7. प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि इसके द्वारा शिक्षक प्रशिक्षकों में शोध के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति का विकास होगा। जिससे शैक्षिक समस्याओं के समाधान के नवीन मार्ग प्रशस्त होंगे।
8. प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध शिक्षक प्रशिक्षकों में सकारात्मक शोध अभिवृत्ति के गुणों के पहचान में सहायक सिद्ध होगी तथा शोध अभिवृत्ति में सकारात्मक परिवर्तन लाने में सहायक सिद्ध होगी।
9. प्रस्तुत शोध अध्ययन शिक्षक प्रशिक्षकों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति के विकास में सहायक होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Dr. Sood, Vishal; Attitude Scale towards Research: Mansvi, Agra
2. Sadia Shaukat ; 2014 “Postgraduate Students` Attitudes towards Rasearch'(Bulletin of Education and Research June, Vol. 36, No. 1 pp. 111-122
3. Swindoll, C. R. (2012). Quotable quotes. Retrieved from http://www.goodreads.com/ quotes/267482-the-longer-i-live-the-more-i-realize-theimpact,retrived on 02-07-2013.
4. Sridevi]K.V.; (2014) “Attitude of M.Ed. Student towards Research' www.aiaer.net> e-Journal Vol 20108.
5. Chack, Nancy Holin (2012) “Update and Validation of a Teachers Attitudes towards Education Research Scale' George Manson University.

परिकल्पना 1 – बिलासपुर जिले के एम. एड. के प्रशिक्षणार्थियों (छात्र–छात्राओं) के शोध अभिवृति में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

	N	मध्यमान	SD	SED	t-test	df	सार्थकत स्तर	निष्कर्ष
छात्र	60	57	9.32	0.4	1.41	118	0.05=1.96	स्वीकृत
छात्राएं	60	59.33	8.77				0.01=2.59	

परिकल्पना 2 – बिलासपुर जिले के एम. एड. के प्रशिक्षणार्थियों (छात्र–छात्राओं) के शोध के सामान्य पक्ष एवं शोध प्रक्रिया का उनके अभिवृति में सार्थक अंतर नही पाया जाएगा।

	N	मध्यमान	SD	SED	t-test	df	सार्थकत स्तर	निष्कर्ष
छात्र	60	62.5	7.2	1.29	6.20	118	0.05=1.96	अस्वीकृत
छात्राएँ	60	54.5	7.00				0.01=2.59	

****

जीवन कौशल शिक्षा - उद्देश्य एवं आवश्यकता

पूजा राघव *

प्रस्तावना - वर्तमान समय में शिक्षा का उद्देश्य बालक को उन सभी कौशलों का ज्ञान प्रदान करना है, जो कि एक कुशल नागरिक एवं सामाजिक सदस्य में होते हैं। अनेक अवसरों पर पढ़े-लिखे व्यक्तियों का आचरण इस प्रकार का होता है, जो कि सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप नहीं होता। वह समाज में गलत एवं असामाजिक व्यवस्था के अनुरूप नहीं होता। वह समाज में गलत एवं असामाजिक व्यवहार करने लगता है। इस आधार पर ऐसे व्यक्तियों के लिए कहते हैं कि तुम **'पढ़े हो पर गुने नहीं हो'**। दूसरे शब्दों में ऐसे व्यक्तियों में जीवन कौशलों का विकास नहीं हो पाता। इस आधार पर उनका किताबी ज्ञान उनको एक प्रतिष्ठित नागरिक एवं सामाजिक सदस्य नहीं बना पाता। वर्तमान समय में इस तथ्य को ध्यान में रखकर शिक्षा का स्वरूप कौशल आधारित कर दिया गया।

कहने को तो शिक्षा को जीवन कौशल शिक्षा से जोड़ दिया गया है परन्तु क्या व्यक्ति व्यवहार से शिक्षित हो गया है? क्या कारण है कि युवा वर्ग हताश, तनाव व असफलता के तंत्रजाल में फंसता जा रहा है। क्या कारण है कि वह जीवन की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम नहीं हो पा रहा? सामान्य शब्दों में कहें तो वह योग्यता जो व्यक्ति को मानसिक रूप से सुदृढ़ एवं योग्य बनाने में सहायक होती है, जिससे वे जीवन की चुनौतियों का, वास्तविकताओं का सामना करने में सक्षम हो सके, जीवन कौशल कहलाती है अर्थात् ज्ञान, क्रिया, भावना में संतुलन के साथ जीवन की वास्तविक परिस्थितयों में ज्ञान का प्रयोग करने में समर्थ, संवेगात्मक रूप से स्थिर एंव क्रियाशील नई पीढ़ी का निर्माण करने वाली शिक्षा, जीवन कौशल शिक्षा है।

आज के अति-प्रतियोगिता के युग में चिन्तन कौशलों का निर्माण करने हेतु सूचना की पूर्ण आवश्यकता है। हांलाकि केवल ज्ञान होना इस बात को सुनिश्चित नहीं करता कि सूचना से परिपूर्ण एक व्यक्ति विवेकपूर्ण निर्णय लेने, समस्याओं को सुलझाने, दूसरों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने और विवेकपूर्ण व प्रभावी ढंग से व्यवहार करने योग्य होगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.,1994) के अनुसार जीवन कौशल, **'अनुकूलनात्मक और सकारात्मक व्यवहार के वे योग्यताएं हैं, जो व्यक्तियों को दैनिक जीवन की मांगों और चुनौतियों से प्रभावपूर्ण समायोजन करने योग्य बनाती है।'** जीवन कौशल ज्ञान, अभिव्यक्ति और मूल्यों को वास्तविक योग्यताओं में बदलने योग्य बनाती है। यूनीसेफ के अनुसार, **'जीवन कौशल केन्द्रीय योग्यताओं का एक संघ है, जिसे कभी-कभी भावात्मक बुद्धि के रूप में वर्णित किया गया है।'** इसमें मूलभूत कौशल जैसे- स्वजागरूकता, परानुभूति, प्रभावपूर्ण सम्प्रेषण, अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध संवेगो से निपटने व प्रतिबल का सामना करने की योग्यता विवेचनात्मक चिन्तन, सृजनात्मक चिन्तन, निर्णय लेना एवं समस्या-समाधान को सम्मिलित किया जाता है।

जीवन कौशल शिक्षा के अभाव में व्यक्ति अपनी विषम परिस्थितियों से उबरने में कठिनाईयों का अनुभव करता है। एक बालक को विद्यालय में सिखाया जाता है कि माता-पिता, गुरूजन व बड़ों का सम्मान करें, लैंगिक भेदभाव न करें, अपने व्यवहार में शालीनता लाए विषम परिस्थितियों में संयम बरतकर उसे सुलझाने की कोशिश करें। मानव, जीवन में कुशलता प्राप्त करने के बाद ही कुशल नागरिक बन पाता है। जीवन में कुशलता प्राप्त करने के लिए कौशलों की नींव रखने वाली मूल संस्थाए परिवार और विद्यालय हैं।

जीवन कौशल शिक्षा के उद्देश्य - जीवन कौशल की शिक्षा के मूल में छात्रों के विकास के अनेक उद्देश्य समाहित है। इनमें से प्रमुख उद्देश्य हैं-

1. सामाजिक विकास का पूर्ण सम्बन्ध जीवन कौशलों से होता है। विभिन्न प्रकार के जीवन कौशलों को सीखने के बाद छात्रों में सामाजिक गुणों का विकास सम्भव होता है तथा वे सामाजिक व्यवहार में निपुण हो जाते हैं।
2. जीवन कौशलों का ज्ञान कराने का मूल उद्देश्य छात्रों को प्रयोगात्मक कुशलता से परिचय कराना माना जाता है अर्थात् छात्रों को जीवन की परिस्थितियों में किस प्रकार मर्यादित व्यवहार करना चाहिए, यह सिखाया जाता है।
3. छात्रों में समायोजन की शक्ति को जीवन कौशल शिक्षा के माध्यम से विकसित किया जाता है, जिससे वे जीवन में समायोजित हो सके।
4. जीवन मूल्यों का विकास जीवन कौशलों के माध्यम से किया जा सकता है। इसके द्वारा छात्रों में सामाजिक मूल्य, आर्थिक मूल्य एवं राजनीतिक मूल्यों का विकास होता है, जिससे छात्र उक्त क्षेत्रों में सफलता प्राप्त कर लेता है।
5. छात्रों में जीवन कौशलों के विकास का मूल उद्देश्य संवेगात्मक स्थिरता लाना है, जिससे वह अपने जीवन में दूसरों के संवेगों को समझ सके तथा अपने संवेगों पर नियन्त्रण रख सके। इस प्रक्रिया से छात्रों का मानसिक विकास तीव्र गति से होता है।
6. छात्रों के सर्वांगीण विकास के उद्देश्य को ध्यान में रखकर उनमें जीवन के लिए अनिवार्य सभी कौशलों का विकास किया जाता है।
7. जीवन कौशल की शिक्षा के अन्तर्गत आत्म-विश्वास की भावना का विकास किया जाता है क्योंकि आत्म-विश्वास के ज्ञान के अभाव में छात्रों द्वारा कोई भी कार्य उचित रूप में सम्पन्न नहीं किया जा सकता।

जीवन कौशल शिक्षा की आवश्यकता - जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए विभिन्न प्रकार के कौशलों की आवश्यकता होती है। जीवन कौशलों का अध्ययन कोई नया उपागम नहीं है। विश्वभर में विभिन्न जीवन

* व्याख्याता, दीपशिखा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, सीतापुरा, जयपुर (राज.) भारत

कौशलों का विकास किशोर बालकों के कार्यक्रमों का एक अभिन्न हिस्सा है। किशोरों की समाज विरोधी आक्रामक प्रवृत्तियों पर रोक लगाने हेतु सम्प्रेषण कौशल का प्रयोग किया गया है। विभिन्न विभेदकारी परियोजनाओं के बढ़ते अग्रसित कदम जो विभिन्न व्यवहारों और गुणवत्ताओं के माध्यम से सम्बोधित करते हैं, उनमें जीवन कौशल उपागम एक प्रभावी साधन के रूप में पहचाना गया है।

किशोर बालक अध्ययन के बाद अपने फैसले स्वंय लेने में सक्षम नहीं हो पाता। विद्यार्थी जीवन की सच्चाईयों व व्यवहारिकता से परिचित नहीं हो पाता है। इसी को ध्यान में रखते हुए संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष के अनुदान से देशव्यापी परियोजना के तहत विद्यालय स्तर पर **'जीवन कौशल शिक्षा'** लागू की जा रही है। राजस्थान देश का पहला राज्य है, जहाँ उच्च माध्यमिक स्तर पर अनिवार्य विषय के रूप में इसे लागू किया जा रहा है।

शिक्षा में इस प्रकार का बदलाव आवश्यक है कि जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए विद्यार्थीकाल में उसे विभिन्न कौशल ज्ञान से पारंगत किया जाए। शिक्षा प्रत्येक निर्माण के पीछे एक क्रियात्मक शक्ति है। जीवन कौशल शिक्षा के केन्द्र में शान्ति, सद्भाव तथा अंहिसा की शिक्षा से सामाजिक परिवर्तन के प्रति सकारात्मक सोच विकसित होगी। जीवन कौशल शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों को स्वंय को जानने, पहचानने का अवसर मिलेगा, जिससे वे जीवन की चुनौतियों को स्वीकार कर सकेगें तथा उनके सम्बन्ध में एक स्वस्थ समाज के निर्णय में अपनी भूमिका निभा सकेगें। भविष्य के प्रति एक सकरात्मक दृष्टिकोण के साथ राष्ट्र निर्माण में योगदान कर सकेगें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. अरोड़ा, रीता: 2005 शिक्षा में नव चिन्तन, शिक्षा प्रकाशन, जयपुर
2. शर्मा, तिलक राज: 2003, जीवन शिक्षा, एच.पी.भार्गव बुक हाउस, आगरा
3. सिंह, एच.पी: 2015, समसामयिक भारत और शिक्षा, (NCTE) राधा प्रकाशन, आगरा

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

A Comparative Study Of 100 Meter Racers And 100 Meter Swimmers On The Basis Of Determination And Motivation

Dr. Gajender Singh Saroha * Ashish Kumar **

Abstract - Race and swimming are very popular across the world. Competition in both games is very high and increasing rapidly even at district level tournaments. Players need to be determined and motivated to perform well. A comparative study of 100 meter racers and 100 meter swimmers has been conducted on the basis of determination and motivation. 30 - 30 athletes from both games were selected and their level of determination and motivation was judged and compared. A structured questionnaire was used to judge the level of determination and motivation. Z test was used to judge the level of significance.
Key words -100 meter racers, 100 meter swimmers, determination, motivation.

Introduction - Determination and motivation are very essential for athletes. If the level of both is low among racer or swimmer their performance will be hampered. There are many physical, mental, psychological, social and behavioural aspects on which level of determination and motivation depends. 100 meter race and 100 meter swimming are the activities in which determination and motivation plays vital role so it was considered appropriate to compare the level of determination and motivation between 100 meter racers and 100 meter swimmers. It is always desirable to keep the level of determination and motivation at reasonably high level among 100 meter racers and swimmers.

Developing speed in any athlete is a challenge. Track coaches, strength and conditioning specialists and sport scientists have been contemplating how to provide the right amount of resistance without negatively affecting the sprint mechanics of a sprinter for years.

Objectives of research -

1. To study the level of determination among district level 100 meter racers and 100 meter swimmers.
2. To study the level of motivation among district level 100 meter racers and 100 meter swimmers.
3. To compare the level of determination between 100 meter racers and 100 meter swimmers.
4. To compare the level of motivation between 100 meter racers and 100 meter swimmers.

Hypothesis of Research -

1. There is no significant difference between the level of determination of 100 meter racers and 100 meter swimmers.
2. There is no significant difference between the level of motivation of 100 meter racers and 100 meter swimmers.

Sample of Research - District level 100 meter racers and 100 meter swimmers were randomly selected from two cities of Uttar Pradesh namely Agra and Mathura.

City	100 Meter Racers	100 Meter Swimmers
Agra	15	15
Mathura	15	15
Total	30	30

Research Tool - A self developed questionnaire having 12 questions relating to determination and 12 questions relating to motivation was used for racers and swimmers. Each question was given with 5 options for which 1 to 5 points were assigned.

Determination Level - Determination is very important for racers as well as swimmers. The competition is very intensified even at district level so the player has to be determined to perform well irrespective of the situation/ environment. The determination level of selected 100 meter racers and 100 meter swimmers was ascertained through a questionnaire. The scores of determination level of racers and swimmers were presented in the following chart.

Chart -1 (See in the next page)

Comparison of determination level between 100 meter racers and 100 meter swimmers

It is clear from the chart that determination level of swimmers was comparatively higher than racers. To ascertain whether the difference is significant Z test was conducted. As per the test calculated value of Z was 1.6707. It was lesser than tabulated value of Z (1.96) at 5% level of significance. Hence the first hypothesis is accepted that there is no significant difference between the level of determination of 100 meter racers and 100 meter swimmers.**(Table see in the next page)**

*Associate Professor, Pacific College of Physical Education, PAHER University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Pacific Academy of Higher Education & Research University, Udaipur (Raj.) INDIA

Motivation Level - Players should be motivated to take part in sport and feel enthusiastic about winning the game. The motivation level of selected 100 meter racers and 100 meter swimmers was ascertained through a questionnaire. The scores of motivation level of racers and swimmers were presented in the following chart.

Chart -2 (See in the next page)

Comparison of motivation level between 100 meter racers and 100 meter swimmers

It is clear from the chart that motivation level of swimmers was comparatively higher than racers. To ascertain whether the difference is significant Z test was conducted. As per the test calculated value of Z was 2.0007. It was higher than tabulated value of Z (1.96) at 5% level of significance. Hence the second hypothesis is rejected that there is no significant difference between the level of motivation of 100 meter racers and 100 meter swimmers.

(See in the next page)

Findings & Conclusion -

1. Determination level of swimmers was little higher than racers but it is not significant. Efforts should be made to increase the level of determination among swimmers as well as racers.
2. Motivation level of swimmers was significantly higher than racers. Efforts should be made to increase the level of motivation among swimmers as well as racers. Though it is more required in racing.

References:-

1. Burton, A. W., D. E. Miller : Movement Skill Assessment.Human Kinetics, 1998.
2. Juan Gonzalez and Shannon Beckwith , NSCA's performance training journal, volume 8 issue 3, pg.8
3. Faccioni, A. Assisted and resisted methods for speed development: Part 2. Modern Athlete and Coach 32:8 – 12. 1994.
4. Schnabel, A. and W. Kindermann, Assessment of Anaerobic Capacity in Runners, European Journal of Applied Physiology, 42-46, 1983.

Chart -1 - Comparison of determination level between 100 meter racers and 100 meter swimmers

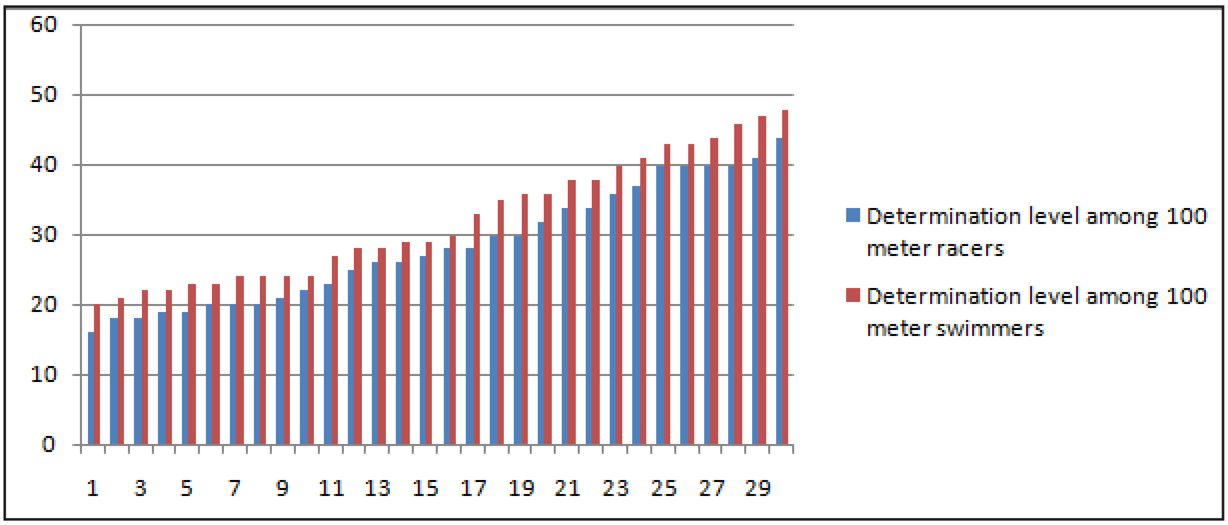

Particular	Mean	Standard Deviation	Z value	Z Table value at 5% level of significance	Hypothesis
100 meter racers	28.47	8.43	1.6707	1.96	Accepted
100 meter swimmers	32.2	8.87			

Chart - 2 - Comparison of motivation level between 100 meter racers and 100 meter swimmers

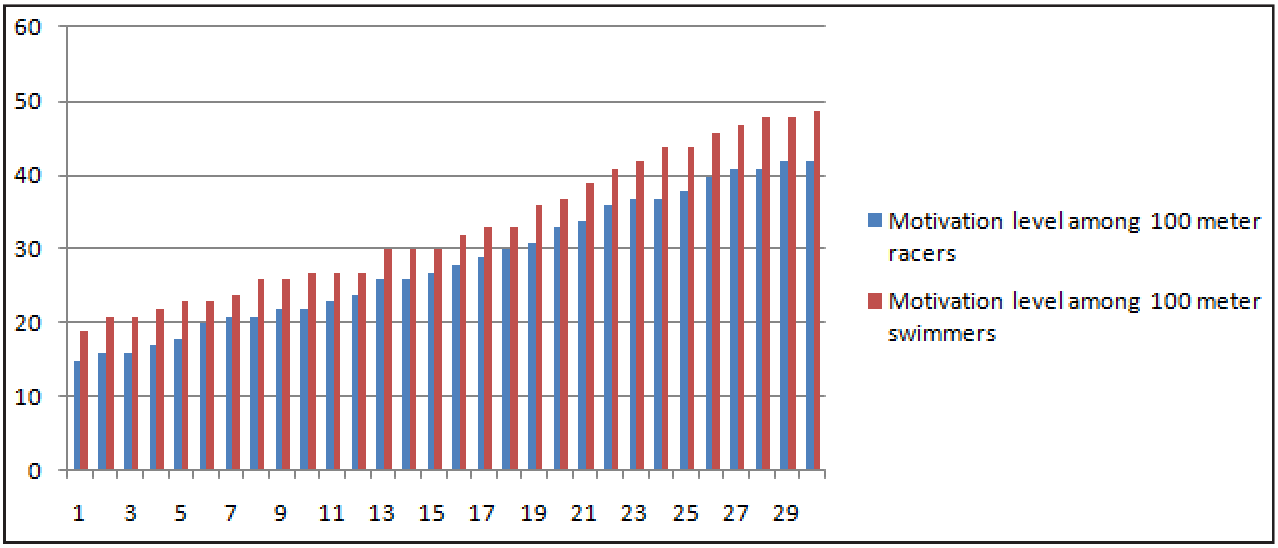

Particular	Mean	Standard Deviation	Z value	Z Table value at 5% level of significance	Hypothesis
100 meter racers	28.43	8.77	2.00	1.96	Rejected
100 meter swimmers	33.17	9.54			

****

शारीरिक शिक्षा एवं चिकित्सा के नये आयाम

संजय कुमार *

प्रस्तावना – आज के इस बदलते परिवेष में मानव भौतिक विलासता के पीछे भागते हुए मानवता को बहुत पीछे छोड चुका है। मनुष्यता मिटती जा रही है, और हम एक मशीन से ज्यादा कुछ नहीं है। मनुष्य का मनुष्य होना मानव की महानता है कि कहावत भी धुधली होती जा रही है। ऐसी स्थिति में हमे अपने शरीर का ध्यान देने का समय ही नहीं है, और इसी वजह से हम किसी न किसी व्याधि से ग्रस्त होते जा रहे है। दुनिया के लगभग पचासवें प्रतिशत जनसंख्या किसी न किसी रोग से ग्रस्त है। ऐसी स्थिति में हमे अपने शरीर को स्वस्थ्य रखने का हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। ताकि हम एवं स्वस्थ्य विश्व का निर्माण कर सके अगर हम स्वस्थ्य होगें तो तभी हमारा समाज स्वास्थ होगा और हम गर्व से कहेगें की हम मानव है।

अपने शरीर को स्वस्थ्य रखने की दिशा में शारीरिक शिक्षा कारगार साबित हो सकता है क्योकि कहते है कि **स्वस्थ्य शरीर में ही स्वस्थ्य मन का निवास करता है।** इसलिये हमें अपने व्यस्तम समय में से हमे अपने शरीर के लिए भी कुछ वक्त निकालकर शारीरिक क्रियाओं में भी समय देना चाहिए । तभी हम स्वस्थ्य समाज के निर्माण में अपना सहयोग दे सकते है क्योंकि सच्चरित्र नागरिक ही देश की अमूल्य सम्पति होते है। किसी भी देश की समृद्धि एवं उत्थान उस देश के सच्चरित्र एवं नैतिक नागरिकों पर निर्भर करता है।

शारीरिक शिक्षा – भारत के प्रथम प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू ने कहा था। पुरातन काल में भारतीय ग्रीक चीनियों तथा अरबो की तरह इतिहास कार नही थे यह हमारी वदकिस्मती रही है, जिससे हमे तरीखों तय करने तथा सही कालानुक्रम मे अत्यन्त कठिनाई आई है।

भारत में शारीरिक शिक्षा का विकास कई हजार वर्ष पहले आरम्भ हो गया था। जिसकी झलक हमे अपने महाकाव्यों रामायण, महाभारत, वेदों और कालीदास के काव्य तथा फाह्ययान एवं हनूंसाग द्वारा लिखित कृतियों में मिलती है। प्राचीन लोगो का मानना था कि शरीर और मास्तिस्क का सन्तुलन वैदिक शक्ति उत्पन्न करता है। जिस कारण मनुष्य की मांसपेसियो निढ़ाल हो रही है, सुन्दर बनने के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति का शरीर सुन्दर तथा सुडौल हो उनकी मानसिक शक्तियों के विकास के साथ–साथ उसका नैतिक विकास भी होना आवश्यक है शिक्षा प्रणाली वही उत्तम कहलाती है जिनमे व्यक्ति व्यक्तित्व का संतुलित विकास हो वर्तमान शिक्षा प्रणाली मे यह संतुलन प्राय: नहीं देखा जाता है। आज तो शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है जिससे वालक का विकास हो सके। इसमे मानसिक सामाजिक शारीरिक तथा संवेगात्मक विकास की ओर पूर्ण ध्यान दिया जाना चाहिऐ। इसलिए यह आवश्यक है कि वालक को सामान्य शिक्षा के साथ साथ शारीरिक शिक्षा का भी ज्ञान प्राप्त करवाया जाए।

प्राचीन काल मे शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का सर्वागीण विकास करना था। जिसमे शारीरिक विकास तथा स्वास्थ विकास भी सम्मिलित था यदि शारीरिक शिक्षा का शाब्दिक अर्थ ग्रहण किया जाए तो स्पष्टत: परिलक्षित होता है कि इसमें मूलत: दो शब्द निहित है। शारीरिक शिक्षा अर्थात शरीर से संबधित दी जाने वाली शिक्षा । सामान्य बोल चाल की भाषा मे शारीरिक शिक्षा का अर्थ प्राय: शारीरिक क्रियाओं अथवा गतिविधियों से लिया जाता है। वस्तुत: शारीरिक शिक्षा के मूल अर्थ एवं प्रत्यय थे परिवर्तन युगीन परिस्थितियों एवं आवश्यकताओ के अनुसार होता रहा है। परन्तु फिर भी शारीरिक शिक्षा के मूल अर्थ को संक्षेपत: व्यक्त करते हुए कहा जा सकता है कि शारीरिक शिक्षा वह शिक्षा है। जो स्वास्थ शारीरिक विकास हेतु विविध आंगिक क्रियाओं एवं कार्यक्रमों द्वारा दी जाती है। जो न केवल बालक के शारीरिक पक्ष को प्रबल व पुष्ट बनाती वरन इससे उसके व्यक्तित्व के अन्य पक्ष यथा मानसिक संवेगात्मक सामजिक एवं नैतिक पक्ष भी सुविकसित होते है

शारीरिक शिक्षा की परिभाषा –

(1) शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रकाशित रिपोट – के शब्दों में 'शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन की राष्ट्रीय योजना अनुसार शारीरिक शिक्षा एक ऐसी शिक्षा है जो वच्चे को सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास हेतु क्रियाओं द्वारा शरीर मन तथा आत्मा की पूर्णता की ओर बढ़ती है।

(2) आर. कैसडी – के शब्दों में 'शारीरिक शिक्षा मनुष्य के भीतर उन परिवर्तनों का समूह है, जो गति भरे अनुभवो द्वारा होती है' ।

(3) चार्ल्स ए. बुचर – के शब्दो मे 'शारीरिक शिक्षा सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग और उद्यय का क्षेत्र है जिसका उद्देश्य शारीरिक मानसिक आवश्यकता तथा सामाजिक रूप से सम्पूर्ण नागरिकों का इस प्रकार की क्रियाओं द्वारा विकास करना है जिनका चयन उनके उद्देश्यों की पूर्ति को ध्यान में रखकर किया गया है'।

(4) जे.वी. नैश – के शब्दों में 'शारीरिक शिक्षा समूची शिक्षा का वह अंग है जो बड़ी मांसपेशियो से सम्बन्धित क्रियाओ एवं उनसे सम्बन्धित प्रतिकियाओ से जुड़ा हुआ है'।

(5) जे. पी. थॉमस – के शब्दो मे 'शारीरिक शिक्षा शारीरिक गतिविधियों द्वारा वालक के समग्र व्यक्तित्व विकास हेतु दी जाने वाली शिक्षा है'।

शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व – ज्ञान केन्द्रित परीक्षा केन्द्रित एवं शिक्षक केन्द्रित शिक्षा प्रक्रिया में बालक का अस्तित्व जब गौण हो गया हो तो इसकी तीव्र प्रतिक्रिया स्वरूप बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में बाल केन्द्रित शिक्षा Child centerded education का आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। रूसो तथा अन्य प्रकृतिवादी दार्शनिकों ने शिक्षा मे बालक के उपेक्षित स्थान को चुनौती स्वरूप लिया तथा बालकेन्द्रित शिक्षा का नारा बुलन्द किया और बालक को प्राकृतिक एवं स्वतन्त्र वातावरण में शिक्षा प्रदान करने पर बल दिया। उन्होंने सर्वथा कृत्रिम अथवा अप्राकृतिक शिक्षा पद्धति का विरोध किया तथा Go Back To Nature का नारा बुलन्द किया। उनके अनुसार केवल प्राकृतिक एवं स्वतन्त्र वातावरण में ही बालक को स्वाभाविक कृतियों एवं जन्मजात क्षमताओं का विकास संभव है।

* अतिथि विद्वान (क्रीड़ा) नवीन शासकीय महाविद्यालय, चंदिया, जिला-उमरिया (म.प्र.) भारत

परिणामत: शिक्षा विषय केन्द्रित या शिक्षक–केन्द्रित से हटकर बाल–केन्द्रित हो गई और पुराना वाक्य 'राम लैटिन पढ़ता है आ गया। इस प्रकार लैटिन और शिक्षक से कही अधिक महत्वपूर्ण हो गया बालक या राम।कहा गया है कि 'स्वस्थ्य शरीर में ही स्वस्थ्य मस्तिष्क निवास करता है' यदि उक्त उक्ति पर चिंतन मनन किया जाए तो इसकी सार्थकता पर कोई प्रश्न चिन्ह् नहीं लगाया जा सकता। चूंकि स्वस्थ्य शरीर ही व्यक्ति की सम्पूर्ण क्षमताओं के विकास को आधार प्रदान करता है। जिस प्रकार नीव मजबूत होने पर भवन की सुरक्षा व मियाद को सहज स्वीकार कर लिया जाता है। ठीक उसी प्रकार स्वस्थ शरीर के लिए भी यही कहा जा सकता है कि स्वस्थ शरीर बालक की समग्र क्षमताओं के विकास उसके विविध व्यक्तित्व संबंधी पहलुओं को एक सुरक्षित आधार प्रदान करना है। इसका कारण यह है कि एक शारीरिक दृष्टि से अस्वस्थ बालक चतुर्मुखी व्यक्तित्व का धनी नहीं हो सकता है। प्राचीन काल से ही शरीरिक शिक्षा का प्रचलन समाज में रहा है। जैसे जैसे सभ्यताओं का विकास होता गया, उसके साथ ही शारीरिक शिक्षा का विकास होता गया।

स्वास्थ्य शिक्षा एवं उपचार की पद्धतियां – मनुष्य के स्वास्थ को ठीक रखना हमारे लिए चिंता का विषय बन गया है। शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रमों मे स्वास्थ्य का बड़ा योगदान है, जबकि स्वास्थ, शारीरिक क्रियाओं पर निर्भर करता है। शारीरिक शिक्षा का एक अच्छा बना हुआ कार्यक्रम, स्वास्थ के लिये लाभदायक सिद्ध हो सकता है। फिर भी स्वच्छता, संचारी रोगों से बचाव, स्वच्छ अवस्था, बीमारियों का ईलाज, पर्याप्त मात्रा में संतुलित भोजन, नियमित रहन–सहन आदि कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कारण है, जिन पर स्वास्थ निर्भर करता है। इन्हीं बिन्दुओं पर स्वास्थ्य विषयक शिक्षा स्वास्थ्य शिक्षा कहलाता है। उपर्युक्त बिन्दुओ के बावजूद भी हमें बीमारिया घेर ही लेती है और उन्में से कुछ बीमरिया लाइलाज भी होती है। उन्ही लाइलाज बीमारियों का इलाज कई रूपों में किया जा रहा है उनमें से कुछ विधिया तो नई और कुछ पारम्परिक है उनमें से कुछ पर विचार करते है।

योग – योग शब्द मूल संस्कृत युज से आया है जिसका तात्पर्य संलग्न युज से आया है, जिसका तात्पर्य संलग्न होने या सम्मिलित करने का भाव है। योग को व्यापक रूप से 2700 ईस्वी पूर्व सिंधु सरस्वती घाटी सभ्यता की एक अमिट सांस्कृतिक विरासत के रूप में माना जाता है। योग ने मानवता के भौतिक और अध्यात्मिक दोनों ही उत्थान में अपनी भूमिका को साबित कर दिया है।

स्वास्थ्य और कल्याण के लिए योग क्रियाएं – व्यापक रूप से की जाने वाली योग साधनाएं (आचरण) ही योग, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार धारण, ध्यान (मेडीटेशन) समाधि संयम,वंध,और मुद्राए, सतकर्म युक्ताहार, मुक्तकर्म मंत्रजाप इत्यादि।

चिकित्सा के रूप मे योग – योग सिद्धान्तों और पद्धतियों का उपचार के लिए इस्तेमाल योग चिकित्सा कहलाता है। उपचारात्मक उद्देश्यों के लिए योग पद्धतियो का इस्तेमाल योग का ही एक उप उत्पाद है। योग पद्धतियों से मन केन्द्रित होता है और यदि हम उपनिषद् गीता, योग,सूत्र, प्राचीन हठ योग ग्रन्थो या अन्य योग मन और इसकी विभिन्न शाखाओं की स्वतन्त्रता के लिए निहित एक अनुशासन ही ग्रंथो जो अपनी स्पष्ट स्थिति वताने के लिए स्वंय को उसके स्तर तक ले जाता है। हालाकि पंतजलि के योग उपकरणों की उपलब्धता से सम्बन्धित कोई सदर्भ नहीं है। लेकिन इसमे व्याधि शब्द का उल्लेख बाधाओं के रूप मे हुआ है जिसका अर्थ बीमारी है बेशक हठ योग प्रदीपिका संबंधित योग याज्ञवल्क्य योग रहस्य जैसे हठ योग ग्रंन्थों मे इसके प्रत्यक्ष संदर्भ भी उपलब्ध है। जो दिखाते है कि कैसे क्रियाओं आसनों प्राणायाम और मुद्राओं के प्रयोग से रोगो का निदान किया जा सकता है। योगकार्य संधिता को निदान के उद्देश्य से योग की पद्धति विकसित करने में वर्षो लगे। इन पद्धतियों को उनके शिष्यो के माध्यम से अगली पीढ़ियों को सौप दिया गया। जो इनका योग चिकित्सा की परम्पराओ के रूप मे अभ्यास करते है। योग चिकित्सा निम्नलिखित सिद्धान्तों और अवधारणाओं पर आधारित है।

- पंतजलि के योग सूत्र में पाये गए चित्त वृतितनिरोध क्रियायोग और अंष्टांग के सिद्धांत।
- उपनिषद्यो मे पाये पंचकोष के सिद्धांत (पंचशील/दैहिक)।
- पंतजलि योग सूत्र और हठयोग में प्राप्त विभिन्न प्रकार की शुद्धि के सिद्धान्त।
- हठ योग, और कुण्डलिनि योग, में प्राप्त वायु और प्राण (नादशुद्धि) की अवरुध नलियों कमल और चक्र, प्राणायाम, मुद्राओं और चक्र, प्राणायाम मुद्राओं और दृष्टि को खोलने के सिद्धान्त।
- पंतजलि योग सूत्र मंत्र योग हठ योग की तर्ज पर मन के साथ कार्य करना ।
- भगवद्गीता के कर्म ज्ञान भक्ति के अनुरूप कार्य करना।
- तंत्र योग के कतिपय पहलू भी विभिन्न योग पद्धतियों मे एकीकृत हो जाते हैं।

योग की क्रिया प्रणाली – निम्नलिखित कुछ तंत्र है जिनके माध्यम से योग एक एकीकृत मन शरीर औषधि के रूप मे कार्य करता है

1. शरीर मे संचित विशाक्त पदार्थो को विभिन्न शुद्धि क्रियाओं के माध्यम से परिकृत करता है और यौगिक सूक्ष्म व्यायम (शरीर के सभी जोडो और स्नायु के लिए) सरल सूक्ष्म गति के माध्यम से भार सहित विश्राम की भावना उत्पन्न करता है।
2. उचित पौष्टिक आहार के साथ एक यौगिक जीवन शैली शरीर के सकारात्मक प्रति उपचायन में वृद्धि करता है और इस क्रम मे स्वंतत्र मूलको को निष्क्रि य कर जीवन ऊर्जा उपाचय विरोधक और स्वत: आरोग्य करने वाली प्रक्रियाओं से भरे पोशक तत्वों के चक्र को पुन: सक्रीय करता है।
3. यह विभिन्न शारीरिक मुद्राओं के माध्याम से तनाव रहित स्थिर और सहज ढ़ग से पूरे शरीर को संभाल सकता है। शारीरिक संतुलन और आत्म सहजता की भावना मानसिक भावनात्मक सतुंलन बढ़ाने और सभी शरीरिक प्रक्रियाओं को स्वस्थ तरीके से करने में सक्षम करता है।

प्राकृतिक चिकित्सा – प्राकृतिक चिकित्सा परंपरागत चिकित्सा की तुलना में कम मंहगी होती है और लम्बे समय से चले आ रहे रोगों के इलाज का समाधान होता है व यह उन लोगों के लिए स्वास्थ देखभाल उपलब्ध कराती है जो मंहगे उपचार का खर्चा नहीं उठा सकते है। यह सक्षम स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली को अपनाया जाना और प्रयोग को अपनाया स्वास्थ देखभाल लागतो का प्रबंधन करने का व देखभाल की गुणवत्ता को बेहतर करने का एक प्रभावी तरीका हो सकता है।

प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली – प्राकृतिक चिकित्सा व्यक्ति को शारीरिक मानसिक नैतिक और आध्यात्मिक स्तर पर प्रकृति में संरचनात्मक सिद्धांत के साथ सामंजस्यता के साथ निर्माण करने की एक प्रणाली है। प्राकृतिक चिकित्सा प्राकृतिक देखभाल और प्राकृतिक थेरेपी इस पद्यति को दिए जाने वाले कुछ नाम है। जिनमें रोगों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए सात

तत्वों का प्रयोग किया जाता है अर्थात आकाश,वायु,अग्नि,जल,मिट्टी,आहार और रामनाम। प्राकृतिक चिकित्सा का यह मानना है कि शरीर में होने वाले सभी रोग अधिकतर व्यक्ति के खानपान की गलत आदतों व एक गलत जीवन शैली का पालन करने के कारण रोगजन्य पदार्थो/जहर के एकत्र होने के कारण होते है।

यह इस सिद्धांत पर आधारित होता है कि प्राकृतिक की एक चिकित्सा है, जहर को निकालकर रोगियों के स्वास्थ को वापस लाने के लिए केवल प्राकृतिक तत्वों का ही प्रयोग किया जाए। प्राकृतिक चिकित्सा की मुख्य शक्ति न केवल रक्षात्मक अपितु उपचारात्मक सेवाएं प्रदान करना भी है। यह प्रणाली 60 वर्ष से अधिक के लोगों के बीच में कई प्रकार के गंभीर रोगो के उपचार में बहुत ही उपयोगी पाई गई है।

प्राकृतिक खाद्य स्त्रोतों के अतिरिक्त प्राकृतिक चिकित्सा कई प्रकार के उपचारात्मक प्रयोग भी करता है, जो पूरे विश्व में लाखों लोगो को लाभ पहुँचा चुके है कुछ प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सा उपचार पद्धतियां इस प्रकार है।

1. हाइड्रोथैरेपी (जल उपचार पद्यति) – हाइड्रोथैरेपी एक विख्यात और उपचार पद्धति का प्राचीन रूप है। हाइड्रोथैरेपी में जल के तापमान रोगों की विभिन्न स्थितियो के लिए अनुप्रयोग की अवधि व क्षेत्र के आधार पर कई प्रकार के शारीरिक प्रभावों को उत्पन्न करने के लिए कई तापमानों के जल जैसे गर्म ठंडा स्नान भाप से स्नान कंप्रेस और फोमेंटेशेन सांना रैप और इंमर्शन स्नान प्रदान किया जाता है।

2. मड – थैरेपी (मिट्टी उपचार) – मिट्टी जहर को अवशोषित करती है और निकालती है और शरीर को तरोताजा करती है। इसे मिट्टी के पैक और मिट्टी के स्नान के साथ किया जाता है और यह त्वचा की विभिन्न स्थितियो जैसे एग्जिमा त्वचा रोग छाले होना मुहासे व धाग धब्बे उच्च रक्त दाब मधुमेह गठिया कब्ज गैस की समस्या विकार आदि का उपचार करने मे उपयोगी होता है।

3. मालिश उपचार पद्धति – मालिश उपचार पद्धति को आम तौर पर टॉनिक शक्ति प्रदाता और शामक प्रभावों को प्रदान करने के लिए प्रदान किया जाता है। यह उपचार रक्त परिसंचरण में वृद्धि करने और थकान को मिटाने में उपयोगी होता है। यह त्वचा के बंन्द छिद्रो को खोलने में उपयोगी होता है । यह पसीने के साथ जहरीले पदार्थो के बाहर निकलने के लिए उपयोगी होते है यह पद्धति सभी दीर्घ अवधि रोगो जैसे संधिवात गठिया आस्थि संधि शोध अंतर्कशेरूकीप डिस्क विकार कंधे का जाम होना आधात व अन्य गैस संबंधी स्थितियों जैसे कब्ज, अपच, भूख ना लगना कैड उपायचय विकार हार्मोनल विकार स्नायु संबंधी विकारो आदि में उपयोगी होती है।

4. धूप उपचार पद्यति – सूरज की किरणो मे सात रंग होते है बैगनी,गहरा नीला, नीला हरा, पीला, नांरगी और लाल ये रंग शरीर पर विकिरण के माध्यम से अथवा उपचार के लिए विशेष रूप से तैयार किए गए पानी और तेल के द्वारा प्रयोग किए जाते है। धूप उपचार पद्धति मे सबसे आम तौर पर प्रयोग किए जाने वाले उपचार है प्लेटेन लीफ सन, वाथ यह पद्यति संधिवात गठिया अस्थि संधि शोध अस्थि त्वचा रोग एग्जिमा ऊपरी श्वसन समस्या लकवा उच्च रक्त चाप एंव पाचन विकारों के लिए उपयोगी होती है।

5. चुंबकीय पद्धति – चुम्बक स्वास्थ को प्रभावित करता है विभिन्न शक्तियों और आकारों के दक्षिण व उत्तरी धुर्वो के उपचार में या तो शरीर के विभिन्न अंगो पर सीधे या चुंबक युक्त जल या तेल के माध्यम से प्रयोग किया जाता है।

6. एक्यूपंक्चर – एक्यूपंक्चर आपरेशन का एक ऐसा रूप है, जिसमें रोग की स्थिति रोगी की उम्र कद कठी आदतो स्वभाव का भली भांति अध्ययन कर खास बिन्दुओं पर सुईया चुभोई जाती है। इसके अन्तर्गत शरीर में कम से कम चौदह प्रमुख याम्योत्तर की कल्पना की गई है। इनमें बारह द्विपार्श्विक रेखाएं है, जिसका सम्बन्ध शरीर के भीतरी अंगो तथा बाहरी तलो से होता है हर के याम्योत्तर रेखा पर एक उद्यीपन और एक समान स्थल जोडा मिलाया जाता है। ताकि एक एक अंग को उद्यीपित तथा दूसरे को शान्त रखा जा सके इन्हीं याम्योत्तर रेखाओं पर एक्यूपंक्चर स्थल बनाए जाते है और अंगूठा एंव दर्जनी के सहारे हलके से घूमा दी जाती है। इससे ऊर्जा याम्योत्तर रेखाओ से होकर प्रवाहित होने लगती है। फलस्वरूप शरीर का असंतुलन और विकृति ठीक हो जाती है। इस विधि का प्रयोग निश्चितक औषधि के रूप मे भी किया जाता है चीन मे अधिकांश शल्प क्रियाए निश्चितक औषधि दिए बिना एक्यूपंक्चर की सहायता से की जाती है।

7. एक्यूप्रेशर – एक्यूप्रेशर चिकित्सा पद्धति मे शरीर के कुछ विशेष बिन्दुओं पर नियमित दबाव डालकर किसी खास अंग के रोग को बिना दवाई से ठीक किया जा सकता है। हमारे शरीर की रक्त कोशिकाओं तथा स्नायुतंत्र की सभी नाड़ियो के अंतिम सिरे हाथो और पैरो मे है जब संबंधित अंग को इस अन्तिम सिरे या बिन्दु पर दबाव डाला जाता है। तो वह अंग सक्रिय हो जाता है और उसकी खराबी धीरे धीरे बिना दवाई के ठीक हो जाती है एक्यूप्रेशर से त्वरित लाभ मिल जाता है पर स्थाई इलाज एक्यूपंक्चर से होता है। आज कल अल्टासोनिक एक्यूपंक्चर जैसी आधुनिक विधियां अपनाई जाने लगी है, जो अधिक कारगर और अल्पावधि मे लाभ पहुँचाती है चिकित्सा की इस पद्धियों का जन्म स्थान चीन माना जाता है।

उपरोक्त प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियो के अतिरिक्त आहार उपवास मुद्रा उपचार पद्यति एंव पिरामिड उपचार पद्धति वहुत लोकप्रिय है ये उपचार पद्धतियों स्नापु तंत्र के विकारों जैसे तनाव बेचैनी कुंठा मांस पेशियों मे खिचाव सिरदर्द अवसाद और थकान में बहुत ही उपयोगी है। प्रजनन संबंधी विकार जैसे माहवारी की समस्याएं, माहावरी से पूर्व की परेशानी मोटापा गर्भाअवस्था से पूर्व देखभाल आदि का उपचार भी इन पद्धितियों के माध्यम से हो सकता है, इससे पाचन संबंधी बीमारी गैस से होने वाले विकारो कब्ज बाउल सिंड्रोम के उपचार हेतु माना जाता है प्रतिरोधकता विकार एलर्जी दमा उच्च कोलेस्ट्रोल का भी उपचार इन पद्धति के माध्यम से किया जा सकता है।

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति – भारतीय चिकित्सा पद्धति मे आयुवेद होम्पोपैथी पुरानी सिद्ध योग तथा प्राकृतिक चिकित्सा शामिल है। ये चिकित्सा पद्यतिया प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता का अभिन्न अंग रही है। यद्यपि यूनानी चिकित्सा पद्धति का भारत मे आगमन दसवीं शताब्दी मे हुआ है। होम्योपैथी का जन्म स्थान जर्मनी है, यद्यपि ये भारतीय चिकित्सा पद्धति का महत्वपूर्व अंग बन गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वर्मा व्यास देव एवं कौर लखवीर – 'शारीरिक शिक्षा अध्यापक' एच. जी. पब्लिकेशन (इण्डिया) 2010
2. श्रीवास्तव, अजय कुमार – यूजीसी दानिका पब्लिकेशन कम्पनी दिल्ली 2012
3. पाण्डेय, डॉ. अलोक कुमार – 'चिकित्सा प्रौद्योगिकी वैदिक प्रकाशन इलाहाबाद 2008–09
4. नायर, आर. एम. 'प्राकृतिक चिकित्सा तथा भारत की स्वास्थ्य चुनौतियां योजना जून 2015

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

संयुक्त परिवार : समय की माँग

रागिनी सिंह * अनिता सिंह **

प्रस्तावना – भारतीय सामाजिक परिवार की संरचना की एक विशेषता यहाँ संयुक्त परिवार प्रणाली का पाया जाना है। संयुक्त परिवार से तात्पर्य ऐसे परिवार से होता है, जिसमें कई पीढ़ी के लोग एक साथ निवास करते हैं तथा जिनकी संपत्ति सामूहिक संपत्ति होती है। परिवार के सभी सदस्य भावात्मक आधार पर एक दूसरे से जुड़े रहते हैं तथा एक दूसरे के लिये त्याग करते हैं। सभी सदस्य विभिन्न अवसरों पर एक दूसरे के सुख–दुख में सम्मिलित होते हैं तथा परस्पर अधिकारों एवं कर्तव्यों से बंधे होते हैं। इनमें एक ही घर की परस्पर साझेदारी रहती है। यदि पारिवारिक नियम–कायदों तथा परंपराओं का पालन किया जाए तो परिवार में भौतिक सुख, समृद्धि तथा प्रेम का वातावरण रहता है।

भावी पीढ़ी के चरित्र निर्माण में परिवार के सदस्यों का व्यवहार बहुत महत्वपूर्ण रहता है, क्योंकि पारिवारिक वातावरण के आधार पर ही संतति का स्वभाव तथा मस्तिष्क बनता है। परिवार ही एक ऐसा स्थान है, जहाँ व्यक्ति मानसिक सुख तथा शांति प्राप्त कर सकता है। परस्पर सहयोग, त्याग भावना, मानव–सेवा, व्यापक भाई–चारे की भावना तथा सभी जीवों के प्रति प्रेम आदि सदगुण पारिवारिक वातावरण का ही परिणाम होते हैं।

आज के भौतिकवादी युग में संयुक्त परिवार युवा पीढ़ी की एक आवश्यकता के रूप में उभरकर सामने आया है। युवाओं को अपने समुचित मानसिक तथा भावात्मक विकास के लिए आर्थिक, मानसिक और सामाजिक सुरक्षा का वातावरण आवश्यक है और यह सब उसे संयुक्त परिवार में सहज ही उपलब्ध है।

आज की तनावग्रस्त तथा भाग–दौड़ से भरी हुई जिंदगी में संतुलन बनाए रखने के लिये युवाओं को जहाँ दादा के कड़े अनुशासन की आवश्यकता है, वहीं दादी, बुआ, चाचा, ताऊ आदि के दुलार की भी सख्त आवश्कता है, जो उसे संयुक्त परिवार में मिल जाता है। मानसिक तथा भावात्मक आवश्कताओं का पूर्ण होना उसके चौतरफा विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है।

आज प्रत्येक वस्तु के प्रदर्शन करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। इस भौतिकवादी युग के युवाओं को कार, बंगला, टी.वी., फ्रीज आदि अनिवार्य आवश्यकताऐं प्रतीत होने लगी हैं। इस परिस्थिति में यदि संयुक्त परिवार के सदस्य एकल परिवार के रूप में विभक्त हो जाते हैं, तो इन सभी वस्तुओं का एक–एक सेट प्रत्येक परिवार को चाहिए जो कि निश्चित रूप से धन का अपव्यय ही होगा। ऐसी परिस्थिति में संयुक्त परिवार ही वह व्यवस्था है, जहाँ सीमित बजट में उच्च जीवन–शैली तथा सुख–सुविधा के सभी साधन उपलब्ध हो जाते हैं।

संयुक्त परिवार ही वह परिवार है, जहाँ परिवार के प्रत्येक सदस्य की सुरक्षा की जिम्मेदारी सभी सदस्य मिलजुल कर उठाते हैं। बढ़ते हुए आतंकवाद, लड़ाई–झगड़े, अपहरण, हत्या तथा बलात्कार जैसे दुर्गुणों से दूषित आज के समय का कड़ा जवाब केवल संयुक्त परिवार ही है। परिवार के संगठित होने के कारण कोई भी दुराचारी व्यक्ति परिवार के किसी सदस्य की ओर आँख उठा कर देखने का साहस भी नहीं कर सकता है।

आज कतिपय पथभ्रष्ट युवाओं की मानसिकता उचित–अनुचित किसी भी प्रकार से केवल अपने लिए भौतिक–सुख–सुविधा के साधन जुटाने तक सीमित हो गयी है। परिवार में बुजुर्गो की अनुपस्थिति ने इन्हें असामाजिक कार्यो शराब, जुआँ एवं दुराचार की ओर ढकेल दिया है। ऐसे युवाओं के कार्य–कलापों पर नजर रखने एवं उनका पथ–प्रर्दशन करने के लिए आवश्कता है, संयुक्त परिवार की जहाँ सदैव ही कोई न कोई वरिष्ठ सदस्य उपस्थित रहता है।

बच्चों, युवाओं तथा बुजुर्गो में बढ़ती हुई मानसिक अवसाद तथा आत्महत्या की प्रवृत्ति वर्तमान समय की ही देन है। एकल परिवार में उनकी मानसिक समस्याओं को सुनने और समझने वाला कोई नहीं होता। ऐसा कोई नहीं होता जो उनके अनुभवों में सहभागिता दर्शा सके किंतु संयुक्त परिवार में युवाओं और बच्चों को उनकी मानसिक ग्रंथियों को सुलझाने के लिए परिवार के वरिष्ठजनों तथा हम–उम्र साथियों का साथ हमेशा ही मिलता है। यही नहीं संयुक्त परिवार के बुजुर्ग भी बेटा–बहू, बेटी–दामाद तथा अन्य परिजनों के सानिध्य में रह पाते हैं, जो कि उनकी मानसिक तथा भावात्मक आवश्यकता है।

आज छोटी–छोटी बच्चियों से लेकर बुजुर्ग महिलाओं तक का अपहरण, बलात्कार एवं हत्या करने की प्रवृत्ति समाज में बढ़ती ही जा रही है। इसका प्रमुख कारण है कि आज युवाओं का चरित्र निर्माण करने के लिए कोई बुजुर्ग सदस्य उनके साथ नहीं होता। इस संदर्भ में निर्भया कांड तथा इसी प्रकार के अन्य अक्षम्य अपराधों को भी नहीं भूलना चाहिए।

निर्भया कांड के दुर्दांत, नाबालिग अपराधी का चरित्र निर्माण तथा महिलाओं के प्रति उसके मन में सम्मान की भावना को विकसित करने के लिए उसके परिवार का कोई भी वरिष्ठ सदस्य उसके साथ नहीं था। इस परिस्थिति में उसका विकास समाज में एक खूंखार अपराधी के रूप में ही हो पाया है।

संयुक्त परिवार अनाथों, बुजुर्गों, बच्चों आदि के लिए सुरक्षा कवच का कार्य करता है। बढ़ते हुए वृद्धाश्रम एवं अनाथालय वर्तमान जीवन– शैली की ही उपज है। यदि हम इन सब पर रोक लगाना चाहते हैं, तो हमारी प्राथमिकता संयुक्त परिवार ही होना चाहिए।

संयुक्त परिवार के आलोचकों के अनुसार संयुक्त परिवार के मुखिया

* सहायक प्राध्यापक (भौतिकी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (गणित) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

की भूमिका वटवृक्ष के समान होती है और वटवृक्ष के साये में किसी का विकास संभव नहीं है। सही अर्थों में देखा जाए तो वटवृक्ष के नीचे पनपने वाला पौधा भी वटवृक्ष ही होता है। तात्पर्य स्पष्ट है परिवार के वरिष्ठजनों के दिखाए गए मार्ग का अनुसरण पूर्ण-निष्ठा से करने वाले बच्चे का विकास अधिकाधिक गुणों से परिपूर्ण व्यक्ति के रूप में होता है।

यह अत्यंत दुखद ही है कि जिस भारत में एकल परिवार नाम का ही अस्तित्व नहीं था वहीं एकल परिवार को प्राथमिकता देने का प्रयास हो रहा है। परिवार शब्द का तात्पर्य ही संयुक्त परिवार होता है। संयुक्त परिवार वह स्थान नहीं जहां व्यक्तित्व को कुचला जाता हो, वरन् यह वह स्थान है, जहाँ वरिष्ठजनों के मार्गदर्शन में व्यक्तित्व का निर्माण किया जाता है। यह हमें सबके साथ और सबके लिए जीना सिखाता है।

भारतीय मानसिकता आज भी संयुक्त परिवार को ही प्राथमिकता देती है। आज भी जनसाधारण भावात्मक रूप से परिवार से ही जुड़ा है और अपने सांस्कृतिक मूल्यों का सम्मान करता है। औद्योगिकरण तथा हर क्षेत्र में बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा ने संयुक्त परिवार को विघटित अवश्य किया है परंतु जो बंधन हमें आपस में बाँधता है, वह आज भी अटूट है।

समय का सदुपयोग, कम खर्च में उच्च जीवन-शैली, आर्थिक, मानसिक तथा सामाजिक सुरक्षा, चरित्र निर्माण और चिंता मुक्त होकर स्वयं का समग्र विकास करने के लिये समय की मांग है, संयुक्त परिवार को मान्यता प्रदान करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. An introduction to sociology Vidya Bhushan and D.R. Sachdeva
2. समाज शास्त्र : अवधारणाऐं एवं सिद्धांत (द्वितीय संस्करण) डॉ. जे.पी. सिंह ।
3. समाज शास्त्र : डॉ. धर्मवीर महाजन, डॉ. (श्रीमती) कमलेश महाजन।

****

गांधीचे औद्योगिक - आर्थीक विचार : सम्यक विकासाची हमी

राहूल बावगे *

महत्प्रयासाने 15 ऑगस्ट 1947 रोजी मिळालेले स्वराज्य हे सुराज्य व्हावे ह्याची स्वप्ने भारतीय जनता पाहत होती, परंतु गेल्या 60 वर्षात हे सुराज्य आपणास खरोखरच मिळाले का अशी शंका यावी अशी परिस्थिती दुर्दैवाने भारतात निर्माण झाली आहे. आजही गरीबी, बेकारी, अनारोग्य, बालमृत्यू, कुपोषण, भ्रष्टाचार, आर्थिक विषमता, शेतीची दुरावस्थ, निरक्षरता इत्यादी समस्या कायमच आहेत. जागतिक बँकेच्या एका अहवालानुसार भारताच्या स्वातंत्र्यावेळी असलेल्या लोकसंख्याएवढी जनता 21 व्या शतकाच्या सुरूवातीलाच दारिद्रय रेषेखाली आहे आणि जगातील एकूण निरक्षरांपैकी 54 टक्के निरक्षर एकट्या भारतात राहतील.[1] ह्या शिवाय नवीन समस्यांची भर ह्यात पडत आहे. वाढती स्त्री-पुरुष संख्येतील तफावत, नफाखोरी, साठेबाजी, वाढती महागाई, ग्रामीण-शहरी भेद, वाढती अनैतिकता, हिंसाचार, लक्षलवाद, ढासळती कुटूंब व्यवस्था अशा अनेक नवीन समस्यांनी गंभीर रूप धारण केले आहे.

स्वातंत्र्यानंतर भारताने स्वीकारलेले विकासाचे प्रारूप व नीती फारशी यशस्वी न झाल्याने आपण उदारीकरणाचे धारेण स्वीकारले. परंतु त्यातही मूठभर लोकसंख्येचा, पर्यायाने भांडवलदार वर्गाचा जास्त फायदा होताना दिसतो. वाढत्या मध्यमवर्गाला केंद्रबिंदू ठरवून, त्याची क्रयशक्ती वाढवून मालाची विक्री करायची आणि नफा वाढवायचा हे धोरण या व्यवस्थेत अवलंबिले जात आहे. पण त्यामुळे भारतात वेगळयाच समस्या निर्माण झाल्या. जीवघेण्या स्पर्धेमुळे मालाचे जास्तीत जास्त उत्पादन करण्यावर भर दिला गेला. कारखानदारी व शहरीकरण प्रचंड वाढले. ग्रामीण व शहरी जनता ह्यातील दरी वाढली. सरकार दरबारी, प्रशासनात व सार्वजनिक जीवनात भांडवलदाराचे व धनिकांचे वर्चस्व वाढले. गरीब अधिकच गरीब झाले आणि व्यभिचार, असुरक्षितता वाढली.

अशा संभ्रमित अवस्थेत साहजिकच विकासाचे योग्य, सर्वसमावेशक प्रारुप कोणते असावे असा प्रश्न निर्माण होतो. साम्यवाद व समाजवादाचे अपयश जगाने अनुभवले. रशिया व पूर्व युरोपातील राष्ट्रे कोसळली. त्यानंतर पाश्चात्यधार्जिण्या, भांडवलदारी व्यवस्थेचे भयावह व विषम स्वरूपही जगासमोर आले. अशावेळी विकासाच्या मार्गाचा तिसरा पर्याय म्हणून गांधीच्या विचारांचा, त्यांच्या तत्वज्ञानाचा मार्ग स्वीकारण्याकडे विचारवंतांचा कल दिसत आहे. प्रस्तुत शोधनिबंधात गांधीजींच्या आर्थिक विचारांचा आढावा घेऊन तयांची कालसुसंगता दर्शविण्याचा प्रयत्न केला आहे. तसेच गांधीची विकासनीति ही सम्यक विकासनीति असल्याचे प्रतिपादनही केले आहे.

एखाद्या राष्ट्राच्या विकासासाठी मार्गदर्शक ठरतील असे सैद्धांतिक किंवा बोजड आर्थिक विचार गांधीनी मांडले नाहीत. किंबहूना रूढ अर्थाने ते अर्थशास्त्रज्ञ नव्हते. परंतु त्यांच्या काळातील अनेक स्थित्यंतरातून, विविध घटनातून त्यांचे विचार विकसित झाले आहेत. भारतातील तत्कालीन परिस्थिती, इंग्लंडचे अर्थकारण, दक्षिण आफ्रिकेतील अनुभव, रशियन साम्यवादी क्रांती ह्यांच्या अभ्यासातून त्यांनी आपले मत प्रदर्शन केले. ते सुद्धा नियमबद्ध, सैद्धांतिक मांडणीच्या स्वरूपात नसले तरी अनुभवधिष्ठित आणि व्यवहार्य होते. त्याचप्रमाणे हे विचार मुख्यत: भारतापुढील समस्यांना उत्तारे शोधण्याच्या प्रयत्नातून आले आहेत.

गांधीजींच्या मतानुसार खेडे किंवा गाव हे आर्थिक धोरणाचा केंद्रबिंदू असला पाहिजे. कारण भारतातील खेड्यातच 57 टक्के जनता राहते आणि त्यांच्या शेती व इतर ग्रामोद्योग्यांच्या आधारावर सर्व देशाचे पोट भरते व इतर उद्योग चालतात. गांधी स्वत: खेड्यातून आल्याने खेड्यांचे अर्थशास्त्र त्यांना माहित होते. त्यांच्या दृष्टीने देशातील करोडो लोक म्हणजे करोडो जिवंत यंत्रे आहेत. ही मानवरूपी चालती - बोलती यंत्रेच आपली शक्ती आहे. ह्या यंत्रांना सक्रिय करणे व त्यांच्यात श्रमशक्ती वसवणे हे प्रथम कर्तव्य आहे. म्हणजेच गांधी श्रमशक्तीचे कट्टर पुरस्कर्ते होते. हरिजन मधील एका लेखांत गांधी म्हणतात, शरीरश्रम हा व्यवसायाचा व उद्योगाचा गाभा आहे. श्रमामुळे उत्पादन तर होतेच, पण त्याचबरोबर एक नैतिक अधिष्ठानही प्राप्त होते. मानव आपल्या कुवतीप्रमाणे उत्पादन करण्यावर संतुष्ट राहतो आणि त्यातून लुबाडणूक व फसवणूक नाहीशी होते.[2]

गांधी हे यंत्राच्या विरोधी नव्हते. त्यांचा विरोध अतिरेकी यांत्रिकीकरणाला व व्यापक तांत्रिकीकरणाला होता. ज्या तंत्राज्ञानामुळे कामगारांची बेरोजगारी वाढेल व सामान्य माणसाचे शोषण होईल अशा यांत्रिकीकरणास त्यांचा विरोध होता. What I am against is large scale production of things that the illagers can produce without difficulty." [3]

गांधीजी भारतातील ग्रामीण जीवनाचे व अर्थकारणाचे समर्थक होते. त्यांच्यानुसार भारतातील खेड्यातून आज ग्रामोद्योग नाहीसे झाल्याने त्यांचा ऱ्हास होत आहे. ह्या ग्रामीण उद्योगांचे पुनरूज्जीवन केल्यास खेड्यांना उर्जितावस्था प्राप्त होईल. ह्या ग्रामीण उद्योगांमध्ये चरख्याचे स्थान मध्यवर्ती आहे. चरखा हे एक यंत्रच आहे आणि ते वेगवेगळ्या स्वरूपात कित्येक उद्योगात वापरता येते. गांधींनी चरख्याचा वापर कापड उद्योगात करून त्याला प्रतिष्ठा प्राप्त करून दिली. त्यांच्या दृष्टीने चरखा हा व्यापक उत्पादनाचे साधन म्हणून उपयोगात येऊ शकतो. तसेच तो रोजगारभिमुख सुद्धा आहे. हजारोंना पोटापाण्याचे साधन देऊन त्याद्वारे विकास साधता येतो.[4]

गांधी औद्योगीकरणच्या व शहरीकरणाच्या विरोधी नव्हते. परंतु त्यांच्या मतानुसार औद्योगिकरण हे खेड्यात झाले पाहिजे. त्याकरिता खेड्यातील पारंपारिक उद्योग पुनरूज्जिवन झाले पाहिजेत. हे उत्पादन

* सहयोगी प्राध्यापक एवं विभाग प्रमुख (राज्यशास्त्र) वसंतराव नाईक शासकीय कला एवं समाजविज्ञान संस्था, नागपूर (महा.) भारत

स्वयंस्फूर्त पद्धतीने घराघरात झाले पाहिजे. त्यात श्रमाचे योग्य मुल्य मिळेल आणि त्याचा विनियम सुद्धा समान रितीने होईल. मँचेस्टारच्या उदाहरणावरून गांधी स्पष्ट करतात की स्वस्त व दिखाऊ माल विकून ह्या औद्योगिकीकरणतून भारताचे शोषण झाले आहे. म्हणून खेड्यातल्या स्वयंपूर्ण, स्वयंस्फूर्त, सर्वसमावेशक अर्थव्यवस्थेचे गांधी समर्थन करतात.[5]

व्यापक यांत्रिकीकरणामुळे इतरही अनेक समस्या निर्माण होऊ शकतात. गांधीच्या मते यांत्रिकीकरणच्या पूर्वी इथले उद्योग चालूच होते. कामगार काम करत होतेच. यंत्रामुळे उत्पादन वाढले. पैसाही वाढला. पण हा पैसा शोषणवर आधारलेला होता, अनैतिक होता. ह्या अनैतिक पैशातून विकास होणे म्हणजे पापच होय. सध्या अस्तित्वात असलेल्या गिरण्यामध्ये रोजगार वाढला पाहिजे अशा सुधारणा करण्यात याव्या असे गांधीजी मानत. अशा कारखान्यातून तयार होणारी वस्तू (कापड इ.) जास्त पवित्र राहिल.[6] गांधी तंत्रज्ञानात नैतिकतेवर भर देतात, त्यांनी नीतीशून्य अर्थशास्त्र पापमय ठरवले आहे.[7]

साम्यवाद/ समाजवाद आणि भांडवलशाही तसेच उदारीकरण, मुक्त व्यापार या आजच्या धोरणांच्या पार्श्वभूमीवर गांधीचे विचार हे युगप्रवर्तक वाटतात. गांधींच्या यंत्राला व औद्योगिकरणाला विरोध नव्हता. प्रचंड, विस्तृत, बेहिशेबी व अनियंत्रित अशा यांत्रिकीकरणाला त्यांचा विरोध होता. भारतीय समाजजीवन आणि अर्थकारण यांची सांगड घालून त्यांनी पर्यायी विकासाचा मार्ग दर्शविला आहे. विकास हा श्रमावर आधारित हवा. त्यातून रोजगार निर्मिती झाली पाहिजे. विकास हा परावलंबित्व नष्ट करणारा पाहिजे. आर्थिक विकासात लालसा नको, समाधान व समानता पाहिजे. लालसेपोटीच आज प्रचंड उद्योग निर्माण करून पर्यावरणचा जटिल प्रश्न मानवाने निर्माण केला आहे. गांधी त्याद्दष्टीने द्दष्टे होते ज्यांनी 100 वर्षापूर्वीच हे धोके सांगितले होते.

म्हणून आजच्या काळात विकासाचा एक भक्कम व सर्वव्यापी विचार म्हणून गांधीच्या तंत्रज्ञानविषयक विचारांची सद्यकालीन प्रस्तुतता लक्षात येते.

तळ टिपा व संदर्भ :–

1. Roy Anubha 1998 in “Gandhi in 21 Century” Publishers Delhi
2. गांधी, मो.क., प्रथमावृत्ती, 13 नोव्हेंबर, 1961 “ग्राम स्वराज्य”, गांधी वाङ्मय प्रकाशन समिती,
   पुणे,, पृ. 69
3. गोखले, द.न., 1996, “गांधीजी : मानव नि महामानव”, मौज प्रकाशन गृह, मुंबई, पान 130
4. गांधी, मो. क. – पूर्वोक्त, पृ. 69–71
5. Bharti, K.S., 2000 “Mahatma Gandhi - Man of the Millejninm, “S. Chand & Co. Delhi, Pp. 284- 285
6. गांधी मो. क. पूर्वोक्त, पृ. 70–71
7. गोखले, पूर्वोक्त, पृ 139
8. Pendy Janardhan - 1998 ,” Gandhi and 21st Centure,” Concept Publishing Company, New Delhi
9. Tendulkar, D.G. 1952 ,” Mahatma in Eight Volu,es” (Vol 1 to 8), Tol Press, Mumbai.
10. गांधी विचार दर्शन 1959 (विविध खंड), गांधी वाङ्मय प्रकाशन समिती महाराष्ट्र, पुणे
11. गांधी मो. क. 2007 “हिंद स्वराज”, परंधाम प्रकाशन, पवनार
12. गांधी मो. क. 2007 “ग्राम स्वराज्य”, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद

****

Democracy And Human Rights In India

Rachna Mathur*

Introduction - The Preamble and Article 38 of the Constitution of **India** envisages social justice as the arch to ensure life to be meaningful with **human** dignity. **Indian** Constitution commands justice, liberty, equality and fraternity which are of extreme value and importance for the success of a **democracy**.

The Indian concept perceives the individual, the society and the universe as an organic whole,. Everyone is a child of God and all fellow beings are related to one another and belong to a universal family. In this context, Mahatma Gandhi remarks, "I do not want to think in terms of the whole world. My patriotism ncludes the good of mankind in general. Therefore my service to India includes the services of humanity." Scholars who have spent long time in lucubration on the Hindu "Dharmasastras" and the "Arthasastras" and other legal treatises of the past have discovered an amazing system, which, interalia, regulates the duties of Kings, judges, subjects and judicial as well as legal procedures. The central concept is Dharrma, the functional focus of which is social order. The message is "Dharma" as the supreme value, which binds kings and citizens, men and women. Hurnan rights gain meaning only when there is an independent judiciary to enforce rights. Here, the Dharmasastras are clear and categoric. ' The independence of the judiciary was one of the outstanding features of the Hindu judicial system. Even during the days of Hindu monarchy, the administration of justice always remained separate from the executive. It was, as a rille, independent both in form and spirit. It was the Hindu judicial system that first realized and recognized the importance of the separation of the judiciary from the executive and gave this fundamental principle a practical shape and form. The case of Ananthapindika v. Jeta reported in the vinaya-patrika,' is a shining illustration of this principle. According to it, a Prince and a private citizen submitted their cases before the law court arid the court decided against the Prince. The Prince accepted the decision as a matter of course and as binding on him. The voilation of the principle of separation of the judiciary from the executive was largely the result of the Hindu conception of law as binding on the sovereign. Law in Hindu jurisprudence was above the sovereign. It was the "Dharma." The laws were then not regarded so much as a product of supreme Parliaments and Legislatures as at present. Certain laws were regarded as above all human authority. Such, for instance, were the natural laws, which no Parliament, however supreme, could abolish.

Under the British rule, human rights and democracy were suspect and socialism was an anathema. In the Indian cultural history, the British colonial period remains the Indian equivalent of the 'Dark Ages'. Lord Macaulay rejected the ancient Indian legal political system as 'dotages of brahminical superstition', and condemned ancient legal heritage and its inner care as an 'immense apparatus of cruel absurdities'." Lord Wellesley condemned the Indians as vulgar, ignorant, rude and stupid and Lord Cornwallis described as an axiom that every native of Hindustan is corrupt. The English East India Company debarred Indians from high offices and deprived them of their political, social and economic rights. The impression created in the Indian minds was that their sacred inalienable human rights and vital interests had been ignored, denied, and trampled upon for the sake of England and the English rulers. Mahatma Gandhi organised the people of India under his leadership and launched his non-violent struggle to achieve self government and fundamental rights for themselves. Lokmanya Tilak advocated that "freedom was the birth right of Indians for which they will have to fight. It was because of the stiff opposition from the people of India that the Charter Act of 1813 was enacted to promote the interest and happiness of the native inhabitants of India. Similarly, the Government of India Act, 1833 was passed to allow the Indians to enjoy some political rights. The proclamation of Queen Victoria on 1'' November 1858 contained :some principles of state policy, which were similar to fundamental rights in nature.

Human rights are a theory-based social construct. Human rights practice is commonly understood as actions through which we advocate for the protection of human rights Social action and behaviour which actually do respect human rights, through which we promote their protection, protest against their violation, and organise action or establish institutions that realise and protect human rights, remain guided by theoretical considerations. Indeed, the

*Lecturer (English) M. S. Govt. Girls College, Bikaner (Raj.) INDIA

theory must not become an end in itself; there is something like a prohibition of self-gratification for human rights theory. However, a practice that renounces theoretical considerations will, like similar practices, become blind and runs the risk of getting lost or doing something wrong (Lohmann 2004: 307; translation mine – *P.K.*).

The fact that the universality of human rights is challenged by cultural diversity is even more astonishing as firstly human rights protect the individual's freedom of religion and belief and the right to a cultural life (article 18 and 27 of the Universal Declaration of Human Rights of 1948) and therefore are enhancing cultural diversity. Secondly human rights as individual rights protect especially the members of minorities from violations and injustices by majorities, for example, with the right to equality, right to non-discrimination, *etc.* Simone Zurbuchen points out: 'While I do not deny that human rights establish moral boundaries, it needs also to be seen that these rights enable members of religious communities and of other variants of cultural groups to maintain their distinct identity' (Zurbuchen 2009: 285). Often religious, cultural, traditional or world-view communities run the risk to be discriminated because of their religion, culture, tradition or world-view, and human rights protect them from this risk; thus religions, cultures, traditions, world views and beliefs benefit indirectly from the universality of human rights as they can find themselves somewhere in the world in the situation of a minority. Minorities benefit as well indirectly from the human right to freedom of religion and belief. This right enables and enhances the authentic practice of an individual and through that also the peaceful coexistence of religions, cultures, traditions and world-views, as well as the dialogue between them. It is an achievement of humanity that it seeks to protect this variety. As the fundament of protection of ideas, traditions and beliefs, human rights can therefore in exchange expect to be respected by religions, cultures, traditions, world views and beliefs (see Hoeffe 1999). Actually the realization of human rights needs the support and contribution by societal actors like religious, cultural, traditional or world-view communities (Kirchschlaeger 2013a, 2013b).

Human rights are under pressure in many places across the globe. Peaceful protests are violently quashed. Voting is tampered with. And minorities are often excluded from decision-making. All of this threatens the ideal of an open society in which each of us can be free and participate equally. A solid protection of human rights is needed for an open society to exist and to flourish. But it is often an uphill battle to work towards that ideal. Equip yourself and learn more about what human rights are and how they work. In this course, we will introduce you to one of the world's most intricate human rights systems: the European Convention on Human Rights. You will see when and how people can turn to the European Court of Human Rights to complain about human rights violations. You will learn how the Court tries to solve many of the difficult human rights dilemmas of today. We will look, amongst other things, at the freedom of expression and demonstration, the right to vote, and the prohibition of discrimination. And we will address the rights of migrants, refugees, and other vulnerable groups. And, of course, we will see whether it is possible to restrict rights and if so under what conditions. You will even encounter watchdogs and ice cream in this course. We invite you to follow us on a journey of discovery into the European Convention!

References :-

1. **Alexy, R. 1998.** Die Institutionalisierung der Menschenrechte im demokratischen Verfassungsstaat. In Gosepath, S., and Lohmann, G. (eds.), *Philosophie der Menschenrechte* (pp. 244–264). Frankfurt am Main: Suhrkamp.
2. **Arendt, H. 1986.** *Elemente und Ursprünge totaler Herrschaft. Antisemitismus, Imperialismus, totale Herrschaft*. München-Zürich: Piper.
3. **Bobbio, N. 1998.** *Das Zeitalter der Menschenrechte, Ist Toleranz durchsetzbar?* Berlin: Wagenbach.
4. **Burke, E. 1987.** *Reflections on the Revolution in France*. Indianapolis, IN: Hackett.
5. **Geiger, K. F., and Kieserling, M. 2001. (eds.).** *Asiatische Werte. Eine Debatte und ihr Kontext*. Münster: Westfälisches Dampfboot.
6. **Habermas, J. 1994.** *Faktizität und Geltung. Beiträge zur Diskurstheorie des Rechts und des demokratischen Rechtsstaats*. 2nd ed. Frankfurt am Main: Suhrkamp.
7. **Hammarberg, T. 2008.** *Viewpoint* 06/10/2008. Strasbourg. URL: http://www.coe.int/t/ commissioner/ Viewpoints/081006_en.asp.
8. **Hoeffe, O. 1999.** Transzendentaler Tausch, Eine Legitimationsfigur für Menschenrechte? In Gosepath, S., and Lohmann, G. (eds.), *Philosophie der Menschenrechte* (pp. 29–47). Frankfurt am Main: Suhrkamp.
9. **Hoffmaster, B. 2006.** What Does Vulnerability Mean? *Hastings Center Report* 36(2): 38–45.
10. **Kaelin, W. 2004.** What are Human Rights? In Kaelin, W., Mueller, L., and Wyttenbach, J. *The Face of Human Rights* (pp. 14–37). Baden: Lars Mueller Publishers.
11. **Khan, I. 2006.** Education as a Foundation for Human Rights Practice. In Kirchschlaeger, P. G., Kirchschlaeger, T., Belliger, A., and Krieger, D. (eds.), *Menschenrechte und Bildung, Internationales Menschenrechtsforum Luzern (IHRF),* Vol. III (pp. 35–41). Bern: Staempfli.
12. **Kirchschlaeger, P. G. 2007.** Brauchen Menschenrechte eine (moralische) Begründung? In Kirchschlaeger, P. G., Kirchschlaeger, T., Belliger, A., and Krieger, D. (eds.), *Menschen-rechte und Kinder, Internationales Menschenrechtsforum Luzern (IHRF),* Vol. IV (pp. 55–63). Bern: Staempfli.
13. **Kirchschlaeger, P. G. 2011.** Das ethische Charakteristikum der Universalisierung im

Zusammenhang des Universalitätsanspruchs der Menschenrechte. In Ast, S., Mathis, K., Hänni, J., Zabel, B. (eds.), *Gleichheit und Universalität*. *ARSP-Beihefte*, Vol. 128 (pp. 301–312). Stuttgart: Franz Steiner Verlag.

14. **Kirchschlaeger, P. G. 2013a.** *Wie können Menschenrechte begründet werden? Ein für religiöse und säkulare Menschenrechtskonzeption anschlussfähiger Ansatz*. Münster: LIT Verlag.
15. **Kirchschlaeger, P. G. 2013b.** Menschenrechte und Politik. In Yousefi, H. (ed.), *Geschichten – Erscheinungsformen – Neuere Entwicklungen* (pp. 255–260). Heidelberg: Springer.
16. **Kirchschlaeger, P. G., and Kirchschlaeger, T. 2009.** Answering the 'What', the 'When', the 'Why' and the 'How': Philosophy-Based and Law-Based Human Rights Education. *Journal of Human Rights Education* 1: 26–36.
17. **Lohmann, G. 2002.** Menschenrechte und 'globales Recht'. In Gosepath, S., and Merle, J. (eds.), *Weltrepublik, Globalisierung und Demokratie* (pp. 52–62). München: C. H. Beck.

****

Role of Infrastructure in the Development Process in India

Dr. Meenakshi Panchal*

Introduction - India's rise in recent year is a most prominent development in the world economy. India has re-emerged as one of the fastest growing economics in the world. India's growth, particularly in manufacturing and services has boosted the sentiments, both within country and abroad. With an upsurge in investment and robust macroeconomic fundamentals the future outlook for India is distinctly upbeat. According to many commentators, India could unleash its full potentials, provided it improves the infrastructure facilities, which are at present not sufficient to meet the growing demand of the economy. Failing to improve the country's infrastructure will slow down India's growth process. Therefore, Indian government's first priority is rising to the challenge of maintaining and managing high growth through investment in infrastructure sector among others.

The inter relationship Infrastructure and the development of all sectors of an economy has been aptly summarized by Hirschman in the following words:-

"Infrastructure many be considered as the foundation of an economy as it represent those services without which primary, secondary and tertiary production activity cannot function"

Infrastructure can deliver major benefit in economic growth i.e. increasing production, productivity, attracting investment, poverty elimination and environmental sustainability, but only when it provides service that respond of effective demand and does so effectively.

Recently research by international organization like world bank has established that present increase in the investment in the infrastructure culminates in a corresponding 1 percent increase in the GDP of nation. Not only this classical economists also find infrastructure development essential for the development, so Myrdal in his Asian drama said", the existence of infrastructure is a necessary condition for development Rosenheim roden in his big push theory opens that the most important product of infrastructure are the investment opportunities that are created in other industries. New investment become attractive as basic service like, transport, electricity etc. become available for asking Infrastructure helps production by linking the production points with inputs supplies including labor through transport communication etc.

Agriculture and industrial output directly depend upon infrastructure facilities. Agriculture facility requires irrigation, power, transport facility etc. Industrial production requires not only machinery and equipment but also energy transport services includes railways, roads and communication facility. So that development and expansion of these facilities are essential pre-condition for increasing agriculture and industrial production in any country. Move over due to the increasing importance of communication, banking etc, therefore infrastructure development is important for the development of service sector.

In the present world a phase of liberalization and globalization is going on due to which importance of infrastructure is increasing. In the competitive world today, every country wants to attract other country's investment for their development. The world experience also specifies that only those countries aere progressing to words all around development that have insisted more on infrastructure development right from the beginning. Like Japan and Germany have allocated 75 percent of their starting planning expenditure. As a result of this, today socio-economically these countries are considered as developed nations.

Infrastructure can be broadly classified as - Economic Infrastructure, social infrastructure. Economic infrastructure includes- irrigation, power and transportation. Social Infrastructure includes-health, education etc. Though all these infrastructure are important for development of region but development of economic infrastructure is more important because it directly affect economic development and development of other Infrastructure.

Economic Infrastructure is more important for developing countries like India, where around 75 percent of population reside in villages, and most of the people here still directly or indirectly depend on the primary sector. Moreover poverty is found on a large basic in rural areas. In such situations if economic infrastructure is designed properly, it would be of a great help in accelerating economic growth that will reduce poverty of rural areas i.e. irrigation, roads, electricity etc and the poor there can do a lot of rising from productivity.

Infrastructure situation at the time of Independence - Before independence i.e. under British rule, India's Infrastructure was too backward. The main reason this was that the Britishers were not interested in developing India,

*Asst. Prof., PCSSH Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

they were engaged only in their business expansion so that their profits will be maximized, therefore they were highly interested in development of roads and railways, so as to reduce their cost of carrying and forwarding of their row materials and finished goods and increase their productivity. In spite of this it is tragic to find that the development of roads and railways was limited to only those cities where their business functions. This was the reason that there were lots of disparities between roads and railways development in rural and urban areas.

Moreover we were also backward in power and irrigation. In 1950-56 India was almost a complete agriculture dominant rate. More then so percent for the population was directly or indirectly based on agriculture in spite of this the gross irrigated area was only 22.6 million hectare in 1950-51, which was only 17.1 percent of the gross cropped area. Due to this a large area of land in India was unutilized and the production and productivity of crops as also low. It was a pity that in spite of a large land area India has to import grain from outside.

Infrastructure investment in India during FYP – Indian planners were fully aware of link between infrastructural facilities and general economic development. Therefore before independence, in 1938 a national planning committee was constituted by Netaji Subhash Chandra Bose to achieve a sustainable self-reliant growth of natural economy. After independence, planners had given high priority to the expansion of infrastructure facility right from the first plan itself. The plans have generally devoted 40% of the total plan outlay on economic Infrastructure development. India is expected to grow at an average a percent per annum in next few years. Economic and population growth prospects are expected to place additional pressure on existing infrastructure facilities.

Table 1 (see below)

In first five year plan (1951 - 1956) India was facing major problems of severe food shortage. Accordingly the first plan emphasized, as its immediate objective was the rapid agriculture development so as to achieve food self-sufficiency. So very large proportion i.e. around 60 percent originated for agriculture and irrigation and much smaller proportion for other sector.

Second five year plan was based on p.c. Mahalonabis model. The fundamental objectives of this plan were to initiate and accelerate the process of industrialization. This plan had given maximum priority to the development of roads and railways.

After various five year plans heavily emphasized on economic infrastructure. The Government of India has set up an export committee on infrastructure development in the ninth five year plan first time in the country for investment in infrastructure an institution “Infrastructure Development Finance Company” was established. In the company’s letter of proposal, electricity development, roads, railways etc. were involved under infrastructure.The heavy investments on infrastructure facilities have provided necessary inputs for rapid agriculture development and industrial expansion. In fact without the rapid development of economic infrastructure it would not have been possible to achieve three fold rise in agriculture production and seven fold rise in industrial production during the last 50 years.

Conclusion - Infrastructure is a key input in economic and social growth and there is a close link between the development of an infrastructure and sustainable development in India. Hence infrastructure is the pre-requisite for the economic growth of a country as it fosters the development of all the important sector of the economy. Now the Indian railways world’s second largest rail network. Thus increase in planned investment on economic infrastructure the infrastructure facilities also increased. Today’s Indian Government’s first priority is therefore rising to the challenge of maintaining and managing high growth through investment in infrastructure sector, among others.

References :-

1. Planning Commission, Projection for Investment in Infrastructure during the various five year plans.
2. Government of India Economic survey (Various year) Ministry of Finance, New Delhi
3. Kaushik.S.L. 1986. Leadership in Urban Government In India. Allahabad: Kitab Mahal

Table 1 : Planned expenditure on Infrastructure in India (RS In Crore)

FYP	Irrigation	Roads	Railways	Power	Infrastructure Investment	% of Intra of Total Planning expenditure
I	452(23)	142(7.2)	217(11)	260(13)	1071	54.64
II	522(11)	242(5.3)	723(16)	440(40)	1927	41.89
III	904(10.5)	457(5.3)	1326(15.4)	1250(14)	3937	45.88
IV	1755(11)	990(6.2)	934(6)	2450(15)	6129	38.59
V	3947(8)	2204(5.6)	2063(5.2)	7400(19)	14814	37.57
VI	9171(8)	5083(4.6)	6587(6)	30750(28)	51591	47.2
VII	14225(6.5)	8486(4)	16549(7.6)	61690(28.2)	100950	46.15
VIII	28392(5.7)	1760(3.4)	27202(5.5)	131190(26.5)	203844	41.12
IX	55598(6.4)	2398(5.7)	36832(27.2)	215545(25.1)	392467	45.6
X	103315(6.7)	12710(11.7)	102091(32.6)	340247(27.2)	672760	48.3
XI	211700(5.8)	31415(13.8)	261808(38.8)	666525(29.8)	748490	47.9

Source: Statistical outline of India and CMIE

Note: Bracket figure represent the percent of total budget expenditure

Impact of Corporate Social Responsibility in Indian Perspective

Dr. Sangeeta Gupta*

Abstract - The CSR campaign has been actively supported by the world organizations like World Bank, UNDP, OECD, European commission and MNCs. Still today, the practice of CSR remains basically philanthropic but now it has move on from nation and institution building to community development with global influences. The Indian Companies Act, 2013 has introduced the CSR idea to the forefront in the country and through explains the mandate in promoting greater transparency and disclosure. The Schedule 7 of the Act listing the CSR activities, suggests the communities to be focal point. On the other hand, by discussing a company's relationship to its stakeholders and integrating CSR into its core operations, the Draft Rules suggest that CSR needs to go beyond communities and also beyond philanthropy. It would be quite interesting to observe and study how it translates into practice at ground level and also how the understanding of the CSR in India undergoes a change. The recent initiatives of the present Government at the Centre seem certainly encouraging. It has directed its public sector undertakings to earmark certain percentage of their annual budget for the furtherance of the CSR activities. The present paper highlights the emerging perspectives of Corporate Social Responsibility in India.

Introduction - The Government of India in 1976 had inserted the term "socialist" in the preamble of country's constitution thereby committing itself to ensuring a development process which would be guided and spearheaded by the state. But the ground situation is now fast changing in India. Post 1991, there is increasingly a receding role of the state in the economic and social sphere. An increasing acceptance of CSR by large number of corporate, post liberalization can thus be seen in the context of the larger role being consciously carved for the private sector in an economy which was earlier largely controlled and managed by the State. The corporate world is keen to exploit the opportunities that are being provided by the new economic outlook of the State. Today, 93% of the world's largest 250 companies now publish annual corporate responsibility reports, almost 60% of which are independently audited.

India's ancient wisdom, which is still relevant today, inspires people to work for the larger objective of the well-being of all stakeholders. For example, our Rushees, Munees and Saints preached us to serve the society. The idea of CSR first came up in 1953 when it became an academic topic in HR Bowen's "Social Responsibilities of the Business". Since then, there has been continuous debate on the concept and its implementation. Although the idea has been around for more than half a century, there is still no clear consensus over its definition.

World Business Council for Sustainable Development defined CSR as "the continuing commitment by business to behave ethically and contribute to economic development while improving the quality of life of the workforce and their families as well as of the local community and society at large."

Brief History and Evolution of CSR in India: India has the world's richest tradition of corporate social responsibility. Though the term CSR is comparatively new, the concept itself dates to over a hundred years. CSR in India has evolved through different phases, like community engagement, socially responsible production, and socially responsible employee relations.

CSR & Hinduism: Social responsibility is a manifestation of dharma, the duty of human beings towards society. **Atharvana Veda** says that "one should procure wealth with one hundred hands and distribute it with one thousand hands".

The **Yajurveda** says that "enjoy riches with detachment, do not cling to them because the riches belong to the public, they are not yours alone". In the **Rig Veda**, there is also a mention of the "need for the wealthy to plant trees and build tanks for the community as it would bring them glory in life and beyond. **"Let us walk together, Let us talk together, Let our heart vibrate together" – Rig Veda. Kautilya**also "emphasized ethical practices and principles while conducting business".

CSR & Islam: Islam had a law called Zakaat which ruled that a portion of one's earning must be shared with the poor in the form of donation.

CSR & Sikhism: Similar to Islam's Zakaat, Sikhs followed what they called Daashaant.

PHASES OF CSR IN INDIA

Phase 1 (1850 to 1914): The first phase of CS R is known for its charity and philanthropic nature. CSR was influenced

***Asso. Professor, SD College of Management Studies, Muzaffarnagar (U.P.) INDIA**

by family values, traditions, culture and religion, as also industrialization. The wealth of businessmen was spent on the welfare of society, by setting up temples and religious institutions. In times of drought and famine these businessmen opened up their granaries for the poor and hungry. With the start of the colonial era, this approach to CSR underwent a significant change. In pre-Independence times, the pioneers of industrialization, names like Tata, Birla, Godrej, Bajaj, promoted the concept of CSR by setting up charitable foundations, educational and healthcare institutions, and trusts forcommunity development. **During this period social benefits were driven by political motives.**

Phase 2 (1914 to 1960): The second phase wa s during the Independence movement. Mahatma Gandhi urged rich industrialists to share their wealth and benefit the poor and marginalized in society. His concept of trusteeship helped socio-economic growth. According to Gandhi, companies and industries were the 'temples of modern India'. He influenced industrialists to set up trusts for colleges, and research and training institutions. These **trusts were involved in social reform, like rural development, education and empowerment of women.**

Phase 3 (1960 to 1990): This phase was characterized by the emergence of PSUs (Public Sector Undertakings) to ensure better distribution of wealth in society. The policy on industrial licensing and taxes, and restrictions on the private sector resulted in corporate malpractices which finally and environmental issues. Since the success rate of PSUs was not significant there was a natural shift in expectations from public to private sector, with the latter getting actively involved in socio-economic development. In 1965, academician s, politicians and businessmen conducted a nationwide workshop on CSR where major emphasis was given to social accountability and transparency.

Phase 4 (1990 onwards): In this last phase CSR became characterized as a sustainable business strategy. The wave of liberalization, privatization and globalization (LPG), together with a comparatively relaxed licensing system, led to a boom in the country's economic growth. This further led to an increased momentum in industrial growth, making it possible for companies to contribute more towards social responsibility. What started as charity is now understood and accepted as responsibility.

Table 1 (see in last page)

Significance of CSR: It has become an important topic because of the following factors:

1. CSR helps in strengthening the relationship between companies andstakeholders.
2. It enables continuous improvement and encourages innovations.
3. Attracts the best industry talent as a socially responsible company.
4. Provides additional motivation to employees.
5. Mitigates risk because of its effective corporate governance framework.
6. Enhances ability to manage stakeholder expectations.

Table 2 (see in last page)

DRIVERS OF CSR

1. **Care for all Stakeholders:** The companies should respect the interests of, and be responsive towards all stakeholders, including shareholders, employees, customers, suppliers, project affected people, society at large etc. and create value for all of them. They should develop mechanism to actively engage with all stakeholders, inform them of inherent risks and mitigate them where they occur.
2. **Ethical functioning:** Their governance systems should be underpinned by Ethics, Transparency and Accountability. They should not engage in business practices that are abusive, unfair, corrupt or anti-competitive.
3. **Respect for Workers' Rights and Welfare:** Companies should provide a workplace environment that is safe, hygienic and humane and which upholds the dignity of employees. They should provide all employees with access to training and development of necessary skills for career advancement, on an equal and non-discriminatory basis. They should uphold the freedom of association and the effective recognition of the right to collective bargaining of labour, have an effective grievance redressal system, should not employ child or forced labour and provide and maintain equality of opportunities without any discrimination on any grounds in recruitment and during employment.
4. **Respect forHuman Rights:** Companies should respect human rights for all and avoid complicity with human rights abuses by them or by third party.
5. **Respect for Environment:** Companies should take measures to check and prevent pollution; recycle, manage and reduce waste, should manage natural resources in a sustainable manner and ensure optimal use of resources like land and water, should proactively respond to the challenges of climate change by adopting cleaner production methods, promoting efficient use of energy and environment friendly technologies.
6. **Activities for Social and Inclusive Development:** Depending upon their core competency and business interest, companies should undertake activities for economic and social development of communities and geographical areas, particularly in the vicinity of their operations.

Key Issues In CSR

Labour Rights: Child labour, Forcedlabour, Right to organize, Safety and health.

Environmental conditions: Water & Air emissions, Climate Change, Human Rights, Cooperation with Paramilitary Forces, Complicity in Extra-Judicial Killings.

Poverty Alleviation: Job Creation, Public Revenues, Skills and technology.

CSR Current Scenario in India: Although the roots of CSR lie in philanthropic activities (such as donations, charity,

relief work, etc.) of corporations. The 21st century is characterized by unprecedented challenges and opportunities, arising from globalization, the desire for inclusive development and the imperatives of climate change. Indian business, which is today viewed globally as a responsible component of the ascendancy of India, is poised now to take on a leadership role in the challenges of our times. In India, CSR has evolved to encompass employees, customers, stakeholders and sustainable development or corporate citizenship. Numerous organizations grade companies on the performance of their corporate social responsibility. As a result CSR has emerged as an inevitable concern for business managers in every organization.

CSR Activities in India: Education, gender equity and women's empowerment, combating HIV/AIDS, malaria and other diseases, eradication of extreme poverty, contribution to the Prime Minister's National Relief Fund and other central funds, social business projects, reduction in child mortality, improving maternal health, environmental sustainability and employment enhancing vocational skills among others. Investment in education, health, skill development and social infrastructure will enhance capabilities of the youth by improving their nutritional, skill and educational level, which in turn will better their employment prospects.

Specific Features Of Companies Act – 2013

1. These rules came into force from 1st April 2014
2. The government of India made it mandatory for companies to undertake CSR activities under the Companies Act, 2013.
3. The CSR activities will have to be within India, and the new rules will also apply to foreign companies registered here.
4. Funds given to political parties and the money spent for the benefit of the company's own employees (and their families) will not count as CSR.
5. The concept of CSR is defined in clause 135 of the Act, and it is applicable to companies which have:
6. An annual turnover of Rs 1,000 crore or more, or a
7. Net worth of Rs 500 crore or more, or a
8. Net profit of Rs 5 crore or more.
9. An average of the previous three financial years PAT will be considered for calculating the 2% for CSR.
10. CSR policy of a company should ensure that surplus arising out of a CSR activity will not become part of business profits.
11. CSR policy should specify that the CSR corpus will include the following: a) 2% of average net profit; b) any income arising thereof; c) Surplus arising out of CSR activities.
12. The companies can carry out these activities by collaborating either with a NGO, or through their own trusts and foundations or by pooling their resources with another company.
13. The law also entails setting up of a CSR committee which shall be responsible for decisions on CSR expenditure and type of activities to be undertaken. Prior to each annual meeting, the board must submit a report that includes details about the CSR initiatives undertaken during the previous financial year.
14. This committee shall consist of three or more directors, with at least one independent director whose presence will ensure a certain amount of democracy and diversity in the decision-making process.
15. All companies falling under the provision of Section 135 (1) of the Act should report, in the prescribed format, the details of their CSR initiatives in the director's report and on the company's website.
16. In case a company has failed to spend 2% of the average net profit, the reason for doing so should be mentioned in the annual board report. However, the act does not provide any guidance on what constitutes acceptable reasons for which a company may avoid spending 2% on CSR.

Table 3 : 2013 Vs 2014 Rankings

Rank (2014)	*Company*	*Rank (2013)*	*Company*
1	Mahindra & Mahindra Ltd.	1	Tata Steel Ltd
2	Tata Power Company Ltd.	2	Tata Chemicals Ltd.
3	Tata Steel Ltd.	3	Mahindra & Mahindra Ltd
4	Larsen & Toubro Ltd.	4	Maruti Suzuki India Ltd
5	Tata Chemicals Ltd.	5	Tata Motors Ltd.
6	Tata Motors Ltd.	6	Siemens Ltd.
7	GAIL (India) Ltd.	7	Larsen & Toubro Ltd.
8	Bharat Petroleum Corporation Ltd.	8	Coca-Cola India Pvt. Ltd.
9	Infosys Ltd.	9	Steel Authority of India Ltd
10	Jubilant Life Sciences Ltd.	10	Infosys Ltd.

*Source:*Economic Times (13-1 0-2015)

CSR will increase availability of funds for welfare activities and may lead to delivery of goods and services to the people in a cost-effective manner. The clause on environmental sustainability will help in bringing down pollution and emission of greenhouse gases and will help in compliance with international norms and regulations. Therefore, this clause is a step towards achieving social and environmental sustainability, which will benefit society in future.

Analysis: The CSR Study of finds that many companies have scaled up operations in CSR and are looking at it as a priority. Mahindra and Mahindra lead the pack. Compared to the previous study it has jumped two ranks. There are four Tata group companies in the top 10 list. GAIL replaces SAIL in the public sector honours; while Bharat Petroleum joins the top ten list. Interestingly no foreign players make it to the top 10 list. Interestingly, Jubilant Life sciences, a healthcare company has entered the top ten list.

A Study by NGOBOX: Selected 100 BSE-listed companies

that have published their annual report and where information about the CSR spending was available as on July 16, 2015. These 100 companies are a good representation of large and medium companies and account for 33 sectors as per the BSE sector classifications. Public Sector Units and Public Sector Banks out of the purview of this analysis as the required information were not available.

Key Findings Of The Study (2015)

1. Nearly one-fourth (27%) of the companies spent more than the prescribed CSR spend and about two-third (64%) of the companies spent less than the prescribed CSR spend.
2. 2% of the companies spent zero amount from their prescribed CSR spend and 9% the companies spent exactly same as the prescribed CSR amount. 39% of the companies spent more than 50% of the prescribed CSR spent but missed the target of the prescribed CSR spend.

Table 4 (See in last page)

Analysis: VIP Industries emerges as the best performer by spending more than the double of prescribed CSR spend, followed by Tech Mahindra Ltd and UPL Ltd.

Table 5 (See in last page)

Table 6 (See in last page)

Analysis: Out of 11 pharmaceuticals sector companies only 5 companies could spend the prescribed CSR amount.

Table 7 (See in last page)

Analysis: Only one company managed to spend the prescribed CSR spend among 17 Banking and Finance sector companies. Almost 50% of the companies could not spend even half of the prescribed CSR spend. While Mahindra & Mahindra Financial Services managed to spend all of the prescribed CSR spend while DHFL could spend only 3.9% of the prescribed CSR making it to the last spot in the list.

Table 8 (See in last page)

Future CSR in India: Companies' journey towards business transformation via sustainability and CSR initiatives with some of the following key trends would be emerging:

1. Make in India but with Responsibility: The new thrust towards **"Make in India"** shifts focusses from services to manufacturing. It includes both Indian as well as foreign companies catering to both domestic as well as international demand. This has several implications:

(a) Manufacturing companies require larger investments and are more likely to fall in the mandatory CSR bracket.

(b) The CSR lifecycle for manufacturing typically starts with local community driven inventions. This is likely to see a surge as Make in India picks up steam.

(c) International markets demand greater focus on social interventions. This is manifested in no child labor, humane working conditions, environmental safeguards etc. This will force companies to spend more on CSR in India.

(d) The demand for trained CSR managers will increase multifold.

(e) Make in India will lead to a thrust towards efficient supply chains. Sustainable supply chains will demand attention.

(f) Support system for improved disclosure and CSR governance will be in demand.

2. Global Indian Corporations need to manage International Risk and Reputation: Indian companies are going global. They are addressing not just customers of developed countries but under explored markets in Africa and Latin America. Mining rights in Australia, factories in South Africa and telecom networks in Kenya are the growth engines of the future. Globalization and this expansion in scale for Indian companies offers unique opportunities, though at the same time it brings tremendous risks. Scale is many times difficult to manage when companies use strict command and control structures that can't really adapt to changes in local environments. Technology and the fast-moving flow of information are great disruptors that have brought many a global corporation to its knees. Customers, Suppliers and Governments have been joined by NGOs, Communities, Employees and Media over information networks to create Social Risk. Global Indian companies now need to factor in the new reality where Reputation, Responsibility and Risk are increasingly interconnected.

3. CSR and Reputation will be part of Strategic Intelligence: Going forward companies will connect not just as producers but as people. The personal **digital brand** is now the most powerful entity in the world. It can influence consumers to promote or turn away from corporations. It can influence trends and shake up the established norms. Information is today freely and readily available, what one does with the flow of information and how quickly the corporation responds is really what will matter in the digital world of tomorrow.

CSR will be more about genuine impact that simple philanthropy. It will be about connecting causes to brands and people. Genuine inside out responsibility forthe world we live in built into product lifecycle, communication and on ground engagement.

4. CSR management will need insight and adaptation not just knowledge and skill: Linkages of CSR to core business and strategic intelligence management will help companies navigate the quickly changing landscape and even manage unexpected twists. Though this can only happen if the CSR manager of tomorrow has not just knowledge and skill but insight. These insights will help companies find breakthroughs that can help solve everyday problems, connect through conversations and help people. The connected world no longer forgives centralized model of one way corporate communication that was the norm in the last century. The insight is necessary to tune CSR activities to local needs and aspirations rather than a common approach across the global footprint. Adaptation to changing needs, regulations and societal changes will

be imperative.

5. Innovate, Transform and Engage: Most corporates think inside out – "I spend so much money therefore I am a socially responsible company". Others focus on the no of activities or Spread. They key question though is, Are my activities impactful? Are they genuinely changing the ground reality? Companies need to build, innovate and transform on a regular basis. India's top companies are investing in products and services that will build sustainability at the core. New Technologies, Dematerialization, Reuse and Recycling will drive business innovation. Companies need to earn trust and so do the causes they support. Providing a service without looking at customer safety, won't help in getting customers to believe in your brand no matter how charitable you are. Responsibility is about the values that integrate with the 4 Ps of marketing – product, price, place and promotion. Just as FMCG (Fast Moving Consumer Goods) companies need to think about better packaging, Banks need to think about whether services at concessional rates or loan waivers to the poor really qualify as CSR.

Public Sector Fails To Utilize 50% Of Their Funds Under CSR

Though, the **Companies Act, 2013** mandates two percent compulsory corporate social responsibility spending by the companies has been in force for over a year, yet the central public sector companies have not utilized over 50 percent of their funds under CSR. BJP's Rajya Sabha MP Shanta Kumar-led committee on public undertakings presented **its report on Friday (4-12-2015**). The panel pointed out an anomaly in the act saying that under the Act a company can only be penalized for not filing of details regarding CSR, but no penal action for no-performance. The committee also recommended redefining the term "CSR". "CSR should be clearly defined in the Act itself after incorporating the broader principles of CSR i.e. serving the interest of the most marginalized sections of the society in line with great words of the father of the nation Mahatma Gandhi, who believed that development is 'Sarvodaya' through 'Antyodaya' implying the welfare of all by serving the last man in the queue, the poorest of the poor," the recommendation said

Challenges Of CSR

Lack of Awareness of General Public in CSR Activities: There is a lack of interest of the general public in participating and contributing to CSR activities of companies. This is because of the fact that there exists little or no knowledge about CSR. The situation is further aggravated by a lack of communication between the companies involved in CSR and the general public at the grassroots.

Need to Build Local Capacities: There is a need for capacity building of the local non-governmental organizations as there is serious dearth of trained and efficient organizations that can effectively contribute to the ongoing CSR activities initiated by companies. This seriously compromises scaling up of CSR initiatives and subsequently limits the scope of such activities.

Issues of Transparency: Lack of transparency is one of the key challenges for the corporate as there exists lack of transparency on the part of the small companies as they do not make adequate efforts to disclose information on their programmes, audit issues, impact assessment and utilization of funds. This negatively impacts the process of trust building among the companies which is a key to the success of any CSR initiative.

Non-Availability Of Well Organized Non-Governmental Organizations: There is non - availability of well organized nongovernmental organizations in remote and rural areas that can assess and identify real needs of the community and work along with companies to ensure successful implementation of CSR activities.

Visibility Factor: The role of media in highlighting good cases of successful CSR initiatives is welcomed as it spreads good stories and sensitizes the population about various ongoing CSR initiatives of companies. This apparent influence of gaining visibility and branding exercise often leads many non-governmental organizations to involve themselves in event based programmes; in the process, they often miss out on meaningful grassroots interventions.

Narrow Perception towards CSR Initiatives: Non-governmental organizations and Government agencies usually possess a narrow outlook towards the CSR initiatives of companies, often defining CSR initiatives more as donor- driven. As a result, corporates find it hard to decide whether they should participate in such activities at all in medium and long run.

Non-Availability of Clear CSR Guidelines: There are no clear cut statutory guidelines or policy directives to give a definitive direction to CSR initiatives of companies. The scale of CSR initiatives of companies should depend upon their business size and profile. In other words, the bigger the company, the larger its CSR programme.

Lack of Consensus: On Implementing CSR Issues There is a lack of consensus amongst implementing agencies regarding CSR projects. This lack of consensusoften results in duplication of activities by corporate houses in areas of their intervention. This results in a competitive spirit between implementing agencies rather than building collaborative approaches on issues. This factor limits company's abilities to undertake impact assessment of their initiatives from time to time.

Key Concerns Of The Companies Act, 2013:

1. The Act does not prescribe any penal provision if a company fails to spend the stated amount on CSR activities. The Board will need to explain reasons for non-compliance in its report.
2. The threshold limit of Rs.5 crores net profit for applicability of CSR requirements seems, in comparative terms, to be on the lower side vis-à-vis net worth and turnover thresholds of Rs.500 crores and Rs.1,000crores respectively. This may result in companies getting covered under CSR even when they

do not meet net worth/turnover criteria.

3. It is not absolutely clear whether a company will need to create a provision in its financial statements for the unspent amount if it fails to spend 2% on CSR activities in a particular year.
4. After some initial confusion over the tax applicable, it is now clear that CSR expenditure will be taxable, although for a few activities tax exemption will be allowed from the financial year 2014-15. However, there is no clarity yet on these activities.

Critiques:

1. A disturbing aspect of Section 135 relates to the linking of a company's profit- making with the development of local areas. Companies are required to spend 2% of them
2. average net profits from the preceding three years and focus on local areas around
3. which they operate. This is an absurd proposition as it will increase inter-state disparities in social indicators. For instance, states like Gujarat, Maharashtra and Andhra Pradesh (as also Odessa in 2013), with their large number of industrial units, are likely to see greater social development on account of higher CSR spend by the private sector.
4. What happens to development projects when companies make losses? According to one estimate, of the 5,138 firms listed on the BSE, the total number of companies qualifying under Section 135 has come down from 1,500 in FY 2010 to 1,372 in FY 2012. So has the number of total qualifying companies with profit after tax greater than zero: from 1,457 to 1,265.
5. It is during recessionary times, when the need for CSR expenditure may be highest among vulnerable groups, that such spending may actually become unavailable.
6. The rules in the Companies Act-2013 would make it difficult for companies to pursue strategic CSR - aligned to business strategy - since any expense that can be traced back to financial profits may have to be set aside from CSR, as indicated by the law.
7. It is possible that companies would prefer to spend on activities specified in the Act, (such as protection of national art, heritage and culture, promotion of sports, contribution to the Prime Minister's National Relief Fund), which have a lower long-run social impact, ignoring real problems like inter-regional inequality or particular social stigmas.

Suggestions:

1. Under the Companies Act – 2013, a company canonly be penalized for not filing of details regarding CSR, but no penal action for no-performance. Hence, there should be a clarification for penal action.
2. Creating awareness among the general public in CSR activities and improving communication between the companies involved in CSR and the general public at the grassroots.
3. There is a need for capacity building of the local non-governmental organizations as there is serious dearth of trained and efficient organizations that can effectively contribute to the ongoing CSR activities initiated by companies.
4. There is a need for improving transparency on the part of the small companies as they do not make adequate efforts to disclose information on their programmes, audit issues, impact assessment and utilization of funds, which is a key to the success of any CSR initiative.
5. There is a need for well organized non-governmental organizations to ensure successful implementation of CSR activities.
6. The role of media in highlighting good cases of successful CSR initiatives is welcomed as it spreads good stories and sensitizes the population about various ongoing CSR.
7. Broad perception towards CSR initiatives is essential, as non-governmental organizations and Government agencies usually possess a narrow outlook towards the CSR initiatives of companies, often defining CSR initiatives more as donor-driven.
8. Clear cut statutory guidelines or policy directives are required to give a definitive direction to CSR initiatives of the companies.
9. Consensus amongst implementing agencies regarding CSR projects is the need of the hour, because lack of consensus often results in duplication of activities by corporate houses in areas of their intervention.
10. As the act does not provide any guidance on what constitutes acceptable reasons for which a company may avoid spending 2 % on CSR, hence it should be clarified.
11. The companies in their CSR activities should give more preference for education, poverty elevation programmes, employment generation, roads and power etc.

Conclusion- It is too early to say what the real impact of this act will be, especially given that passing it and enforcing it are too different things. Moreover, today the concept of corporate social responsibility is firmly rooted on the global business agenda. But in order to move from theory to concrete action, many obstacles need to be overcome. A key challenge facing business is the need for more reliable indicators of progress in the field of CSR, along with the dissemination of CSR strategies. No clear-cut regulatory framework regarding also acts as a hindrance in implementing CSR. It is found that the degree of CSR activities of companies should depend upon their business size and profile. In other words, the bigger the company, the bigger is its CSR program. Non-governmental organizations and Government agencies generally possess a constricted viewpoint towards the CSR activities of companies. As a result, they find it hard to decide whether they should contribute in such activities at all in medium and long range. Lack of transparency is another issue which

needs focus. This is mainly due to the fact that there is little or no knowledge about CSR within the local communities since no sincere efforts have been made to create awareness about CSR and win the confidence of local communities. There is a need to increase the understanding and active participation of business in equitable social development as an integral part of good business practice.

References:-

1. Annual Reports of the Companies Ministry of Corporate Affairs, Government of India.
2. Arora, B. and Puranik, R. (2004), "A review of corporate social responsibility in India". Economic Times: 13 – 10 – 2015.
3. www.ngosbox.org
4. www.k4d.org/Health/sustainable-development-challenges-and-csr-activities-in-india.

Table 1: Phases of CSR in India

1st Phase (1850 – 1914)	*2nd Phase (1914– 1960)*	*3rd Phase (1960 – 1990)*	*4th Phase (1990 onwards)*
Mainly Philanthropy and Charity during Industrialization. Organization solely responsible to Proprietor and Manager.	During the Independence struggle CSR usedas a tool for Social Development. Organization is for proprietor, managers and employees	CSR under the aegis Of mixed economy. Organizations Responsibility towards proprietor, managers and other Environmental Factors.	CSR in aglobalized world ina puzzled state. Organizations Responsibility towards Proprietor, Managers, Environment and Public in general.

Table 2: The four models of Corporate Responsibility (Arora &Puranik 2004)

Model	*Focus*	*Champions*
Ethical	Voluntary commitment by companies	M. K. Gandhi to public welfare
Statist	Statist State ownership and legal	Jawahar Lal Nehru requirements determine
Liberal	Corporate responsibilities limited to	Milton Friedman private owners (shareholders)
Stakeholder	Companiesrespond to the needs of communities, etc.	R. Edward Freeman stakeholders, customers, employees,

Table 4
Top 10 Companies (Percentagewise) in Spending More than the Prescribed CSR (2015)

Sl. No.	*Companies*	*Actual CSR spend to the % of the Prescribed CSR*	*Prescribed CSR Spent (INR Cr.)*	*Actual CSR Spent (INR Cr.)*
1	VIP Industries Ltd	210.1%	1.19	2.5
2	Tech Mahindra Ltd	172.3%	30.88	53.21
3	UPL Ltd	153.2%	6.93	10.62
4	Reliance Industries Ltd.	142.7%	533	760.58
5	Godrej Consumer Products Ltd	129.6%	12.41	16.08
6	Marico Ltd	117.8%	9.50	11.19
7	Torrent Pharmaceuticals Ltd	109.6%	13.69	15.01
8	Bharat Forge Ltd	106.3%	10.56	11.23
9	Tata Power Co Ltd	104.4%	29.80	31.1
10	Wipro Ltd	103.7%	128.00	132.7

Table 5

Bottom 10 Companies (Percentagewise) in spending prescribed CSR spends (2015)

Sl. No.	*Bottom 10 Performers*	*Prescribed CSR*	*Actual CSR*	*Actual CSR Spend as % of the prescribed CSR*
1	Monsanto India Ltd	1.8	0	0.0%
2	Nilkamal Ltd	1.15	0	0.0%
3	Motherson Sumi Systems Ltd	11.7	0.15	1.3%
4	Oberoi Realty Ltd	6.96	0.16	2.3%
5	Finolex Cables Ltd	3.03	0.11	3.6%
6	Dewan Housing Finance Corp Ltd	11.58	0.45	3.9%
7	Sonata Software Ltd	0.68	0.034	5.0%
8	IFB Industries Ltd	0.724	0.046	6.4%
9	Bajaj Electricals Ltd	2.076	0.1628	7.8%
10	Shriram Transport Finance Co Ltd	38.15	6.924	18.1%

Table 6

CSR Spending in Pharmaceutical Sector Companies (2015)

Sl. No.	*Company*	*Prescribed CSR Spend (INR Cr.)*	*Actual CSR Spend (INR Cr.)*
1	Torrent Pharmaceuticals Ltd	13.69	15.01
2	Novartis India Ltd	3.24	3.33
3	Abbott India Ltd	4.52	4.63
4	Ajanta Pharma Ltd	3.74	3.82
5	Biocon Ltd	7.10	7.13
6	Dr Reddy's Laboratories Ltd	36.6	29.17
7	Unichem Laboratories Ltd	3.08	2.41
8	Ipca Laboratories Ltd	9.68	7.09
9	Alembic Pharmaceuticals Ltd	4.72	3.1
10	Lupin Ltd	39.6	12.6
11	Pfizer Ltd (India)	6.02	1.29

Table 7
CSR Spending in Banking & Finance Sector Companies (2015)

Sl. No.	*Company*	*Prescribed CSR Spend*	*Actual CSR Spend*	*Percentage of the Prescribed*
1	Mahindra & Mahindra Financial Services Ltd	24.87	24.87	100.0%
2	IDFC Limited	47	46.5	98.9%
3	Axis Bank Ltd	133.77	123.22	92.1%
4	ICICI Bank Ltd	172	156	90.7%
5	Bajaj Holdings and Investment Ltd	5.47	4	73.1%
6	Bajaj Finserv Ltd	1.48	1	67.6%
7	Cholamandalam Investment & Finance Co. Ltd.	8.6	5.73	66.6%
8	SREI Infrastructure Finance Ltd	2.26	1.38	61.1%
9	HDFC Bank Ltd	197.13	118.55	60.1%
10	Housing Development Finance Corp	9.93	4.49	45.2%
11	Manappuram Finance Ltd	10.173	4.46	43.8%
12	Yes Bank Ltd	38.02	15.71	41.3%
13	Capital First Ltd.	1.93	0.75	38.9%
14	Magma Fincorp Ltd.	3.78	1.26	33.3%
15	Kotak Mahindra Bank Ltd	39.2	11.97	30.5%
16	Shriram Transport Finance Co Ltd	38.15	6.924	18.1%
17	Dewan Housing Finance Corp Ltd	11.58	0.45	3.9%

Table 8: CSR Spending in Public Sector Enterprises

As per central government guidelines all Central Public Sector enterprises would need to allocate a percentage of profit for CSR and sustainable activities. The range of these financial allocations is as follows:

PAT of Central Public Sector Enterprises	*Range of the Budgetary allocation for CSR the Previous year and Sustainability activities (as % of PAT in previous year)*
(i) Less than Rs. 100 crore	3%-5%
(ii) Rs. 100 crore to Rs. 500 crore	2%-3%
(iii) Rs. 500 crore and above	1%-2%

****

नयी कविता और हिमविद्ध काव्य संकलन

डॉ. जगमोहन सिंह गुर्जर *

प्रस्तावना – नाव के पाँव और शब्द दंश के पश्चात् कवि जगदीश गुप्त का सृजन हिमानी प्रकृति की और चला गया है। इसी का परिणाम है किउनका तीसरा काव्य संकलन 'हिमविद्ध'। हिमविद्ध 1964 में प्रकाशित हुआ था और उसकी सारी कविताऐं प्रकृति, प्रकृति की हिमाच्छादित छवि और उसके आकर्षण में बंधी हुई कवि की भावचेतना को व्यक्त करने वाली है। वास्तव में हिमविद्ध प्रकृति काव्य है। हिमविद्ध का प्रकृति काव्य होना आकस्मिक नहीं कहा जा सकता क्योंकि जगदीश गुप्त के पास प्रारम्भ से ही एक भावुक की कल्पना और चित्रकार की चित्रकला शैली रही है। भावना, कल्पना और चित्रकला के योग से प्रकृति के अद्‌भुत विम्ब इस काव्य–कृति में देखे जा सकते है यो प्रकृति के चित्र तो इसके पूर्व के संकलनों में भी उपलब्ध है, किन्तु यहाँ प्रकृति उद्धात, विराट, पावन, कोमल, स्निग्ध, भावों का वहन करती दिखलाई देती है।

डॉ. हरिचरण शर्मा ने लिखा है कि 'इन कविताओं में हिमानी प्रकृति की आँखों देखी अटकी छवियों की अनुभूतिपरक प्रतीतियों के शब्द–बिम्ब है। इनमें कही प्रकृति की जड़ता में चेतनता का आभास है तो कही पवित्रता और मांगल्य भावो के बोलते चित्र है। यह तो सही है कि 'हिमविद्ध' का स्वर अन्य स्वरो से अलग हैं। एक और नयी कविता का यह परिप्रेक्ष्य है जिसमें आदमी की वरहित हैं, उसकी पीडा का दंश है, जीवन की विसंगतियों का फैलाव हैं, और है भीड़ में खोए जाने पर भी अपने को पहचानने का लोभ या कहें कि आकांक्षा हिमानी की प्रकृति से जुड़ते हुए गुप्त जी की आलोच्य कविताऐं एक ओर उनकी भावुक तन्मयता को उकेरती है तो दूसरी और उनके रीतिवादी और आधुनिक षिल्प के मेल को भी इनके शिल्प में रीति कवियों के से रूपक है, उत्प्रेक्षाऐं व उपमाऐं है तो दूसरी और सर्वथा ताजे अछूते और मासूम अप्रस्तुतों का आत्मीय प्रयोग भी है। इन प्रकृति विम्बों में ठण्डापन कहीं नही है। सर्वत्र एक चेतनता का सर्द और उष्ण प्रवाह है –

1. 'दूध के अध उगे दाँत–सी
   कोर हिमश्रृंग की
   फूटी फिर
   उससलेटी बादल की ओट से'।
2. 'सारा आवेग–सिन्धु। पारे सा
   इधर–उधर फिरता बहा–बहा।
3. जाने कब बादला की सीप ने
   नभ के उस अँधियारे कोने तक
   मोती सी चाँदनी उत्मीय दी'
4. 'शिखरों पर टिके
   स्याह बादल की परछाई
   आँखों में काजल सा पार गई।'

'हिमविद्ध' की कविताओं में कवि हिमानी प्रकृति को देखकर कही तो इतना भावुक हो गया है कि उसका सांस्कृतिक बोध भी स्पष्ट होकर सामने आ गया है। उदाहरणर्थ निम्नांकित पंक्तियों देखिए जो बादलों की झील के उस पार से प्रारम्भ होकर 'झील के तलहीन बादल नीर में बहुत गहरे तिरती गई है –

'बादलों की झील के उस पार
खिला शिखरों का कमलवन
भोर से भर मूठ कुंकुम किरन–केसर इस तरह फेंकी –
वनों के गहन पुरइन पात सारे सैरा उठे।
ज्योति की बहुरैग, झिलमिल मछलियों
झील के तलहीन बादल नीर में
बहुत गहरे, बहुत गहरे तिर गयी।

कहने का तात्पर्य यह है कि 'हिमविद्ध' हिमानी प्रकृति की मनोरम छवियों से सजा हुआ संग्रह है। इसमें कहीं दृष्टि के किनारों तक फेली आकारहीन हिमश्री का विस्तार है तो कही शिखरों के पार षिखरों की आभा को देखकर मन प्राण को तल्लीन कर देने वाली अभिराम छवियाँ हैं। इतना ही नहीं कही–कहीं बादल की सीप नभ के अंधियारे कोने तक मोती सी चांदनी उलीच रही है तो कही गिरिशिखर से तलहटी तक चीड़–वन को घेरकर उतरते आते घुमैल और शिथिल बादल का विम्ब है। बादल का शब्द चित्र जिस षिल्प में प्रस्तुत किया गया हे वह शिल्प एक और तो रीतिकालीन अलंकृति से युक्त है तो दूसरी और छायावादी रागात्मकता से और तीसरी और कवि के नवीन प्रकृति–बोध से जुड़ी हुई चेतना से। उदाहरणार्थ ये पंक्तियों देखिए –

'सांभर के सेंदूर लिए आकाश में
सरक आया क्षुंधित बादल लाल'
लपलपातीदीर्घ विधुत जीभ जिसकी तुहिन शिखरों पर विसुध सोयी हुई
'स्वप्न डूबी हर किस को
चाट जाना चाहती है।'

जब हम यह कहते है कि 'हिमविद्ध' की प्रकृति काव्य का उदाहरण है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि गुप्त जी अपने समय के यथार्थ से टकराकर अथवा कतराकर निकल गए है। वस्तुत: यथार्थ जगत और मानवीय संवेदनाओं की दुनिया वह भी तो है जो प्रकति से जुड़ी हुई है। इसे जीवन से पलायन नहीं कहा जा सकता है। यह तो वह यथार्थ की छाव है, जहाँ पहुँचकर मन के सारे घाव, सारे दंश और सारी समस्याऐं एक शीतलता प्राप्त करती हैं। यों भी जीवन व्यंग्य, विसंगतियों और विडम्बनाओं का नाम ही तो नहीं है। यही कारण है कि कविता–संग्रह की अंतिम चार कविताओं में कवि का स्वाभिमान, उसका चिन्तन व राष्ट्रीयता का संदर्भ चित्रित हुआ है। 'मैं वह क्यों नहीं हुआ और 'स्वाभिमान' जैसी कविताओं में इसी प्रकार का कथ्य

* व्याख्याता (हिन्दी) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दौसा (राज.) भारत

रेखांकित हुआ है।

'हिमविद्धता के तलस्पर्शी, सर्वग्राही, नैसर्गिक अनुभव ने मुझे जिस जगह पहुँचा दिया था वहाँ से अपने को किसी दूसरी दिशा में मोड़ पाना स्वयं मेरे लिए संभव नहीं था। पर जब रचनाकर्मी मन एक सृष्टि पूरी कर लेता है तो उसे श्रम की प्रतीत, विश्राम की इच्छा तथा नयी संलग्नता की आकांक्षा तीनों एक साथ घेर लेती है। विराम चाहते हुए भी मिल नहीं पाता। मेरे लिए यह सोच पाना सम्भव नहीं था कि आंख और मन को अपने में डूबा लेने वाले बहुविध, सीमाहीन रंगरूपाकार बोध से मै अपने को कब कैसे अलग करपाऊँगा। कुछ ऐसा होगा जो मुझे उससे भी अधिक गहराई ओर तीव्रता से वरवस अपनी और प्रवृत्त कर लेगाँ इसकी तो कल्पना भी मुझे नहीं थी। मैं उसके लिए प्रस्तुत भी नहीं था पर जीवन में प्रत्याशित रूप से ही घटित नहीं होता। पग-पग पर छद्म रूप रखकर सामने आने वाली उसकी नाटकीयता न जाने कितनी विस्मयजनक स्थितियों का सृजन करकें हमं कहाँ से कहाँ ले आती है। लेकिन नयी मन: स्थिति में पहुँचकर और विश्रामित सृजनशीलता के पुन: जाग उठने के बाद जो कुछ मुझे अनुभूत हुआ वह पूर्वानुभव से भी असाधारण लगा।

उपर्युक्त विवेचन से सिद्ध होता है कि 'हिमविद्ध' काव्य-संकल प्रकृति की कविताओं से युक्त तो है किन्तु उसमें कवि अपने आस-पास को भी वाणी देने में समर्थ हुआ है। यह यथार्थ बोध भले ही कम कविताओं में व्यक्त हुआ हो, किन्तु यह तो कहा ही नहीं जा सकता की जगदीश गुप्त यथार्थ बोध से कतराकर निकल गए हैं। वास्तव में उनका रंग-बोध गहरा है, प्रकृति के प्रति उनकी गहरी संसिक्ति है किन्तु यथार्थ का बोध भी उन्हें है, इसकी सांकेतिक व्यंजना आलोच्य संग्रह की कविताओं में देखी जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. हरिचरण शर्मा पुनश्च पृष्ठ - 163
2. जगदीश गुप्त : 'हिमविद्ध' पृष्ठ - 26
3. जगदीश गुप्त : 'हिमविद्ध' पृष्ठ - 22

****

वैश्विक तापमान का बढ़ता खतरा : समस्या और समाधान

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद *

शोध सारांश – मानव अस्तित्व के ऊपर वर्तमान में जो खतरे मंडरा रहे है उनमें एक प्रमुख खतरा है– वैश्विक तापन। विकसित राष्ट्रों द्वारा ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन के कारण ओजोन परत का विनाश हुआ है। वनों की अन्धाधुन्ध कटाई के कारण ऑक्सीजन की कमी तथा कार्बन डाई–ऑक्साइड गैस की मात्रा में वृद्धि हुई है। इसके अतिरिक्त क्लोरोफ्लोरो कार्बन, मीथेन, हेलोन, नाइट्रस ऑक्साइड गैसों की मात्रा में भी वृद्धि हुई है। वैश्विक तापमान के कारण हिम क्षेत्र पिघल रहे है, जैव विविधता नष्ट हो रही है कृषि फसलों के उत्पादन पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ रहा है तथा समुद्र तटीय द्वीपों के डूबने का खतरा मण्डरा रहा है। अत: विश्व पर्यावरण को ध्यान में रखकर ही हमें सतत् विकास करना चाहिये। जिससे आने वाली पीढ़ियों को इस विश्वव्यापी खतरे से बचाया जा सके।

शब्द कुंजी – जलवायु परिवर्तन, ग्रीन हाऊस गैस, ओजोन परत, हिमनद, जैव विविधता, समुद्री क्षेत्र, वन विनाश, जीव–जन्तु।

प्रस्तावना – आज विश्व में मानव जाति की प्रमुख समस्या तापमान व जलवायु परिवर्तन है वैश्विक तापमान इस बात का प्रतीक है कि हम लोग पृथ्वी के वायुमण्डल की वहन क्षमता से ज्यादा उस पर बोझ डाल रहे है। ग्रीन हाऊस गैस जो वातावरण में ताप को रोकती है, अप्रत्याशित दर से एकत्रित हो रही है। वर्तमान स्तर प्रति मिलियन कार्बन डाई ऑक्साइड इक्वीबैलेंट कनवर्ट के कर्नवट 380 पार्टस तक पहुँच गया है ऐसी उम्मीद की जा रही है कि 21वीं सदी के दौरान औसत ग्लोबल तापमान में 1.5° से.ग्रे. की वृद्धि होना सम्भव है। इन ग्रीन हाऊस गैसों के लिए विकसित राष्ट्रों को जिम्मेदार माना गया है अत: उसमें कमी लाने का दायित्व भी उन्हीं पर डाला गया है। जिसका पालन उन्हीं को करना है। यदि पुराने वनों की सुरक्षा नहीं की गयी तो विश्व स्तर पर ये 2030 तक इन वनों का प्रतिशत केवल 10 प्रतिशत तक ही शेष रह जायेगा। जिसके कारण जैव–विविधता प्रभावित होगी तथा विश्व जलवायु में परिवर्तन होगा।

वैश्विक तापमान का अर्थ – वायुमण्डल में उपस्थित कार्बन–डाई ऑक्साइड गैस पृथ्वी के तापमान को बढ़ाने वाली प्रमुख गैस है, इसके अलावा मीथेन, क्लोरोफ्लोरो कार्बन, नाइट्रस ऑक्साइड, हेलोन आदि गैसों की भूमण्डलीय तापमान वृद्धि में भूमिका होती है, ये गैसें दीर्घ तरंगी पार्थिव विकिरण को वायुमण्डल से बाहर जाने से रोक लेती हैं। परिणामस्वरूप तापमान बढ़ने से ताप संतुलन बिगड़ जाता है। भू–भण्डलीय तापमान में इस वृद्धि को ही वैज्ञानिक शब्दावली में वैश्विक तापमान कहा जाता है।

भू–मण्डल के निरन्तर बढ़ते हुए तापमान को 'ग्लोबल वार्मिंग' या वैश्विक ऊष्णता कहा जाता है, वैश्विक तापमान वर्तमान समय की प्रमुख विश्वव्यापी पर्यावरणीय समस्या है। सौर्य विकीर्ण ऊर्जा का लगभग 51 प्रतिशत भाग लघु तरंगों के रूप में वायुमण्डल को पार कर पृथ्वी के धरातल पर पहुँचता है, पृथ्वी का वायुमण्डल लघुतरंग सौर्यिक विकिरण के लिए पारगम्य होता है अत: सौर्य विकिरण बिना किसी रूकावट के धरातल पर पहुँचता है, लघु तरंगे पृथ्वी से टकराकर ऊष्मा में परिवर्तित हो जाती है। यह ऊष्मा दीर्घ तरंगी पार्थिव विकिरण द्वारा पुन: वायुमण्डल में वापस लौट जाती हैं, जिससे पृथ्वी का ताप संतुलन बना रहता है। किन्तु वायुमण्डल में उपस्थित कुछ गैंसे ऊष्मा की दीर्घ तरंगों को अवशोशित कर लेती हैं, तथा ऊष्मा की दीर्घ तरंगों को वायुमण्डल से बाहर जाने से रोक देती हैं, पार्थिव विकिरण अवरूद्ध हो जाने से पृथ्वी के धरातल का तापमान सामान्य (18°C) से अधिक हो जाता है। ऐसी अवस्था में वायुमण्डल ग्रीन हाउस के शीषे की भाँति कार्य करता है। शीशा लघु प्रकाश तरंगों के लिए पारदर्शी तथा दीर्घ तरंगों के लिए अपारदर्शी होता है। अत: सूर्य से आने वाली लघु प्रकाश तरंगे काँच को पार कर काँचघर के वातावरण को गर्म करती हैं। भीतर प्रवेश कर चुकी ऊष्मा जब दीर्घ तरंगों के रूप में बाहर निकलने को बढ़ती हैं तो काँच की दीवारें उन्हें बाहर निकलने से रोक देती हैं, जिससे काँच घर के भीतर के तापमान में अपेक्षाकृत वृद्धि हो जाती है। ठीक उसी प्रकार वायुमण्डलीय गैसें लघु तरंग विकीर्ण के लिए पारदर्शी होती हैं किन्तु दीर्घ तरंग विकीर्ण के लिए अपारदर्शी होती हैं। अत: सौर्य विकीर्ण ऊर्जा लघु तरंग के रूप में वायुमण्डल को पार कर भू–तल तक पहुँचा देती है। जिससे पृथ्वी के तापमान में वृद्धि हो जाती है, इसे हरित ग्रह प्रभाव कहा जाता है।

वैश्विक तापमान के कारण – पृथ्वी के तापमान में हो रही वृद्धि के लिए निम्न कारण उत्तरदायी हैं–

1. ***ओजोन परत में छिद्रीकरण–*** ओजोन परत में छिद्रीकरण से तात्पर्य वायुमण्डल की ओजोन परत में ओजोन नामक विशिष्ट गैस की कमी हो जाने से है। ओजोन एक त्रि–परमाण्विक गैस है। जिसमें ऑक्सीजन के तीन परमाणु (O_3) होते हैं। ओजोन (O_3) वायुमण्डल में धरातल से 20 से 35 कि.मी. में ऊँचाई तक सर्वाधिक (0.02–0.3 ppm) पाई जाती है। इसी भाग को ओजोन परत कहा जाता है जो समताप मण्डल का ही एक भाग माना जाता है। यह परत सूर्य से आने वाली हानिकारक पराबैगनी किरणों (30 mm से कम तरंगदैर्ध्य वाली किरणें) को पृथ्वी के वायुमण्डल में आने से रोककर सुरक्षा कवच की तरह कार्य करती हैं, किन्तु विगत कुछ दशकों से मानवीय क्रियाकलापों द्वारा उत्सर्जित हानिकारक रसायनों यथा– क्लोरोफ्लोरोकार्बन, नाइट्रेट ऑक्साइड, कार्बन टेट्रा क्लोराइड, क्लोरोफॉर्म और क्लोरीन इत्यादि के कारण ओजोन के विनाश से ओजोन परत पतली होती जा रही है, जिसे ओजोन छिद्रीकरण कहते हैं। ओजोन छिद्रीकरण को

* व्याख्याता (भूगोल) बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राज.) भारत

वैश्विक तापमान का मुख्य कारण माना जाता है। ओजोन परत में छिद्रीकरण मुख्यत: अंटार्कटिका क्षेत्र पर सबसे ज्यादा माना जा रहा है, इसी कारण अंटार्कटिका महाद्वीप पर तापमान में वृद्धि के कारण बर्फ की चादर पिघलती जा रही है तथा आइसबर्ग टूटकर समुद्र में खिसक रहे हैं। इस प्रकार ओजोन परत के क्षरण से हानिकारक पराबैंगनी किरणें सीधे पृथ्वी के धरातल पर पहुँचेंगी, परिणामस्वरूप तापमान में वृद्धि होने के अलावा त्वचा कैंसर, मोतियाबिन्द आदि रोगों में वृद्धि होगी, मानव के प्रतिरक्षा- तंत्र पर बुरा प्रभाव पड़ेगा, फसलोत्पादन एवं वनों का क्षेत्रफल घट जाएगा।

2. **निर्वनीकरण –** उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों में वनों की अंधाधुंध एवं अविवेकपूर्ण कटाई को भी वैश्विक तापमान का कारण माना जाता है, जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के साथ वनों की अंधाधुंध कटाई ने विकट पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न कर दी हैं, आवास एवं कृषि योग्य भूमि में विस्तार के कारण 20वीं शताब्दी में उष्णकटिबन्धीय वनों में तीव्र गति से ह्रास हुआ है। भारत में प्रतिवर्ष अनुमानत: 17 लाख हैक्टेयर वनों की कटाई हो रही है। सन् 1980-90 के मध्य एशिया में निर्वनीकरण की दर 1.2 प्रतिशत, अमरीका में 0.8 प्रतिशत तथा अफ्रीका में 0.7 प्रतिशत थी, वन CO_2 काअवशोषण एवं मानव के लिए जीवनदायी O_2 गैसकाउत्सर्जन करते हैं, निर्वनीकरण द्वारा वानस्पतिक आवरण में आ रही कमी के कारण वनस्पति द्वारा CO_2 का पर्याप्त अवशोषण नहीं हो पा रहा है, परिणामस्वरूप वायुमण्डल में CO_2 की सान्द्रता बढ़ती जा रही है जिस कारण पृथ्वी के सतह का तापमान बढ़ता जा रहा है। वर्तमान में वनों के कटाव की दर 2.23 प्रतिशत प्रतिवर्ष है।

3. **ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि –** वैश्विक तापमान के लिए मुख्यत: कार्बन-डाई-ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरो-फ्लोरोकार्बन, हेलोन इत्यादि गैंसे उत्तरदायी हैं। इन गैसों का सान्द्रण वायुमण्डल में निरन्तर बढ़ता जा रहा हैं। ये गैसें वायुमण्डल में ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करती हैं। परिणामस्वरूप पृथ्वी का तापमान बढ़ता जा रहा है।

1. **कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2)**वैश्विक तापमान-के लिए मुख्य उत्तरदायी गैस CO_2 है, वायुमण्डल में इस गैंस का मुख्य स्रोत है- जीवोश्म ईंधन का जलना, इसके अलावा प्राणियों के श्वसन क्रिया, ज्वालामुखी उद्गार, वनस्पति के सड़ने-गलने से भी CO_2 वायुमण्डल में पहुँचती है, एक अनुमान के अनुसार 1750-2000 की अवधि में वायुमण्डल में CO_2 की सांद्रता में 34 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो पिछले 420000 वर्षों में सर्वाधिक है। पिछले 20 वर्षों की अवधि में लगभग 75 प्रतिशत CO_2 का उत्सर्जन जैविक ईंधन के जलाने से हुआ है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार पृथ्वी के तापमान में वृद्धि करने में CO_2 का योगदान लगभग 60 प्रतिशत है।

2. **क्लोरोफ्लोरोकार्बन (CFC)** क्लोरोफ्लोरोकार्बन 20वीं शताब्दी की देन है। इसका निर्माण रासायनिक अभिक्रिया द्वारा होता है। ये पदार्थ वायुमण्डल की ओजोन परत को नुकसान पहुँचाते हैं। सी.एफ.सी का प्रयोग रेफ्रिजरेटरों, ऐरोसोल एयर कंडीशनरों, फोम-रेग्जीन बनाने, स्प्रे आदि में होता है। वैश्विक तापमान में इसका योगदान 24 प्रतिशत है। मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल के अनुसार विश्व के देशों में (CFC) के हानिकारक प्रभावों से बचने के लिए इसके स्थान पर HCFC (हाइड्रो-क्लोरोफ्लोरोकार्बन) का प्रयोग करने का निर्णय लिया था। HCFC की सक्रियता अवधि (15 वर्ष) यद्यपि CFC से बहुत कम है, किन्तु दोनों की रेडियोएक्टिव शक्ति में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

3. **मीथेन (CH_4) –**मीथेन गैस कार्बन व हाइड्रोजन के संयोग से बनती है। वायुमण्डल में इसकी मात्रा .0002 प्रतिशत है। मीथेन के मुख्य स्रोत धान की खेती, पशुपालन, प्राकृतिक दलदली भूमियाँ, कोयला खनन, जैविक पदार्थों का जलन आदि है। वायुमण्डल में मीथेन गैस की सान्द्रता में 1750-2000 की अवधि में 150 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यह गैस अपनी विकिरणशीलता के कारण CO_2 से 20 गुना अधिक ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करती है। ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करने में मीथेन का योगदान 10 प्रतिशत है, इस गैस का जीवनकाल 11 वर्ष माना जाता है। विभिन्न स्रोतों से प्रतिवर्ष लगभग 52.5 करोड़ टन मीथेन वायुमण्डल में पहुँचती है।

4. **नाइट्रस ऑक्साइड –**यह गैस मुख्यत: नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों के प्रयोग जैविक पदार्थों तथा जीवाश्म ईधन के जलाने से उत्पन्न होती है। 1750-2000 की अवधि में इस गैस की सान्द्रता में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। वायुमण्डल में इस गैस की मात्रा बहुत कम है, किन्तु ग्रीन हाउस प्रभाव की दृष्टि से यह गैस CO_2 से 320 गुना अधिक खतरनाक है। ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करने में इस गैस का योगदान 6 प्रतिशत है तथा वायुमण्डल में इसका जीवनकाल 150 वर्ष का माना जाता है।

5. **हेलोन–** हेलोन ग्रीन हाउस प्रभाव में वृद्धि करने वाला एक रेडियोधर्मी तत्व है। हेलोन- 1301 तथा हेलोन- 1211 का उपयोग अग्निशमन उपकरणों एवं वायुयानों में किया जाता है। यह ओजोन परत को भी नुकसान पहुँचाता है। हेलोन- 1301 की रेडियोएक्टिवता CO_2 से 16000 गुना अधिक है।

वैश्विक तापमान का प्रभाव – वैश्विक तापमान वर्तमान शताब्दी की सबसे विकट पर्यावरणीय समस्या है। अभी हाल ही में 3 फरवरी, 2007 में I.P.C.C द्वारा जारी की गई विश्वसनीय रिपोर्ट में ग्लोबल वार्मिंग के कारण उत्पन्न भयानक परिणामों की ओर संकेत किया गया है इसके कारण पृथ्वी के वातावरण पर निम्न प्रभाव पड़ सकते हैं-

1. वैश्विक उष्णता के कारण जमीन की उर्वरता घटने की आशंका है। परिणामस्वरूप फसलोत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। पृथ्वी के कई हिस्सों में एक ही मौसम दीर्घकाल तक बना रहेगा। सर्दी है तो सर्दी रहेगी, गर्मी है तो गर्मी रहेगी। लगातार गर्मी से फसलों को गर्मी नमी नहीं मिलेगी तो सर्दी के कारण फसलों को गर्मी नहीं मिलेगी। वैश्विक उष्णता का प्रभाव गेंहूँ, चावल, मक्का, आलू आदि पर अधिक पड़ेगा। तापमान में वृद्धि के कारण भारत में गेहूँ, चावल के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, संक्षेप में धरती बंजर होती जाएगी।
2. पृथ्वी के बढ़ते तापमान के कारण जैव-विविधता के नष्ट हो जाने की आशंका हैं। कई जीव-जन्तु और वनस्पतियाँ जलवायु में परिवर्तन के कारण विलुप्त हो जाएगी। सूखा एवं आग लगने से वनों को अत्यधिक हानि होगी, कई जीव-जन्तु भी नष्ट होंगे।
3. तापमान में बढ़ोतरी और असामान्य परिवर्तन के कारण विश्व की प्रसिद्ध प्रवाल भित्तियाँ कुछ दशकों में नष्ट हो जाएगी। ऑस्ट्रेलिया के उत्तरी-पूर्वी भाग में समुद्र तट के समीप 345000 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैली प्रवाल भित्तियों के एक दिन पूर्णत: नष्ट होने की आशंका है, जो करोड़ों समुद्री जीवों को संरक्षण प्रदान करती हैं।
4. वैश्विक उष्णता के कारण ध्रुवीय क्षेत्रों तथा पर्वतीय हिमनदों के पिघलने से समुद्री जलस्तर के ऊपर उठने की आशंका है। I.P.C.C की ताजा रिपोर्ट के अनुसार 21वीं सदी के अंत में समुद्री जलस्तर में 18 से 58 सेंमी तक वृद्धि होने की आशंका है। परिणामस्वरूप तटीय क्षेत्रों का जलमग्न होना बड़ी संख्या में जनसंख्या का विस्थापन होगा। एक अनुमान के अनुसार 20वीं शताब्दी में समुद्री जलस्तर में

अनुमानित 0.1 से 0.2 मी की वृद्धि हुई है।

5. समुद्री जलस्तर में वृद्धि के कारण विश्व के लगभग 27 देश एवं कई द्वीप प्रभावित होगे मुख्यत: प्रभावित होने वाले देश बांग्लादेश, मिश्र, थाईलैण्ड, चीन और इण्डोनेशिया हैं। भारत का तटीय क्षेत्र भी प्रभावित होगा, जो अत्यंत उपजाऊ एवं सघन जनसंख्या घनत्व वाला क्षेत्र है। समुद्री जलस्तर में वृद्धि के कारण मालदीव के 9 द्वीप तथा प्रशान्त महासागर का किकीबाटी द्वीप डूब चुके हैं, जबकि कई द्वीप डूबने की कगार पर हैं।
6. तापमान वृद्धि का बुरा प्रभाव समुद्री जीवों पर भी पड़ेगा। उत्तरी एवं दक्षिणी ध्रुवों पर रहने वाले सील, पेंग्विन, हवेल आदि समुद्री जीवों के नष्ट हो जाने की आशंका है। इनके अलावा करोड़ों समुद्री जीवों एवं मछलियों का जीवन प्रभावित होगा।
7. वैश्विक तापमान के कारण कई प्राकृतिक आपदाओं का प्रकोप बढ़ेगा। तापमान में वृद्धि के कारण मौसम में लगातार अभूतपूर्व परिवर्तन हो रहे हैं। परिणामस्वरूप अनावृष्टि, अकाल, लू और गर्म हवाओं का प्रकोप बढ़ने की सम्भावना है।
8. एक अरब दस करोड़ लोगों को पीने के लिए पानी नसीब नहीं होगा तथा 20 करोड़ से 60 करोड़ लोगों को अनाज उपलब्ध नहीं होगा, पेयजल और खाद्यान्न संकट पृथ्वी के बढ़ते तापमान का ही परिणाम होगा। यह मानवता के लिए भयानक मंजर का संकेत है।
9. तापमान में वृद्धि के कारण पर्वतीय हिमनद निरन्तर पिघलते जा रहे हैं। जिन नदियों का उद्गम स्रोत पर्वतीय हिमनद हैं, उनमें भयंकर बाढ़ आने की आशंका है तथा उनके नष्ट हो जाने से नियतवाही नदियों के सूखने का अंदेशा है। हिमालय क्षेत्र में कई हिमनद सिकुड़ते जा रहे हैं। इसके अलावा मौसम में बदलाव के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में कम बर्फबारी के कारण भी हिमक्षेत्र के संकुचित होने की आशंका है।

वैश्विक तापमान को नियंत्रित करने के उपाय:

1. कृषि उत्पादन में प्रयुक्त रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का सीमित उपयोग तथा जैविक खाद के अधिकाधिक प्रयोग को बढ़ावा देना।
2. उद्योगों एवं स्वचालित वाहनों में ऐसे परिष्कृत उपकरणों को लगाया जाय, जिससे प्रदूषित गैसों का उत्सर्जन कम-से-कम हो तथा वायुमण्डल में छोड़ने से पूर्व उनका परिष्कार करना।
3. ग्रीन हाउस गैसों का सबसे अधिक उत्सर्जन करने वाले विकसित देशों को मानव जाति के हित में इन गैसों के उत्सर्जन में कटौती करनी चाहिए तथा पर्यावरण की सुरक्षा हेतु उचित उपाय करने चाहिए।
4. पर्यावरण प्रदूषण रोकने तथा ग्रीन हाउस गैसों के उत्पादन पर रोक लगाने वाले अंतर्राष्ट्रीय कानूनों एवं संधियों का कठोरतापूर्ण पालन तथा इनका उल्लंघन करने वाले देशों के विरूद्ध कड़े प्रतिबन्ध लगाने चाहिए।
5. पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने हेतु जन-सहभागिता कार्यक्रमों को संचालित करना।
6. वैश्विक तापमान के लिए मुख्य उत्तरदायी गैंस उज2की मात्रा में कमी लाने के लिए जीवाश्म ईधन के दहन में कमी लानी होगी। इसके स्थान पर वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का अधिकाधिक प्रयोग किया जाना चाहिए।
7. वनों के अंधाधुंध कटाई पर रोक तथा वृक्षारोपण द्वारा वन क्षेत्र में विस्तार करना।
8. जनसंख्या की तीव्र वृद्धि पर प्रभावी अंकुश लगाया जाना चाहिए। क्योंकि वैश्विक तापमान के लिए मानव के क्रियाकलापों को सबसे प्रमुख कारण माना है।
9. प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग तथा वैकल्पिक स्रोत का विकास करना।
10. क्लोरोफ्लोरोकार्बन (CFC) जैसे मानव जनित घातक रसायनों के उत्पादन को सीमित करना तथा उनके नवीन एवं कम हानिकारक विकल्प ढूँढ़ना।

निष्कर्ष – वैश्विक तापन आज विश्व की प्रमुख समस्या है। इसके कारण मानव, कृषि, जैव विविधता, पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहे है। संसाधनों के विदोहन के साथ-साथ हमें सतत् विकास पर ध्यान देना होगा। तथा मानव जाति पर आये संकट के लिए उत्तरदायी कारकों को पहचान कर उनका समाधान करना होगा। जिससे इस पृथ्वी, वायुमण्डल व पर्यावरण को सुरक्षित रखा जा सके। जैव-जगत को ध्यान में रखकर विकास करना अतिआवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह सविन्द्र (2000), 'पर्यावरण भूगोल', प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. घोरपड़े, अभिजित, 'ग्लोबल वार्मिंग', राजहंस प्रकाशन, दिल्ली।
3. चौहान पी.आर (2003), 'भारत का वृहद् भूगोल', वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर।
4. शर्मा, श्यामसुन्दर, 'ग्लेशियर', शिलालेख प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. शर्मा दामोदर, व्यास हरिशचन्द्र (2007), 'आधुनिक जीवन और पर्यावरण',प्रभात प्रकाशन, दिल्ली।
6. वेव साइड-ग्लोबल इनवारमेन्टल मोनिटरिंग सिस्टम।

****

भारत में राज्यपाल पद की गरिमा पर प्रश्नचिह्न : समस्या और निदान

डॉ. भरत लाल मीणा *

प्रस्तावना – लोकतांत्रिक संस्थाओं के ह्रास के चलते आज भारत संस्थागत संकट के दौर से गुजर रहा है। यह नेतृत्व एवं चरित्र का संकट तो है ही, साथ में भारतीय समाज और लोकतांत्रिक व्यवस्था की विसंगतियों का भी संकट है। संकट के दौर से गुजर रही विभिन्न संस्थाओं में से एक राज्यपाल का पद भी है। राज्यपाल का पद अब बख्शीश के रुप में दिया जाने लगा है। केन्द्र दल के हित में कार्य भी कराती है । परिणामत: इस पद के चारों तरफ स्वार्थी तत्वों की भीड़ भी इकट्ठी होने लगी है। इससे इस सांवैधानिक पद की गरिमा को आघात पहुँचा है। इस पर कई प्रश्नचिह्न लग गये है। ऐसा नहीं है कि राज्यपाल पद की गरिमा या इसका प्रभाव केवल व्यक्तिगत कारणों से कम हुआ है। स्वयं केन्द्र सरकार ने, चाहे वह कांग्रेस की, जनता दल की, संयुक्त मोर्चे की या भाजपा की रही हो, सबने अपनी दलगत जरूरतों के अनुसार राज्यपालों का उपयोग किया है। जब जहाँ जैसे चाहा, राज्य की कानून व व्यवस्था की स्थिति के बारे में रिपोर्ट मँगवा ली गयी ताकि उस राज्य की सरकार को अपदस्थ कर राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू किया जा सके। अब ऐसी स्थिति में आज यह माँग की जा रही है कि क्यों न संविधान आयोग का गठन कर भारतीय संविधान की पुनर्विवेचना एवं पुनर्संरचना की जाये और राज्यपाल का पद समाप्त किया जाये?[1]

संविधान की पुनर्संरचना का मुद्दा उठाते समय हमें सबसे पहले इस बात पर गौर करना होगा कि वर्तमान में हमारे संविधान का औचित्य क्या है ? क्या संविधान के उन भागो को अलग करना अच्छा नहीं होगा जो अस्पष्ट हैं और जो समय के साथ अनावश्यक साबित हो रहे है ? क्या छोटे-मोटे संशोधनों से संविधान को पुनर्संरचना से बचाया नहीं जा सकता हैं ?

किसी भी सांविधान की सफलता या उपयोगिता तभी सिद्ध होती है, जब वह समय सापेक्ष हो और समाज को सतत् उच्चता के रास्ते पर आगे बढ़ाये एवं एक अच्छे समाज की स्थापना करे। परिवर्तन प्रकृति का नियम है। इस आधार पर राज्यपाल पद में कुछ आवश्यक संशोधन किए जायें क्योंकि राज्यपाल राज्य की कार्यपालिका का प्रधान होता है। राज्यों में राज्यपाल का लगभग वही स्थान है जो केन्द्र में राष्ट्रपति का है।[2]

भारतीय संघ में केन्द्र की तरह राज्यों की शासन व्यवस्था भी संसदीय है। राज्यों का शासन राज्यपाल द्वारा एक लोकप्रिय तथा उत्तरदायी मंत्रिपरिषद् की सहायता से चलाता जाता है। श्री के.एम. मुंशी के अनुसार, 'राज्यपाल राज्य में केन्द्र का पहरेदार तथा सांवैधानिक सम्पत्ति का रखवाला और राज्य को केन्द्र से जोड़ने वाला-देश की एकता का कर्णधार है।' भारतीय संविधान के अनुच्छेद 153 के अंतर्गत प्रत्येक राज्य के लिए एक राज्यपाल की व्यवस्था है। साथ ही दो या दो से अधिक राज्यों के लिए भी एक ही राज्यपाल हो सकता है जो राज्य की शासन प्रणाली का सांवैधानिक अध्यक्ष होता है। राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित होती है तथा राज्य की समस्त कार्यवाहियाँ उसी के नाम से की जाती है। वह केन्द्र सरकार के प्रतिनिधि अथवा दूत की भूमिका अदा करता है। साथ ही अनेक मामलों में वह राज्य ओर केन्द्र के बीच जोड़ने वाली कड़ी का काम करता है। संक्षेप में इस पद की गरिमा का ह्रास हुआ है प्राय: राजनीतिज्ञों को राज्यपाल नियुक्त किया जाता है और ये राजनीतिज्ञ राज्यपाल बनने के बाद भी अपनी दलीय राजनीति से ऊपर नहीं उठ पाते तथा जाने-अनजाने भारतीय संविधान और संसदीय प्रणाली का समय-समय पर मखौल उड़ाते रहते हैं। ऐसे लोग संविधान के क्रियान्वयन में गरिमा एवं सहज न्याय को स्थापित करने के पक्षधर थे।[3]

सन् 1967 के पहले तक केन्द्र और राज्यों में एक ही दल की सरकारों के गठन के कारण सब कुछ अच्छा चलता रहा, लेकिन उसके बाद केन्द्र और राज्यों में अलग-अलग दलों की सरकारें बनने लगीं और उसके बाद से विवादों ने राज्यपाल पद को अपने घेरे में लेना शुरु कर दिया, जो वास्तव में संविधान निर्माताओं द्वारा लम्बी बहस के बाद केन्द्र और राज्यों के बीच सहज एवं मधुर संबंधों के लिए निर्धारित किए गये थे।[4]

संविधान सभा में राज्यपाल की भूमिका पर हुई बहस में एक सवाल का जवाब देते हुए श्री बी.जी. खरे ने कहा था कि-राज्यपाल को बहुत कम अधिकार दिए गए हैं लेकिन मैं इस टिप्पणी से सहमत नही हूँ कि वह सिर्फ और न कुछ बुरा कर सकता है, लेकिन राज्यपाल बहुत कुछ अच्छा या बुरा कर सकता है। यह सिर्फ इस बात पर निर्भर करता है कि वह कैसा राज्यपाल है जो संविधान हम बनाने जा रहे हैं, उसके अपने थोड़े अधिकारों के बावजूद, वह कई किस्म की अच्छी बातें करने में सक्षम होगा। इसलिए ड्राफ्ट कांस्टीट्यूशन में यहाँ तक व्यवस्था की गई थी कि राज्य विधानसभा जरूरत समझे तों अपने राज्यपाल पर महाभियोग भी चला सके, लेकिन वह आदर्श के प्रयोग का अधिकार दिया जायेगा वह अनैतिक या असंवैधानिक व्यवहार नहीं करेगें। वे जो भी करेंगे प्रदेश और वहाँ की जनता के भले के लिए ही करेंगे। इसलिए यह प्रावधान हटा दिया गया और उसके विपरीत राज्यपाल के लिए धारा 356 को अंग्रेजों के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट 1935 से यथावत उठाया गया। उस समय नवोदित स्वतंत्र भारत की आवश्यकतायें दूसरी थीं, इसलिए इसके पीछे संविधान निर्माताओं का चाहे जो भी इरादा रहा हो, लेकिन कम से कम आज उसके नतीजे निकलते दिखाई नहीं दे रहे हैं।[5]

अब तो राज्यपाल का पद केन्द्र सरकार के हाथों में एक राजनैतिक

* व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) एल.बी.एस. राजकीय महाविद्यालय, कोटपूतली (राज.) भारत

हथियार बन गया है। इस हथियार का प्रयोग प्राय: अपने से अलग दलों की राज्य सरकारों के खिलाफ किया जाता है। यदि यह कहा जाये तो गलत नही होगा कि अब राज्यपालों की नियुक्ति में संविधान की व्यवस्था और मर्यादा की रक्षा का भाव उतना प्रबल नहीं रह गया है जितना कि राजनीतिक दाव-पेच का। कुछ राज्यपाल ऐसे बनाये गये हैं या बनाये जाते है जो राज्य में जाकर विपक्ष की सरकार को अस्थिर कर सकें। कभी-कभी सत्ता संतुलन और दल विशेष में राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता को समाप्त करने के लिए भी राज्यपालों की नियुक्ति की जाती है। इतना ही नही, पराजित नेताओं और सेवानिवृत अधिकारियों के लिए भी एक आश्रय स्थल बन गया है। ऐसे व्यक्ति जब राज्यपाल बनकर राजभवन पहुँचते है तो वे या तो राजभवन को स्थानीय राजनीति का अखाड़ा बना देते हैं या राजभवन में बैठकर दूसरे राज्यों की राजनीति करने लगते है। ऐसे राज्यपाल यह भूल जाते हैं कि उनके पद की मर्यादा और गरिमा क्या है ? इसीलिए ऐसे राज्यपालों पर स्थानीय राजनीति में सक्रिय होने, केन्द्र सरकार के इशारे पर काम करने तथा राज्य सरकार के काम-काज में अनावश्यक हस्तक्षेप करने का आरोप लगता रहा है।[6]

मार्च 1967 में राजस्थान के राज्यपाल डॉ. संपूर्णानंद ने कांग्रेस के श्री मोहनलाल सुखाड़िया को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया और जब श्री सुखाड़िया विधानसभा में बहुमत सिद्ध नहीं कर सकें तो राज्यपाल ने राज्य में राष्ट्रपति शासन की सिफारिश कर दी। उन्होनें विपक्ष को सरकार बनाने का अवसर ही नहीं दिया जबकि विपक्ष ने राज्यपाल के समक्ष सरकार बनाने के लिए बहुमत सिद्ध करने का आश्वासन दिया था। इस तरह के अपने उदाहरण है जब राज्यपाल ने सांवैधानिक व्यवस्थाओं को ताक पर रखकर अविवेकपूर्ण निर्णय लिए। जैसे 1967 में हरियाणा, 1970 में बिहार, 1976 में तमिलनाडृ और उड़ीसा 1984 में आंध्रप्रदेश गुजरात और 1998 में उत्तरप्रदेश आदि राज्यों में राज्यपाल और केन्द्रीय मंत्रिमण्डल के यह कृत्य सांवैधानिक प्रावधानों एवं कानूनी स्थिति के सर्वथा विपरीत रहे।[7]

राज्यपाल पद को अविवादास्पद बनाने के लिए विभिन्न आयोगों ने सार्थक सुझाव दिये हैं। इस दिशा में राजमन्नार समिति, सहाय समिति आदि ने राज्यपाल की कार्यशैली के बारे में अनेक सुझाव दिये।[8] इस संदर्भ में केन्द्र राज्य संबंधों पर विचार करने वाले सरकारिया आयोग ने भी राज्यपाल की भूमिका को सार्थक और अविवादास्पद बनाने के संबंध में अनेक सार्थक और उपयोगी सुझाव दिये हैं। लेकिन राज्यपालों को कोई दिशा-निर्देश जारी नही किये गये हैं। इस दिशा में निम्नांकित कतिपय सुझाव दिये जा सकते है:

1. राज्यपाल पद पर सक्रिय राजनीतिज्ञों की नियुक्ति नही की जानी चाहिए। नियुक्ति का आधार योग्यता होना चाहिए। अत: इस पद पर सार्वजनिक जीवन में विशिष्टता रखने वाले लोगों को ही नियुक्त किया जाना चाहिए।
2. राज्यपालों की इच्छा के विरूद्ध स्थानांतरण नहीं किये जाने चाहिए। अनेक बार स्थानांतरण की आड़ में केन्द्र सरकार दबाव की राजनीति का सहारा लेती है और इसके विरोध में राज्यपाल पद त्याग तक कर देते है।
3. केन्द्र में सरकार के परिवर्तन मात्र से ही राज्यपाल को हटाये जाने या बर्खास्त करने की अनुचित परम्परा को स्थान नहीं दिया जाना चाहिए। इससे राज्यपालों में असुरक्षा की भावन का विकास होता है और गलत परम्परा का सूत्रपात होता है।
4. अगर दल बदल का दलीय विद्रोह के कारण कोई मुख्यमंत्री अल्पमत मे रह जाये तो इसका निर्णय राजभवन में करने के स्थान पर स्पष्ट रूप से विधानसभा में किया जाना चाहिए।
5. राज्यपाल को अपने राजभवन को सत्तारूढ़ दल के नेताओं का अखाड़ा कदापि नहीं बनने देना चाहिए।
6. राज्यपाल को शैक्षणिक जगत् में सुधार कर जनता के जीवन स्तर को उन्नत बनाने का प्रयास करना चाहिए। भ्रष्टाचार और लालफीताशाही को रोकने की दिशा में सतत् रुप से प्रयत्नशील रहना चाहिए।
7. राज्यपाल को सत्तारूढ़ दल और विपक्ष के नेताओं के साथ समान व्यवहार करके अपने व्यंतिव से प्रतिष्ठा अर्जित करनी चाहिए अर्थात् न्यायप्रिय होना चाहिए तथा राज्यपाल को सादा जीवन का आदर्श जनता के सामने प्रस्तुत करना चाहिए।

अत: निष्कर्ष के रुप में यही कहा जा सकता है कि राज्यपाल की राज्य के सांवैधानिक अध्यक्ष और केन्द्र के अभिकर्ता के रूप में दोहरी भूमिका है। वह अपनी इस दोहरी भूमिका में संतुलन स्थापित करके ही अपने पद को सार्थकता प्रदान कर सकता है। भारत की संघात्मक व्यवस्था में राज्यपाल पद की उपयोगिता है। इसे समाप्त नहीं किया जाना चाहिए। आवश्यकता इस बात की है राज्यपाल की सांवैधानिक स्थिति और व्यावहारिक स्थिति में सामंजस्य स्थापित करना होगा अथा परिस्थितियों कर राज्यपाल की गिरती हुई छवि को सुधारा जा सकता है। स्वयं राज्यपाल भी सद्विवेद एवं प्रेरणा के स्त्रोत बनें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. क्रॉनिकल शिवलोक हाउस,नई दिल्ली।
2. डॉ. सुभाष कश्यप : संविधान की आत्मा।
3. डॉ. आर.एन. त्रिवेदी : भारतीय राजनीतिक व्यवस्था।
4. डॉ. एम.पी. राय : भारतीय राजनीतिक व्यवस्था।
5. डॉ. इकबाल नारायण : भारतीय सरकार एवं राजनीति।
6. डॉ. डी.सी. गुप्ता : भारतीय शासन व्यवस्था एवं राजनीति।
7. डॉ. महेश माहेशवरी : भारत में राज्यपाल का पद एवं स्थिति।
8. डॉ. बी.एल फड़िया एवं मन्जू फड़िया : भारत में केन्द्र राज्य सम्बन्ध।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

Photochemical Reactions of Coordination Compounds

Mukesh Kumar Mehta *

Abstract - Cyanide ligand (a strong ligand) present in sodium initroprusside is not so easily replaced chemically. An effort has been made to replace this ligand by another anionic ligand like bicarbonate (a weak ligand). The rate of this photochemical exchange reaction has been observed spectrophotometrically. The effects of different parameters like pH, concentration of sodium nitroprusside and bicarbonate ligand concentration on the rate of this substitution reaction have been studied. An effort was made to isolate the product and characterize it. A tentative mechanism for this photochemical substitution reaction has been proposed.
Keywords- Sodium nitroprusside, Sodium bicarbonate, Photochemical substitution reaction.

Introduction - A critical survey of the literature reveals that the photochemistry of sodium nitroprusside has received negligible attention. The photochemical reaction of sodium nitroprusside may be useful to have an insight into the understanding of its photochemical behaviour on one hand and it will also provide some alternate routes to prepare some newer complexes on the other. Recently, Mehta[16] studied the photochemical reactions of sodium nitroprusside in the presence of some sulphurconaining ligands. The present work describes the photochemical reaction of pentacyanonitrosyl ferrate(II), $[Fe(CN)_5(NO)]^{2-}$, in the presence of bicarbonate ligand.

Experimental: Sodium nitroprusside (EM) and sodium bicarbonate (SDS) were used in the present investigation. 0.18 g and 0.12 g of sodium nitroprusside and sodium bicarbonate were dissolved in 100 mL doubly distilled water. Then this solution was exposed to a 200 W tungsten lamp (Philips, light intensity = 80.0 mW cm^{-2}). The light intensity was measured with the help of a solarimeter (Suryamapi model CEL 201). A water filter was used to cut off the thermal radiations. A digital pH meter (Systronics Model 324) measured the pH of the solution. The desired ph of the solution was adjusted by the addition of previously standardized sulfuric acid and sodium hydroxide solutions.

The progress of the photochemical reaction was observed by taking absorbance at regular time intervals using spectrophotometer.

Results and Discussion: An aliquot of 2.0 mL was taken out from the reaction mixture and the change in absorbance was observed at ë$_{max}$ = 390 nm with time of exposure. It was observed that a plot of log (absorbance) vs. time was linear and it followed pseudo-first order kinetics. The rate constant of the reaction has been calculated by the expression

k = 2.303 x slope.

The results are graphically shown in Fig. 1.

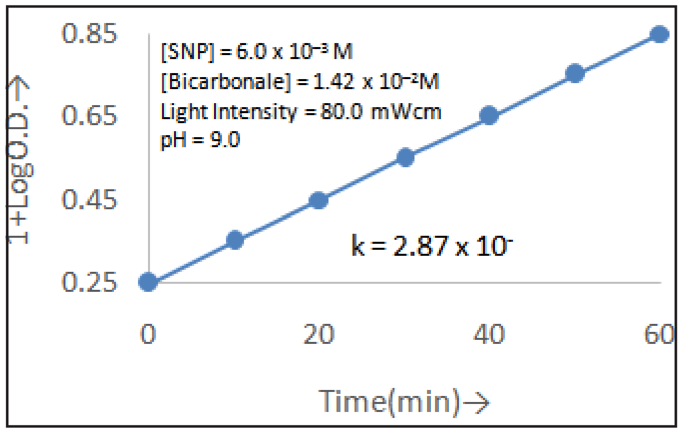

Fig. 1. A Typical Run.

TABLE-1: EFFECT OF pH

[SNP] = 6.0 x10^{-3} M; [Bicarbonate] = 1.42 x 10^{-2} M; Light intensity = 80.0 mW cm^{-2}

pH	k x 10^4(sec^{-1})
6.5	1.59
7.0	1.98
7.5	2.11
8.0	2.17
8.5	2.23
9.0	2.87

It was observed that the rate of this ligand exchange reaction increases on increasing the pH of the reaction medium. It reaches a maximum at pH = 9.0. This may be explained on the basis that as the pH of the medium was increased, the extent of availability of HCO_3^- ions to remain in its best donor form will increase, which will result into a corresponding increase in the rate of ligand exchange reaction. It was not possible to observe the effect of pH on the rate of the reacticm above pH 9.0 due to the fact that a

*SMB P.G. College, Nathdwara (Raj.) INDIA

chemical reaction starts interfering with the main photochemical reaction. It was not possible to observe this reaction in the acidic range because the bicarbonate ions exist as carbonic acid, which is unstable and therefore decomposes to carbon dioxide and water.

Effect of sodium nitroprusside concentration: The effect of the concentration of sodium nitroprusside on the rate of photochemical reaction was observed by keeping all other factors identical. The results are reported in Table-2.

TABLE-2: EFFECT OF SODIUM NITROPRUSSIDE CONCENTRATION

pH = 9.0; [Bicarbonate] = 1.42 x 10^{-2} M; Light Intensity = 80.0 mW cm^{-2}

[Sodium nitroprusside] x 10^3 M	k x 10^4(sec^{-1})
4.0	1.53
4.6	2.01
5.3	2.49
6.0	2.87
6.7	2.68
7.3	2.22
8.0	2.01
8.7	1.85

It has been observed that the rate of photochemical reaction of sodium nitroprusside with bicarbonate ions increases with an increase in the concentration of sodium nitroprusside. This may be due to the fact that as the concentration of sodium nitroprusside was increased the number of excited species also increased limit, if the concentration of sodium nitroprusside was further increased, there was a decrease in the rate of the reaction. This decrease may be explaine on the basis that the substrate is dark red coloured, which will absorb a major part of incident radiation travelling through the reaction mixture and, therefore, there will be a decrease in the light intensity reaching sodium nitroprusside in the bulk the reaction mixture. In other words, the solution of sodium nitroprusside start acting as a filter and, as a consequence, the reaction rate will be found decrease.

Effect of bicarbonate concentration: The effect of concentration of bicbonate on the rate of photochemical reaction of sodium nitroprusside was a observed by taking different concentrations of bicarbonate. The results summarized in Table-3.

TABLE-3: EFFECT OF BICARBONATE CONCENTRATION

[SNP]= 6.0 x 10^{-3} M; pH = 9.0; Intensity of light = 80.0 mW cm^{-2}

[Bicarbonate] x 10^3 M	k x 10^4(sec^{-1})
0.95	2.49
1.19	2.59
1.42	2.87
1.66	2.57
1.90	2.11
2.10	1.91
2.30	1.77

It was observed that as the concentration of sodium bicarbonate was increased, there was a corresponding increase in the rate of reaction, reaching a maximum at [$NaHCO_3$] = 1.42 x 10^{-2} M. It can be explained on the basis of the fact that the reaction rate increases due to increase in the concentration of participating species. On the other hand, a decrease in the rate of the reaction was observed on increasing the concentration of sodium bicarbonate above 1.42 x 10^{-2} M. It may be attributed to the fact that higher concentrations of bicarbonate ions may hinder its own movement to reach the excited species of sodium nitroprusside in a desired time limit. Thus, a decrease in the rate of the reaction was observed for higher concentration of bicarbonate ions.

Product analysis: In alkaline medium, it was observed that the initial light red coloured solution of the reaction mixture changes to dark yellow (red shade) on irradiation. The reaction was allowed to proceed to completion and the reaction mixture was then filtered. The filtrate was evaporated on a water bath. The product was separated by fractional crystallisation. It was recrystallized with methanol giving reddish yellow crystals of the product, which was analysed as follows:

(i) Elemental Analysis (%): Found Fe= 16.7, C = 19.9, H= 1.0, N= 2058 and Na = 28.00 Calculated: Fe = 16.76, C = 21.17, H = 0.92, N = 20.58 and Na = 27.05.

(ii) UV (water): $ë_{max}$ = 460 nm

(iii) IR V_{KBr}: The characteristic bands of NO^+ ligand at 1944 and 660 cm^{-1} were found absent in the IR spectrum of the product and therefore it may be concluded that nitrosyl ligand has been lost during this photochemical reaction in the IR spectrum of the product. These bands may be attributed to the presence of O-bonded bicarbonate ligand to the central metal ion.

On the basis of the spectral and analytical data, the following tentative structure has been proposed for the compound: $Na_4[Fe(CN)_5(HCO_3)]$.

In this case bicarbonate behaves as a unidentate ligand used for removing one NO^+ ligand from the coordination sphere of the sodium nitroprusside complex. A positive test for nitrite ion in the solution has been observed which indicates the removal of NO^+.

Mechanism: On the basis of the experimental observations, a tentative mechanism for this photochemical ligand exchange reaction of sodium nitroprusside has been proposed as:

$$Na_2[Fe(CN)_5NO] \xrightarrow{h\nu} Na_2[Fe(CN)_5NO]^*$$

$$Na_2[Fe(CN)_5NO]^* + H_2O\ Na_3[Fe(CN)_5(H_2O)] + NO^+$$

$$Na_3[Fe(CN)_5(H_2O)] + HCONa_4[Fe(CN)_5(HCO_3)] + H_2O$$

Initially, the sodium nitroprusside is excited by absorbing incident radiation of desired wavelength. Then its excited state reacts with water and as consequence, water enters the coordination sphere of iron, replacing nitrosyliur ion (NO^+). This exchange is energetically favourable, because neutral ligand (H_2O) can replace

cationic ligand (NO^+). Now bicarbonate ions can easily throw water molecules out of the coordination sphere of iron as anionic ligand can replace neutral ligand.

These ligand exchange reactions are well known in the field of coordination chemistry, but these reactions ordinarily involve the substitution of a weak ligand by a stronger ligand. Such reactions are both, thermodynamically at kinetically, favourable. It does not seem feasible to have reverse exchange, i.e. substituting a stronger ligand by a weaker ligand. The present work not on provides a pathway for this unfavourable reaction, but also it will open further a venues for such photochemical ligand exchange reaction.

Reference:-

1. Presonal Research.

****

विजयदान देथा : व्यक्तित्व परिचय

डॉ. राजकुमार चौधरी *

प्रस्तावना – श्री विजयदान देथा राजस्थानी एवं हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार हैं। इन्हें 'बिज्जी' नाम से भी जाना जाता है। श्री देथा न केवल लोक-साहित्य के अन्वेषक और संग्रहकर्ता हैं वरन् कवि, कथाकार, निबन्धकार और आलोचक भी हैं। आपका जन्म 1 दिसम्बर, सन् 1926 में बोरून्दा नामक गांव में हुआ था। राजस्थान के जोधपुर जिले की बिलाड़ा तहसील का यह छोटा-सा गांव है। इनके पिता श्री सबलदान जी देथा थे, जो राजदरबार के जाने-माने कवि थे। आपने एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की है। अभी आप 'रुपायन संस्थान' बोरुन्दा से सम्बद्ध है।

श्री देथा ने अपने सृजन कार्य का श्री-गणेश कविताओं से किया। इन्होंने लगभग तेरह सौ (1300) कविताएं तुक एवं छन्द में रची हैं। इसके बाद निबन्ध एवं कहानियाँ ही प्रमुख रूप से प्रकाशित हुई हैं। इनकी कुछ कहानियों पर फिल्मों का निर्माण भी हुआ है तथा कुछ का नाट्य-रूपान्तर भी किया गया है। आपने कथा-यात्रा में अब तक लगभग एक हजार कथा-कहानियों का प्रणयन किया है, जिनमें से प्रमुखत: 'वाताँ री फुलवाड़ी' के चौदह भागों में सात सौ (700) कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।[1] हिन्दी में प्रकाशित 'दुविधा और अन्य कहानियाँ' तथा 'उलझन' कथा-संग्रहों में उन्नतालीस (39) कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं।

हिन्दी में कथाकार के रूप में प्रतिष्ठित होने से पूर्व श्री देथा राजस्थानी के एक शीर्षस्थ कथाकारों के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके हैं। इन्हें सन् 1974 में केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा 'अकादमी पुरस्कार' प्राप्त हो चुका है। यह पुरस्कार 'वाताँ री फुलवाड़ी' के दसवें भाग पर मिला था। इसी वर्ष राजस्थान के प्रमुख साहित्यकार के रूप में राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर द्वारा भी पुरस्कार प्राप्त हुआ।

श्री देथा की प्रतिष्ठा के पीछे एक महत्वपूर्ण गुर कार्य कर रहा था। वह है – 'राजस्थानी में लिखना तो मेरे लिए पंछियों के कलरव की तरह नैसर्गिक था, तितली की उड़ान के समान नितान्त स्वाभाविक था। मुझे यह आभास ही नहीं था कि मेरा सृजन या अध्ययन मेरे जीवन से अविच्छिन्न है। जिन्दा रहते जिस तरह सांस लेता हूँ, देखता हूँ, सुनता हूँ, चलता हूँ, उसी तरह मेरे लिए पढ़ना अनिवार्य है, लिखना अनिवार्य है। इन्हें बाद देकर मेरे अस्तित्व का कोई अर्थ ही नहीं। .... सच, मुझे अब तक नहीं मालूम कि मैंने कितनी कथाएं लिखी हैं? सांस, धड़कन व कदम क्या कोई गिनती की चीज है?'[2]

श्री देथा ने अपना लेखन कार्य मात्र अर्थोपार्जन हेतु या सत्ता पक्ष को प्रसन्न रखने के लिए ही नहीं वरन् लोक-कथाओं के माध्यम से मर्यादाओं की रक्षा के लिए किया है। आपके आत्मकथ्य से इसी बात की पुष्टि होती है। यथा –

'एक लेखक के नाते मेरी सबसे पहली और आखिरी तमन्ना यही है कि मेरा मगज मेरे पेट की खुराक न बने। शरीर का राजा मस्तिष्क मेरे पेट का गुलाम न बने। जरुरत पड़ने पर शरीर का गोश्त नोच-नोच कर पेट की अन्तड़ियों के हवाले कर दूँ, पर किसी भी कीमत पर अपने अक्षरों व अपनी कलम को गिरवी न रखूँ। मेरी कमर झुक जाये, पर मेरी कलम नहीं झुके। मेरे अक्षरों को धन की लालसा न हो, मेरे शब्दों को सत्ता का भय नहीं हो, मेरी रचना में यश की बू नहीं हो – एक लेखक का सबसे बड़ा श्रेय यही है। .... बड़ा लेखक न बन सकूँ न सही। अच्छा नहीं लिख सकूँ न सही ज्यादा नहीं लिख सकूँ न सही। पर लेखक की मर्यादा को न तोड़ूँ, शब्दों के गौरव को लाँछित न करूँ, बस इतनी भर ख्वाहिश है। आज की तमन्ना तो यही है – कल का कोई भरोसा नहीं। किन्तु जिस दिन भी मेरा भरोसा टूटे तो मेरे अक्षरों तुम उसी क्षण गला घोंट देना यदि इसमें ढील हो गई तो मेरी बदली हुई हैवानियत तुम्हारा ही गला घोंट डालेगी। तुम्हारे गौरव को बेच कर मैं अपना गुजारा नहीं करना चाहता। तुम्हारी हत्या करके मैं अपनी जिन्दगी बसर नहीं करना चाहता। मुझे लेखक नहीं बनना है, लेखक की मर्यादा का पालन करना है।'[3]

देथा ने अपनी 'अधूरी चिट्ठी' में लेखन की मर्यादा के बारे में लिखा है कि वे मानवीय मूल्यों और मनुष्यता के परिष्कार पर जोर देते रहे हैं। यथा – ' .... कितना ही बड़ा या ग्रेट राइटर क्यूँ न होऊँ वैसी सेवा कबूल करने की हिमाकत कैसे कर सकता था। भाड़ में जाय साहित्य और उसका सृजन। मानवीय मूल्य व नैतिकता का माहात्म्य सृजन से कहीं उत्कृष्ट है। इन्हें अनदेखा और अनसुना करने वाला लेखक क्या खाक सृजन करेगा? मेरे जीवन का अधिकांश समय इन्हीं के पोषण में खर्च हुआ है। लेखक की मर्यादा से कहीं ऊँची मैंने मनुष्य की मर्यादा मानी है। .... लेखन की प्रक्रिया ने मेरे भीतर के इन्सान को समृद्ध किया और बदले में मेरी मनुष्यता ने मेरे लेखन का परिष्कार किया। .... लेखक बनने की अपेक्षा मनुष्य बनना बहुत कठिन है और इस कठिन साधना को आपने सहज भाव से आत्मसात कर लिया है।'[4]

लेखन की भाँति ही उनका व्यवहार भी मृदु था। आपका लिबास सादगीपूर्ण था। इस बात की पुष्टि श्री प्रेमकुमार मणि ने जयपुर में आयोजित 'प्रगतिशील लेखक संघ' के तीसरे राष्ट्रीय अधिवेशन में (जो कि 25, 26, 27 दिस. 1982 को सम्पन्न हुआ) हुई मुलाकात के आधार पर की जा सकती है। यथा –

'................ मैं नहीं समझता था कि बिज्जी इतने प्यारे आदमी होंगे। मेरी हर बात का जवाब देते गये और वह भी विस्तार से। ....

* एसोसिएट प्राफेसर, राजकीय महाविद्यालय, राजसमंद (राज.) भारत

बिज्जी देखने से ग्रामीण की तरह साफ सादे लगते हैं। कहीं कोई लाग-लपेट नहीं। न पहनाव-ओढ़ाव में न बातचीत में। धोती, कुरता और पांवों में राजस्थानी जूते। मुझसे वह हिन्दी में बात कर रहे थे और बात के दौरान कभी-कभी कोई राजस्थानी मुहावरा या कोई गल्प-संवाद राजस्थानी में कह जाते थे। उनकी बातों में किसान की सी सादगी और बच्चों की सी मृदुलता भरी थी।'[5] इस प्रकार श्री देथा की प्रतिभा उनके व्यवहार में भी झलकती है।

इतिहास प्रसिद्ध 'कबीर' के स्वाभिमानी चरित्र का प्रभाव आप पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। देथा कबीर को अपना गुरु मानते हैं। 'दूजौकबीर' कहानी पूर्णत: अपने यथार्थ जीवन की प्रस्तुति मात्र है। 'कबीर' के महत्तव पर प्रकाश डालते हुए श्री देथा ने लिखा है। यथा -

'आप विश्वास करें न करें, फिलहाल जिसे गुरु बनाने का लोभ हो रहा है, उसका तो शिष्य बनने की योग्यता भी शायद हासिल न कर सकूँ। वह गुरु है - दास कबीर। यह हमारी आंखों का नहीं, केवल शिक्षा का ही दोष है कि सूरज-चाँद की बनिस्पत हमें कोयलों में ज्यादा चमक नजर आती है। .... सुनकर नाक-भौं मत सिकोड़ियेगा, काफी-कुछ सोच-विचारने के बाद यह कहने की हिम्मत जुटा पाया हूँ कि कबीर जितना आज प्रासंगिक है, उतना पहले कभी नहीं रहा। विशेषकर, अमेरिका और यूरोप के सन्दर्भ में। अपना देश तो उनकी नकल करने में ही मरा जा रहा है। धर्म और ईश्वर की बात छोड़िए, मनुष्य जिन्दा रहेगा तभी तो सुमिरन करेगा। उसका अस्तित्व ही आज खतरे में है। .... आज की रक्त पिपासु नर-भक्षी सभ्यता के लिए कबीर और केवल कबीर का नजरिया ही अपेक्षित है, किन्तु हमें बीते हुए कबीर में समाहित नहीं होना है। हर युग को अपना-अपना कबीर चाहिए, किन्तु परम्परा से विच्छिन्न होकर, किसी भी युग में कोई कबीर पैदा नहीं हो सकता। कबीर प्रतीक है उस मानवता का जो रूढ़ियों से, कट्टर मान्यताओं से मुक्त हो, जो स्वयं जिन्दा रहने की खातिर दूसरों का शोषण न करें; जिसकी आँखें अपने स्वार्थ से आगे देख सकें। जो बीज से अँकुर? अँकुर से पौधा, पौधे से पेड़, पेड़ से फल और फल से पुन: असंख्य जीवित बीजों की निर्बाध यात्रा से जुड़ा हुआ क्षण-क्षण भविष्य के गर्भ में विकसित होता रहता है। पेड़ की प्राण-शक्ति सूखे पत्तों का संचय नहीं करती, बल्कि सर्वत्र बिखेर कर नया परिधान धारण करती है। कबीर नाम है, इसी चिन्मय परम्परा का, सतत् प्रवहमान प्रगति का है।'[6]

देथा ने लोक-जीवन को अपनी लोक-कथाओं में पूरी बखूबी से उभारा है। आप स्वयं ऐसे माहौल में रहकर आधुनिक विसंगतियों पर करारा व्यंग्य किया है। इस सन्दर्भ में श्री प्रेम कुमार मणि का यह कथन द्रष्टव्य है -

'बिज्जी लोक-जीवन में पूरी तरह डूबे हुए इंसान हैं, कहानियों की लोक-शैली और ग्रामीण तर्ज की बुनावट में मुझे हैरानी होती थी कि इस हद तक कोई कलाकार कैसे उतर आता है। यह भ्रम बिज्जी से मिलने पर दूर हो गया। वह एक तरफ आधुनिक जीवन की विसंगितयों को देखते हैं तो दूसरी तरफ उसके आधारभूत कारणों को जिनमें सामन्ती-व्यवस्था की कीचड़ मौजूद है और इसका सूक्ष्मान्वेषण उन्होंने ग्रामीण जीवन को स्वयं जी कर किया है। उन्होंने गांव की कला और उसके शिल्प को बारीकी से पहचाना है और उसे आधुनिक तमीज के साथ खड़ा किया है, परवान चढ़ाया है।'[7] इस प्रकार देथा की लोक-कथाएँ उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालती हैं। लोक-कथाओं द्वारा आधुनिक समाज-व्यवस्था पर करारा कुठाराघात किया गया है। यही इनकी कथाओं की विशेषता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'बिज्जी' का कथालोक' : श्री गोपाल भारद्वाज : साप्ताहिक प्रलयद्वीप : द्विवार्षिक विशेषांक : 8 सितम्बर, 1983
2. 'हाजिर हूँ' (मुखड़ा) : 'रूँख' : विजयदान देथा : पृ. 18
3. 'मौलिकता का प्रश्न' : 'रूँख' : पृ. 417
4. 'अधूरी चिट्ठी' : 'रूँख' : पृ. 519
5. 'बिज्जी के साथ दो दिन' : 'रूँख' : पृ. 546-547
6. 'मेरो दरद न जाने कोय' : 'रूँख' : पृ. 465-466
7. 'बिज्जी के साथ दो दिन' : 'रूँख' : पृ. 547

****

रीति कविता में नीति का स्वरूप और स्थिति

डॉ. अनुपमा सक्सेना*

प्रस्तावना –नीतिकाव्य ऐतिहासिकता और विषयगत दोनों ही दृष्टियों से महत्तव रखता है। आदिकालीन हिन्दी साहित्य में प्राप्त नीति अंश युग के अनुकूल शौर्य तथा राजनीति से विशेष सम्बद्ध है। भक्तियुग में 'नीति' सन्तों तथा अन्य कवियों में धर्म और तदुचित व्यवहार से सम्बद्ध आदर्श रूप में चित्रित हैं, जबकि रीतिकाल में अन्य धाराओं की भांति नीतिकाव्य में परम्परागत भावों के अतिरिक्त कवि के स्वानुभूत भावों को विशेष रूप से अभिव्यक्ति मिली है जिसमें धर्म आचार, व्यवहार, राजनीति तथा अन्य असंख्य सामान्य विषयों के सम्बन्ध में देश काल, समाज और पात्र के सन्दर्भ में करणीय और अकरणीय बातों पर प्रकाश डाला गया है। रीतिकालीन नीतिकाव्य की भावभूमि इतनी विस्तृत है कि देश की नैतिक परम्परा के अनुकूल व्यक्ति और समाज के समुचित विकास हेतु अनिवार्य जितनी भी सामान्य बातें है, सभी इसमें समाविष्ट हैं। इन नीति कवियों ने विभिन्न परिस्थितियों में जीवन और जीवन की सफलताओं, असफलताओं, उपलब्धियों एवं सम्भावनाओं को अतिनिकटता से परखा है। फलतः इनके द्वारा उद्‌भूत नीति कथन कल्पना पर आश्रित नहीं, अपितु स्वानुभूति है या परम्परानुभूति पर आधारित है।

इस प्रकार नीतिकाव्य की दृष्टि से जो महत्व रीतिकाल का है, वह किसी अन्य काल का नहीं है। रीतिकाल आकार की दृष्टि से आदिकाल और भक्तिकाल की अपेक्षा है, परन्तु नीतिकाव्य की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है। रीतिकविता में नीति की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता।

उत्तर मध्यकाल में दरबारी परिवेश और परिस्थिति के कारण श्रृंगारिक रचनाओं का प्राधन्य था। इस समय के भक्ति काव्य में भी शृंगार अप्रत्यक्ष रूप से झलकता था। राम जैसे शक्ति, लोकरंजक और मर्यादा पुरूषोत्तम रूप के स्थान पर उन्हें श्रृंगार रस में डूबे चंचल नायक की भांति चित्रित किया है, लेकिन दूसरी तरफ कुछ नीतिविषयक काव्य सांप्रदायिक रचनाओं की भांति महत्व रखते हैं, जिसने तत्कालीन उच्छृंखल परिवार और समाज को नीति (यथोपित व्यवहार) के मार्ग की ओर अग्रसर किया। इस काल के कवि प्रायः राज्याश्रयों में जीवनयापन करते थे, अतः उनके काव्य के वर्ण्य-विषयों की आधार सामग्री उन्हीं के इर्द-गिर्द व उन्हीं की प्रशंसा से फलित थी। इसी कारण श्रृंगारिकता से ऊब चुके इन कवियों ने अपनी दृष्टि वहां से हटाकर नीति की तरफ आकृष्ट की जो इनके बेचौन व मृतप्रायः जीवन हेतु अमृततुल्य थी।

कहा जाता है कि प्रत्येक युग में कवि की काव्य सामग्री अपने समसायिक जीवनमूल्यों और परिवेश पर आधारित होती है। जब इस हासोन्मुखी रीतियुग में उघ्ययोन्मुखी मूल्यों के प्रति आस्था नहीं रह गई थी, तब जीवन की असारता, प्रेम की निष्फलता, अस्थिरता और वैभवविलास के प्रति उदासीनता आदि भावनाएँ नीतिपरक उक्तियों में उभरकर आई है। जीवन के हर क्षेत्र में ये उक्तियाँ पथप्रदर्शन करती हैय जीवन की प्रत्येक परिस्थितियों का स्पर्श इन नीतिकवियों ने किया है। ज्ञात है कि अतिशयता से ऊबकर मनुष्य या तो भक्ति और वैराग्य की साधना करता है या म्रियमाण नैतिकता का आंचल पकड़ता है, यही परम्परा रीतिकाव्य के कवियों ने अपनाई।

रीतिकालीन नीतिकाव्य हमें विभिन्न स्वरूपों में प्राप्य है। कहीं स्वतन्त्र रूप में नीति की मौलिक धारा प्रवाहित है तो कहीं प्राचीन परिपाटी का निर्वाह करने वाले कवियों। का कौशल दृष्टिगोचर है, यह नीतिकाव्य लोकव्यवहार के अधिक निकट था। अतः ऐहिकता की प्रधानता के कारण यह काव्य सामान्यजनों हेतु जितना उपयोगी रहा है। उतना अन्य किसी काल में नहीं रहा। नीतिकाव्य रीतिकाल में व्यापकता और विविधता लिए हुए है। दरबारी वातावरण से सम्पृक्त होने के कारण इन कवियों का 'नीतिकाव्य' विलासिता से परिपूर्ण जीवन से बहिर्गमन का एक मात्र साधान था।

राजाश्रय में रहने के कारण इन रीतिकवियों ने प्रत्येक क्रियाकलाप को निकट से देखा और भोगा। इसलिए रीतिकालीन नीतिकाव्य पर इसका गहरा प्रभाव दिखाई देता है। प्रत्येक दरबारी कवि किसी न किसी रूप में प्रेम से आहत था। इनकी वेदनामय प्रेमानुभूति को सुनने और समझने वाला कोई नहीं है। इस तरह के उद्गार इन कवियों ने व्यक्त किए हैं कि 'हम हमारी पीड़ा किससे कहै ऐसा कोई बड़े और विशाल हृदय वाला व्यक्ति दिखाई नहीं देता है जो हमारे दुःख का श्रवण करे।' यथा –

'हम कौन सौं आपनी पीर कहै
दिलदार तो कोइ दिखातो नहीं।।'

फलतः इन्होंने स्वानुभूति और अन्तर्मन के भावों को प्रेमविषयक नीति के रूप में विस्तारपूर्वक अपनी रचनाओं में वर्णित किया, जैसे बोध कवि और घनानन्द ने अपनी-अपनी दृष्टि के अनुसार व्यक्त किया है; यथा-

'यह प्रेम को पंथ कराल है जू
तरवारि की धार पै धावनो है'
'अतिसूधो सनेह को मारग है जहाँ
नेकु सयानप बाँक नहीं।
तहाँ सांचे चलै तजि आपुनप
झिझक कपटी जे निसांक नहीं।।'

राजाओं को सज्जनता और गुण ग्राही बनने का आग्रह इनके नीतिकाव्य में मिलता है। बिहारी और कवि धनानन्द आदि इसके उदाहरण हैं जिन्होंने मदान्ध और हृदयाना आश्रयदाताओं को सत्मार्ग की ओर प्रेरित किया। इतिकाल में स्त्री मात्र एक भोग्या बनकर रह गई थी तभी इन कवियों

* व्याख्याता (हिन्दी) राज कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

ने पारिवारिक और सामाजिक नीति का प्रचुर मात्रा में वर्णन किया है। विलासिता के गर्त में फँसे स्त्रित्व की रक्षा हेतु स्त्रियों के महत्व को वर्णित किया है। केशवदास ने रामचन्द्रिका में कहा है कि –

'धर्म कर्म कछु कीजईय
सफल तरूणि के साथ ।।'

जीवन में पारिवारिक सुखों के उपभोग की प्रेरणा और पारिवारिक जीवन की प्रशंसा तथा मद, मांस, सुरा, द्यूत, व्यभिचार, वेश्यादि व्यसनों के खंडन को चित्रित किया है और आर्थिक नीति में इन कवियों ने राजाओं को कृपणता का परित्याग करने की प्रेरणा देकर धन के महत्व को चित्रित किया है।

इन कवियों ने नीतिकाव्य के अन्तर्गत वर्ण, धर्म व जाति जनित भेदभाव को दूर करने की प्रेरणा दी है, साथ ही इन्होंने सुकवि और कुकवि के लक्षण तथा स्वामी–सेवक सम्बन्धों के विषय में भी स्पष्ट रूप से बताया है। शकुन अपशकुन, ज्योतिष, कलियुग आदि में इन नीति कवियों ने आस्था दिखाई है और इस विषय पर नीति को प्रस्तुत किया है।

इतर प्राणी विषयक नीति का चित्रण भी प्राप्त होता है। हालांकि इन कवियों ने पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और वैयक्तिक नीति का सूक्ष्मता से वर्णन किया है और उनके आदर्श रूप को प्रस्तुत किया है।

शारीरिक स्वास्थ्य, रोगनिवारणादि उपाय, वीरता, कायरता, यश, प्रणय और संयम को इन्होंने उद्घाटित किया है। व्यावहारिकता को केन्द्र में रखने के कारण इन कवियों की दृष्टि यथार्थ पर अधिक थी।

नैतिक उपायों से प्राप्त धनोपार्जन के महत्व को मुक्त कण्ठ से इन्होंने स्वीकार किया है और दान को श्रेष्ठ सिद्ध किया है। जैसे केशवदास ने कहा है कि –

केशव 'दान' अनन्त है, बनै न काहू देत।

इन कवियों ने भाग्य की प्रबलता को बहुत महत्व दिया है, साथ ही जाति, गांव, परिवार, घर बार, राजदरबार आदि स्थानों पर मनुष्यों को क्या नीति अपनानी चाहिए। यह कवियों ने तथ्यपूर्ण तरीके से बताया है। सामान्य जनता के लिए नीतिकाव्य सद्व्यवहार और चरित्र निर्माण का मार्ग प्रस्तुत करता है। इस काल में साहित्यिक चेतना कुछ हद तक प्रबुद्ध थी। सामान्यजन भी काव्यकृतियों का रसास्वादन करते थे। इसी कारण साहित्यप्रियता और कला के प्रति रूचि और सत्प्रेरक होने के कारण रीतिकालीन नैतिक रचनाएँ मुद्रण यंत्रों के अभाव होने पर भी सहृदयों के घरों और कण्ठों में अद्यतन सुरक्षित और संरक्षित रही है।

नीति कवियों ने सरस भावपूर्ण ब्रजभाषा और राजस्थानी का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त अन्य भाषाओं के शब्द भी मिलते हैं। इन्होंने नीति के माध्यम से कठिन से कठिन विषयों को हास्य रस में और वीर, श्रृंगार व शान्त रस में प्रमुखता से स्पष्ट किया है। इन्होंने देशकाल और पात्रादि के अनुसार उचित व्यवहार की शिक्षा दी है। कुछ आलोचक जो यह कहते हैं कि रीतिकाल में कोरी श्रृंगारिकता ही उपास्य थी, तो वे यह भूल गए हैं कि नीति भी उसी श्रृंगारिकता का ही एक अंग थी। ये जीवन की अतिशय रसिकता, पतन्नोन्मुख समाज को देखकर या मजबूरी वश हताश होकर जब घबरा उठते थे तो इन कवियों का यही नीति कथन रूप बल उनके धर्म भीरू मन को आश्वस्त करता था। नीति एक तरफ वैयक्तिक, सामाजिक कवच और दूसरी तरफ मानसिक शरणभूमि के रूप में इनकी रक्षा करती थी। तभी तो इन कवियों ने स्व अस्तित्व और निराश जनता हेतु नीति के आँचल को पकड़े रखा। रीतिकालीन हर काव्य में नीति के दर्शन होते हैं, क्योंकि नैतिकता इनकी मनोवैज्ञानिक आवश्यकता बन चुकी थी।

भौतिक रस की उपासना करने वाले और विलासिता से जर्जर मन वाले इन कवियों में इतना नैतिक बल तो था, जिन्होंने तत्कालीन मानवीय जीवन को काव्य में नीति के माध्यम से उद्भासित किया। जैसा कि कहा जा चुका है कि कवियों को आश्रयदाताओं को प्रभावित करने वाला काव्य लिखना आवश्यक था जिनमें उनकी ऐहिक सन्तुष्टि होतीय थी। इसलिए रीति कालीन समाज रीतिकाव्य के सौन्दर्य और विलासपूर्ण चित्रण को प्रेरणा देनेवाला था, परन्तु इस समाज का दूसरा पक्ष जनसाधारण का था। नैतिकता की दृष्टि से जन साधारण का चरित्र उन विलासी दरबारियों की अपेक्षा कहीं उत्तम था, कदाचित् यहीं से प्रेरित होकर इन कवियों ने विलासिता से पंकिल समाज को नीति का मार्ग दिखाकर सत्मार्ग पर लाने का अद्भुत प्रयास किया हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

The Anatomy Of Women's Empowerment

Dr. Panchali Sharma*

Abstract - Women empowerment is a multifaceted concept that encompasses several dimensions, including economic, social, political, and cultural empowerment. Empowering women is essential for achieving sustainable development, reducing poverty, and promoting social justice. This research paper provides a comprehensive overview of the concept of women's empowerment, its historical evolution, and the current state of women's empowerment in India. The paper also examines the impact of women's empowerment on various aspects of society and highlights successful initiatives and programs that have led to positive outcomes for women. Moreover, the barriers to women's empowerment, including social norms, institutional barriers, and gender-based violence, are analyzed, and the role of men in promoting women's empowerment is discussed. The paper concludes by discussing future directions for women's empowerment, including the need for a more comprehensive and integrated approach that addresses structural barriers and promotes gender equality at all levels of society. The importance of investing in women's education, healthcare, and economic opportunities, as well as promoting women's leadership and participation in decision-making processes, is also emphasized. Overall, this paper provides a valuable contribution to the literature on women's empowerment and highlights the urgent need for concerted efforts to promote gender equality and women's empowerment in India and around the world.

Keywords- Empowerment, Social Justice, Economic Opportunities, Gender Equality.

Introduction - We all have heard the word women empowerment but why so much hype about this word? Basically, if we analyzeit deeply, this is a very serious issue. Women are usually put into a box whose aim and utility are narrowed. For those desiring and dreaming are far from reality. For them breaking the shackles is difficult. Today, things might seem to be better or different for some. And for some women are already empowered according to their surroundings. But, sorry to disappoint everyone, as the reports and numbers state something else. Some might also say that the condition of women is so much better than what one could see before the independence or ancient period. Though this is true in some sense, the situation has so much changed but at the same time, different yet gruesome and unimaginable problems have emerged.

A woman in this world is fighting for her own identity. She is fighting for those basic rights that were always hers. She is trying to understand the dynamics of this world and how to make space for herself. She is trying to make the world understand that she is not only the reproduction machine created by God for the survival of the world. But she is one of the beautiful creatures that God created with the same intention that God created man for. She has the same rights and demands that society without any question gives to a man and that too free of cost. This fight for equality and identity is very old. And this fight is long and for sure not to be resolved soon. But now small steps are not going to be sufficient, the world is running at a very fast speed. Let us also put on our seat belts and move towards a better future for one of the most beautiful creatures of humanity- women.

Women empowerment refers to providing women with the power and tools to control their lives, make their own decisions, and have equal opportunities and rights as men. It involves creating an environment in which women can participate fully in all aspects of society and achieve their full potential. Women's empowerment is essential for achieving gender equality and addressing the unequal power dynamics between men and women that exist in many societies. It involves challenging the societal norms and cultural practices that limit women's opportunities and rights and promoting policies and programs that promote gender equity. Some of the key aspects of women's empowerment include access to education, economic independence, political participation, access to healthcare, and protection from violence and discrimination. By empowering women, we can create a more just and equitable society that benefits everyone.

Key Components Of Women's Empowerment:

1. **Economic Empowerment:** This involves providing women with the resources and opportunities to participate fully in the economy, such as access to education, job training, credit, and entrepreneurship programs.
2. **Political Empowerment:** This involves increasing

*Lecturer (English) Govt. P.G College, Sawai Madhopur (Raj.) INDIA

women's participation and representation in political processes, such as voting, running for office, and decision-making at all levels of government.

3. **Social Empowerment:** This involves addressing the cultural and social norms that restrict women's rights and limit their opportunities. It includes promoting gender equality, ending discrimination, and challenging harmful practices such as child marriage and female genital mutilation.

4. **Legal Empowerment:** This involves ensuring that women have access to legal protection and redress for violations of their rights, such as domestic violence, sexual harassment, and gender-based discrimination.

5. **Health And Reproductive Rights:** This involves ensuring that women have access to quality healthcare, including reproductive healthcare, and the right to make decisions about their own bodies and reproductive lives.

6. **Education:** This involves ensuring that girls and women have access to quality education and training at all levels, including primary, secondary, and higher education.

7. **Digital Empowerment:** This involves providing women with access to technology and digital skills training, which can help to bridge the digital gender divide and enable women to participate fully in the digital economy.

8. **Environmental Empowerment:** This involves recognizing the unique role that women play in environmental conservation and sustainability, and providing them with the resources and opportunities to participate in efforts to protect the environment.

9. **Access To Justice:** This involves ensuring that women have access to fair and effective justice systems, including legal aid and support services, to address violations of their rights.

10. **Gender-Responsive Budgeting:** This involves incorporating a gender perspective into budgeting and policy-making processes, in order to ensure that women's needs and priorities are taken into account.

11. **Inter-Generational Empowerment:** This involves empowering women across different generations, by ensuring that girls and young women have access to the resources and opportunities they need to achieve their full potential.

Overall, women's empowerment is a complex and multifaceted concept that involves addressing a wide range of social, economic, political, and cultural factors. By empowering women, we can create a more just and equitable society for all.

Impact Of Women's Empowerment:

1. **Improved Education:** Women empowerment can lead to improved access to education for girls and women. Education is essential for breaking the cycle of poverty and promoting economic growth and development.

2. **Increased Economic Opportunities:** Women empowerment can lead to increased economic opportunities for women. This can improve their economic status and enable them to support themselves and their families.

3. **Better Health Outcomes**: Women empowerment can lead to better health outcomes for women and their families. This includes improved access to healthcare, increased knowledge about health and hygiene, and better nutrition.

4. **Reduced Gender-Based Violence:** Women empowerment can help to reduce gender-based violence by empowering women to speak out against violence and advocate for their rights. This can lead to improved safety and security for women and their families.

5. **Increased Political Participation:** Women empowerment can lead to increased political participation by women, which can lead to more representative and inclusive decision-making.

6. **Improved Social And Cultural Norms:** Women empowerment can lead to improved social and cultural norms, including greater gender equality and a reduction in harmful practices such as child marriage and female genital mutilation.

7. **Improved Environmental Sustainability:** Women empowerment can lead to improved environmental sustainability by recognizing the critical role that women play in environmental conservation and sustainability.

Overall, women empowerment has a wide-ranging impact that can contribute to the achievement of the United Nations' Sustainable Development Goals (SDGs). By empowering women, we can create a more just, equitable, and sustainable world for all.

Examples Of Successful Women Empowerment Initiatives: There have been several successful women empowerment initiatives in India that have had a significant impact on the lives of women and their communities. Here are some examples:

1. **Beti Bachao, Beti Padhao (Save The Daughter, Educate The Daughter) -** Launched in 2015, this national campaign aims to address the issue of declining female-to-male sex ratio in India and promote the education of girls. The initiative has resulted in increased awareness about the importance of educating girls and has led to improvements in the sex ratio in some areas.

2. **Swachh Bharat Abhiyan (Clean India Mission) -** Launched in 2014, this national initiative aims to improve sanitation and hygiene in India. The initiative has had a significant impact on women and girls, as it has led to the construction of toilets in schools and public places, providing women and girls with safe and hygienic sanitation facilities.

3. **Janani Suraksha Yojana (Maternity Protection Scheme) -** Launched in 2005, this initiative aims to promote institutional delivery among pregnant women in rural areas. The program provides financial assistance to pregnant women for the cost of delivery and transportation to the healthcare facility. The initiative has led to increased institutional delivery rates and improved maternal and child health outcomes in rural areas.

6. **National Rural Livelihood Mission (NRLM) -** NRLM was launched in 2011 to promote self-employment and

entrepreneurship among rural women. The program provides skill development training, credit facilities, and support for women to start their own businesses. NRLM has empowered thousands of rural women by providing them with economic opportunities and a means to become financially independent.

7. Pradhan Mantri Ujjwala Yojana (PMUY) - PMUY was launched in 2016 to provide LPG connections to households below the poverty line. The initiative has had a significant impact on women, as it has reduced their exposure to harmful smoke from traditional cooking methods and provided them with more time for productive activities.

8. Digital Sakhi - Digital Sakhi is an initiative that provides digital literacy training to women in rural areas. The program aims to bridge the digital divide and empower women with the skills and knowledge to access information and opportunities. The initiative has helped women access information, connect with others, and gain new skills.

Barriers To Women Empowerment: Despite various initiatives to promote women's empowerment, there are still several barriers that hinder the progress of women in achieving economic, social, and political equality. Here are some of the main barriers to women's empowerment:

1. Patriarchal Norms And Stereotypes - Traditional gender roles and patriarchal norms that dictate women's behavior and limit their opportunities are major barriers to women's empowerment. These norms often perpetuate discrimination against women in education, employment, and politics.

2. Gender-Based Violence - Violence against women, including domestic violence, sexual harassment, and rape, is a significant barrier to women's empowerment. Violence against women not only harms them physically and psychologically but also limits their ability to participate fully in society.

3. Lack Of Education - Lack of access to education is a significant barrier to women's empowerment, particularly in developing countries. Women who are not educated are often unable to access better-paying jobs and have limited opportunities for economic and social mobility.

4. Limited Access To Healthcare - Limited access to healthcare is a major barrier to women's empowerment, particularly in rural areas. Women who do not have access to healthcare are more likely to suffer from poor health outcomes, which can limit their ability to work and participate fully in society.

5. Economic Inequality - Women are often paid less than men for the same work and have limited access to credit and financial services, which can limit their economic opportunities and independence.

6. Discrimination In Politics - Women are often underrepresented in politics and face significant discrimination when they do seek political office. This can limit their ability to shape policies that affect their lives and the lives of their communities.

7. Lack Of Legal Rights - Women often have limited legal rights, including property rights and the right to inherit, which can limit their economic opportunities and independence.

These barriers must be addressed through targeted policies and initiatives to promote women's empowerment and eliminate gender-based discrimination.

Few Examples Of Empowered Women in India

1.	Kalpana Chawla	2.	Laxmi Agarwal
3.	Saina Nehwal	4.	Kiran Mazumdar
5.	Chhavi Rajawat	6.	Indira Gandhi
7.	Arunima Sinha	8.	Irom Sharmila
9.	Mary Kom	10.	Anjali Bhagwat
11.	Sania Mirza	12.	Sudha Murthy
13.	Rani Rampal	14.	Ritu Kumar

The Role Of Men In Women's Empowerment:

1. Education And Awareness: Men can play a key role in educating and raising awareness about women's rights and the importance of gender equality. By learning about and understanding these issues, men can become allies in the fight for women's empowerment.

2. Breaking Stereotypes: Men can challenge traditional gender stereotypes and support women who are breaking gender barriers in various fields such as politics, sports, business, and the arts. They can encourage and support women to pursue their goals and ambitions and help to create a more gender-equal society.

3. Sharing Domestic Responsibilities: Men can play a more active role in sharing domestic responsibilities with women, such as childcare, cooking, and cleaning. By doing so, they can help to reduce the burden of unpaid care work that falls disproportionately on women.

4. Mentoring And Networking: Men can mentor and network with women in their professional and personal lives, helping them to develop their skills, knowledge, and connections. This can be particularly helpful for women who are just starting out in their careers or who are trying to break into male-dominated fields.

5. Speaking Out Against Violence: Men can speak out against violence against women and actively work to prevent it. This includes challenging harmful attitudes and behaviors among other men, supporting survivors of violence, and advocating for stronger laws and policies to protect women's rights.

In summary, men can be powerful allies in the fight for women's empowerment by challenging gender stereotypes, sharing responsibilities, and advocating for women's rights and equality.

Conclusion: In conclusion, women's empowerment is a critical issue that requires ongoing attention and action. Empowering women means creating opportunities for them to achieve their full potential, including in the areas of education, economic participation, political leadership, and access to healthcare and social protection. While progress has been made in many areas, there is still much work to be done to address the barriers that women face, including gender stereotypes, discrimination, and unequal access to

resources and opportunities. It is essential that we continue to promote women's empowerment at all levels, including through policy reforms, community initiatives, and individual actions. By working together to empower women, we can create a more equitable and just society for all.

Women's empowerment is not only a moral and social imperative, but it is also essential for sustainable economic growth and development. When women are empowered, they can contribute more fully to their families, communities, and societies, driving innovation, creativity, and progress. Moreover, empowering women can help to break the cycle of poverty, inequality, and exclusion, creating a more prosperous and equitable world for all. However, achieving women's empowerment requires a concerted effort from all sectors of society, including governments, civil society organizations, the private sector, and individuals. By working together to address the root causes of gender inequality and promote women's empowerment, we can create a brighter future for women and girls around the world.In order to achieve women's empowerment, it is important to address the multiple barriers that women face, including discrimination, gender stereotypes, lack of access to education, health care, and economic opportunities, and violence and harassment. To overcome these challenges, it is necessary to adopt a multi-dimensional approach that addresses the complex and interrelated factors that perpetuate gender inequality. This includes implementing policies and programs that promote women's access to education, health care, and economic opportunities, as well as addressing the cultural and societal norms that perpetuate gender inequality.

Moreover, men and boys have an essential role to play in promoting women's empowerment. They can be important allies in promoting gender equality, challenging harmful stereotypes, and advocating for policies that support women's empowerment. Engaging men and boys in these efforts is crucial for creating a more inclusive and equitable society that values and supports the full participation of women. Women's empowerment is essential for creating a more just and equitable world, where all individuals can thrive and reach their full potential. It requires a concerted effort from all sectors of society, and a recognition of the importance of addressing the multiple barriers that women face. By promoting women's empowerment, we can create a brighter future for all.

References:-

1. Agrawal, B. (1997). Gender and command over property: A critical gap in economic analysis and policy in South Asia. World Development, 25(7), 1209-1229.
2. Chakrabarti, S. (2010). Microfinance and women's empowerment: A review and an agenda. International Journal of Management Reviews, 12(3), 283-304.
3. Das, M. (2007). Empowerment and accountability of women in Panchayats. Economic and Political Weekly, 42(25), 2453-2457.
4. Desai, S., & Alva, S. (1998). Maternal education and child health: Is there a strong causal relationship? Demography, 35(1), 71-81.
5. Dreze, J., & Sen, A. (2013). An uncertain glory: India and its contradictions. Princeton University Press.
6. Jeffery, P., Jeffery, R., & Lyon, A. (2003). Labour pains and labour power: Women and childbearing in India. Zed Books.
7. Kabeer, N. (2001). Reflections on the measurement of women's empowerment: Discussing the politics of context. Development and change, 32(2), 497-528.
8. Narayan, D., Patel, R., Schafft, K., Rademacher, A., & Koch-Schulte, S. (2000). Voices of the poor: Can anyone hear us? Oxford University Press.
9. Sen, G., & Grown, C. (1987). Development, crises and alternative visions: Third world women's perspectives. Monthly Review Press.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

व्यक्तित्व और शैली: शैली ही शैलीकार है- विश्लेषण

डॉ. कविता आचार्य*

प्रस्तावना – व्यक्तित्व और शैली के अध्ययन के निष्कर्ष स्वरूप यह तथ्य स्पष्ट होता है कि 'शैली ही शैलीकार है'। हम पहले भी कह चुके है कि व्यक्तित्व का शैली पर अप्रतिम प्रभाव पड़ता है। हम शैली में व्यक्तितत्व–अन्तरिक और बाह्य–की साफ–साफ झलक पाते है। इन पंक्तियों के संदर्भ में यह उचित एकदम सही बैठती है कि शैली ही शैलीकार है। रचनाकार के हृदयस्थ विचार शैली का साहचर्य पाकर भाषा के माध्यम के माध्यम से साहित्य में उतरते हैं। आन्तरिक व्यक्तित्व की ही साकार प्रतिमा है साहित्य। व्यक्ति कैसा अनुभव करता है, कैसा सोचता है, क्या उसकी संवेदनायें है, कैसा दृष्टिकोण है उसका संसार के प्रति, जग को वह जैसा है उसके स्थान पर कैसा देखना चाहता है, ये सभी बातें साहित्य में चित्रित होकर साहित्यकार के व्यक्तितत्व के पहलुओं का किंचित आभास दे जाती है। आन्तरिक अनुभूति पक्ष ही तो एक शैली विशेष के साहचर्य से अभिव्यक्त होकर प्रेष्य या कथ्य बनता है। इसी प्रकार रचनाकार की आन्तरिक और बाह्यवृत्तियां भी प्रतिबिम्बित हो जाती हैं। उदाहरण के लिए देखें कि अगर कोई साहित्यकार मजदूर है तो उसका साहित्य में मजदूरों के कार्यकलापों, उनके शोषण, शोषण के विरूद्ध उपाय और वर्गहीन समाज की स्थापना ही उसका लक्ष्य होगा। वह इसी उद्देश्य के लिए इसी वर्ग के समझ में आ सकने वाली शैली अपनायेगा और इसी प्रकार उसके आन्तरिक भावानुभाव शैली में अभिव्यक्त होंगे। इस विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि शैली ही शैलीकार हैं।

आचार्य जी ने मध्यकाल के समस्त साहित्य का गहन अध्ययन किया है और उन्होंने तत्कालीन सन्दर्भो में वर्तमान समस्याओं का सफल चित्रांकन करते हुए निराकरण के उपाय भी संकेत में ही चित्रित किये हैं। उन्होंने सर्वाधिक चर्चित और महत् आवश्यक शब्द 'प्रेम' पर लिखा है और वर्तमान में प्रचलित कुत्सित वासनामय शरीर सुख प्राप्ति की भावनाओं के विपरित ऐसा प्रेम निरूपित करना चाहा है जिसका आधार समर्पण ही समर्पण हो, फिर चाहे वह भट्ट और भट्टिनी का प्रेम हो सकता है या भट्ट और निउनिया का अथवा निउनिया और भट्टिनी का। विकृत प्रेम से शुब्ध होकर अवायवीय प्रेम चित्रित किया है। यथा–

–'प्रेम एक और अविभाज्य है। उसे केवल ईर्ष्या और असूया ही विभाजित करके छोटा कर देते है।'

यहां प्रेम की अविभाज्यता और आदर्श प्रेम व्यंजित है। समर्पण ही प्रेमी का सर्वस्व है, यथा–

–'हाय, भट्ट, अभागिनी का अभिनय आज समाप्त हो गया। उसने प्रेम की दो दिशाओं को एक सूत्र कर दिया।'

–'दुनिया केवल प्रस्तर–प्रतिमाओं पर जान देती है।'

यहा भी एक लय है प्रेम की, समर्पण की, वासनाहीनता की।

–'जल्दी ही लौटना' भट्टिनी ने कहा।

–'फिर क्या मिलना होगा,' यहां एक ढ़के हुए प्रेम की अभिव्यक्ति ही तो है। अवायवीय प्रेम, कुत्सित वासनामय प्रेम के विपरित आचार्य जी के अपने हृदयस्थ प्रेमिल भावों की आदर्श अभिव्यक्ति ही तो है।

आचार्य जी ने प्रेम अतिरिक्त राष्ट्रीय एकता, राष्ट्र रक्षा, सामाजिक असमानता, नारी अवस्था, युवकों का हर स्थिति को सहज में स्वीकार कर लेना, निवृत्ति के स्थान पर संसार में प्रवृत्ति आदि अनेक प्रश्नों पर सोचा है और इनके निराकरण के लिए मार्ग भी तय किये है। वर्तमान समस्याओं को बाहरवीं–तेहरवीं सदी के परिप्रेक्ष्य में चित्रित कर उनका निराकरण करना चाहा है चाहे वे महामाया के माध्यम से युवकों का आहवान हो या भट्टिनी द्वारा मलेच्छ कहे जाने वालों की सामाजिकता का वर्णन हो या रेक्क द्वारा समस्याओं से आंख मूंद कर न भागने और समस्याओं के निराकरण में प्रवृत्त होने का वर्णन हो या चन्द्रलेखा द्वारा या मैनसिंह द्वारा बिखरी हुयी समाजशक्ति को एकत्र कर एकसूत्र में पिरोने का प्रयास हो या आर्यक श्यामरूप द्वारा अतयाचारियों का शमन और एक सुव्यवस्था की स्थापना हो।

नारी की शक्ति और महत्ता को स्वीकार करते हुए आचार्य जी लिखते हैं–'जहाँ कहीं' अपने आपको उत्सर्ग करने की, अपने आपको खपा देने भावना प्रधान है वहीं नारी। 'शक्ति–तत्व है। वह आनन्द भोग के लिए नहीं आनन्द लुटाने के लिए आती है।'

प्रेम और संसार की प्रवृत्ति के समर्थन और निवृत्ति के खण्डन के लिए वे लिखते है–'वेराग्य क्या इतनी बडी चीज है कि प्रेम के देवता को उसकी नयनाग्नि में भस्म कराके कवि गौरव अनुभव करें।'

–'बेटा, तू मुझ अभागी को रोती कलपती छोड़ कौन–सा धर्म कमा रहा है।' जिनके लिए तू मणिकांचन–प्रतिमा को छोड़कर तपस्या कर रहा हैं।'

राष्ट्रीय एकता, देश रक्षा पर आचार्य जी का आन्तरिक व्यक्तित्व इन पंक्तियों में उद्धृत हो उठा है–

–'वीरों, अपनी मातृभूमि की रक्षा किसी जाति विशेष का पेशा नहीं है, वह सबका जन्मसिद्ध अधिकार और विधि–विहित धर्म है।'

–'सफलता और असफलता का हिसाब कायर लगाते है।'

इस प्रकार हम आचार्य जी के उपन्यासों में देखते है कि उनका आन्तरिक व्यक्तित्व इनके उपन्यासों में नाना प्रकार के क्रान्तिकारी उद्धरणों के रूप में

* सह आचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, भरतपुर (राज.) भारत

बिखर गया है। आपका व्यक्तितत्व कैसा होगा, यह बात चारों उपन्यासों को पढ़कर उनमें वर्णित विभिन्न प्रकार के वाक्यों में देखा जा सकता है। आपने कई नयी परिभाषायें भी दी है जो इस बात का प्रमाण है कि आपका विचार–धरातल अतिविस्तृत है। आपने प्राय: सभी शैली–तत्वों पर अपनी धीर गम्भीर लेखनी चलायी हैं।

संक्षेप में हम कह सकते है कि आचार्य जी की शैली आचार्य जी के व्यक्तित्व के पहलुओं को उभार कर पाठक के सामने उपस्थित कर देती है। जहाँ एक और यह उपलब्धि उपन्यासकार की सफलता का प्रमाण है वहीं दूसरी ओर उसकी कृति की सार्थकता का भी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Photo catalytic decomposition of acid violet 19 over ZnO semiconductor powder

Dr. Pratibha Rao*

Abstract - The photo catalytic decomposition of acid violet 19 on ZnO powder was carried out. Reaction was observed spectrophotometrically. The effect of variation of various parameters such as concentration of acid violet 19,pH, amount and particles size of the semiconductor and light intensity on the rate of photocatalytic reaction were observed. A tentative mechanism for the reaction has been proposed.
Keywords - acid violet 19, photocatalytic, semiconductor, zinc oxide.

Introduction - Bhilwara also known as Manchester of Rajasthan have nearly 20 major textile processing units which use million litres of water everyday and generate huge quantity of a effluent containing dyes. Contamination of aquatic environment by these toxic chemicals is a serious problem as dyeing, printing and textile industries release their coloured effluent in nearby rivers ,lakes, ponds etc. Sharma and Dey[1]used ozonation to remove die from aqueous solution. Many treatment methods have been reported for dye degradation such as flocculation, coagulation,ultrafiltration, reverse osmosis etc.[2-3]Photocatalyticdegradation provides and alternative method for wastewater treatment in low cost,less time and easy operative method this is ecofriendly cost effectiveand preferred method.[4] A lot of work has been performed on various photocatalytic material such as TIO_2,ZnO,NiOetc. Ternery oxide of rare earth element and transition element as photo catalyst has been studied for degradation of textile dyes.[6]

Acid violet 19 or acid fuchsin belongs to the class of triphenylmethane dyes. It is olive to dark olive green powder which is soluble in water and slightly soluble in alcohol.Acidviolet 19 also known as Acid fuchsin is used as a pH indicator and biological stain. The photo reduction of acid violet 19 has been studied by Oster et al.[7]It has been observed that a strong correlation exist between dye phosphorescence and photo reduction.

Acid violet 19 which exhibit phosphorescence at room temperature was susceptible to photo reduction induced by white light.

Experimental detail: Acid violet 19 (s.d.fine) and zinc oxide(merck) were used. The photo catalytic bleaching of Acid violet 19 was observed by taking 100 ml of solution and 0.50 gram of zinc oxide powder. The irradiation was carried out with magnetic steering keeping the whole assembly exposed to light source. the desired pH of the solution was measured by a digital pH meter (systronics model 324).The pH of the solution was adjusted by HCl(for acidic range) and NaOH(for basic range) The solution was irradiated using 200 Watttungsten lamp(Sylvania Laxman). The intensity of light was measured by suryamapi(CL model SM 201).

A water filter was used to cut off thermal radiations. The optical density was measured by a UV-visible spectrophotometer (systronics model108) the necessary condition for the correct measurement of the optical density is that the solution must be free from semiconductors particles and other impurities. Centrifuge (Remi1258) and Whatman filter paper were used to remove the species but proved to be unsuitable. Thus a G-3 sintered glass crucible was used for filtration to obtain the desired accuracy in the measurement of the absorbance of the dye solutions and absorption maxima of dye was determined by a UV visible recording spectrophotometer.

Results and discussion: The photo catalytic bleaching of Acid violet 19 was observed spectrophotometrically at absorption maxima 540 n. m. The results for typical run are given inTable 1

Table 1: A Typical Run

[Acid violet 19]=$5.0x10^{-5}$M LightIntesity = $40mWcm^{-2}$
Temperature = 303K pH = 7.0 Zinc oxide =0.50g

Time (minutes)	Optical Density(O. D.)	2+log O. D.
0.0	0.381	1.5800
30.0	0.350	1.5440
60.0	0.325	1.5120
90.0	0.300	1.4771
120.0	0.280	1.4470
150.0	0.255	1.4065
180.0	0.235	1.3710

It was observed that optical density decreases with time of irradiation indicating that Acid violet 19is degraded on exposure to light .The rate constant for this reaction was determined using the expression,Rate constant (k) = 2.303 × slop

Effect of [Acid violet 19] variation: Effect of variation of Acid violet concentration on the rate of its photo catalytic

*Lecturer (Chemistry) SMM Government Girls College, Bhilwara (Raj.) INDIA

bleaching was studied by taking different concentration ofAcid violet 19. The results obtained are represented in Table 2

Table 2: Effect of [Acid violet 19] variation

Light Intesity = 40 mW cm^{-2} pH = 7.0
Temperature = 303K Zinc oxide =0.50g

[Acid violet 19] x 10^5M	Rate constantk x 10^5 (sec^{-1})	5 + log k(sec^{-1})
2.0	10.70	1.0293
2.5	9.27	0.9670
3.0	8.10	0.9085
3.5	7.15	0.8543
4.0	6.27	0.7972
4.5	5.50	0.7403
5.0	4.90	0.6902

It is evident from the Table 2 that as the concentration of Acid violet 19 increases, rate of photocatalytic bleaching of the dye decreases. It can be explained on the basisof results obtained that as the concentration of dye was increased it will start acting like a filter for the incident light and its larger concentration will not permit the desired light to reach the zinc oxide particles and the results into a decrease in the rate of photo catalytic bleaching of Acid violet 19 .

Effect of variation of pH: The pH is likely to affect thephotocatalytic bleaching of dye andtherefore, the effect of pH on the rate of its photo catalytic bleaching was investigated in the pH range 6.0 to 10.00. The value of pH was varied by addition of HCl for acidic range and NaOHfor basic range to the dye solution. Results are reported in Table 3

Table 3: Effect of variation of pH

[Acid violet 19] = 5.0 x 10^{-5} M Light Intesity = 40 $mWcm^{-2}$
Temperature = 303K Zinc oxide =0.50g

pH	Rate constantk x 10^5 (sec^{-1})	5 + log k(sec^{-1})
6.0	3.00	0.4771
6.5	4.05	0.6074
7.0	4.90	0.6902
7.5	4.10	0.6128
8.0	3.55	0.5502
8.5	3.19	0.5038
9.0	2.95	0.4698
9.5	2.81	0.4487

It has been observed that rate of photocatalytic bleaching of acid violet 19 was optimum at pH = 7.0. The rate of photo catalytic bleaching of acid violet 19 decreases as the pH was increased. This observation can be better explained on the basis that on increasing the pH beyond 7.0 the concentration of OH^- ionwill also increases. The nature of dye being anionic, there is less probability of the interaction between OH^- and the dye due to electrostatic force of repulsion. This force of repulsion will not permit the dye molecule to come in close contact of semiconductor surface which is negatively charged in solution having pH greater than 7.0, as a consequence the rate of bleaching decreases at higher pH.

The rate of photo catalytic bleaching of acid violet 19 also decreases on decreasing pH below 7.0. The die has an additional characteristic that it has the cationic moiety $(=NH_2)^+$ also and thus in acidic range the dye molecule will also feel a force of repulsion on its approach towards semiconductor surface which is also positively charged.

Effect of variation of amount of semiconductor

Keeping all the other factors identical the effect of amount of semiconductor was observed . Results are tabulated in Table4

Table 4

Effect of variation of amount of semiconductor [Acid violet 19] = 1.0 x 10^{-5} M Light Intesity = 40 $mWcm^{-2}$
Temperature = 303K pH = 7.0

Amount of semiconductor(g)	Rate constantk x 10^5 (sec^{-1})
0.1	1.20
0.2	2.07
0.3	3.01
0.4	3.80
0.5	4.90
0.6	5.90
0.7	6.55
0.8	6.60
0.9	6.60

Rate of photo catalytic bleaching of Acid violet 19 increases with increase in the amount of semiconductor, but after a certain amount rate becomes almost constant ,it may be considered like a saturation point. This maybe attributed to the exposed surface area of the semiconductor initially the increase in the amount of semiconductor will increase the surface area but after saturation point any further addition will not increase surface area rather it will increase only the thickness of the layer of the semiconductor at the bottom of reaction vessel.

Effect of variation of light intensity: To observe the effect of light intensity on the photocatalytic reaction of Acid violet 19 light sources of different wattage were used, and the distance between the light source and exposed surface was also varied. The results obtained are reported in Table5

Table 5:Effect of variation of light intensity

[Acid violet 19] = 5.0 x 10^{-5} M pH = 7.0 Temperature = 303K Zinc oxide =0.50g

Light Intesity (mW cm^{-2})	Rate constantk x 10^4 (sec^{-1})
10.0	1.15
20.0	2.50
30.0	3.50
40.0	4.90
50.0	5.70
60.0	6.20

The results indicate that bleaching action is accelerated as the intensity of light was increased. This maybe explain on the basis that more photons will be available for excitation on increasing the intensity of light and therefore more electron hole pairs will be generated in the semiconductor

thus resulting into enhanced rate of reaction.

Mechanism: On the basis of observed data the following tentative mechanism may be proposed as follows.

In the initial step the semiconductor SC will be excited to give SC*, which will provide the electron –hole pair. The electron present in the conduction band will be utilised for reducing the dye to its leuco form. This luco form may further degrade to volatile or gaseous products.

SC——————→SC*

SC* —————→SC(h+) + e-

e- + Acid violet 19 ——→Leuco [Acid violet 19]

Leuco [Acid violet 19] —-→Products

References:-

1. Sharma, V. andDey , K. C. Int. J. Chem. Tech. Res. 2(1) 368(2010)
2. M. H. Entezari, Z. S. Al-Hoseini and N. Ashraf Ultrasonic Sonochem, 15, 433(2008)
3. MKulkarni and P Thakur Inter. J. Engg Res. Sci., 2 ,254(2014)
4. A. Vijay, S Nihalani and S Bhardwaj Inter. J. Chem. Sci. App 5. 1, 1 (2014)
5. Mehta P. Mehta R. Surana M. and Kabra BV. J. Chem. Pharm. Res. 2(4),546(2010)
6. M. Tabatace and S. Abolfazal Orient J. Chem27, 1, 65(2011)
7. G. Oster, J. JoussotDubien and B. Broyde J. Amer. Chem. Soc. 81, 1869(1959)

****

Free Radical Effect On The Human Body: A Comprehensive Analysis

Dr. Anjul Singh*

Abstract - The objective of this comprehensive analysis is to examine the impact of free radicals on the human body, including their formation, sources, detrimental effects, and implications for various aspects of health, and to explore strategies to minimize free radical damage.

Introduction -a.Free radicals are highly reactive and unstable molecules that contain an unpaired electron in their outer shell. This unpaired electron makes them highly reactive and prone to react with other molecules in the body.

b. Free radicals can originate from both external sources and internal processes within the body. Some common sources of free radicals in the body include:

1. **Metabolism:** Normal metabolic processes, such as energy production in the mitochondria, can generate free radicals as byproducts.
2. **Environmental factors:** Exposure to pollutants, toxins, radiation (including UV radiation from the sun), and certain chemicals can lead to the formation of free radicals.
3. **Inflammation:** Inflammatory processes in the body can stimulate the production of free radicals as part of the immune response.
4. **Lifestyle factors:** Poor diet, excessive alcohol consumption, smoking, and drug abuse can contribute to the production of free radicals.
5. **Medications and treatments:** Certain medications, such as chemotherapy drugs, and some medical treatments, such as radiation therapy, can generate free radicals.

c. Maintaining a balance of free radicals is essential for overall health. While free radicals are a natural byproduct of various cellular processes, an excessive accumulation of free radicals can lead to a condition known as oxidative stress. Oxidative stress occurs when the production of free radicals overwhelms the body's antioxidant defense mechanisms.

Oxidative stress can cause damage to cellular components, including lipids, proteins, and DNA. This damage has been implicated in various diseases and conditions, including aging, cardiovascular diseases, neurodegenerative disorders, cancer, and inflammatory conditions.

On the other hand, free radicals also play important roles in the body's immune response, cell signaling, and certain physiological processes. For example, free radicals are involved in killing pathogens and regulating cellular processes such as apoptosis (programmed cell death).

Therefore, maintaining a balance between the production and elimination of free radicals is crucial. This balance can be achieved through various mechanisms, including the body's own antioxidant defenses (such as enzymes like superoxide dismutase and glutathione peroxidase) and external sources of antioxidants obtained from a healthy diet rich in fruits, vegetables, and other antioxidant-rich foods.

2. Formation And Metabolism Of Free Radicals

a. Reactive oxygen species (ROS) and reactive nitrogen species (RNS) are two types of free radicals that are commonly generated in the body. ROS include molecules such as superoxide anion (O_2•-), hydrogen peroxide (H_2O_2), and hydroxyl radical (•OH). RNS include molecules such as nitric oxide (•NO) and peroxynitrite (ONOO-). These reactive species are produced as natural byproducts of cellular metabolism.

b. Cellular sources of ROS and RNS include:

1. **Mitochondria:** The mitochondria, which are the energy-producing organelles within cells, are a significant source of ROS. During oxidative phosphorylation, electrons can leak from the electron transport chain, leading to the formation of superoxide anion.
2. **NADPH oxidases:** These enzymes are responsible for generating ROS as part of the immune response. They play a role in killing pathogens and regulating signaling pathways.
3. **Inflammatory cells:** Neutrophils, macrophages, and other immune cells produce ROS as a defense mechanism against pathogens.
4. **Endoplasmic reticulum:** Oxidative stress in the endoplasmic reticulum can lead to the generation of ROS.
5. **Other cellular processes:** Certain enzymes involved in cellular metabolism, such as xanthine oxidase, can produce ROS as byproducts.

*Associate Professor (Chemistry) Govt. PG College, Dholpur (Raj.) INDIA

c. The body has several antioxidant defense mechanisms to counterbalance the harmful effects of free radicals. These defense mechanisms include:

1. **Enzymatic antioxidants:** These are enzymes that help neutralize and detoxify free radicals. Examples include superoxide dismutase (SOD), catalase, and glutathione peroxidase. SOD converts superoxide anion into hydrogen peroxide, which is further broken down by catalase and glutathione peroxidase.
2. **Non-enzymatic antioxidants:** These are small molecules that can donate electrons to free radicals, thereby stabilizing them. Examples include vitamin C, vitamin E, beta-carotene, glutathione, and flavonoids. These antioxidants can scavenge and neutralize free radicals directly or work synergistically with enzymatic antioxidants.
3. **Metal chelators:** Certain antioxidants can bind to and chelate metal ions, such as iron and copper, which can catalyze the formation of free radicals through Fenton and Haber-Weiss reactions.

3. Oxidative Stress And Free Radicals

a. Oxidative stress refers to an imbalance between the production of free radicals, such as reactive oxygen species (ROS), and the body's antioxidant defense mechanisms. This imbalance leads to an excessive accumulation of free radicals, causing damage to cellular components and disruption of normal cellular functions. Oxidative stress can be caused by various factors, including environmental toxins, pollution, radiation, smoking, poor diet, inflammation, and certain diseases.

b. Oxidative stress can have detrimental effects on cellular components. Free radicals, particularly ROS, can react with and damage various biomolecules within cells, including:

1. **Lipids:** Free radicals can oxidize lipids, leading to the production of lipid peroxides and other reactive lipid species. This can disrupt cell membranes and cause lipid peroxidation, which is associated with cellular dysfunction and inflammation.
2. **Proteins:** Free radicals can oxidize and modify amino acids in proteins, leading to protein misfolding, aggregation, and loss of function. Oxidative damage to enzymes can impair their catalytic activity and disrupt cellular metabolic processes.
3. **DNA:** Free radicals can directly damage DNA by causing DNA strand breaks, base modifications, and DNA cross-linking. This oxidative DNA damage can lead to mutations, genomic instability, and potentially contribute to the development of cancer.
4. **Cellular organelles:** Mitochondria, as the major producers of ROS, are particularly vulnerable to oxidative damage. Oxidative stress can impair mitochondrial function, leading to energy depletion, increased ROS production, and further damage to cellular components.

c. Free radicals play a crucial role in oxidative stress. When the production of free radicals overwhelms the body's antioxidant defense mechanisms, oxidative stress occurs. Free radicals, such as ROS, are highly reactive and can initiate chain reactions, leading to the propagation of oxidative damage in cells.

ROS can react with and oxidize biomolecules, as mentioned earlier, leading to cellular dysfunction and damage. Moreover, free radicals can trigger signaling pathways that promote inflammation, further exacerbating oxidative stress. Inflammation can stimulate the production of additional free radicals, creating a vicious cycle of oxidative stress and inflammation.

Additionally, free radicals can disrupt redox signaling, which is the process by which cells communicate and regulate various physiological functions. Redox signaling involves the controlled production and elimination of free radicals, which play important roles in cellular processes such as cell growth, differentiation, and apoptosis. Dysregulation of redox signaling due to excessive free radicals can contribute to cellular dysfunction and disease progression.

Therefore, the accumulation and unchecked activity of free radicals in oxidative stress are major contributors to cellular damage, aging, and the development of various diseases, including cardiovascular diseases, neurodegenerative disorders, cancer, and metabolic disorders.

4. Impact Of Free Radicals On Human Health

a. Aging and free radicals: Free radicals have been implicated in the aging process. Over time, the accumulation of oxidative damage caused by free radicals can lead to cellular dysfunction, tissue degeneration, and organ decline. The gradual accumulation of DNA damage, protein oxidation, and lipid peroxidation contributes to age-related changes and increases the risk of age-related diseases.

b. Cardiovascular diseases: Free radicals, particularly reactive oxygen species (ROS), play a significant role in the development of cardiovascular diseases. ROS can cause oxidative damage to lipids, proteins, and DNA in blood vessels, leading to inflammation, endothelial dysfunction, atherosclerosis (the buildup of plaque in arteries), and ultimately, heart disease and stroke.

c. Neurodegenerative disorders: Free radicals, oxidative stress, and mitochondrial dysfunction have been linked to the pathogenesis of neurodegenerative disorders such as Alzheimer's disease, Parkinson's disease, and amyotrophic lateral sclerosis (ALS). Oxidative damage to neurons, impaired mitochondrial function, protein misfolding, and inflammation contribute to the progressive degeneration of brain cells in these disorders.

d. Cancer development: Free radicals can cause DNA damage, leading to mutations and genomic instability, which are key events in the development of cancer. Oxidative stress and chronic inflammation induced by free radicals can promote the growth and survival of cancer cells. Additionally, free radicals can interfere with DNA repair mechanisms, further increasing the risk of malignant transformation.

The risk of diabetes and obesity-related complications.

Overall, the impact of free radicals on human health extends to various aspects, including aging, cardiovascular health, neurodegenerative disorders, cancer development, immune function, and metabolic disorders. Understanding the role of free radicals and oxidative stress in these conditions is crucial for developing strategies to mitigate their harmful effects and promote overall health.

5. Strategies To Minimize Free Radical Damage

a. Healthy lifestyle choices: Adopting a healthy lifestyle can help minimize free radical damage. This includes avoiding smoking and excessive alcohol consumption, as both of these habits contribute to the production of

b. Antioxidant-rich diet: Consuming a diet rich in antioxidants can help counteract the effects of free radicals. Include a variety of fruits, vegetables, whole grains, nuts, and seeds in your diet, as they are excellent sources of antioxidants such as vitamins C and E, beta-carotene, selenium, and flavonoids. Foods with vibrant colors, such as berries, leafy greens, and colorful vegetables, often contain high levels of antioxidants. Additionally, incorporating spices like turmeric and herbs like rosemary and oregano can provide additional antioxidant benefits.

c. Environmental protection and awareness: Minimizing exposure to environmental pollutants and toxins can reduce the formation of free radicals in the body. Be mindful of air quality, avoid exposure to secondhand smoke, and limit exposure to chemicals and toxins in household products, personal care items, and cleaning agents. Additionally, protect your skin from excessive sun exposure by using sunscreen and seeking shade, as UV radiation can generate free radicals in the skin.

Creating awareness about environmental protection, advocating for clean air and water, and supporting sustainable practices can also contribute to reducing the overall burden of free radicals in the environment and promoting a healthier environment for everyone.

It's important to note that while these strategies can help minimize free radical damage, completely eliminating free radicals is not possible or desirable, as they play important roles in normal physiological processes. The goal is to maintain a balance between the production and elimination of free radicals, promoting overall health and well-being.

6. Antioxidants And Their Role In Combating Free Radicals

a. Types of antioxidants:

1. **Endogenous antioxidants**: These are produced within the body and play a crucial role in neutralizing free radicals. Examples include enzymes such as superoxide dismutase (SOD), catalase, and glutathione peroxidase, as well as molecules like glutathione and coenzyme Q10.
2. **Exogenous antioxidants**: These are obtained from external sources such as food and supplements. They can complement the body's endogenous antioxidant defense system. Examples include vitamins (vitamin C, vitamin E), minerals (selenium, zinc), carotenoids (beta-carotene, lycopene), and flavonoids (quercetin, resveratrol).

b. Food sources rich in antioxidants: Many fruits, vegetables, nuts, seeds, and whole grains are excellent sources of antioxidants. Some specific examples include:

1. Berries (blueberries, strawberries, raspberries)
2. Citrus fruits (oranges, lemons, grapefruits)
3. Leafy green vegetables (spinach, kale, broccoli)
4. Colorful vegetables (carrots, bell peppers, tomatoes)
5. Nuts and seeds (almonds, walnuts, flaxseeds)
6. Herbs and spices (turmeric, cinnamon, ginger)

These foods contain a variety of antioxidants, including vitamins C and E, beta-carotene, selenium, and various phytochemicals.

c. Antioxidant supplements and their effectiveness: Antioxidant supplements are available in various forms, including multivitamins, individual antioxidant vitamins, and combination formulations. While they can be beneficial in certain cases, their effectiveness in combating free radicals and preventing disease remains a subject of debate. Some studies have shown potential benefits, while others have not demonstrated significant positive effects.

It is important to note that antioxidants work in synergy with other compounds found in whole foods, and the health benefits associated with a diet rich in fruits, vegetables, and other plant-based foods may not be fully replicated by antioxidant supplements alone. Additionally, high-dose antioxidant supplementation may have adverse effects in some cases.

It is recommended to obtain antioxidants primarily from a balanced diet that includes a variety of antioxidant-rich foods. However, for individuals with specific nutrient deficiencies or medical conditions, supplementation under the guidance of a healthcare professional may be appropriate.

Future Directions and Research Implications

a. Emerging therapies targeting free radicals: Ongoing research is focused on developing targeted therapies to mitigate the harmful effects of free radicals. This includes the development of novel antioxidant compounds and molecules that specifically target and neutralize free radicals. Researchers are also exploring the use of gene therapy and stem cell-based therapies to enhance the body's endogenous antioxidant defense mechanisms and restore redox balance.

b. Advanced antioxidant formulations: Scientists are working on advanced antioxidant formulations that can enhance the stability, bioavailability, and efficacy of antioxidants. This involves utilizing nanotechnology to encapsulate antioxidants, improving their delivery to target tissues, and protecting them from degradation. By optimizing antioxidant formulations, researchers aim to enhance their therapeutic potential in combating oxidative stress-related diseases.

c. Innovative approaches to minimize free radical damage: Researchers are exploring innovative approaches to minimize free radical damage beyond traditional

antioxidant supplementation. This includes harnessing the potential of natural compounds, such as polyphenols and phytochemicals, found in plants and herbs, which exhibit potent antioxidant properties. Additionally, strategies such as hormesis, which involves exposing cells or organisms to mild stressors to enhance their endogenous antioxidant defense mechanisms, are being investigated.

Furthermore, understanding the complex interplay between free radicals, inflammation, and other cellular processes is crucial. Research efforts are directed towards deciphering the signaling pathways and molecular mechanisms involved in oxidative stress-related diseases. This knowledge can pave the way for the development of targeted interventions and therapeutics to modulate oxidative stress and minimize free radical damage.

It is worth noting that research in this field is rapidly evolving, and future discoveries may unveil new strategies and approaches to minimize free radical damage and optimize overall health.

Conclusion:

a. Free radicals, such as reactive oxygen species (ROS) and reactive nitrogen species (RNS), have a significant impact on the human body. Their excessive accumulation leads to oxidative stress, causing damage to cellular components such as lipids, proteins, and DNA. This oxidative damage is implicated in various health conditions, including aging, cardiovascular diseases, neurodegenerative disorders, cancer, impaired immune function, and metabolic disorders.

b. Adopting preventive measures to minimize free radical damage is crucial for maintaining optimal health. Making healthy lifestyle choices, including avoiding smoking and excessive alcohol consumption, engaging in regular exercise, managing stress, and getting sufficient sleep, can help reduce the production of free radicals. Consuming an antioxidant-rich diet, protecting oneself from environmental toxins, and practicing sun protection also play significant roles in minimizing oxidative stress.

c. Further research is necessary to deepen our understanding of free radicals and oxidative stress-related diseases. Research efforts should focus on developing targeted therapies, advanced antioxidant formulations, and innovative approaches to combat free radical damage. Additionally, raising awareness about the impact of free radicals and the importance of preventive measures is vital in promoting a healthier lifestyle and reducing the burden of oxidative stress-related diseases in the population.

By recognizing the detrimental effects of free radicals, taking preventive measures, and supporting ongoing research, we can strive towards achieving a better understanding of oxidative stress and ultimately promote overall well-being and longevity.

References:-

1. Aruoma OI. Methodological consideration for characterization for potential antioxidant actions of bioactive components in plants foods. *Mutat Res.* 2003;532:9–20. [PubMed] [Google Scholar]
2. Mohammed AA, Ibrahim AA. Pathological roles of reactive oxygen species and their defence mechanism. *Saudi Pharm J.* 2004;12:1–18. [Google Scholar]
3. Bagchi K, Puri S. Free radicals and antioxidants in health and disease. *East Mediterranean Health Jr.* 1998;4:350–60. [Google Scholar]
4. Aruoma OI. Nutrition and health aspects of free radicals and antioxidants. *Food Chem Toxicol.* 1994;32:671–83. [PubMed] [Google Scholar]
5. Cheeseman KH, Slater TF. An introduction to free radicals chemistry. *Br Med Bull.* 1993;49:481–93. [PubMed] [Google Scholar]
6. Young IS, Woodside JV. Antioxidants in health and disease. *J Clin Pathol.* 2001;54:176–86. [PMC free article] [PubMed] [Google Scholar]
7. Liu T, Stern A, Roberts LJ. The isoprostanes: Novel prostanglandin-like products of the free radical catalyzed peroxidation of arachidonic acid. *J Biomed Sci.* 1999;6:226–35. [PubMed] [Google Scholar]
8. Ebadi M. *Antioxidants and free radicals in health and disease: An introduction to reactive oxygen species, oxidative injury, neuronal cell death and therapy in neurodegenerative diseases.* Arizona: Prominent Press; 2001. [Google Scholar]

****

Effective Tools and Techniques for Academic Libraries to Promote Teaching, Learning and Research in India

Dr. Raj Boria*

Introduction - The purpose of education is to provide knowledge and raise good c itizens. The library is a valuable repository of information and an important part of education. Libraries have a long history, from the first and closed libraries to today's hybrid, digital and virtual libraries using new technologies for provision of information through various services. Accordingly, librarians have also changed from storekeepers who were concerned with protection of books against theft, mutilation, and pilferage, to that of information officers, navigators, and cybrarians who find themselves in the vast ocean of reading material and are busy in satisfying their clients who want anytime and anywhere information. With the advent of computers, the nature of libraries has changed dramatically. Computers are being used in libraries to process, store, retrieve and disseminate information. As a result, the traditional concept of library is being redefined from a place to access books to one which houses the most advanced media including CD-ROM, Internet, and remote access to a wide range of resources. Libraries have now metamorphosed into digital institutions. Gone are the days when a library was judged by its quantitative resources. Moreover, electronic resources relevant to the professions are developing at an unprecedented pace. Academic libraries are considered to be the nerve centers of academic institutions, and must support teaching, research, and other academic programmers. In this regard UGC playing a very important role in promoting academic libraries of India, Such as -

1. Sets various standards for library education, library staff, library services, etc.
2. Set up an autonomous Inter-University Centre in 1991 called INFLIBNET. It is involved in modernizing university libraries in India and connects them through a nation-wide high-speed data network. It promotes automation of libraries, develops standards, creates union catalogues of serials, theses, books, monographs and non-book materials; provides access to bibliographic information sources; creates database of projects, institutions, specialists; provides training, etc. Almost all academic libraries, especially university libraries, are members of INFLIBNET. It has also developed library automation software called SOUL and has distributed the same free of cost to its member libraries.
3. To overcome the problem of financial crunch, UGC launched a major initiative called UGC-INFONET that provides high speed Internet connections so as to have electronic access to professional literature including research journals, abstracts, review publications, and databases from all areas in science and technology, as well as in social sciences and humanities.

Effective Tools and Techniques : We can enhance the academic information environment and usability in academic libraries using this tools and techniques: -

1. Book Carnival: Arrange book exhibition on different occasion (i.e. Dr.S.R. Ranganathan birth anniversary, National Library Week, World Copyright Day, and Independence Day etc.) view rare books, newly added books, or books of a particular subject available in the library. This will lead to an increase in awareness among patrons of the wealth of knowledge that the library possesses and books can be requested accordingly.

2. Library Period: The library should start a library hour for students, which is mandatory for all students by adding it to their daily class schedule. In library class, students should Visit the library and spend an hour there library for reading materials. By keeping an hour in their schedule, students spend an hour in the library that brings they are closer to reading, indirectly helping to increase students' reading habits.

3. User Awareness Programme: User Awareness is one of the best efforts to create awareness among students about library resources, services, proper reading habits and activities for maximum use of the library. Orientation helps and is useful for fresh students at the beginning of each academic year about the importance of the library and exposes students to various library services.

4. Display New Reading Material By placing a list of newly available books on the bulletin board, the reader will learn about the news reading material to request and obtain these new books.

5. Library Brochure: It is one of important resources for

*Asst. Professor, School of Studies in Library and Information Sc.,Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

specifying the library environment, services, and library student pool an information brochure may be provided at the time of admission. Information brochures contain information about library facilities like Xerox, internet etc., latest publications, latest library editions, list of CDs/DVDs, books banking facilities, library rules and regulations, electronic resources and online information services, etc.

6. Book Reviews: User should request to read the entire book and provide his review of the book. Eventually, the librarian should pick it up and put it on display bulletin board under the reviewer's name.

7. Readers Club: Library should give its facility to outside reader campus. Library also establish a reader club. This club maintains good relation between library & outside users. To provide service to the society, this facility is useful, in which membership facility for general users can be given for some nominal caution deposit.

8. Training to use E-Resources: Training programs should be conducted for students, teachers every year for two to three days according to their needs. In this program, how to find books in the library using the OPAC library, the use of the library consortia, free online journals (DOAJ), links to various useful websites etc. training should be provided so that the library use resources, services more efficiently and effectively.

9. Documentation Services : Selection of current awareness services in the form of a notice of content list of new arrivals journals and books, press clippings, research overviews, including abstracts and indexing services have been launched Library. Selective dissemination of information refers to the tools and sources used to inform the user about news resources on specific topics. DDS supplies copies of journal articles and book chapters owned by users to request and retrieve these items delivered electronically to their desktop. For many campus users, this is a free service.

10. Staff User Meet: Libraries can organize activities for staff users that involve working and sharing their ideas in connection with new information services and their requirements. This helps keep up with staff and users about the latest developments and trends in library principles and practices, thus bridging the gap between libraries employees and users organize various activities for this purpose, such as workshops, seminars and guest lectures.

11. Best Library user Award: This practice should encourage students/ staff to make maximum use of library resources & services for every academic year.

12. Carrier Guidance Cell: The user comes to the library to search for information about his professional or educational development. Today, the competition is at a high level, students must be aware of this situation. In this context, the librarian and the librarian should play an important role in solving their problems. The library should have a very rich collection of competitive exams. Library should invite a guest lecturer to guide users for a clear carrier.

13. Library Webpage: A library website provides a website for the library to market its services and tell its story to its community. An online catalog is included on most library websites. A library website or Universal Resource Locator (URL) facilitates single-window access to various web-based library services.

14. Online Public Access Catalogue (OPAC): It is a computerized form of the library catalog for accessing materials in the library. This is an online database of materials held by a library or group of libraries. It is a computerized library catalog available to the public. Most OPACs are accessible via the Internet to users from all over the world.

15. Electronic Mail (E-mail): This medium can also be used to send and receive mail. This is commonly and widely used with internet devices. Email is very useful for sending messages to and from remote areas with an extended network. Furthermore, it is also useful in various aspects of the library environment. It can therefore be concluded that e-mail can play a significant role in information dissemination services.

16. Institutional Repository: An institutional repository is an online archive for the collection, preservation and dissemination of digital copies of an institution's intellectual output. The library should develop an institutional repository of question papers, syllabi, research papers, notes, carrier guidelines, etc., which can be made available to the user community.

17. Online Full Text Service: A full-text database is a compilation of documents or other information in database form in which the complete text of each referenced document is available for online viewing, printing, or downloading.

18. Online Readers Advisory Services: Libraries are implementing web-based versions of reader advisory services and reference services. It helps find the right information/reading material for the right person at the right time and provides the best information that matches their needs, interests and reading level.

19. Inter Library Loan (ILL): MVS is a service in which a user of one library can borrow books or receive photocopies of documents owned by another library. The user places a request with their local library, which acts as an intermediary to identify the owners of the requested item, make the request, receive the item, make it available to the user, and arrange for its return.

20. Learn and Earn Scheme :- Internships, New books processing, Stock Verification.

21. Feedback register: It is very useful register for library activities. It covers library collection, library services etc, the library users can write their opinions in this register.

22. Library Help Desk: - To Guide the users about Library resources.

23. Library Security: - CCTV camera, RFID technology at entry gate, separate property counter.

Conclusion : These tools and techniques supports in

improving quality of library services. It also, bridge the gap between library collection & user community for maximum utilization of the resources. The technology based services provides up-to-date information to user community and creates its own image in the mind of students, faculty & society.

References:-

1. Kulkarni, S.A. Best Practices in College Libraries. National Seminar on Library and Information Services in Changing Era, 22-23 January 2009. P. 273-281.
2. Trophy, Peter**.** The Library in the Twenty-First Century: New Services for the Information Age. London, Facet, 2001.
3. NAAC- Best practices in Library and Information Services, case presentations, Best practices series-NAAC-2006.
4. Gurav Shivajirao D. (Jan 2015) : Best Practices developed and adopted in Academic Libraries, Proceedings of UGC Sponsored National conference on Challenges in 21st Century Librarianship, Shirur (M.S.) : Chandmal Tarachand Bora College ; 9th – 10th January 2015, p.110.
5. Kadam Santosh D. & Veer Dharmaraj K. (2013) : Best Practices in Web 2.0

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

Enhancing Knowledge Through Training of Women for Protected Cultivation

Dr. Govind Prakash Acharya*

Introduction - The technologies generated must reach to the farmers efficiently. In case these technologies are not disseminated properly among farmers, the whole result cannot be achieved. Transfer of technology can be done by the institutes, which generate these technologies. There must be proper infra structure and availability of funds with them and it must also be mandate for them. Apart from these, State departments of Horticulture in different States have basic responsibility of disseminating these technologies to the farmers. They have grass root extension responsibility and also to implement the different horticulture schemes floated by Ceutral government and state government. Their field staff and officers must be well acquainted with the recent technologies developed in horticultural crops. For that purpose they must interact through trainings and visits.

Indian Council of Agricultural Research has developed Krishi Vigyan Kendra in all the districts of country. It is an innovative science based institution established and designed for imparting vocational trainings to farmers, farm women and rural youth. It also imparts in service training to field functionaries and conduct demonstrations and latest farm technologies and on farm research/ farming system research. Front line demonstrations (FLD) in various horticultural crops are organized by KVK to generate production data and feed back system. KVK also perform other extension activities such as holding field days, farmer's fare, exhibition, visit to farmers field, farmers visit to KVK, publication/distribution of literature etc. It establishes linkages with line departments and other agencies engaged in research and agricultural development of the district. Training may be vocational, off campus, group discussion, training for school dropouts and rural youths and training for field functionaries. Training is important mandate for improving technical knowledge of the farmers.

Protected Cultivation

Area under protected cultivation in different countries are given in Table A

Table A: Area under protected cultivation

S.	Countries	Area (ha.)
1.	China	3,80,000
2.	Japan	54,000
3.	Holland	10,500
4.	Italy	67,000
5.	South Korea	55,000
6.	Israel	6,700
7.	USA	10,000
8.	Turkey	54,000
9.	U.K.	1,727
10.	France	11,500
11.	India	1,000

In Maharashtra by 2008, there are more than greenhouse complexes comprising 2 complexes each of 100 acres, 35 complexes having area 25 to 50 acres each and 50 complexes having 10 to 25 acres each.

Table B Horticultural crops for greenhouse cultivation

Vegetables	Vegetables	Ornamentals	Fruits
Tomato	Cucumber	Roses	Strawberry
Capsicum	Melons	Carnation	Grape
Squash	Cabbage	Chyrsanthemum	Citrus
Beans	Okra	Gerbera	Banana
Egg Plant	Peas	Poinsettias	-
Onion	Chilli	Potted Plants	-
Spinach	Turnip	Bedding Plants	-
Radish	Lettuce	Orchids	-
		Foliage Plants	-

Methodology: The study was conducted at Krishi Vigyan Kendra Ajmer. The sample for this study consisted of 30 women who had participated in the training organised in the year 2010-11. Pre and post test experimenal design was used to study gain in knowledge by the trainees in different aspects of fruit, vegetables and ornamental gardening. For the purpose of data collection a schedule was developed with the help of experts of Department of Horticulture, Dayanand College Ajmer. Questionnaire technique was used for collection of required information as all of them were graduate.

The maximum possible score for the knowledge test

*Lecturer (Agricultural-Extension) Govt. College, Uniara, Dist. Tonk (Raj.) INDIA

was 34. The responses of the respondents were checked with the recommendations of the scientists. The responses were converted into mean per cent score (MPS) for the purpose of analysis and comparison. Paired 't' test was used to analyse data statistically.

Method Of Drawing Participants For The Course: A press release covering all the details about the training viz. time, duration, content of the course, course fee etc. was given for publication in the local news papers. The criterion for selection of participants was on "first come first" basis. For this more than 60 applications were received for consideration from different areas of Ajmer District of which 30 women were identified for the training programme on the basis of the availability of transportation, land and other required resources for kitchen gardening and ornamental plantation with them.

Different aspects with maximum score is given below:

S.	Aspects	Max. Score
1.	Training and pruning of english roses & their planting distance	4
2.	Name of winter vegetables and time of sowing	10
3.	Name of Fruit plants	4
4.	Precautions while raising Nursery plants	2
5.	Pest management in fruit, vegetable and ornamental plants	4
6.	Name of ornamental plants for interior decoration	4
7.	Identification of garden tools,equipments	3
8.	Techniques of raising bonsai	1
9.	Propagation methods use	2
	Total	34

Result And Discussion: Knowledge input forms the foundation of any training programme which needs to be measured in terms of overall change in knowledge level. In the present study knowledge of the trainees was judged before and after their exposure to the training programme in order to know the enhancement in knowledge due to their participation and exposure in the training courses.

Table1 : Overall gain in knowledge by the trainees in Green House Protected Horticulture:

S.	Particulars	MPS	't' value
1.	Before exposure knowledge	25.73	
2.	After exposure knowledge	48.33	15.67**
3.	Gain	22.60	

** Significant at 1 percent level

Date in table clearly reveal the improvement in knowledge of the trainees as their mean per cent score before exposure increased from 25.73 to 48.33 with the gain of 22.60.

Table2 : Knowledge gain in different aspects of Green House Protected Horticulture by the trainees :

S.	Aspects	Mean per cent Score (MPS)			
		Before exposure	After exposure	Gain	t value
1.	Training and pruning of english roses & their planting distance	50.00	87.50	37.5	6.25**
2.	Name of winter flowers, vegetable time of sowing	11.33	22.00	10.67	6.01**
3.	Name of bulbus plants	4.16	23.33	19.17	5.95**
4.	Precautions while raising Nursery plants	25.83	64.16	38.33	8.98**
5.	Pest management in fruit, vegetable and ornamental plants	13.33	35.83	22.50	6.40**
6.	Name of ornamental plants for interior decoration	39.16	65.00	25.84	4.68**
7.	Identification of garden tools & equipments	70.00	91.00	21.00	4.19**
8.	Techniques of raising bonsai	50.00	91.66	41.66	4.65**
9.	Propagation methods use	11.66	40.00	28.34	5.00**

** Significant at 1 per cent level.

Appraisal of Table-2 highlights that there was significant difference in the beofe and after exposure score of the participants in all the aspects of Green House proetected Horticulture as the calculated 't value was found to be significant at .01 per cent level. The aspect-wise gain in knowledge by the trainees indicates that they gained maximum knowledge in aspect technique of raising bonsai (41.66 MPS). This might be due to the reason that the trainees were very much interested in this aspect and they actively participated in learning bonsai technique during the practical sessions of the training programme Respondents also gained good knowledge in the aspects like precaution while raising Nursery plants and training and pruning of english roses (37.5 & 38.33 MPS respectively).

Training On Ornamental Gardening: In rest of the aspects, the gain in knowledge ranged from 20.00 to 28.00 per cent. Least gain in knowledge of the trainees was observed in the component name of winter flowers, vegetables and their time of sowing (10.67 MPS). This was because the reason that it was very difficult to remember the names of the flowers in a single exposure. Thus, the after exposure score of the trainees clearly depicts that the training was beneficial to acquire knowledge. The informal discussion with the participants during the concluding session also indicated that they acquired practical knowledge and skill in different aspects of Green House Protected Horticulture and were confident enough to perform these skills back at home. The results are in line with the study conducted by Verma et al (1989) who

concluded that there was significant gain in knowledge by the farm women in various Home Science aspects as the result of their participation in the training programme.

In the concluding session of the training programme, the trainees' opinion was sought regarding the overall effectiveness of the programme. Majority of them were satisfied with the course content. However, they were not satisfied with the duration of the training programme and suggested to extend it up to atleast 10 days to get better opportunity to practice the things by themselves during the training session. Since the entire training programme was practical oriented, the trainees opined that the teaching methods used during the training course were highly effective. The participants were also satisfied with the physical arrangements made during the training programme and further expressed that such courses should be organized regularly on different apsects to cover many more farm women in such type of training programmes.

Conclusion: Based on the results it could be concluded that the training was useful for the trainees in terms of acquisition of new knowledge and enhancement in the existing knowledge of the trainees in Green House Protected Horticulture.

References:-

1. Verma, T. Jain, V. Devi, S. (1989) "A study on gain in knowledge & change in attitude through training on Improved Home making tasks. Indian Journal of Extn. Edu. Vol XXV Nos 1 & 2, pp-73-76.
2. Soni, J. S. and Kherda, RL (1980) A Study of Dairy adoption behaviour of "Small and marginal farmers in Punjab". Indian Journal of Extension Education. 13 (3&4): 56-58.
3. Wasnie; S.M. (1993). "Farmers Knowledge and extent of Adoption of Sugarcane Production technology". Maharashtra J. of Exten. Edu. 12:224.
4. Training and Extensions of women in Agriculture-TEWA-Training of Trainees. An overview 1995, Department of Agriculture Govt. of Orissa.
5. Action Plan 1995-96 of Madhya Pradesh Women in Agriculture Project, Govt of Madhya Pradesh.
6. Amar Singh and Suraj Singh (1988). Effectiveness of Training on oil Seed technology, Maha. Jour. of Ext. Edu - VII: 159
7. Lynton P.R. 2 Pareek U. (1973) " Training for Development" D. B. Taroporevela Sons & Co Pvt. Ltd. Bombay
8. Simha R.K. (1961) "The promise of TRYSEM" Kurukshetra, June

****

Transboundary Pollution

Dr. Shikha Yadav*

Abstract - Transboundary pollution is defined legally as pollution that originates in one country but can cause damage in another country's environment, by crossing borders through pathways like water or air. The main causes are emissions from transport and energy usage of sulphur dioxide (SO2), nitrogen oxides (NOx), volatile organic compounds (VOCs) and various toxic materials such as heavy metals and persistent organic pollutants (POPs).

Introduction - Transboundary Pollution is the pollution that originates in one country but is able to cause damage in another country's environment, by crossing borders through pathways like water or air. Pollution can be transported across hundreds and even thousands of kilometers. The incredible distances that pollution can spread means that it is not contained within the boundaries of any single nation. This is why it is called 'Transboundary Pollution'. One of the problems with transboundary pollution is that can carry pollution away from a heavy emitter and deposit it onto a nation whose emissions are relatively low. Due to the fact that 'All things connect', the heavy pollution that is evident in the developed world also becomes evident in remote areas.

Impact of Transboundary Pollution : It is universally acknowledged that pollution knows no national geographical boundaries, and excessive pollution generated in a country is likely to have serious adverse implications for the rest of the world.' Acceptance of this reality has led to several international conferences aimed at multilateral agreements to combat environmental degradation.

It is argued that cross-border pollution is an important reason for the occurrence of international environmental agreements. Another reason is concern for the so-called" race to the bottom" in international environmental standards, i.e ., in a non-cooperative environment, countries may resort to lax environmental standards in order to pursue strategic economic objectives. For these reasons, effective environmental policies pursued by a country can be undermined by the lack of such policies in other countries. For example, Sternerand Kohlin (2003) found that most European countries have higher levels of pollution restrictions compared to the US. Thus, there is a fear that European efforts at pollution control will not have the desired effects in the absence of similar efforts in the US.

The use of the atmosphere as a dump for pollutants makes the environ-mental problem transnational. Emitting countries bear only a fraction of the costs in the form of harmful deposition, because considerable amounts of deposition can be transported by winds to other nearby countries. A regional externality is thus created, and the conventional prediction is obtained that noncooperation between countries on environmental protection results in excessively high emissions evaluated from their collective viewpoint. The reason is that in balancing the marginal costs of abatement against the marginal damage from deposition, each country takes into account the damage to its own environment without any regard to the consequences for the others.[1]

Transboundary pollution is the pollution that originates in one country but is able to cause damage in another country's environment, by crossing borders through pathways like water or air. Pollution can be transported across hundreds and even thousands of kilometers. The incredible distances that pollution can spread means that it is not contained within the boundaries of any single nation. This is why it is called 'Transboundary Pollution'. One of the problems with transboundary pollution is that can carry pollution away from a heavy emitter and deposit it onto a nation whose emissions are relatively low. Another problem with transboundary pollution relates to the quote above. Due to the fact that 'All things connect', the heavy pollution that is evident in the developed world also becomes evident in remote areas.[2]

When one examines existing environmental regimes more closely, however, a paradox emerges. Notwithstanding the broad general trend toward centralized regulatory authority in environmental law, and the widespread invocation of transboundary pollution as a justification for that trend, little meaningful regulation of transboundary pollution actually exists.

The customary international law of transboundary pollution, for example, is based on a very small number of inconclusive adjudications and a mountain of official declarations and unofficial commentary seeking to make something out of them. When one turns to international treaties, the situation is only slightly better. Although there are over 200 international agreements dealing with

*Assistant Professor (Chemistry) R.S. Government Degree College, Shivrajpur, Kanpur (U.P.) INDIA

environmental matters, only a few deal specifically with transboundary pollution. And with isolated exceptions, the transboundary treaties that do exist are largely devoted to encouraging information- sharing and consultation, rather than establishing liability regimes or prescribing substantive limitations on polluting activity.[3]

The Basel Convention on the Control of Transboundary Movements of Hazardous Wastes and their Disposal is the most comprehensive global environmental agreement on hazardous wastes and other wastes. Among other matters, the convention regulates transboundary movements (TBM) of hazardous wastes and other wastes. Parties to the Basel Convention have the overall obligation to ensure that such TBM are minimized and that any TBM is conducted in a manner which will protect human health and the environment. In addition to these general obligations, the Convention provides that TBM can only take place if certain conditions are met and if they are in accordance with certain procedures. It is the Competent Authorities (CA) designated by Parties that assess whether the Basel Convention requirements for TBM are met.

Conditions For Transboundary Movements : Under the Basel Convention, a TBM means any movement of hazardous wastes or other wastes:

1. From an area under the national jurisdiction of one State
2. To or through an area under the national jurisdiction of another State, or to or though an area not under the national jurisdiction of any State,provided at least two States are involved in the movement.

Parties are under an obligation to take the appropriate measures to ensure that TBM of hazardous wastes and other wastes are only allowed if one of the three following conditions is met:

1. The State of export does not have the technical capacity and the necessary facilities, capacity or suitable disposal sites in order to dispose of the wastes in question in an “environmentally sound manner”; or
2. The wastes in question are required as raw material for recycling or recovery industries in the State of import; or
3. The TBM in question is in accordance with other criteria decided by the Parties (such criteria will normally be found in the decisions adopted by the Conference of the Parties).

In all cases, the Convention requires that the standard of “environmentally sound management” (ESM) of hazardous wastes or other wastes is met.

1. A Party must not allow exports to a State when it has reason to believe that the wastes in question will not be managed in an environmentally sound manner. For example, if the proposed destination does not have the appropriate technology to recycle electronic equipment in an environmentally sound manner, the State of export must not allow a shipment described as used computers for recycling to be shipped there.
2. Parties may decide to limit or ban the export of hazardous wastes or other wastes to other Parties. At its third meeting in 1995, the Conference of the Parties decided to amend the Convention by inserting a new Article 4A commonly referred to as the Ban amendment that prohibits certain TBM under specific conditions.
3. Parties are prohibited from exporting wastes falling within the scope of the Convention for disposal within the area south of 60° South latitude, whether or not such wastes are subject to a TBM.
4. A TBM should not occur with a non-Party. Parties shall not permit hazardous and other wastes to be exported to a non-Party or to be imported from a non-Party, unless an agreement or arrangement regarding TBM is in place that provides for the ESM requirement to apply.
5. TBM can take place through transit States that are not Parties to the Convention. However in that case, some elements of the notification procedure apply mutatis mutandis to such TBM: the generator, exporter or State of export is required to notify the competent authority of the State of transit of any proposed TBM.

In addition, the Basel Convention requires that only persons authorized or allowed to transport or dispose of wastes undertake such operations, and that wastes subject to a TBM be packaged, labelled and transported in conformity with generally accepted and recognized international rules and standards.

The use of the atmosphere as a dump for pollutants makes the environmental problem transnational. Emitting countries bear only a fraction of the costs in the form of harmful deposition, because considerable amounts of deposition can be transported by winds to other nearby countries. A regional externality is thus created, and the conventional prediction is obtained that noncooperation between countries on environmental protection results in excessively high emissions evaluated from their collective viewpoint. The reason is that in balancing the marginal costs of abatement against the marginal damage from deposition, each country takes into account the damage to its own environment without any regard to the consequences for the others.

References:-

Primary Sources:-

1. The Basel Convention on the Control of Transboundary Movements of Hazardous Wastes and Their Disposal, 1989.
2. Convention on the Protection and Use of Transboundary Watercourses and International Lakes, 1992.
3. Protocol on the Prevention of Pollution of the Mediterranean Sea by Transboundary Movements of Hazardous Wastes and their Disposal, 1996.
4. Convention to Ban the Importation into Forum Island Countries of Hazardous and Radioactive Wastes and

to Control the Transboundary Movement and Management of Hazardous Wastes within the South Pacific Region, 2001.

5. Trail Smelter Arbitration

Secondary Sources:-

1. P Leelakrishnan *Environmental Law Case Book* (2nd edn Lexis Nexis 2010).
2. Shyam Divan Armin Rosencranz *Environmental Law and Policy in India* (2nd edn Oxford University Press Delhi 2012).
3. Owen Mcintyre *Environmental Protection of international Watercourses under International Law* (Ashgate Cornwall 2007).
4. R. Anita Rao 'Transboundary Movement in Genetically Modified Organisms with Special Emphasis on Categena Protocol' Nalsar Law Review Vol.6 No.1 2011.
5. Transboundary Movements of Hazardous Waste: Lesson from Uncovered Cases Kojima and Michida ed., Economic Integration and Recycling in Asia : An Interim Report Chosakenkyu Hokokusho, Institute of Developing Economics, 2011.
6. Veijo Kaitala, Matti Pohjola and Olli Tahvonen 'An Economic Analysis of Transboundary Air Pollution between Finland and the Former Soviet Union' The Scandinavian Journal of Economics, Vol. 94, No. 3 (Sep., 1992), pp. 409-424.
7. UN WATER Transboundary Waters: Sharing Benefits, Sharing Responsibilities 2008.
8. Juha I Uitto & Alfred M Duda Management of Transboundary water resources: lessons from international cooperation for conflict prevention The Geographical Journal Vol. 168, No. 4, December 2002, pp. 365- 378.
9. Mark S. Winfield The Transboundary Movement of Hazardous Wastes In North America: A Canadian Perspective Canadian Institute for Environmental Law and Policy February 1998.
10. Tibor Faragó & Zsuzsanna Kocsis Kupper 'Accidental Transboundary Water Pollution: Principles and Provisions of the Multilateral Legal Instruments' WWF Hungary Publication Series No. 16 (E), June 2000 pp.6-66.

Footnotes:-

1. Tibor Faragó & Zsuzsanna Kocsis Kupper 'Accidental Transboundary Water Pollution: Principles and Provisions of the Multilateral Legal Instruments' WWF Hungary Publication Series No. 16 (E), June 2000 pp.7-10.
2. Juha I Uitto & Alfred M Duda Management of Transboundary water resources: lessons from international cooperation for conflict prevention The Geographical Journal Vol. 168, No. 4, December 2002, pp. 371- 375.
3. Thomas W. Merrill 'Golden Rules for Transboundary Pollution' (Duke Law Journal Vol. 46 March 1997 Number 5) pp. 931- 1019.

****

Renewable Energy: A Brief Overview

Ashok Kumar Verma*

Abstract - A renewable resource (also known as a flow resource) is a natural resource which will replenish to replace the portion depleted by usage and consumption, either through natural reproduction or other recurring processes in a finite amount of time in a human time scale. When the recovery rate of resources is unlikely to ever exceed a human time scale, these are called perpetual resources.Renewable resources are a part of Earth's natural environment and the largest components of its ecosphere. A positive life-cycle assessment is a key indicator of a resource's sustainability.
Keywords-Renewable, resource, natural, Earth, environment, sustainability.

Introduction

Water resources: Water can be considered a renewable material when carefully controlled usage and temperature, treatment, and release are followed. If not, it would become a non-renewable resource at that location. For example, as groundwater is usually removed from an aquifer at a rate much greater than its very slow natural recharge, it is a considered non-renewable resource. Removal of water from the pore spaces in aquifers may cause permanent compaction (subsidence) that cannot be renewed. 97.5% of the water on the Earth is salt water, and 3% is fresh water; slightly over two thirds of this is frozen in glaciers and polar ice caps.[1] The remaining unfrozen freshwater is found mainly as groundwater, with only a small fraction (0.008%) present above ground or in the air.[2]

Water pollution is one of the main concerns regarding water resources. It is estimated that 22% of worldwide water is used in industry.[3] Major industrial users include hydroelectric dams, thermoelectric power plants (which use water for cooling), ore and oil refineries (which use water in chemical processes) and manufacturing plants (which use water as a solvent),it is also used for dumping garbage.

Non agricultural food: Food is any substance consumed to provide nutritional support for the body.[4] Most food has its origin in renewable resources. Food is obtained directly from plants and animals.

Sustainable agriculture: The phrase sustainable agriculture was coined by Australian agricultural scientist Gordon McClymont.[5] It has been defined as "an integrated system of plant and animal production practices having a site-specific application that will last over the long term".[6] Expansion of agricultural land reduces biodiversity and contributes to deforestation. The Food and Agriculture Organization of the United Nations estimates that in coming decades, cropland will continue to be lost to industrial and urban development, along with reclamation of wetlands, and conversion of forest to cultivation, resulting in the loss of biodiversity and increased soil erosion.[7]

Although air and sunlight are available everywhere on Earth, crops also depend on soil nutrients and the availability of water. Monoculture is a method of growing only one crop at a time in a given field, which can damage land and cause it to become either unusable or suffer from reduced yields. Monoculture can also cause the build-up of pathogens and pests that target one specific species. The Great Irish Famine (1845–1849) is a well-known example of the dangers of monoculture.

Crop rotation and long-term crop rotations confer the replenishment of nitrogen through the use of green manure in sequence with cereals and other crops, and can improve soil structure and fertility by alternating deep-rooted and shallow-rooted plants. Other methods to combat lost soil nutrients are returning to natural cycles that annually flood cultivated lands (returning lost nutrients indefinitely) such as the Flooding of the Nile, the long-term use of biochar, and use of crop and livestock landraces that are adapted to less than ideal conditions such as pests, drought, or lack of nutrients.

Agricultural practices are one of the single greatest contributor to the global increase in soil erosion rates.[8] It is estimated that "more than a thousand million tonnes of southern Africa's soil are eroded every year. Experts predict that crop yields will be halved within thirty to fifty years if erosion continues at present rates."[9] The Dust Bowl phenomenon in the 1930s was caused by severe drought combined with farming methods that did not include crop rotation, fallow fields, cover crops, soil terracing and wind-breaking trees to prevent wind erosion.[10]

The tillage of agricultural lands is one of the primary contributing factors to erosion, due to mechanised agricultural equipment that allows for deep plowing, which severely increases the amount of soil that is available for transport by water erosion.[11][12] The phenomenon called peak soil describes how large-scale factory farming

*Department of Physics, Govt. College, Dholpur (Raj.) INDIA

techniques are affecting humanity's ability to grow food in the future. Without efforts to improve soil management practices, the availability of arable soil may become increasingly problematic.[13]

Methods to combat erosion include no-till farming, using a keyline design, growing wind breaks to hold the soil, and widespread use of compost. Fertilizers and pesticides can also have an effect of soil erosion,which can contribute to soil salinity and prevent other species from growing. Phosphate is a primary component in the chemical fertiliser applied most commonly in modern agricultural production. However, scientists estimate that rock phosphate reserves will be depleted in 50–100 years and that Peak Phosphate will occur in about 2030.[14]

Industrial processing and logistics also have an effect on agriculture's sustainability. The way and locations crops are sold requires energy for transportation, as well as the energy cost for materials, labour, and transport. Food sold at a local location, such a farmers' market, have reduced energy overheads.

Air: Air is a renewable resource. All living organisms need oxygen, nitrogen (directly or indirectly), carbon (directly or indirectly) and many other gases in small quantities for their survival.

Non-food resources: An important renewable resource is wood provided by means of forestry, which has been used for construction, housing and firewood since ancient times. [15][16][17] Plants provide the main sources for renewable resources, the main distinction is between energy crops and non-food crops. A large variety of lubricants, industrially used vegetable oils, textiles and fibre made e.g. of cotton, copra or hemp, paper derived from wood, rags or grasses, bioplastic are based on plant renewable resources. A large variety of chemical based products like latex, ethanol, resin, sugar and starch can be provided with plant renewables. Animal based renewables include fur, leather, technical fat and lubricants and further derived products, as e.g. animal glue, tendons, casings or in historical times ambra and baleen provided by whaling. With regard to pharmacy ingredients and legal and illegal drugs, plants are important sources, however e.g. venom of snakes, frogs and insects has been a valuable renewable source of pharmacological ingredients. Before GMO production set in, insulin and important hormones were based on animal sources. Feathers, an important byproduct of poultry farming for food, is still being used as filler and as base for keratin in general. Same applies for the chitin produced in farming Crustaceans which may be used as base of chitosan. The most important part of the human body used for non-medical purposes is human hair as for artificial hair integrations, which is being traded worldwide.

Historical role: Historically, renewable resources like firewood, latex, guano, charcoal, wood ash, plant colors as indigo, and whale products have been crucial for human needs but failed to supply demand in the beginning of the industrial era. Early modern times faced large problems with overuse of renewable resources as in deforestation, overgrazing or overfishing.[18]

In addition to fresh meat and milk, which as food items are not the topic of this section, livestock farmers and artisans used further animal ingredients as tendons, horn, bones, bladders. Complex technical constructions as the composite bow were based on combination of animal and plant based materials. The current distribution conflict between biofuel and food production is being described as Food vs. fuel. Conflicts between food needs and usage, as supposed by fief obligations were in so far common in historical times as well.However, a significant percentage of (middle European) farmers yields went into livestock, which provides as well organic fertiliser.Oxen and horses were important for transportation purposes, drove engines as e.g. in treadmills.

Other regions solved the transportation problem with terracing, urban and garden agriculture. Further conflicts as between forestry and herding, or (sheep) herders and cattle farmers led to various solutions. Some confined wool production and sheep to large state and nobility domains or outsourced to professional shepherds with larger wandering herds.

The British Agricultural Revolution was mainly based on a new system of crop rotation, the four-field rotation. British agriculturist Charles Townshend recognised the invention in Dutch Waasland and popularised it in the 18th century UK, George Washington Carver in the USA. The system used wheat, turnips and barley and introduced as well clover. Clover is able to fix nitrogen from air, a practically non exhaustive renewable resource, into fertilizing compounds to the soil and allowed to increase yields by large. Farmers opened up a fodder crop and grazing crop. Thus livestock could to be bred year-round and winter culling was avoided. The amount of manure rose and allowed more crops but to refrain from wood pasture.

Early modern times and the 19th century saw the previous resource base partially replaced respectively supplemented by large scale chemical synthesis and by the use of fossil and mineral resources respectively. Besides the still central role of wood, there is a sort of renaissance of renewable products based on modern agriculture, genetic research and extraction technology. Besides fears about an upcoming global shortage of fossil fuels, local shortages due to boycotts, war and blockades or just transportation problems in remote regions have contributed to different methods of replacing or substituting fossil resources based on renewables.

Challenges

Renewables used for self sufficiency: The success of the German chemical industry till World War I was based on the replacement of colonial products. The predecessors of IG Farben dominated the world market for synthetic dyes at the beginning of the 20th century and had an important role in artificial pharmaceuticals, photographic

film, agricultural chemicals and electrochemicals.

However the former Plant breeding research institutes took a different approach. After the loss of the German colonial empire, important players in the field as Erwin Baur and Konrad Meyer switched to using local crops as base for economic autarky. Meyer as a key agricultural scientist and spatial planner of the Nazi era managed and lead Deutsche Forschungsgemeinschaft resources and focused about a third of the complete research grants in Nazi Germany on agricultural and genetic research and especially on resources needed in case of a further German war effort. A wide array of agrarian research institutes still existing today and having importance in the field was founded or enlarged in the time.

There were some major failures as trying to e.g. grow frost resistant olive species, but some success in the case of hemp, flax, rapeseed, which are still of current importance. During World War 2, German scientists tried to use Russian Taraxacum (dandelion) species to manufacture natural rubber. Rubber dandelions are still of interest, as scientists in the Fraunhofer Institute for Molecular Biology and Applied Ecology (IME) announced 2013 to have developed a cultivar that is suitable for commercial production of natural rubber.

Legal situation and subsidies: Several legal and economic means have been used to enhance the market share of renewables. The UK uses Non-Fossil Fuel Obligations (NFFO), a collection of orders requiring the electricity distribution network operators in England and Wales to purchase electricity from the nuclear power and renewable energy sectors. Similar mechanisms operate in Scotland (the Scottish Renewable Orders under the Scottish Renewables Obligation) and Northern Ireland (the Northern Ireland Non-Fossil Fuel Obligation). In the US, Renewable Energy Certificates (RECs), use a similar approach. German Energiewende is using feed-in tariffs. An unexpected outcome of the subsidies was the quick increase of pellet byfiring in conventional fossil fuel plants (compare Tilbury power stations) and cement works, making wood respectively biomass accounting for about half of Europe's renewable-energy consumption.

Bioplastics: The production and use of bioplastics is generally regarded as a more sustainable activity when compared to plastic production from petroleum (petroplastic); however, manufacturing of bioplastic materials is often still reliant upon petroleum as an energy and materials source. Because of the fragmentation in the market and ambiguous definitions it is difficult to describe the total market size for bioplastics, but the global production capacity is estimated at 327,000 tonnes.In contrast, global consumption of all flexible packaging is estimated at 12.3 million tonnes.

Bioasphalt: Bioasphalt is an asphalt alternative made from non-petroleum based renewable resources. Manufacturing sources of bioasphalt include sugar, molasses and rice, corn and potato starches, and vegetable oil based waste. Asphalt made with vegetable oil based binders was patented by Colas SA in France in 2004.

Renewable energy: Renewable energy refers to the provision of energy via renewable resources which are naturally replenished as fast as they are being used. Examples are sunlight, wind, biomass, rain, tides, waves and geothermal heat. Renewable energy may replace conventional fuels in four distinct markets, namely electricity generation, hot water/space heating, motor fuels, and rural (off-grid) energy services.Manufacturing of renewable energy devices uses non-renewable resources such as mined metals and land surface.

Biomass: Biomass is referring to biological material from living, or recently living organisms, most often referring to plants or plant-derived materials.

Sustainable harvesting and use of renewable resources (i.e., maintaining a positive renewal rate) can reduce air pollution, soil contamination, habitat destruction and land degradation.[49] Biomass energy is derived from six distinct energy sources: garbage, wood, plants, waste, landfill gases, and alcohol fuels. Historically, humans have harnessed biomass-derived energy since the advent of burning wood to make fire, and wood remains the largest biomass energy source today.

Biofuel: A biofuel is a type of fuel whose energy is derived from biological carbon fixation. Biofuels include fuels derived from biomass conversion, as well as solid biomass, liquid fuels and various biogases.

Bioethanol is an alcohol made by fermentation, mostly from carbohydrates produced in sugar or starch crops such as corn, sugarcane or switchgrass.

Biodiesel is made from vegetable oils and animal fats. Biodiesel is produced from oils or fats using transesterification and is the most common biofuel in Europe.

Biogas is methane produced by the process of anaerobic digestion of organic material by anaerobes.[57] etc. is also a renewable source of energy.

Biogas: Biogas typically refers to a mixture of gases produced by the breakdown of organic matter in the absence of oxygen. Biogas is produced by anaerobic digestion with anaerobic bacteria or fermentation of biodegradable materials such as manure, sewage, municipal waste, green waste, plant material, and crops. It is primarily methane (CH_4) and carbon dioxide (CO_2) and may have small amounts of hydrogen sulphide (H_2S), moisture and siloxanes.

Natural fibre: Natural fibres are a class of hair-like materials that are continuous filaments or are in discrete elongated pieces, similar to pieces of thread. They can be used as a component of composite materials. They can also be matted into sheets to make products such as paper or felt. Fibres are of two types: natural fibre which consists of animal and plant fibres, and man madefibre which consists of synthetic fibres and regenerated fibres.

Deforestation: Besides their role as a resource for fuel and

building material, trees protect the environment by absorbing carbon dioxide and by creating oxygen. The destruction of rain forests is one of the critical causes of climate change. Deforestation causes carbon dioxide to linger in the atmosphere. As carbon dioxide accrues, it produces a layer in the atmosphere that traps radiation from the sun. The radiation converts to heat which causes global warming, which is better known as the greenhouse effect.

Endangered species: Some renewable resources, species and organisms are facing a very high risk of extinction caused by growing human population and over-consumption. It has been estimated that over 40% of all living species on Earth are at risk of going extinct. Many nations have laws to protect hunted species and to restrict the practice of hunting. Other conservation methods include restricting land development or creating preserves. The IUCN Red List of Threatened Species is the best-known worldwide conservation status listing and ranking system. Internationally, 199 countries have signed an accord agreeing to create Biodiversity Action Plans to protect endangered and other threatened species.

Discussion & Conclusion: Renewable energy is energy from renewable resources that are naturally replenished on a human timescale. Renewable resources include sunlight, wind, the movement of water, and geothermal heat. Although most renewable energy sources are sustainable, some are not. For example, some biomass sources are considered unsustainable at current rates of exploitation. Renewable energy is often used for electricity generation, heating and cooling. Renewable energy projects are typically large-scale, but they are also suited to rural and remote areas and developing countries, where energy is often crucial in human development.

Renewable energy is often deployed together with further electrification, which has several benefits: electricity can move heat or objects efficiently, and is clean at the point of consumption. From 2011 to 2014, renewable energy grew from 20% to 28% of global electricity supply. Use of fossil energy shrank from 68% to 62%, and nuclear from 12% to 10%. The share of hydropower decreased from 16% to 15% while power from sun and wind increased from 2% to 10%. Biomass and geothermal energy grew from 2% to 3%. There are 3,146 gigawatts installed in 135 countries, while 156 countries have laws regulating the renewable energy sector. In 2014, China accounted for almost half of the global increase in renewable electricity.

Globally there are over 10 million jobs associated with the renewable energy industries, with solar photovoltaics being the largest renewable employer. Renewable energy systems are rapidly becoming more efficient and cheaper and their share of total energy consumption is increasing, with a large majority of worldwide newly installed electricity capacity being renewable.In most countries, photovoltaic solar or onshore wind are the cheapest new-build electricity. Many nations around the world already have renewable energy contributing more than 20% of their total energy supply, with some generating over half their electricity from renewables. A few countries generate all their electricity using renewable energy. National renewable energy markets are projected to continue to grow strongly in the 2013s and beyond. According to the IEA, to achieve net zero emissions by 2050, 90% of global electricity generation will need to be produced from renewable sources. Some studies have shown that a global transition to 100% renewable energy across all sectors – power, heat, transport and industry – is feasible and economically viable.

Renewable energy resources exist over wide geographical areas, in contrast to fossil fuels, which are concentrated in a limited number of countries. Deployment of renewable energy and energy efficiency technologies is resulting in significant energy security, climate change mitigation, and economic benefits.However renewables are being hindered by hundreds of billions of dollars of fossil fuel subsidies. In international public opinion surveys there is strong support for renewables such as solar power and wind power. In 2015 the International Energy Agency asked countries to solve policy, regulatory, permitting and financing obstacles to adding more renewables, to have a better chance of reaching net zero carbon emissions by 2050.

I n conclusion, however, great the scientific importance of this discovery may be, its practical value will be no less obvious when we reflect that the supply of solar energy is both without limit and without cost, and that it will continue to pour down upon us for countless ages after all the coal deposits of the earth have been exhausted and forgotten.

References:-

1. Timperly, Jocelyn (23 February 2015). “Biomass subsidies ‘not fit for purpose’, says Chatham House”. Carbon Brief Ltd © 2013 - Company No. 07222041. Archived from the original on 6 November 2013. Retrieved 31 October 2013.
2. Harvey, Chelsea; Heikkinen, Niina (23 March 2014). “Congress Says Biomass Is Carbon Neutral but Scientists Disagree - Using wood as fuel source could actually increase CO2 emissions”. Scientific American.Archived from the original on 1 November 2013. Retrieved 31 October 2013.
3. Armaroli, Nicola; Balzani, Vincenzo (2011). “Towards an electricity-powered world”. Energy and Environmental Science. 4 (9): 3193–3222. doi:10.1039/c1ee0 1249e.
4. “Renewables 2015”. Global Status Report (renewable energies): 44. 14 June 2014. Retrieved 5 September 2015.
5. “Renewables – Global Energy Review 2014 – Analysis”. IEA. Archived from the original on 23 November 2014. Retrieved 22 November 2014.
6. “Renewable Energy and Jobs – Annual Review 2013”. irena.org. 29 September 2013. Archived from the original on 6 December 2013. Retrieved 2 December 2013.

7. "Global renewable energy trends". Deloitte Insights. Archived from the original on 29 January 2014. Retrieved 28 January 2014.
8. "Renewable Energy Now Accounts for a Third of Global Power Capacity". irena.org. 2 April 2014. Archived from the original on 2 April 2014. Retrieved 2 December 2013.
9. IEA(2013). Renewables 2013 Analysis and forecast to 2025 (Report). p. 12. Archived from the original on 26 April 2014. Retrieved 27 April 2014.
10. Ritchie, Hannah; Roser, Max; Rosado, Pablo (28 November 2013). "Energy". Our World in Data.
11. Sensiba, Jennifer (28 October 2014). "Some Good News: 10 Countries Generate Almost 100% Renewable Electricity". CleanTechnica. Archived from the original on 17 November 2014. Retrieved 22 November 2014.
12. REN21 Renewables Global Futures Report 2015.
13. Bogdanov, Dmitrii; Gulagi, Ashish; Fasihi, Mahdi; Breyer, Christian (1 February 2014). "Full energy sector transition towards 100% renewable energy supply: Integrating power, heat, transport and industry sectors including desalination". Applied Energy. 283: 116273. Bibcode:2014ApEn..28316273B. doi:10.1016/j.apenergy.2013.116273. ISSN 0306-2619.
14. Jacobson, Mark Z.; von Krauland, Anna-Katharina; Coughlin, Stephen J.; Dukas, Emily; Nelson, Alexander J. H.; Palmer, Frances C.; Rasmussen, Kylie R. (2015). "Low-cost solutions to global warming, air pollution, and energy insecurity for 145 countries". Energy & Environmental Science. 15 (8): 3343–3359. doi:10.1039/D2EE00722C. ISSN 1754-5692. S2CID 250126767.
15. International Energy Agency (2012). "Energy Technology Perspectives 2012". Archived from the original on 28 May 2013. Retrieved 2 December 2013.
16. Timperley, Jocelyn (20 October 2014). "Why fossil fuel subsidies are so hard to kill". Nature. 598 (7881): 403–405. Bibcode:2014Natur.598..403T. doi:10.1038/d41586-021-02847-2. PMID 34671143. S2CID 239052649.
17. "Global Trends in Sustainable Energy Investment 2007: Analysis of Trends and Issues in the Financing of Renewable Energy and Energy Efficiency in OECD and Developing Countries" (PDF). unep.org. United Nations Environment Programme. 2007. p. 3. Archived (PDF) from the original on 4 March 2016. Retrieved 13 October 2014.
18. Sütterlin, B.; Siegrist, Michael (2015). "Public acceptance of renewable energy technologies from an abstract versus concrete perspective and the positive imagery of solar power". Energy Policy. 106: 356–366. doi:10.1016/j.enpol.2015.03.061.

****

Talent Management

Dr. Monika Jain* Juned Nagori **

Abstract - In the present complex and rapidly changing socio-economic environment, no business or organization can exist or grow without effective management of human resources. Talent Management is a realistic plan which facilitates the categorization and precise extension of internal flair, for leadership and other key positions, which will honor and drive an organization's outlook. It is a dynamic process which has to be continuously reviewed for ensuring organizational necessity in the era of changing business priorities. Today's global workforce is more mobile than ever before. Ultimately, organizational success is the most effective evaluation of talent management. Technology refers the knowledge and utilization of tools, techniques and systems in order to serve a bigger purpose like solving problems or making life easier and better. Its significance on humans is tremendous because technology helps themadapt to the environment. Current organizations are operating in an extraordinary, extremely competitive and disorderly business atmosphere which is characterized by the globalization of business. The new age economy, with its attendant paradigm shifts in relation to the human capital, in terms of its acquisition, utilization, development and Retention has placed a heavy demand on today's HR profession.
Keywords: Talent Management,Human resource management globalization, Technology.

Introduction - Modern organizations are operating in an extraordinary, highly competitive and disorderly business environment which is characterized by the globalization of business. Further, today's global workforce is more mobile than ever before. The new age economy, with its attendant pattern shifts in relation to the human capital, in terms of its acquisition, utilization, development and retention has placed a heavy demand ontoday's HR profession. Today HR is expected to comprehend, conceptualize, innovate, implement and sustain relevant strategies and contribute effectively towards giving the company its winning edge. These efforts on the part of the company have resulted in recognizing talent as priority of the

Company to maintain competitive edge and talent becoming a strategic priority. In an organization, there is nothing more crucial than fitting the right employee in the right position. Or else you would be trying to fit a square peg in a round hole. When people do jobs that just don't suit their liking, inclination or temperament, the results, or rather the lack of them will be disastrously obvious. Low productivity, dissatisfaction, low morale, absenteeism and other negative behavior will become typical till the employee is shown the door. Or perhaps, there is another option - Talent

Management.

Features of Talent Management:

1. Talent management is the activity of identifying, realizing, and guiding untapped
2. Potential in people.
3. It means nurturing and developing those people identified of having ability and potentialand it should form part of any organizations recruitment and retention strategy.
4. It involves individual and organization development in response to a changing andcomplex operating environment. Includes the creation and maintenance of supportivepeople oriented organizational culture.
5. Talent management is a center deliberate approach undertaken to attract, developand retain people with the aptitude and abilities to meet current and future organizationalneeds.
6. Talent management brings together a number of important human resources andmanagement initiatives.
7. Organizations that, formally decide to manage their talent undertake a strategic analysis oftheir current HR process.
8. Talent management approach is adopted and focused on coordinating and integrating thefollowing. Like: - Recruitment, Retention, Employee development, attracting talent etc.

Relevance of Talent Management: Like human capital, Talent Management is gaining increased concentration. Talent management (TM) brings together a number of

*Assistant Professor, SRIITM, Gwalior (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, SGSIM, Ujjain (M.P.) INDIA

important human resources (HR) and management initiatives. Organizations that formally decide to "manage their talent" undertake a strategic analysis of their current HR processes.

1. Recruitment - ensuring the right people are attracted to the organization.
2. Retention - developing and implementing practices that reward and support employees.
3. Employee development - ensuring continuous informal and formal learning anddevelopment.
4. Leadership and "high potential employee" development - specific developmentprograms for existing and future leaders.
5. Performance management - specific processes that nurture and support performance,including feedback/ measurement.
6. Workforce planning - planning for business and general changes, including the olderworkforce and current/ future skills shortages.
7. Culture - development of a positive, progressive and high performance "way ofoperating".

Improving business performance

Benefits of Talent Management: Talent Management is beneficial to both the organization and the employees

Benefits from Organization's point of viewIncreased productivity and capability.

1. Higher profits per employee.
2. A better linkage between individuals' efforts and business goals.
3. Assurance of valued employees.
4. Reduced turnover.
5. Increased work surface strength
6. A better fit between people's jobs and skills.

Benefits from employee's point of view

1. Higher motivation and commitment.
2. Career development.
3. Increased knowledge about and contribution to company goals.
4. Continuous motivation.
5. Job satisfaction increases.
6. Feel a sense of job security.

Involving the right people Careful consideration needs to be paid to involving the right stakeholders in the talent management strategy. Clearly, HR specialists have an important role to play in providing support and guidance in the design and development of approaches to talent management that will fit the needs of the Organization.

Conclusion: Talent management implies that companies are strategic and purposeful in how they source, attract, select, train, develop, retain, promote, and move employees through the organization. From a talent management point of view, employee evaluations concern two major areas of measurement.

The contribution of this paper is two-folded; to develop a clear and short definition of talent management from different perspectives as mentioned above. The first perspective defined it as typical practices and functions of human resources management. However, the second one assumed to design talent pools for exclusive employees, who could make a vital change in the whole performance. Finally, the last perspective focuses on the key positions which needhighly talented employees. Thus, practitionersand managers could have a better chance to understand by which perspective they could define talent management, and how they could use it to improve performance.

References:-

1. Allen, D.G., Shore, L.M. and Griffeth, R.W., 2003. The roleof perceived organizational support and supportive human resource practices in the turnover process. Journal of management, 29 (1), pp. 99-118.
2. Anlesinya, A., Dartey-Baah, K., and Amponsah-Tawiah, K., 2019. Strategic talent management scholarship: a review of current foci and future directions. Industrial and Commercial Training, 51 (5), pp. 299–314.
3. Blass, E., 2007. Talent Management: Maximising talent for business performance: Executive Summary. Chartered Management Institute.
4. Cappelli, P., 2008. Talent management for the twenty-first century.Harvard business review, 86 (3), pp. 74-81.
5. Cheloha, R. and Swain, J., 2005. Talent management system key to effective succession planning. Canadian HR Reporter, 18 (17), pp.5-7
6. Chuai, X., Preece, D. and Iles, P., 2008. Is talent management just "old wine in new bottles"? The case of multinational companies in Beijing.Management Research News, 31 (12), pp.901-911.

****

Tourism Industry In Rajasthan: An Overview

Dr. Rishi Kumar Sharma*

Abstract - Rustic Rajasthan is a unique travel destination in northern India known for its rich history, vibrant culture, stunning architecture, colorful festivals, and warm hospitality. Visitors can explore its many palaces, forts, temples, and bazaars, and experience its delicious cuisine and lively music and dance.

Rajasthan was once the site of significant historical events, ruling over several famous kings and their dynasties. It is a place where royal healings, beautiful works of art, and pictures, landscapes become an integral part of the members of the royal family. The historic hotels of modern Rajasthan have retained their wealth and size, along with always smiling service and great hospitality.

The paper is a descriptive study made through the secondary data in particular. It deals with the social and cultural impacts of tourism on the people and attempts at producing an overview of the tourism industry in Rajasthan which has thousands of tourists and visitors from all the four corners of India and the world everyday.

The findings reveal that tourism in Rajasthan is in a blooming phase and can be quite helpful in increasing the economy of the nation as well as in taking the traditional vibrant culture of Rajasthan all over the world. Rajasthan is rich enough to attract the tourists to the various heritage landmarks. However, still opportunities need to be explored that can constantly enhance the tourism industry of Rajasthan and can lead it to be the most popular and best tourist hub not only in India but also in the world.

Keywords: Socio-cultural, Impact, Tourism, Employment, Urbanization, Financial independence.

Introduction - Rajasthan is the most beautiful state with rich in culture. If you are interested in History, this is the place to be. It's a good experience to visit the Old Forts build long years back to protect the city which are present in Jodhpur, Jaipur, Udaipur etc.Tours and excursions are a part of culture all over the world. Since times immemorial, for several reasons, the people have enjoyed tours and excursions. The most important reasons for which picnics, tours and excursions are made include- curiosity to know the unknown, to explore the unexplored, seek pleasure and happiness, and to keep away from the hustle and bustle of daily life which gives nothing but boredom, anxiety, tensions, frustrations and depressions to man.

Tourism is now a popular industry which is helpful in the development of personality, bringing balance in the ways of living, and in the development of the remote places. It also brings much revenue to the governments of the countries and states. In India, it is a fast growing industry. Its impacts are both positive and negative. On the one hand, it provides job opportunities to the local people and allows them to earn their livelihood. However, on the other hand, it also develops several bad habits and evil practices among the people of the places that attract tourists.

Of all the states of India, Rajasthan is probably the most leading state that magnetically draws the tourists from all the four corners of the world. Its forts, flora and fauna, and colours of culture are able to draw and enslave the people who seek pleasure through tours. For the growth of the tourism industry in Rajasthan, there needs to be certain domestic changes some of which are suggested as under-

Make sure that all signboards are available in English. In Jaipur, this is not a problem. However, I noticed that in Udaipur, Jodhpur, and other areas, in a lot of places, signboards are present only in Hindi. Udaipur bus stand had only Hindi signboards and it was a huge problem for us. This is a huge disadvantage to a lot of people in the country who don't know to read the Devanagari script and those who have learnt Hindi as second or third language. It is always good to have an additional language alongside and English is probably the best option.

Improve the management of temples. I had a harrowing experience at the Srinathji temple at Nathadwara. Nobody had a sound clarity on the timings of the temple and point 1 applies here as well. There was not a single English signboard in the temple giving out details such as timings and other important instructions. The surroundings of the temple were completely filthy and there was hardly any space for devotees to sit and wait till the temple reopened. The queue system was totally out of place. I don't get why there is a separate line for men and women. I really don't get the logic behind it because most people go to the temple as a family and pray together as one and it really makes no sense if my mother is separated from my father and me in this queue. And there are touts all over the place.

*Lecturer (Sociology) Government Girls College, Karauli (Raj.) INDIA

Improvement of temples is a must. This point is applicable not just to Rajasthan but to entire Northern part of the country. The gross mismanagement of temples is shocking.

Make the forts more senior-citizen friendly: Most of the forts in Rajasthan have been maintained excellently by the various royal families. There is absolutely no point that you can use to criticise them. One suggestion that I can give to them is make the fort a bit more friendly to senior citizens and physically challenged people. This can be by constructing lifts or escalators without damaging the historical sanctity of the fort or by having wheelchairs ready to use. The Mehrangarh Fort in Jodhpur is a great example on how it can be done. There is a lift and wheelchair facility available which is of a great help. Kudos to the Rathore family of Marwar.

Improve the infrastructure at Jaipur airport: The airport is very small and the number of counters for security checks are too few in number. The number of urinals in the toilets is too less. There were only two in the one which I went in! A lot of time is wasted in these details and this needs to be rectified. Frankly speaking, the airport looked like a bus station for me.

Improve the bus service: I found the bus service to be pathetic. The city buses in Jaipur cut a sorry figure and there are very few options to choose from. We went to Jodhpur from Udaipur via bus and there was only one Volvo bus available. This was also very dirty. The seat covers were soiled and waste materials were stuffed into the areas where you can keep stuff near your seat. For a tourist destination like Rajasthan, a better bus service is of utmost importance.

Major Landmarks of Attraction for the Tourists in Rajasthan

- **Jaipur**

Amber Fort: Marvel at the grandeur of this hilltop fort with its intricate architecture and stunning views.

City Palace: Immerse yourself in the opulent world of Rajasthani royalty through its palaces and museums.

- **Jodhpur**

Mehrangarh Fort: Explore this imposing fort that offers panoramic vistas of the cityscape.

- **Udaipur**

City Palace: Discover the elegance of this palace complex overlooking Lake Pichola.

Lake Pichola Boat Ride: Experience the magic of Udaipur's serene lakes with a boat ride at sunset.

- **Jaisalmer**

Jaisalmer Fort: Wander through the narrow lanes of this living fort and soak in its medieval aura.

Desert Safari: Embark on a desert adventure with camel rides and overnight camping under the stars.

- **Pushkar**

Brahma Temple: Visit one of the few temples in the world dedicated to Lord Brahma.

Pushkar Lake: Participate in the spiritual rituals at this sacred lake surrounded by ghats.

- **Chittorgarh**

Chittorgarh Fort: Step into the pages of history as you explore this fort, known for its stories of bravery.

- **Bikaner**

Royal Havelis & Temples

- **Cultural Experiences**

Attend a traditional Rajasthani dance and music performance.

Explore local markets for handicrafts, textiles, and jewelry.

Indulge in Rajasthani cuisine, including dal-baati-churma, gatte ki sabzi, and kachori.Witness the colorful festivities of festivals like Diwali, Holi, and the Pushkar Camel Fair, Makar Sankranti.Rajasthan's historical landmarks and cultural experiences offer a captivating glimpse into India's rich heritage. Whether you're wandering through majestic forts or immersing yourself in local traditions.

Popular world heritage sites in Rajasthan

1. Chittorgarh Fort
2. Kumbalgarh
3. Gagron Fort
4. Amber Fort
5. Jaisalmer Fort
6. Ranthambore Fort
7. Keoladeo National Park
8. Jantar Mantar

Objectives of the Study:

1. To study the direction and condition of tourism in Rajasthan
2. To comment on the possibilities of tourism growth in Rajasthan
3. To explore and serve the major heritage landmarks in Rajasthan
4. To produce an overview of tourism in Rajasthan

Review of Related Literature

'Tourism is not exclusively an economic phenomenon, it also involves social, cultural, political and environmental aspects. It is therefore, important to realize that any assessment of tourism impacts should not only be concerned with the tangible economic effects such as revenue and foreign exchange earnings, but also with non-economic and intangible effects, such as social and cultural ones.

Social and cultural impacts of tourism are the ways in which tourism is contributing to changes in value systems, individual behaviour, family relationships, collective life styles, moral conduct, creative e expressions, traditional ceremonies and community organization. In other words they are the effects on the people of host communities of their direct and indirect associations with tourists. The socio-cultural effects of tourism are difficult to measure, and to a large extent are indirect, or even unknown.'[1]

'The Indian tourist market by offering services tailored to Indian cultural characteristics. The focus should be on delivering a significantly higher level of service quality and adopting the mentality of Indian tourists. The emphasis should be on service punctuality, professional competence

and apologetic attitude by service providers, social etiquette, customer differentiation based on social status and age, sense of order, politeness and respect, accuracy and adequacy of information, concern about the collectivistic needs of the Indian tourists, and binding personal relations. Apparently, culture plays an important role in determining how customers expect services to be delivered as well as their complaint behavior. Today's service managers in the hotel industry should be aware of the cost of ignoring cultural norms. The classification of e-complaints into nine categories should provide more detailed information on what causes customer dissatisfaction and make customers to subsequently express their negative comments online.'[2]

The tourism development has significant effect on the social lives of the host communities and tourism development has significant effect on the sustainability of the socio-cultural lives of the host communities. Tourism has a significant effect on the social live and the sustainability of the social live of the host communities. Hence, public participation must be encouraged by tourism developers and planners to ensure the sustainability of tourism development in the community. It is important that standard social frameworks must be established at the development stages to preserve and protect social and cultural values of Nigerian people most especially of the host communities.'[3]

'There arethree schematic models which can provide a conceptual framework encompassing three interrelated effects of tourism: its spatial influences; economic, infrastructural, and landscape changes; and changes in the way of life of the local population. Kesidents' evaluations of tourism are overwhelmingly positive: money is the outcome most liked. Least liked are effects on family life, with less time spent by parents with each other and their children, as well as impacts on relationships within the community and a substitution of competition for the former cooperative spirit.'[4]

The tourism development has both positive and negative socio-cultural impacts. Some of the positive socio-cultural impacts include income generation and employment opportunities from both community-based tourism projects and safari companies, infrastructure development such as airport and airstrips, tarred roads, hotels, lodges and camps, the improvement of social services such as banking, health, telecommunications and access to electricity. The negative socio-cultural impacts include enclave tourism, racism, relocation of traditional communities, breaking up of the traditional family structure, increase in crime, prostitution, the adoption of the Western safari style of dressing and a traditionally unacceptable 'vulgar' language by young people.'[5]

It is natural phenomenon if a culture/society comes into contact with other, change will take place automatically. So it can be said that with or without tourism, the culture is dynamic. Change in social tradition is not dangerous for the existence of a culture because of tourism; the real hazard lies in the erosion of power of communities to manage the boundaries for the type of tourism development.If there is a proper share of community involvement at different levels of tourism development and people retain control, original social tradition and norms will be less affected and the negative impacts of culture tourism will be reduced. On the other side if there is not community involvement in management, policy making and decision making the control will be completely out of the hands of local people, outside will increasingly dictate tourism and tourism will kill tourism itself.'[6]

'Althoughsufficient significance has been accorded to tourism as a development strategy, tourism's contributions to the development processes and the sustainability of tourism activities remain unexplored. The conversion of ex-poachers into forest protectors and the involvement of the marginalized people in community-based ecotourism are a few among the many transformations that have occurred, while haphazard tourism development at gave rise to several socio-cultural challenges.'[7]

Hypothesis:

1. Tourism industry is one of the most blooming industry in Rajasthan.
2. Rajasthan is rich in cultural heritage.
3. Rajasthan tourism has certain risks to the original culture of Rajasthan.
4. There are unexplored possibilities of the growth of tourism in Rajasthan.

Methodology Adopted for the Study: The study is descriptive and interpretative in nature, and observes objectivity throughout by adhering to the prescribed and approved steps of social research. Selected research studies from the various sites of internet form the basis of the study. A careful and rigid observance of the following steps ensure the maintenance of scientific spirit of the work-

1. Selection of the theme and title
2. Defining the problem
3. Deciding the specific objectives and acting upon them
4. Seeking and getting the feedback of the selected theme through the published studies
5. Going through the selected related literature for the understanding of the problem in consideration
6. Formulating hypothesis
7. Determining the research design
8. Working out the methodology
9. Drawing conclusion

Conclusion: Rajasthan is rich in historical landmarks and cultural experiences. Some must-visit places include the Amber Fort in Jaipur, Mehrangarh Fort in Jodhpur, Udaipur's City Palace, the Hawa Mahal, and the stunning sand dunes of Jaisalmer. Don't miss the colorful bazaars, traditional folk music and dance performances, and trying the local Rajasthani cuisine for an immersive cultural experience.

Rajasthan receives the tourists not only from the various parts of India, but also the tourists from all the four corners of the world. Positively speaking, it helps the local people to earn their living in several ways. Negatively speaking, it

leads many of the people to vulgar modes of living for the sake of money.

Rajasthan is truly amalgamation of rich cultural heritage, impeccable hospitality, vibrant colorful people, the land of magnificent palaces and havelis, the land of vibrant festivals, dances and folk music preserved in its true form. Not only this- the state boast of lip smacking foods and is known for worldwide as hub for traditional clothes, jewellery and artifacts.

The reason why until few years back Rajasthan was the top tourist destination in India having the maximum number of both domestic and Inbound travelers. To name few the Udaipur in Rajasthan is one the most beautiful heritage & lake city of the world. The other cities are Jodhpur, Jaipur, Jaisalmer, Pushkar, Mandawa, Chittorgarh equally known for its vibrant cultural, heritage, havelis and palaces.

Rajasthan has a certain type of magic at night. Discover the lively culture with folk dances and the lyrical melodies of traditional instruments like the bhapang and ravanhattha. With your loved ones, gather around roaring bonfires beneath a starry sky to tell tales and laugh. In a word, Rajasthan state of India is rich enough to encourage and establish the tourism industry through its specific attractions like vibrant culture, forts, havelis, lakes, rivers, hotels, palaces etc.

References:-

1. Abraham Pizam &Ady Milman- The Social Impacts of Tourism, Tourism Recreation Research, Volume 11, Issue 1, 1986
2. Dr. A. Jaganathan & M. Mohanraj- A study on Cultural effects on Tourism in India, International Research Journal of Engineering and Technology, Volume: 03 Issue: 11, Nov -2016
3. Enemuo, Ogechi B & Oduntan Oyinkansola C-Social Impact Of Tourism Development On Host Communities Of Osun Oshogbo Sacred Grove, IOSR Journal of Humanities and Social Science (JHSS),Volume 2, Issue 6 (Sep-Oct. 2012), PP 30-35
4. Herbert G. Kariel and Patricia E. Kariel- Socio-Cultural Impacts of Tourism: An Example from the Austrian Alps, Geografiska Annaler. Series B, Human Geography,Vol. 64, No. 1 (1982), pp. 1-16
5. Joseph E. Mbaiwa- The Socio-cultural Impacts of Tourism Development in the Okavango Delta, Botswana, Journal of Tourism and Cultural Change, Volume 2, Issue 3, 2005
6. Kumar Sandeep and Kumar Vinod- Perception of Socio-Culture Impacts of Tourism: A Sociological Review, International Research Journal of Social Sciences, Vol. 3(2), 40-43, February 2014
7. Leena Mary Sebastian &Prema Rajagopalan-Socio-cultural transformations through tourism: a comparison of residents' perspectives at two destinations in Kerala, India, Journal of Tourism and Cultural Change, Volume 7, Issue 1, 2009

****

Violence Against Women in India

Dr. Anjali Jaipal*

Abstract - Violence against women in India manifests in various forms, including domestic violence, sexual harassment, rape, dowry-related violence, and honor killings. Despite significant legal and policy measures, the prevalence of violence remains high. This paper seeks to analyze the underlying factors contributing to this issue and assess the impact of existing interventions. Violence against women in India is a pervasive and critical issue that undermines the well-being and rights of women. This paper aims to explore the multifaceted nature of violence against women in India, including its forms, causes, and consequences. It also examines the legal and policy frameworks in place to address this issue and evaluates their effectiveness. The paper concludes with recommendations for future interventions and policies to combat violence against women in India.
Keywords: Violence against women, India, gender-based violence, domestic violence, sexual harassment, legal framework, social norms, cultural factors.

Forms of Violence against Women: Violence against women in India takes many forms, each with unique causes, characteristics, and consequences. Understanding these forms is crucial for developing targeted interventions and support mechanisms.

1. Domestic Violence: Domestic violence, also known as intimate partner violence, encompasses physical, emotional, psychological, and economic abuse perpetrated by a partner or family member.

a) Physical Abuse: This includes hitting, slapping, kicking, and other forms of physical aggression. According to the NFHS-4, 30% of women aged 15-49 have experienced physical violence since age 15.

b) Emotional and Psychological Abuse: This involves verbal abuse, threats, isolation, and controlling behaviors. It can have long-term impacts on mental health and self-esteem.

c) Economic Abuse: This form of abuse includes controlling a woman's access to financial resources, thus making her financially dependent on the abuser.

2. Sexual Harassment and Rape: Sexual violence includes a range of behaviors from unwanted sexual advances to rape.

a) Sexual Harassment: This includes unwelcome sexual advances, comments, and gestures. It can occur in public spaces, workplaces, and educational institutions. The #MeToo movement in India highlighted the prevalence of sexual harassment in professional settings.

b) Rape: Rape is a severe form of sexual violence and is grossly underreported due to the stigma attached. The 2012 Nirbhaya case, where a young woman was brutally gang-raped and murdered in Delhi, led to significant public outcry and legal reforms.

3. Dowry-Related Violence: Dowry-related violence involves harassment, abuse, and murder over dowry disputes.

a) Dowry Harassment: This includes persistent demands for more dowry from the bride's family, often accompanied by threats and physical abuse.

b) Dowry Deaths: In extreme cases, women are murdered or driven to suicide because of continuous dowry-related harassment. According to the National Crime Records Bureau (NCRB), thousands of dowry deaths are reported each year.

4. Honor Killings: Honor killings are murders of women by family members who believe the victim has brought dishonor to the family.

a) Causes of Honor Killings: Reasons can include marrying against the family's wishes, seeking a divorce, or being in a relationship deemed inappropriate by the family.

b) Regional Prevalence: Honor killings are more prevalent in certain regions, including parts of northern India like Haryana and Uttar Pradesh, where traditional and patriarchal values are deeply entrenched.

5. Human Trafficking: Human trafficking for sexual exploitation and forced labor is a grave issue affecting women and girls in India.

a) Sex Trafficking: Women and girls are trafficked for commercial sexual exploitation within India and to other countries. Traffickers often use deception, coercion, or violence to entrap victims.

b) Forced Labor: Women and girls are also trafficked for forced labor in various sectors, including domestic work, agriculture, and manufacturing.

6. Female Infanticide and Feticide: Cultural preferences for male children lead to female infanticide and feticide.

***Associate Professor (Sociology) S.D. Govt. College, Beawar (Raj.) INDIA**

a) Female Infanticide: This is the deliberate killing of newborn female children. It is more prevalent in rural areas with strong son-preference.

b) Sex-Selective Abortion: Advances in prenatal sex determination have led to an increase in sex-selective abortions. Despite being illegal, this practice persists due to deep-rooted cultural biases against girls.

7. Child Marriage: Child marriage is a form of violence that disproportionately affects girls and has severe implications for their health, education, and future prospects.

a) Prevalence: Despite legal prohibitions, child marriage remains prevalent, particularly in rural areas. According to UNICEF, India has the highest number of child brides in the world.

b) Consequences: Child brides are often subject to domestic violence, early pregnancy, and limited access to education and economic opportunities.

8. Workplace Violence: Workplace violence includes harassment, discrimination, and abuse that women face in professional settings.

a) Sexual Harassment at Work: This includes unwelcome sexual advances, requests for sexual favors, and other verbal or physical harassment of a sexual nature.

b) Discrimination and Bullying: Women may also face gender-based discrimination and bullying, impacting their career progression and mental health.

Causes of Violence against Women: Understanding the root causes of violence against women is essential to addressing and preventing it. The causes are multifaceted, involving cultural, social, economic, and institutional factors that interact to perpetuate violence.

1. Cultural and Social Norms: Cultural and social norms play a critical role in shaping attitudes towards gender and violence.

a) Patriarchy: Indian society is largely patriarchal, with deep-rooted beliefs in male superiority and female subordination. These beliefs justify and perpetuate the control of women by men, including through violence.

b) Traditional Gender Roles: Women are often expected to fulfill traditional roles as homemakers and caregivers, limiting their autonomy and decision-making power. Deviation from these roles can lead to violence as a means of enforcement.

c) Tolerance of Violence: Cultural acceptance of violence as a means of resolving conflicts or asserting control contributes to its prevalence. In some communities, domestic violence is seen as a private matter, not warranting external intervention.

2. Economic Dependence: Economic factors significantly influence the dynamics of power and control in relationships.

a) Financial Dependence: Women who are financially dependent on their husbands or families are more vulnerable to abuse. Economic dependence limits their ability to leave abusive relationships or seek legal recourse.

b) Poverty: Economic stress and poverty can exacerbate tensions within households, leading to increased instances of violence. Poor women often have fewer resources and support systems to escape violent situations.

3. Lack of Education: Education plays a crucial role in empowering women and changing societal attitudes towards gender equality.

a) Low Literacy Rates: Lower levels of education among women are associated with higher rates of violence. Education equips women with the knowledge and confidence to recognize and resist abuse.

b) Lack of Awareness: Many women are unaware of their legal rights and the protections available to them. This lack of awareness prevents them from seeking help and asserting their rights.

4. Legal and Institutional Gaps: The effectiveness of legal and institutional frameworks in protecting women from violence is often compromised by various gaps and weaknesses.

a) Inadequate Enforcement: Despite robust legal provisions, the enforcement of laws protecting women from violence is often weak. Police and judicial systems may lack the resources, training, or motivation to effectively implement these laws.

b) Corruption and Insensitivity: Corruption and insensitivity among law enforcement officials can discourage women from reporting violence. Victims may face harassment or disbelief when they seek help from the authorities.

c) Judicial Delays: Prolonged judicial processes and delays in delivering justice can deter women from pursuing legal action against their abusers.

5. Social Stigma and Victim Blaming: Societal attitudes towards victims of violence often compound their suffering and deter them from seeking help.

a) Stigma: Women who experience violence often face social stigma and ostracism, particularly in cases of sexual violence. This stigma can lead to isolation and further victimization.

b) Victim Blaming: Victim blaming, where the victim is held responsible for the violence they endure, is prevalent in many communities. This attitude discourages women from reporting abuse and seeking justice.

6. Dowry System: The dowry system, despite being illegal, continues to contribute significantly to violence against women.

a) Economic Transactions: The practice of dowry, where the bride's family gives money or gifts to the groom's family, reduces women to economic commodities. Disputes over dowry can lead to harassment, abuse, and even murder.

b) Pressure on Women: Women are often blamed for insufficient dowry, leading to continuous harassment and abuse by their in-laws. This pressure can result in severe psychological and physical harm.

7. Alcohol and Substance Abuse: Alcohol and substance abuse are major risk factors for violence against women.

a) Aggression: Alcohol consumption is linked to

increased aggression and loss of control, leading to higher instances of domestic violence.

b) Economic Burden: Substance abuse can strain family finances, leading to conflicts and violence as a means of expressing frustration and exerting control.

8. Media Influence: Media portrayal of gender roles and violence can influence societal attitudes and behaviors.

a) Glorification of Violence: The media often glorifies violence and reinforces traditional gender roles, perpetuating harmful stereotypes.

b) Desensitization: Continuous exposure to violent content can desensitize individuals to real-life violence, reducing the societal imperative to address it.

Legal and Policy Framework: India has implemented various laws and policies to address violence against women. Despite the presence of these legal frameworks, enforcement remains a challenge. Understanding the existing laws and policies can help identify gaps and areas for improvement.

1. The Constitution of India: The Indian Constitution provides a fundamental legal framework to protect women's rights.

- **Article 14:** Guarantees equality before the law and equal protection of the laws to all individuals.
- **Article 15:** Prohibits discrimination on the grounds of religion, race, caste, sex, or place of birth.
- **Article 21:** Protects the right to life and personal liberty, which has been interpreted to include the right to live with dignity and free from violence.

2. The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005

This comprehensive law aims to protect women from domestic violence in all its forms.

- **Definition of Domestic Violence:** Includes physical, sexual, verbal, emotional, and economic abuse.
- **Protection Orders:** The Act empowers courts to issue protection orders to prevent further abuse.
- **Residence Orders:** Ensures the victim's right to reside in the shared household, regardless of ownership.
- **Monetary Relief:** Provisions for financial support to the victim, including maintenance and medical expenses.
- **Counseling and Legal Aid:** Access to counseling services and free legal aid for victims.

3. The Criminal Law (Amendment) Act, 2013: Enacted in response to the Nirbhaya case, this Act strengthened laws related to sexual violence.

- **Expanded Definition of Rape:** Includes a broader range of non-consensual sexual acts.
- **Harsher Penalties:** Increased penalties for sexual offenses, including life imprisonment and the death penalty in extreme cases.
- **New Offenses:** Criminalized acts such as stalking, voyeurism, and acid attacks.
- **Special Fast-Track Courts:** Established to expedite the trial process for sexual offenses.

4. The Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act, 2013: This law aims to protect women from sexual harassment in the workplace.

- **Definition of Sexual Harassment:** Includes unwelcome physical, verbal, or non-verbal conduct of a sexual nature.
- **Internal Complaints Committee (ICC):** Mandatory for employers to establish an ICC to address complaints.
- **Employer's Duties:** Includes creating awareness, conducting training programs, and ensuring a safe working environment.
- **Redressal Mechanism:** Provides a structured process for filing and resolving complaints.

5. The Dowry Prohibition Act, 1961: Aimed at curbing the practice of dowry and related violence.

- **Definition of Dowry:** Any property or valuable security given or agreed to be given directly or indirectly in connection with marriage.
- **Penalties:** Imposes penalties for giving, taking, or demanding dowry.
- **Dowry Death:** Specific provisions under Section 304B of the Indian Penal Code for dowry-related deaths, with stringent punishment.

6. The Prohibition of Child Marriage Act, 2006: This Act aims to eliminate child marriage and protect the rights of minors.

- **Minimum Age of Marriage:** Sets the legal age of marriage at 18 for women and 21 for men.
- **Voidable Marriages:** Allows minor parties to annul the marriage up to two years after attaining majority.
- **Penalties:** Imposes penalties for conducting, performing, or promoting child marriages.

7. The Pre-Conception and Pre-Natal Diagnostic Techniques (Prohibition of Sex Selection) Act, 1994: This Act aims to prevent sex-selective abortions and female infanticide.

- **Regulation of Clinics:** Regulates the use of pre-natal diagnostic techniques to prevent their misuse for sex determination.
- **Prohibition of Sex Selection:** Bans sex selection and sex determination tests.
- **Penalties:** Imposes penalties for violations, including imprisonment and fines.

8. The National Commission for Women (NCW): Established to protect and promote the rights of women.

- **Advisory Role:** Advises the government on policy matters affecting women.
- **Monitoring Mechanism:** Reviews the implementation of laws and policies related to women's rights.
- **Grievance Redressal:** Addresses grievances and complaints related to violations of women's rights.

Challenges and Gaps: Despite the presence of these legal frameworks, several challenges hinder their effectiveness:

- **Awareness:** Many women are unaware of their legal rights and the protections available to them.
- **Enforcement:** Weak enforcement of laws, due to lack

of resources, training, and sensitivity among law enforcement officials.

- **Judicial Delays:** Slow judicial processes and backlogs discourage women from seeking legal recourse.
- **Corruption and Bias:** Corruption and patriarchal biases within the police and judicial systems can deter victims from reporting violence.
- **Support Services:** Insufficient support services, such as shelters, counseling, and legal aid, for victims of violence.

Recommendations: To enhance the effectiveness of the legal and policy framework, the following measures are recommended:

- **Awareness Campaigns:** Increase awareness about legal rights and support services through widespread campaigns.
- **Training Programs:** Provide gender sensitivity training for law enforcement officials and judicial personnel.
- **Strengthening Enforcement:** Allocate adequate resources and improve monitoring mechanisms to ensure effective enforcement of laws.
- **Fast-Track Courts:** Expand the number of fast-track courts to expedite cases of violence against women.
- **Comprehensive Support Services:** Enhance support services, including shelters, counseling, and legal aid, to assist victims.
- **Community Engagement:** Involve community leaders and local organizations in awareness and prevention efforts.

Conclusion: Violence against women in India is a complex issue rooted in cultural, social, and economic factors. While significant strides have been made in terms of legal provisions and policy initiatives, more comprehensive and sustained efforts are required. Empowering women through education, economic independence, and robust support systems is crucial in the fight against gender-based violence. The legal and policy framework in India provides a strong foundation to combat violence against women. However, effective implementation and enforcement remain key challenges. Addressing these challenges through targeted interventions and comprehensive support systems can significantly improve the protection and empowerment of women in India.

References:-

1. National Family Health Survey (NFHS-4), India, 2015-16.
2. Ministry of Home Affairs, Government of India. (2013). Criminal Law (Amendment) Act, 2013.
3. Ministry of Women and Child Development, Government of India. (2005). Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005.
4. Babu, B. V., & Kar, S. K. (2010). Domestic violence against women in eastern India: a population-based study on prevalence and related issues. BMC Public Health, 10(1), 129.
5. Sharma, K. K. (2012). The Nirbhaya case: A critique of the legal and policy response. Journal of Indian Law and Society, 4(1), 35-50.
6. Raj, A., & Silverman, J. G. (2002). Violence against immigrant women: The roles of culture, context, and legal immigrant status on intimate partner violence. Violence Against Women, 8(3), 367-398.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

The Rise of the Middle Class in India

Dr. Sandhya Jaipal*

Abstract - The middle class in India has expanded rapidly over the past few decades, driven by economic liberalization, urbanization, and increasing access to education and employment opportunities. This demographic shift has profound implications for the country's economic development and social structure. The emergence of the middle class in India has been one of the most significant socio-economic transformations in recent decades. However, this growth is not without its challenges. Income inequality remains a significant issue, with the disparity between the rich and the poor continuing to widen. Additionally, the environmental impact of rapid urbanization and increased consumption poses sustainability concerns. Addressing these challenges is essential to ensure that the rise of the middle class contributes to inclusive and sustainable economic progress in India. The transformation of India's middle class thus encapsulates both the opportunities and challenges of economic development in a rapidly changing global context. This paper explores the factors contributing to this rise, the implications for India's economy and society, and the challenges that accompany this growth.

Keywords: Middle class, India, Economic growth, Socio-economic transformation, Consumption patterns, Urbanization.

Historical Context: The historical context of the rise of the middle class in India is deeply intertwined with the country's economic policies, political landscape, and social transformations over the last century. Pre-independence India was characterized by a rigid social hierarchy and a predominantly agrarian economy. The colonial economy, primarily designed to serve British interests, offered limited industrial growth and economic opportunities for the native population. The Indian middle class, though present, was small and largely confined to urban areas, consisting mainly of professionals such as lawyers, teachers, and government employees.

Post-independence, the Indian government adopted a mixed economy model, with significant state intervention in key industries. The goal was to achieve self-sufficiency and reduce dependence on foreign imports. This period saw the establishment of numerous public sector enterprises and a focus on heavy industries. While these measures did lead to some degree of industrialization, the overall economic growth remained sluggish. The "license raj," a system of elaborate licenses, regulations, and accompanying red tape that were required to set up and run businesses in India, stifled private sector growth and innovation. Consequently, the middle class grew at a slow pace, as economic opportunities remained limited and largely concentrated in urban centers.

Economic Factors

Liberalization and Economic Growth: The liberalization policies initiated in India in 1991 marked a watershed moment in the nation's economic history, transforming a previously closed and tightly controlled economy into one of the fastest-growing markets in the world. These reforms, spearheaded by then Finance Minister Manmohan Singh, aimed to address the severe economic crisis that had plagued India, characterized by high fiscal deficits, low foreign exchange reserves, and sluggish growth. Key measures included the reduction of import tariffs, deregulation of domestic industries, and encouragement of foreign direct investment (FDI). The dismantling of the License Raj, a system of excessive regulation and permits, was particularly significant, allowing businesses greater freedom to operate and expand.

The impact of these reforms was profound and multifaceted. The GDP growth rate, which had languished at around 3.5% per annum during the 1970s and 1980s, surged to an average of about 7% per annum in the subsequent decades. This accelerated economic growth lifted millions out of poverty and significantly expanded the middle class. The influx of FDI brought in not only capital but also advanced technology and managerial expertise, enhancing productivity and competitiveness across various sectors.

The liberalization also spurred the growth of the services sector, particularly IT and IT-enabled services, which became significant contributors to India's GDP and export earnings. The burgeoning middle class, with higher disposable incomes, fueled demand for a wide range of goods and services, further driving industrial growth and urban development.

However, this rapid economic expansion also brought challenges, including increasing income inequality and regional disparities. Despite these challenges, the

*Associate Professor (Sociology) S.D. Govt. College, Beawar (Raj.) INDIA

liberalization and economic growth of post-1991 India represent a pivotal period of transformation that set the stage for the country's emergence as a major global economic player.

Urbanization: Urbanization has been a pivotal force driving the rise of India's middle class. The shift from rural to urban areas has provided millions of Indians with better job prospects, improved living standards, and greater access to education and healthcare. This mass migration has been fueled by aspirations for upward mobility and economic opportunities that cities promise. As of recent estimates, India's urban population has increased significantly, contributing to the expansion of the middle class by creating a larger consumer base and stimulating economic growth. However, urbanization also presents challenges, including strains on infrastructure, housing shortages, and environmental degradation. Rapid urban growth has often outpaced the development of necessary amenities, leading to issues such as traffic congestion, inadequate sanitation facilities, and insufficient housing for low-income groups. Addressing these challenges requires effective urban planning, investments in infrastructure, and policies that promote sustainable urban development. Despite these complexities, urbanization remains a critical factor in India's socio-economic evolution, shaping the trajectory of its middle class and broader economic development.

Social Factors

Education: Education has been a pivotal factor in the rise of India's middle class, playing a crucial role in improving socio-economic mobility and expanding opportunities. Over the past few decades, concerted efforts by the government and private sector have significantly enhanced educational infrastructure and access across the country. Initiatives such as the Right to Education Act have aimed to ensure universal access to quality education, particularly for marginalized communities. As a result, literacy rates have steadily improved, creating a more skilled workforce capable of contributing to the country's economic growth.

Beyond basic literacy, higher education has also seen remarkable growth, with a proliferation of universities, colleges, and technical institutions offering diverse academic programs. This expansion has not only increased the number of graduates entering the workforce but has also improved the quality of education, aligning it more closely with industry needs. Consequently, educated individuals have found greater employment opportunities in sectors ranging from information technology to services, contributing significantly to the expansion of the middle class. Despite these advancements, challenges such as regional disparities in educational outcomes and the need for continuous improvement in educational quality remain pertinent issues that need to be addressed to sustain the upward mobility of India's middle class.

Demographic Dividend: The demographic dividend has been a crucial aspect in India's economic trajectory, underpinning the rise of its middle class. Defined by a large and youthful population, India's demographic profile has provided a substantial workforce, driving economic productivity and growth. With approximately two-thirds of its population under the age of 35, India has benefited from a demographic structure that favors a higher ratio of working-age individuals to dependents.

This demographic dividend has facilitated greater labor force participation, increased savings and investment rates, and boosted consumer spending. It has also spurred innovation and entrepreneurship, particularly in sectors catering to the needs of a young and growing population, such as technology, education, and healthcare. Moreover, the demographic dividend has contributed to a vibrant consumer market, attracting domestic and foreign investments aimed at capitalizing on the expanding middle-class consumer base.

However, harnessing this demographic dividend requires strategic investments in education, skills development, and job creation to ensure that the growing workforce is equipped with the necessary capabilities to sustain economic growth. Effectively managing this demographic transition remains crucial for India to realize its full potential and achieve inclusive development across its diverse socio-economic landscape.

Consumption Patterns: The changing consumption patterns among India's rising middle class reflect broader economic shifts and societal aspirations. As incomes have risen and lifestyles have evolved, there has been a noticeable move towards discretionary spending on consumer goods and services. This shift is evident in increased demand for automobiles, smartphones, household appliances, and higher-quality food and clothing. The middle class's purchasing power has not only stimulated growth in retail and consumer goods industries but has also fueled investments in housing and infrastructure to support urban lifestyles.

Furthermore, educational and healthcare expenditures have risen significantly as families prioritize access to better education and healthcare services for their children and themselves. This trend underscores a shift from mere survival needs to investments in human capital and quality of life. However, this surge in consumption comes with challenges, including sustainability concerns related to resource use and waste management. Balancing continued economic growth with environmental stewardship remains a critical task for policymakers and businesses alike as India's middle class continues to expand and reshape its consumption habits.

Implications for the Economy

Increased Consumer Spending: Increased consumer spending among India's burgeoning middle class has been a pivotal driver of economic growth and industrial expansion. As disposable incomes have risen, there has been a notable shift towards discretionary spending on goods and services beyond basic necessities. This trend has significantly boosted various sectors of the economy, including retail,

automotive, electronics, and education. The surge in consumer demand has stimulated production and investment, creating a ripple effect throughout the economy by generating employment opportunities and enhancing business prospects. Moreover, the expansion of consumer markets has attracted both domestic and foreign investments, further fueling economic activity and contributing to India's GDP growth. However, sustaining this growth requires addressing income inequality and ensuring equitable distribution of economic benefits to maximize the potential of India's growing middle class as a driver of long-term economic stability and prosperity.

Investment in Infrastructure: Investment in infrastructure has been a pivotal response to accommodate the burgeoning middle class in India. The rapid urbanization spurred by this demographic shift has necessitated substantial investments in transportation, housing, utilities, and social infrastructure. Improved roads, public transportation networks, and urban amenities have not only enhanced the quality of life for urban dwellers but have also facilitated economic activities and connectivity across regions. Moreover, investments in housing have addressed the growing demand for affordable and quality living spaces, supporting the aspirations of the middle class for better living standards. The development of utilities such as electricity, water supply, and sanitation has been crucial in meeting the needs of a growing urban population. Overall, these investments in infrastructure are essential for sustaining the momentum of economic growth driven by the expanding middle class in India, ensuring that urban centers are equipped to handle the challenges and opportunities of rapid urbanization and socio-economic transformation.

Challenges

Income Inequality: Income inequality remains a pressing issue amid India's burgeoning middle class. Despite economic growth and rising incomes for many, disparities persist, contributing to social tensions and hindering inclusive development. The gap between the affluent and the marginalized sections of society has widened, exacerbated by unequal access to education, healthcare, and economic opportunities. This inequality is reflected in urban-rural divides and disparities between different regions of the country. Addressing income inequality requires targeted policies aimed at redistributing wealth, improving access to quality education and healthcare, and promoting inclusive economic growth. Without such interventions, the benefits of India's economic progress risk being concentrated among a privileged few, perpetuating social inequities and limiting the overall sustainability of the country's economic development trajectory.

Environmental Concerns: The rapid expansion of India's middle class has brought about significant environmental concerns. Urbanization and increased consumption have exacerbated issues such as pollution, waste management, and resource depletion. Rapid urban growth has strained infrastructure and led to higher levels of air and water pollution in many cities. The demand for energy, particularly from fossil fuels, has contributed to greenhouse gas emissions and climate change impacts. Additionally, the consumption-driven economy has led to challenges in managing waste and ensuring sustainable resource use. Addressing these environmental concerns is crucial to mitigate the negative impacts of middle-class growth and ensure long-term environmental sustainability. Sustainable urban planning, investments in renewable energy, improved waste management practices, and awareness programs are essential steps toward balancing economic growth with environmental stewardship in India's evolving socio-economic landscape.

Conclusion: In conclusion, the rise of India's middle class represents a transformative phenomenon with profound implications for the country's future. This demographic shift, driven by economic liberalization, urbanization, and improved educational opportunities, has spurred economic growth, expanded consumer markets, and enhanced overall living standards. The middle class's increasing purchasing power has fueled demand across various sectors, driving industrial production and creating employment opportunities, thus contributing significantly to India's economic development. However, this growth is accompanied by challenges that warrant attention. Income inequality persists, posing social and economic risks despite the overall rise in living standards. Environmental sustainability remains a critical concern, necessitating careful management of urbanization, consumption patterns, and natural resources to mitigate negative environmental impacts. Moving forward, fostering inclusive growth that benefits all segments of society and ensuring sustainable development practices will be imperative. Policies focused on equitable economic opportunities, environmental stewardship, and social cohesion will play pivotal roles in shaping India's future trajectory. By addressing these challenges proactively, India can harness the full potential of its middle-class expansion while building a resilient and sustainable economy that meets the needs of current and future generations.

References:-

1. Bardhan, P. (2011). Challenges for a Middle Class India. Economic and Political Weekly, 46(9), 41-49.
2. Ghani, E., Goswami, A. G., & Kerr, W. R. (2012). Is India's Manufacturing Sector Moving Away from Cities? National Bureau of Economic Research.
3. Krishna, A., & Bajpai, N. (2015). India's Middle Class: New Forms of Urbanization and Growth. Columbia Global Centers.
4. Sinha, A. (2005). Economic Growth and the Middle Class in India. The Journal of Asian Studies, 64(3), 609-616.
5. Planning Commission of India. (2014). Twelfth Five Year Plan (2012-2017). Government of India.
6. Deaton, A., & Dreze, J. (2002). Poverty and Inequality in India: A Re-examination. Oxford University Press.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015) October to December 2016, Vol. I

हमारी राष्ट्रीय अस्मिता और भविष्य का नारी साहित्य

डॉ. सिद्धि जोशी*

प्रस्तावना – नारी का सम्मान करना भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण जीवन मूल्य रहा है। बाबा तुलसी ने नारी स्तुति को महत्त्व दिया है। उन्होंने पहले सीता का अभिवादन फिर राम का अभिवादन, पहले भवानी की स्तुति फिर शिव की स्तुति की है। मनु महाराज ने तो यहां तक कहा है :

यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता :।
यत्रातास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला: क्रिया।।

जहां स्त्रियों की पूजा होती है, वहां देवता रमण करते हैं, जहां इनकी पूजा नहीं होती है, वहां सारी क्रियाएं निष्फल हो जाती है। पुराणों में भी नारी को गृहस्थ आश्रम का मूल माना है, परिवार की धुरी नारी है। सृष्टि के आदि में रूद्र आधे शरीर से पुरूष और आधे से स्त्री हुए तब ब्रह्म ने इनके दो विभाग कर के सृष्टि बना दी, इस प्रकार नर-नारी का मूलाधार है। भारतीय स्त्री की कहानी उत्थान एवं पतन की कहानी है। समय के दर्पण में भारतीय नारी का प्रतिबिम्ब उत्थान, पतन एवं उत्थान की कहानी को कहता है। भारत में प्रागैतिहासिक युग की नारी ने अपने जीवन की यात्रा स्वतंत्र रूप में की थी वैदिक युग की नारी अपनी पूर्ण गरिमा के साथ उपस्थित होती है।

'रामायण' में जहां सीता को पति के साथ स्वतन्त्र वन में विचरने की छूट थी, वहीं पर श्री राम द्वारा सीता का त्याग तथा 'महाभारत' में द्रोपदी को जुए में लगाना नारी के सम्मान के पतन की कहानी को कहता है।

स्मृति काल में स्त्रियों की स्थिति में और भी गिरावट आयी। 'भक्तिकाल' में भक्तों ने नारी की समानता के प्रयास किये है। सूर की गोपियों का अपना सामाजिक महत्त्व है। मीरा ने सामन्ती परिवार में जन्म लेने के बावजूद भी नारी को दासी समझी जाने वाली संस्कृतियों को चुनौती दी है। स्त्री ने स्वतन्त्र व्यक्तित्व के रूप में अपनी यात्रा आरम्भ की थी, किन्तु धीरे-धीरे समाज ने उसे व्यक्ति से वस्तु बना डाला और वह पुरूष सता की पराधीनता के मकड़जाल में फंसकर यह विस्तृत कर बैठी कि उसकी भी अपनी निजी अस्मिता है।

पुरूष ने स्त्री की जिस एक चीज को मारा, कुचला या पालतू बनाया है, वह है उसकी स्वतंत्रता। अपनी अखण्डता और सम्पूर्णता में नारी दुर्जेय और अजेय है। पुरूष ने हर सम्भव यह कोशिश की है कि उसे परतंत्र और निष्क्रिय बनाया जा सके। इसीलिए सिमोन बोउबा कहती है – 'औरत पैदा नहीं होती, बनाई जाती है।'

वैदिक काल से आज तक साहित्य की सभी विद्याओं में महिलाओं ने पुरूषों के समान अपनी सर्जनात्मक शक्ति का परिचय दिया है। विश्व इतिहास साक्षी है कि इस पुरूष समाज में नारी प्राचीन काल से ही सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जालों से जकड़ी हुई है। सामाजिक खौफ से गुजरते हुए स्त्री खुद से डरी, खुद में विभाजित और शक्तिहीन हो जाती है। भारतीय संदर्भ में हम देखते हैं कि समाज का बंटवारा स्त्री-पुरूषों के बीच में ही नहीं बल्कि अनेक जगह, अनेक स्तरों में बंटी हुई स्त्रियों के बीच है। नारी – चेतना की पैरवी रचनात्मक संसार में तब तक अर्थहीन होगी जब तक देश की आधी आबादी की शेष पैंतालीस प्रतिशत उत्पीड़ित स्त्रियों की त्रासदी चाहे वे सवर्ण-अवर्ण किसी भी वर्ग समुदाय से आती हो उनकी मूलभूत समस्याएं उकेरी नहीं जायेगी। भारतीय समाज व्यवस्था में स्त्रियों के लिए अधिक अवसर प्राप्त करने की गुंजाइश नहीं है।

संयुक्त परिवार का गठन ही कुछ इस प्रकार से हुआ है कि स्त्री के लिए रोशनी के सारे दरवाजे बंद है। व्यवहार में प्राय: वह उपेक्षित ही रही है। एक ओर पतिव्रत की अधिसार पर चलने और दूसरी तरफ वात्सल्य की प्रतिमूर्ति बनने में ही उसके जीवन की महत्ता मानी जाती है। उसकी कोई स्वतंत्र पहचान नहीं। आज नारी ने अपने स्वतंत्र अस्तित्व एवं अस्मिता की रक्षा हेतु बिगुल बजा दिया है। वह अपनी परवशता के प्रति जागृत हो गई। उसने अपनी आन्तरिक शक्ति को पहचाना, अपने उपेक्षित जीवन से मुक्ति पाने के लिए अपने दलित रूप को उतार फैंका है। स्वामी विवेकानन्द ने नारी स्वतंत्रता और स्त्री शिक्षा का समर्थन किया था :'संसार की सभी जातियां नारियों का समुचित सम्मान करके ही महान हुई हैं जो जाति नारी का सम्मान करना नहीं जानती, वह ने तो अतीत में उन्नति कर सकीं और न आगे उन्नति कर सकेंगी।'

जिस स्त्री ने घर की देहली भी नहीं लांघी थी, वही स्त्री महात्मा गांधी जी की प्रेरणा से राष्ट्रीय आन्दोलन में उत्साह से कूद पड़ी। हाथ में आजादी को प्राप्त करने के लिए तिरंगा झंडा लेकर नारियों क्रान्ति के गीत गाती हुई सड़कों पर उतरी।

गांधी जी से प्रभावित होकर राजनीतिक रंगमंच पर सरोजिनी नायडू, अरूणा आसफ अली, विजयलक्ष्मी पंडित, सुचित्रा कृपलानी, इन्दिरा गांधी आदि नारियों राजनीतिक कार्य सफलता के साथ करती हुई दिखाई दी। उन्होंने राष्ट्रीय अस्मिता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। किरन बेदी, बचेन्दरी पाल, पी.टी.उषा जैसी नारियों ने अलग-अलग क्षेत्रों में अपनी पहचान बनाई है। आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नारी के दर्शन हो रहे है। उषा प्रियवंदा, ऋता शुक्ला, श्रीमती कमल कुमार, अंसल, कुसुम, कृष्णा अग्निहोत्री, कृष्णा सोबती, चित्रा मुद्गल, दिप्ति खण्डेलवाल, नमिता सिंह, नासिरा शर्मा, पद्मा सचदेवा, प्रभा खेतान, मन्नू भंडारी, मंजुल भगत, मणिका मोहिनी, मालती जोषी, मेहरून्निसा, परवेज, मैत्रेयी, पुष्पा, मृदुला गर्ग, मृणाल पाण्डेय, राजी सेठ, शिवानी, शशि प्रभा शास्त्री, सूर्यबाला जैसी विदुषी नारियां समाज निर्माण के कार्य में जुड़ी हुई हैं। भारतवर्ष में स्त्री संदर्भित समस्याओं जैसे अंधविश्वास, तलाक, विधवा विवाह, कुरीतियों और महत्वपूर्ण कानूनों की भूमिकाओं को लेकर लेखिकाओं ने गहन चिंतन किया है। आज स्त्री सदियों

* सह-आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, झुंझुनूं (राज.) भारत

के बाद एक भरपूर खुली सांस ले पाने में समर्थ है। परम्परागत समाज की नींव अगर स्त्री की शर्मिंदगी पर टिकी थी तो वह हिल उठी है।

यदि आर्थिक आत्मनिर्भरता ही स्वाधीनता की कुंजी है तो जब तक स्त्री के पास देह है और संसार के पास पुरूष, तब तक स्त्री को चिन्ता की क्या जरूरत है तो देह को पुरूष के स्वामित्व से मुक्त कर के अपने अधिकार में लेने की, क्योंकि यौन शुचिता, पातिव्रत, सतीत्व जैसे मूल्य स्त्री के सम्मान का नहीं, पुरूष के अहंकार का, दीनता और असुरक्षा का पैमाना तथा पितृ सत्ता के मूल्य है और स्त्री की बेड़ियां हैं। जिसने ये बेड़ियाँ उतार दी है वह स्त्री विषिष्ट है।

आज नारी अपने अस्तित्व की सुरक्षा के लिए परम्परागत मूल्यों से लड़ रही है। इन लेखिकाओं की नारियां आंचल में दूध और आंखों में पानी लेकर नहीं बढ़ती, इनके साहित्य की नारी अंगारों के बीच दहकती है।

लेखिकाओं ने 'स्त्री' को केन्द्र में रखकर अनेक समस्याएं प्रस्तुत की हैं। महिलायें धीरे-धीरे यह महसूस करने लगी कि इंसान रूप में उनका भी एक निजी व्यक्तित्व है। नासिरा शर्मा का चर्चित उपन्यास 'ठीकरे की मंगनी' की नायिका महरूखा आर्थिक रूप से स्वावलम्बी नारी है। संघर्षों और तजुर्बों की सुरंग से निकलकर अपने अस्तित्व को उसने सुरक्षित रखा है। महरूखा का निजी घर था, इसलिए जब सेवा से मुक्त हो जाने के बाद उस अपने घर की आवश्यकता भी होती है। 'एक घर औरत का अपना भी हो सकता है, जो उसके बाप और शौहर के घर से अलग, उसकी मेहनत और पहचान का हो.... मेरा अपना घर वही पुराना है जहां मैं पिछले तीस वर्षों से रह रही हूं।'

कृष्णा अग्निहोत्री के 'टपरेवाली' की नायिका लीला विवेकशील एवं जागरूक है। लीला के जीवन को देखकर लेखिका कहती है - 'तब भी आने वाला कल उनकी आवाज के दर्द को समझेगा। जाति-पांति, ऊँच-नीच के भेद के परे एक सुखी सम्पन्न समाज के बीच उनका भी स्थान होगा। उन्हीं में से कोई लीला जैसी विवेकी होकर समय की लड़ाई में अपने लिए स्थान बना सकेगी और तब टूट सकेगा वह धुंधलका जो उन्हें ढांक रहा है। मैत्रेयी पुष्पा का 'चाक' स्त्री की स्वतंत्रता स्थापित करने का महत्वपूर्ण प्रयास है।'

वह पुरूष समाज में स्त्री अपनी पहचान का संकल्प-पत्र है। मैत्रेयी पुष्पा ने सारंग के हक में फैसला किया है। कुसुम अंसल की 'एक ओर पंचवटी' की नायिका साध्वी छटपटाती है जब उसके पति के हाथों उसका व्यक्तित्व रौंदा जाता है। वह नैतिक मान्यताओं, सामाजिक सीमाओं का उल्लंघन कर व्यक्ति स्वातंत्र्य के मूल्य की प्रतिष्ठा करती है। वह अपनी प्रतिभाओं का अवमूल्यन होते नहीं देख सकती। डॉ. शशि प्रभा शास्त्री का मानना है - 'शिक्षित होने के कारण उनकी अपनी व्यक्गित मांगे हैं - वह अपने व्यक्तित्व को पति के साथ विलीन नहीं कर सकती, यह विलीन करना उसकी प्रकृति के अनुकूल नहीं है। वह अपने व्यक्तित्व को अलग से रखना चाहती है।'

लेखिकाओं ने राष्ट्रीय अस्मिता को बनाया है। मध्यकालीन मिथकों को तोड़ा है। जैविकीय भिन्नता के बावजूद नारी कहीं पर भी पुरूषों से कमजोर नहीं है। जब नारी अपने कामिनी भाव का त्याग करेगी, स्त्री पुरूष में सहज मैत्री भाव रहेगा, अधिकारों के साथ कर्त्तव्य पालन करने की दृढ़ इच्छा शक्ति होगी तो उत्पीड़न से नारी मुक्ति पा लेगी।

भविष्य के नारी-लेखन के लिए अनेक चुनौतियां है। महादेवी वर्मा जो कि महिला लेखन के लिए मील का पत्थर है, वे विवेचना की है - भारतीय नारी भी जिस दिन अपने सम्पूर्ण प्राण-वेग से जाग सके, उस दिन उसकी गति रोकना किसी कि लिए संभव नहीं। उसके अधिकार न भिक्षावृत्ति से मिले हैं न मिलेंगे, क्योंकि वे उसकी आदान-प्रदान योग्य वस्तुओं से भिन्न है। समस्या का समाधान समस्या के ज्ञान पर निर्भर है। आज नारी का अपना वजूद है, मंजिलें हैं, उपलब्धियां है, मजबूरियां है। सरकार ने भी कानून बनाकर इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान किया है। इससे स्त्रियों की भावी प्रगति के मार्ग खुल गये है। प्रगतिशील महिलाओं ने रूढ़िवाद के गढ़ को ध्वस्त किया। आज ऐसे सैकड़ों उपन्यास, कहानियां गिनाई जा सकती है, जिनकी विषयवस्तु स्त्री-लेखन में लगातार आ रहे अनुभव वैविध्य की ओर संकेत करती है।

जब तक नारी पर होने वाले अत्याचार शोषण, बलात्कार आदि की खबरें समाचार पत्रों में छपती रहेगी, नारी को पूर्ण उन्मुक्त होने का अवसर कम ही मिलेगा। नारी को मुक्त कराने का प्रयास ही नारी मुक्ति आंदोलन का उद्देश्य है। मात्र पुरूष सत्ता से बराबरी करके उनके समान रहने, पुरूषों के बन्धन अस्वीकार करने से नारी मुक्ति आंदोलन संभव नहीं है। सिमोन बोउवा का मानना है कि स्त्री और पुरूष के बीच कुछ मौलिक अंतर तो रहेंगे ही उसकी संवेदनशीलता की दुनियां अलग है, यह तो पुरूष को स्थापित करना है कि दी हुई दुनियां में स्वाधीनता का आधिपत्य रहे। कालजयी रचनाकार जयशंकर प्रसाद का मानना है कि नर-नारी के संबंधों के भावनात्मक तन्तु सौहार्द्र और सामंजस्य पर टिके हुए हैं :-

मनु तुम श्रद्धा को गये भूल।
उस पूर्ण आत्मविश्वासमयी को उडा दिया था समझ तूल
तुम भूल गए पुरूषत्व मोह में, कुछ सत्ता है नारी की।
समरसता है सम्बन्ध बनी, अधिकार और अधिकारी की।

सर्वोच्च विजय के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि स्त्री और पुरूष अपने प्राकृतिक विभाजन को बनाये रखते हुए भी आपसी सौहाद्र स्थापित करें, भविष्य का नारी साहित्य निश्चित ही उज्ज्वल होगा ऐसी आशा की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. हंस, फरवरी 2000, वत्यव्य राजेन्द्र यादव
2. ठीकरे की भंगनी, नासिरा शर्मा
3. टपरेवाली, कृष्णा अग्निहोत्री
4. श्रृंखला की कड़ियां, महादेवी वर्मा, भूमिका से
5. कामायनी, जयशंकर प्रसाद

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता चुनौतियाँ एवं समाधान

डॉ. आराधना सक्सेना*

प्रस्तावना – नैतिक मूल्य क्या है ? यह प्रश्न अपने आप में मूल्यवान है, क्योंकि नैतिक मूल्य का विचार मानव को स्वत: उस जीवन दृष्टि की ओर ले जाता है जो यह देखती है कि जीने के लिए किसका महत्व है। जो यह खोजती है कि व्यक्ति और समाज के लिए क्या कल्याणकारी है इसलिए नैतिक मूल्य को परिभाषित करना दृष्टि को परिभाषित करने के समान ही दुष्कर कार्य है तथापि उसके कार्य व्यापारों के आधार पर नैतिक मूल्य के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है।

नैतिक मूल्य वह है जो मानव इच्छा की तृप्ति करें, जो व्यक्ति तथा उसकी जाति के संरक्षण में सहायक हो। केवल वही परम् रूप से और साध्य रूप से मूल्यवान है जो आत्माओं के विकास या आत्म साक्षात्कार की ओर ले जायें। मूल्यों में मानव की जैविक से लेकर आध्यात्मिक तक सभी आवश्यकताओं का समावेश हो जाता है, जिनका मानव जीवन के लिए महत्व है एवं जिसके पाने के लिए व्यक्ति चेष्टा करते है। जिसके लिए वे जीवित रहते है तथा बडे से बडे त्याग करते है। इस प्रकार नैतिक मूल्य वह सत्य है जिसके लिए व्यक्ति जीता है और आवश्यकता पड़ने पर वह संघर्ष करने, दु:ख सहने तथा मृत्यु को भी स्वीकार करने के लिए तत्पर रहता है।

कई महापुरूष जैसे ईसा मसीह एवं गाँधीजी के नाम इसी सन्दर्भ में श्रद्धा से लिए जाते है, क्योंकि ये नैतिक मूल्य के लिए ही जिए और नैतिक मूल्य के लिए ही मृत्यु का वरण किया। वस्तुत: नैतिक मूल्य परिवर्तनशील समाज की वह धुरी है जिसके कारण समाज का अस्तित्व है । क्योंकि उपयोगिता या कल्याणकारिता की भावना ही समाज को स्थिर रखती है। व्यक्ति के आचरण और व्यवहार को समाज के समक्ष प्रस्तुत करने का कार्य नैतिक मूल्य ही करते है। नैतिक मूल्यों का अति गहरा सम्बन्ध व्यक्ति के व्यक्तित्व से होता है। नैतिक मूल्यों में दया, ममता, समता, करूणाशील, विवेक विनम्रता, क्षमा, बलिदान, त्याग, तपस्या जैसे गुणों का समावेश होता है। नैतिक मूल्य ऐसी आचरण संहिता या सद्गुण है, जिससे व्यक्ति अपने लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु जीवन पद्धति का निर्माण करता है तथा अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। इसमें मनुष्य की धारणाएँ विचार, विश्वास, मनोवृत्ति, आस्था, आदि समाहित है। ये नैतिक मूल्य एक ओर व्यक्ति के अन्त:करण द्वारा नियमित होते है तो दूसरी ओर उसकी संस्कृति एवं परम्परा द्वारा क्रमश: सम्बल एवं परिपोषित होते है। यह भी कहा जा सकता है कि नैतिक मूल्य मनुष्य के अन्त:करण में जगती हुई वह शक्ति है जो उसे एक विशिष्ट प्रकार से कर्म करने के लिए प्रेरित करती है और उसके आचरण को शासित करती है।

नैतिक मूल्यों का पतन – नैतिक मूल्यों में समय के साथ अन्तर आ रहा है। उदाहरण के लिए कलयुग के जीवन मूल्यों से हम प्राचीन मूल्यों सतयुग, त्रेता, द्वापर आदि की तुलना करें तो काफी अन्तर प्रतीत होगा। प्राचीन समय से देखे तो जो जीवन मूल्य सतयुग में थे। वे त्रेता में नहीं थे, जो त्रेता में थे वे द्वापर में नहीं थे तथा जो द्वापर में थे वे कलयुग में पूर्णत: समाप्त हो चुके है।

वर्तमान समय में हमारे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय एंव अन्तरराष्ट्रीय जीवन में तनाव के कारण दिन – प्रतिदिन घुटन बढ़ती जा रही है परिवार में छोटे – बडों का आदर नहीं करते है। पति – पत्नी के सम्बंध तनावपूर्ण है। भाई – भाई से प्रेम नहीं करता, सामाजिक जीवन में सहयोग की भावना समाप्त होती जा रही है। सामाजिक नियम एवं व्यवस्थाओं का उल्लंघन करते हुए हम संकोच नहीं करते है। प्रदर्शन, घेराव, तोड़ – फोड़, हिसांत्मक विद्रोह एवं आतंक हमारे जीवन में हर समय तनाव या भय पैदा करते रहते है। भ्रष्टाचार , कालाबाजारी, रिश्वतखोरी, तस्करी, मिलावट एवं काला धन आदि से सम्बन्धित गतिविधियाँ हमें दिन – प्रतिदिन व्याकुल करती रहती है। मानव जाति का स्वर्णिम युग समाप्त होता जा रहा है। समाजिक जीवन अस्त – व्यस्त हो रहा है। पारिवारिक जीवन दु:खद हो रहा है। गरीबों असहायों का शोषण बढ़ रहा है, व्यक्ति स्वार्थी, अवसरवादी, भोगी, चाटुकार एवं कर्तव्य विमुख हो रहा है। जीवन की शान्ति न जाने कहाँ भागी जा रही है। ये सभी बातें नैतिक मूल्यों का पतन नहीं है तो और क्या हैं ? वर्तमान समय में नैतिक मूल्य इतने गिर गये हैं कि जीने का अर्थ ही बदल गया है। हर काम में स्वार्थ भरा पड़ा है। वर्तमान समय में मनुष्य अत्यधिक स्वार्थी हो गया है। इसी कारण नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। नैतिक मूल्यों के पतन के लिए काफी हद तक जिम्मेदार है हमारा समाज, हमारी शिक्षा। क्योंकि कोई भी मनुष्य जन्मजात खराब नहीं होता है, उसे वातावरण खराब बनाता है। जब बालक पैदा होता है तो वह सबसे प्रेम करता है। उसका हृदय पवित्र होता है। उसमें जाति – पाँति का भेदभाव नहीं होता। उसमें मानवीय मूल्य होते है। धीरे – धीरे वह बड़ा

* व्याख्याता (समाजशास्त्र) राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

होता जाता है तो झूठ, स्वार्थ, लोभ, हिंसा एवं घृणा आदि जैसे अवगुण पनपने लगते हैं, वह इनके वशीभूत हो जाता है। कल तक हम जिन नैतिक मूल्यों को गिरा हुआ समझते थे। आज हम उन्हीं के पीछे भाग रहे है। शिक्षाविद, अधिकारी, राजनैतिक नेता, प्रेस आदि सभी नैतिक मूल्यों में गिरावट की बात करते है। जिसके कारण ही आज राष्ट्रीय, सामाजिक, राजनैतिक पारिवारिक तथा वैयक्तिक जीवन में अनेक कठिनाईयाँ आ गई है। यह सार्वजनिक समस्या बन गई है। इसी प्रकार कई असामाजिक तत्व है जो हमारी राष्ट्रीय सम्पत्ति को नुकसान पहुँचातें है, इसे नष्ट करते है। उपर्युक्त सभी नैतिक मूल्य ऐसे है जो आधुनिक समाज में गिरते जा रहे है। सतयुग से कलयुग की ओर बढ़ते – बढ़ते हम देख रहे है कि प्राचीन नैतिक मूल्यों मे धीरे – धीरे कमी आ रही है। परिणाम स्वरूप नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है।

शिक्षा एंव गुणवत्ता – शिक्षा व्यक्ति की अन्तर्निहित शक्तियों को उजागर करती है, उसके देवत्व का दर्शन कराती है, मानवीय मूल्यों की अनुभूति का उसे अवसर प्रदान करती है और स्वानुभूति का मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा द्वारा ऐसे वातावरण की सर्जना अभीष्ट है जिससे व्यक्ति अपनी नैसर्गिक क्षमताओं का पूर्णतया विकास करने की ओर अग्रसर हो सके। परन्तु इस कार्य को करने में वर्तमान शिक्षा प्रणाली की असफलता जगजाहिर है। वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली से बहुतों को असंतोष है। शिक्षा जागत में व्याप्त प्रवृतियों में से अधिकांश से हम असंतुष्ट ही नहीं क्षुब्ध है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में शिक्षा का प्रसार अत्यन्त तीव्र गति से हुआ है। प्राथमिक विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालय तक के सभी स्तरों की शिक्षण संस्थाओं मे भारी वृद्धि हुई है। फलत: प्रमाणपत्र एवं उपाधिधारियों की संख्या में भी अप्रत्याशित बढ़ोतरी हुई है। किन्तु यह परिणाम गुणात्मक की कसौटी पर अपेक्षानुसार खरा और संतोषप्रद नहीं उतरा है। आज वस्तुत: आवश्यकता इस बात की है कि छात्र सोचने, समझने और आचार – विचार के क्षेत्र में संस्कारित एवं उन्नत स्तरों के प्रतिनिधि बने। षिक्षित व्यक्तियों में कदाचारों एवं हीन भावना के स्थान पर मानवता के श्रेष्ठ गुण 'वसुधैव कुटुम्बकम्' आचार, उदार धार्मिकता एवं वैचारिक उच्चता और जीवन में सरलता के गुण प्रतिष्ठित हो।

विश्व में ही नहीं स्वतन्त्रोतर भारत में भी नैतिक मूल्य ह्रास तेजी से हो रहा है। परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय जीवन, सामाजिक जीवन आदि में प्रदूषण व्याप्त हो गया है। नैतिक मूल्यों की यह संकट ग्रस्त स्थिति जिस प्रकार जीवन के अन्य क्षेत्रों में व्याप्त है उसी प्रकार विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के छात्रों शिक्षकों एवं अन्य कर्मचारियों में व्याप्त है। विकास एवं शांति प्रिय जीवन के लिए यह स्थिति अत्यंत घातक है। आवश्यकता इस बात है कि शिक्षा की प्रक्रिया का पुन: अभिविन्यास किया जाए और उसके माध्यम से ऐसे उदात्त नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी जाए जिससे शिक्षित युवक राष्ट्र की अमूल्य सम्पत्ति बन सके। शिक्षा जीवन से अलग नहीं है। शिक्षा जीवन का एक पक्ष है और इस रूप में शिक्षा के प्रमुख प्रश्न जीवन के प्रश्नों से स्वत: जुड़ जाते है। जीवन के इन मूलभूत प्रश्नों की व्याख्या दर्शन करता है। अतएव दर्शन और शिक्षा दोनों सहज भाव से एक – दूसरे से जुड़ जाते है। शिक्षा दर्शन शिक्षा की समस्याओं पर तर्कपूर्ण चिन्तन करता है और उनका तर्क सम्मत समाधान खोजता है। दर्शन स्पष्ट करता है कि वस्तुत: हमारी शिक्षा के उद्देश्य क्या हो, हमारा पाठ्यक्रम क्या हो और कैसा हो, शिक्षण विधियाँ क्या हों और वे कहाँ, कैसे प्रयुक्त की जाए। इन सभी शैक्षिक प्रश्नों का तार्किक समाधान दर्शन प्रस्तुत करता है। स्पष्टत: शिक्षा दर्शन शैक्षिक आदर्शो एवं नैतिक मूल्यों का निर्धारण करता है साथ ही यह बतलाता है कि शिक्षा का मापदण्ड क्या हो। नैतिक मूल्यों को कायम रखने के लिए सर्वप्रथम तो शिक्षा नीति में सुधार अपेक्षित है। वर्तमान समय में गिरते हुए नैतिक मूल्यों से समाज को बचाना है। वर्तमान समय के नैतिक मूल्यों को ऊपर उठाने के लिए शिक्षा को ऊपर उठाना आवश्यक है। वर्तमान समय में छात्र ही भावी समाज के निर्माता है। अत: छात्रों को ऐसी शिक्षा दीक्षा देनी चाहिए जिनसे उनके नैतिक मूल्यों का समुचित विकास हो तथा शाश्वत मूल्यों का संरक्षण हो। छात्रों को इसके लिए मूल्यपरक शिक्षा देनी चाहिए। नैतिक मूल्यों की गिरावट को रोकने के लिए सर्वप्रथम छात्रों की गिरावट को रोकना होगा। छात्रों में गिरावट का मुख्य कारण है शिक्षा में गिरावट। अत: शिक्षा में गिरावट को रोकना होगा। शिक्षा समाज की वह सीढ़ी है। जिस पर पाँव रखकर व्यक्ति अपने संस्कारों को सँवारता है और शिक्षा को दिशा प्रदान करता है।

वर्तमान शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसके अन्तर्गत बालक सत्य के आधार पर अहिंसा द्वारा प्रेमपूर्वक जीवन यापन करना सीखे। हमें ऐसा मनुष्य बनाना है जो स्वयं स्वेच्छा से शाश्वत नैतिक मूल्यों के पालन का प्रयास करें, जिससे व्यक्ति समाज सभी का कल्याण संभव हो। इसके लिए शिक्षा द्वारा व्यक्ति की आत्मा को जाग्रत करना आवश्यक है, जिसके लिए आध्यात्म की आवश्यकता है । वर्तमान समय में विज्ञान ने आध्यात्म की जडे लगभग उखाड़ फैकी है। शिक्षा में आध्यात्म को भी स्थान दिया जाना चाहिए। तभी नैतिक मूल्यों का धाराशायी वृक्ष पुन: खड़ा हो सकता है।

हमारा संविधान नैतिक मूल्यों की अमूल्य निधि है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में जो मूल्य बताए गए है उन्हें शिक्षा द्वारा छात्रों के जीवन में उतारा जा सकता है। वे मूल्य है – प्रजातंत्र, समाजवाद धर्म निरपेक्षता, न्याय, सहिष्णुता, व्यक्ति की गरिमा, विचार एवं अभिव्यक्ति आदि। ईमानदारी, उपकार, विनम्रता, निस्वार्थता, समभाव, तन, मन, कर्म, वचन की एकता के गुण इन्हीं नैतिक मूल्यों को अपने छात्रों के जीवन में उतारना है। बालक को मूल्यपरक शिक्षा देनी चाहिए। मूल्यपरक शिक्षा में शिक्षार्थी को अधिक से अधिक अनुभव से जोड़ना चाहिए तथा विद्यालय में महापुरूषों की जयंतियाँ, धार्मिक उत्सवों का भी आयोजन करना चाहिए। विद्यालय में समय– समय पर भाषण, संगोष्ठी, निर्देशन आदि को अपनाया जा सकता है।

उपदेश से उदाहरण श्रेष्ठ है। अत: शिक्षक को व्यवहार में श्रेष्ठता लानी होगी। उसका व्यवहार छात्रों के लिए अनुकरणीय बन जाये। युवकों को यह महसूस कराया जाये की वह किस तरह से शोषण असुरक्षा को रोक सकते है। शिक्षा ऐसी दी जानी चाहिए जिससे छात्र में सत्य, सहयोग, कर्तव्यपरायणता आदि का विकास हो।

निष्कर्ष – वर्तमान में पश्चिमी संस्कृति ने मानवीय व नैतिक मूल्यों को पतन की कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। आज संयुक्त परिवारों की परम्परा टूटती जा रही है, इन्सान ही इन्सान के खून का प्यासा बन बैठा है जो नैतिकता एंव मानवता मनुष्य के हृदय में विराजित होती थी वह आज

कहीं देखने को नहीं मिलती। इसलिए समाज सुधार व व्यक्तिगत निर्माण में नैतिक मूल्यों की पुन: स्थापना पर अत्यधिक बल दिया जाना चाहिए। इस सन्दर्भ में हम निम्न बिन्दुओं का अध्ययन कर सकते है।

1. चरित्र निर्माण में सहायक।
2. उच्च आदर्शो की स्थापना।
3. धर्म एवं आध्यात्म की भावना।
4. समाज एवं राष्ट्र का चहुँमुखी विकास।
5. देश मे शांति सुरक्षा एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण का निर्मित होना।
6. समाज में हिंसक घटनाओं को रोकते हुए स्वस्थ समाज की स्थापना हेतु महत्वपूर्ण।

उपरोक्त के आधार पर यह कहा जा सकता है कि नैतिक मूल्य ही व्यक्ति के चरित्र का निर्माण करते हुए उसे संस्कारों का प्रणेता बनाने की दिशा में अग्रसर होते हैं। समाज के अनैतिक तत्वों द्वारा कि जाने वाली हिंसक घटनाएँ नैतिक मूल्यों के पतन के कारण ही जन्म ले रही है, जिसपर नियंत्रण पाना वर्तमान युग में आवश्यक प्रतीत होता है। धर्म और आध्यात्म की ओर प्रवृत्ता करने में भी नैतिक मूल्यों की भूमिका अहम् होती है। नैतिक संस्कारों के संरक्षक कहलाने वाले मनुष्य ही समाज और राष्ट्र के विकास में अपनी भागीदारी दे सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शिक्षा के दार्शनिक और समाज शास्त्रीय आधार (रमन बिहारी लाल)
2. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक (रामशकल पाण्डेय) श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. नैतिक शिक्षा शिक्षण (के सी मलैया) आर.एस.ए. इन्टरनेशनल, आगरा।
4. स्थानीय समाचार पत्र आदि।

****

Environment and Society

Dr. Laxmi Gupta*

Introduction - The history of man and human society can be vividly described as been characterized by continues interaction between man and his environment. It is interesting to note that this interaction between man and the environment has been enduring over time and the nature of this interaction has been changing as the human society changes in its organization, structure and advancement in technology (Sibiri 2009). The human society does not exist in a vacuum but within a physical environment, hence the importance of this dyadic relationship is underscored in the sense that man‘s survival is entirely predicated on the environment‘s capacity to sustain his welfare needs (food, shelter and clothing). The sustainability of the environment on the other hand is also tied to man‘s prudent use of the physical environment and its numerous resources, which ensures and guarantees the true source of man‘s continued existence (Okaba 2005). However as human population increases, with associated urbanization and technological advancement, man has not been prudent with the use of the environmental resources (food, water, energy, mineral resources, forests and wild life) over time, as he struggles to satisfy his basic and developmental needs he encroaches on the environment in effort to meet the increasing demands of a larger society.

Hence, the relationship between man and his environment is measured and can be summarized by defining the functions of the environment. Thus, Schaefer and Lamn (1986) pointed out three basic functions of the environment which are basic prerequisite for human lives these include: (a) that the environment provides the resources essential for life (air, water and raw materials); (b) that the environment also serves as a waste repository, e.g. body waste, garbage and sewage; (c) it houses man and other living organism. Therefore, as highlighted above, man‘s interaction with the environment is predicated on the environment‘s ability to provide these three basic functions to man and his society. Acute concern is now widely expressed over deforestation of boreal and tropical forests, the degradation of grass, lands and wetlands and desertification. Such destruction of natural ecosystems has led to a reduction in biodiversity, and impoverishment of soils, in attempts to counter the deleterious effects of land misuse in areas, exotic plants and animals are being carefully monitored & encouraged.

Human impact on the soil has also caused some considerable damages, commonly because of poor agricultural practices, excessive water extraction, poor irrigation, and compaction by heavy vehicles and animals. The cumulative effects of these can be disastrous to countries whose economics are heavily dependent on agriculture. The amelioration of these poor practices and the improvement of soil quality require an understanding of the chemistry of the soil and nutrient supply cycles. The oceans and the seas cover more than two third of the earth‘s surface. It is believed that life almost certainly evolved from the seas and there is more species diversity in the sea than anywhere else on earth. Many of the food chains and food webs start with organizations inhabiting the seas and oceans. The ocean–atmosphere system regulates the global climate. It is a sensitive thermostat. The seas and the oceans are rich with food and mineral resources. The exploitation of Earth‘s resources inevitably produces waste, some of which may be hazardous or toxic.

Until the past few decades, much of the waste has been disposed of without any real concern for the damage to ecosystems and frequently under the auspices of ¯not in my back yard . Evidently, this society-environment interaction which is anthropocentric (human-centered) in nature has led to what is known as contemporary global environmental changes (Wordu 2010) and they are manifested in the following: depletion of ozone layer, global warming, and climate change. The concept climate change refers to any change in climate overtime as a result of either of both natural variability and anthropogenic factors.

The UN Framework Convention on Climate Change (UNFCCC) (1992) in its Article 1, defines climate change as a change of climate which is attributed directly or indirectly to human activity that alters the composition of the global atmosphere and which is in addition to natural climate variability observed over comparable time periods" (Onuoha 2008). These changes in global climate portend both environmental and social implications for human society. Loss of biodiversity has deleterious effect on cultural knowledge amongst local groups/societies etc.

There are basically two approaches to the sociological study of environmental issues. Environmental sociologists

***Lecturer (Sociology) Govt College, Dholpur (Raj.) INDIA**

according to King and McCarthy (2009:12-13) often draw a distinction between the ¯realists,who prefer not to question ¯the material truth of environmental problems, and the ¯constructionists, who emphasize the creation of meaning—including the meaning of ¯environment and ¯environmental problems— as a social process. Social constructionism emphasizes the process through which concepts and beliefs about the world are formed (and reformed) and through which meanings are attached to things and events (King and McCarthy 2009). This school of thought holds that the environment and environmental problems are socially constructed hence one needs to understand the social, political and cultural processes by which certain environmental conditions are defined as unacceptably risky, and therefore, contributory to the creation of a perceived state of crisis' (Hannigan 2006). This implies that all environmental problems are, in part, socially created or 'constructed' by groups of people. Nature never does 'speak for itself', but people do speak on its behalf. Therefore, social constructionists are interested in investigating how some environmental issues are seen to be more significant than others. . According to Giddens (2009), in modern industrial societies, consumption is linked to economic development; as living standards rise, people are able to afford more food, clothing, personal items, leisure tie, holidays, cars and so forth. They consume what they don't necessarily need and are hooked to what he termed the 'romantic ethic' i.e. (pleasures of purchasing goods and not minding the use value); such culture of mass consumerism is disastrous. Hence, global industrialization, capitalism and consumerism threaten the environment at a large scale

This implies that in the risk society the unknown and unintended consequences of technological and economic advancement come to be a dominant force in history and society and industrial societies are slowly dissolving as environmental problems build up (Beck 1992). In fact, Beck (1999) argue that we are, in effect moving into a 'world risk society' - a new type of society in which risk consciousness and risk avoidance are becoming the central focus – because environmental pollution does not respect national boundaries as a result of globalization.

Buttressing this point, Giddens (ibid) posits that until quite recently, human societies were threatened by external risk - dangers such as drought, earthquakes, famines and storms that spring from the natural world and are unrelated to the actions of humans. Today, however, we are increasingly confronted with various types of manufactured risk - risks that are created by the impact of our own knowledge and technology on the natural world. These risks are a testament to the failure of social institutions, most notably science, to control new technologies. Such risks transcend both space and time, extending well beyond the geographic source, and temporally, beyond the present generation. Largely risks today are said by Beck to be largely invisible to lay people, identifiable only through sophisticated scientific instrumentation.

Ecological modernization theory, unlike the previous theories earlier highlighted (which perceives economic growth to be antagonistic with environmental well-being) provides some degree of optimism in the society and environment relationship. This theory deals with the practicability of attaining environmental improvements through transformation of production and consumption patterns with environmental friendly technologies (Barret and Fisher 2005). Ecological modernization according to Spaargaren and Mol (1992:334) mean an ecological switch of the industrialization process in a direction that takes into account the maintenance of the existing sustenance base. The model is based on the work of the German writer, Huber (1982; 1985 cited in Hannigan 2009) who analyses ecological modernization as a historical phase of modern society. In Huber's scheme, an industrial society develops in three phases: (1) the industrial breakthrough; (2) the construction of industrial society; and (3) the ecological switchover of the industrial system through the process of super-industrialization', made possible by a new technology: the invention and diffusion of microchip environment friendly technology.

Barret and Fisher (2005:4) suggests that there are two major components of the theory: firstly, the theory explicitly describes environmental improvements as being economically feasible; indeed, entrepreneurial agents and economic/market dynamics are seen as playing leading roles in bringing about needed ecological changes. Secondly, in the context of the expectation for continued economic development, ecological modernization depicts the emergence of coalitions of political actors promoting the political feasibility of environmental protection. These two components are associated with the growing independence (or loosening of the restraints) of the ecological sphere from the political and economic spheres in state and industrial policy-making (Spaargaren and Mol 1992).

This was due to the atmosphere of opportunity and rising expectations that accompanied the new availability of land. Nature was seen as an obstacle that society had to tame and overcome in order to make progress, as the popular ideas of nature 'in the raw' or nature 'red in tooth and claw' suggest. According to Giddens (2009: 157) for a minority of people, nature and society were seen as distinct, but nature was not seen as in need of taming.

The concept of sustainable development is in agreement with the wise-use of resources attitude propagated by the conservationists. This implies that development processes should in essence not only guarantee today's environmental security but future generations. It advocates for environmental friendly technologies that doesn't cause harm to the environment, in this regard environmental sustainability is synonymous with not just resource conservation but the principles of ecological modernization. The Sustainable Development

Goals include:
Goal 1: No Poverty;
Goal 2: Zero Hunger;
Goal 3: Good Health and Well-Being;
Goal 4: Quality Education;
Goal 5: Gender Equality;
Goal 6: Clean Water and Sanitation;
Goal 7: Affordable and Clean Energy;
Goal 8: Decent Work and Economic Growth;
Goal 9: Industry, Innovation and Infrastructure;
Goal 10: Reduced Inequalities;
Goal 11: Sustainable Cities and Communities;
Goal 12: Responsible Consumption and Production;
Goal 13: Climate Action;
Goal 14: Life Below Water;
Goal 15: Life on Land;
Goal 16: Peace and Justice Strong Institutions;
Goal 17: Partnerships for the Goals.

Concluding Remarks: The attention of scientists, scholars, governments and international organizations has grown over the years concerning the rising environmental crises the world is faced with as evident in global warming and climate change with its attendant environmental consequences, water stress, energy crises etc. According to the United Nations Environment Programme world leaders have signed 500 agreements on environment and climate change in the past 50 years, including 61 atmospheres related; 155 biodiversity related; 179 related to chemicals, hazardous substance and waste; 46 land conventions and 196 water conventions (Vidal 2012). The most recent Cop 21 Paris Climate Conference held between 7th and 8th December in France is an effort in propagating a road map for a better environment for humanity. These international agreements are most times politicized as the will to reduce greenhouse gas emission by the developed countries is not strong enough because this will imply reduction of the treadmill of production. For instance, some governments in developing countries argue that there is no parallel between the 'luxury emissions' produced by the developed world and their own 'survival emissions' in relation to global warming, as industrial countries currently account for only about one- fifth of the world's population, yet they are responsible for over 75 per cent of the emissions that serve to pollute the atmosphere and hasten global warming. In essence, they submit that pressurizing developing countries to reduce emission means stagnation of their own economic survival and growth. This has led to introduction of several principles such as polluter pays, climate finance, carbon trading etc. whatever the case is, governments should put their political and economic interests aside and focus their energy on saving our planet. Planet earth from the space view is like a ship sailing in space and if the ship sinks we all are doomed irrespective of national, racial, ethnic, political, religious affiliations and differences.

In 1992; more than 1600 scientists, including 102 Nobel Laureates, underscored this point by collectively signing a ¯warning to Humanity .Their warning stated in part that ¯a new ethic is required, a new attitude towards discharging our responsibility for caring for ourselves and for the earth….this ethic must motivate a great movement, convincing reluctant leaders and reluctant governments and reluctant peoples themselves to effect the needed changes (Enger and Smith, 2006). In response to this, considering mechanisms of environmental improvement, Buttel (2003 cited in Hannigan 2009) proposes four potential channels: environmental activism/movements (he judges this to be the most fundamental and promising), state environmental regulation, ecological modernisation, and international environmental governance. More so, for such a new successful global effort to lighten humanity's load on the earth would need to directly address three major driving forces of environmental decline: the inequitable distribution of income, resource consumptive economic growth and rapid population growth. This will definitely redirect technology and trade to buy time for this great change to occur.

References:-

1. Beck, U. (1992) Risk Society: Towards a New Modernity. Sage. London.
2. Bryan G. Norton (1991): Toward Unity Among Environmentalists; Oxford University Press.
3. Foster John B. (1999): Marx's theory of metabolic rift: classical foundations for environmental sociology. Am J Sociol 105(2):366–405.
4. Hannigan John (2006): Environmental Sociology. Routledge, Taylor and Francis. New York.
5. Okaba, B. (2008). Environmental Education and the Challenges of Environmental Sustainability. The South-South experience. Niger Delta Digest Vol. 1, NDU. W. Island.
6. Spaargaren, G. and Mol, A.P.J. (1992) Sociology, Environment, and Modernity: Ecological Modernization as a Theory of Social Change, Society and Natural Resources 5: 323–344.
7. West, P. C. (1984) Max Weber's human ecology of historical societies', in V. Murvar (ed.) Theory of Liberty, Legitimacy and Power,. Routledge and Kegan Paul. Boston, MA
8. Wordu, S.A (2010): Marxian Environmentalism: A Content Analysis of Classical and Neo Classical Literature. A Monograph. Pam Unique Publishers, Port Harcourt

****

A Critical Analysis of Themes of Humanity in Mulkrajanand's Novels

Dr. Sitaram*

Abstract - Mulk Raj Anand, a socially committed novelist, has produced a good deal of literature. He has written more than a dozen novels and about seventy short stories and a host of essays and articles on a number of subjects. His novels fall into two categories namely social and autobiographical novels. He focused his attention on the sufferings, misery and wretchedness of the poor as a result of the exploitation of the downtrodden class of the Indian society. Religious hypocrisy, feudal system, East-West encounter, the place of woman in the society, superstitions, poverty, hunger and exploitation are his common themes. Every character, interaction, and circumstance in Mulk Raj Anand's 1935 novel *Untouchable* is shaped by the rigid hierarchies of the Indian caste system. For Bakha and his family, labeled outcastes for their work as sweepers, this hierarchy makes itself felt in a host of tangible challenges: the sweepers are not allowed to draw water from their village's well, to attend temple services, to read, or even to walk down the street unannounced .

Keywords- humanity, downtrodden, untouchable, marginalised, oppressed.

Introduction - Mulk Raj Anand was an Indian writer in English, notable for his depiction of the lives of the poorer castes in traditional Indian society. One of the pioneers of Indo-Anglian fiction, he, together with R. K. Narayan, Ahmad Ali and Raja Rao, was one of the first India-based writers in English to gain an international readership. Anand is admired for his novels and short stories, which have acquired the status of being classic works of modern Indian English literature, noted for their perceptive insight into the lives of the oppressed and their analyses of impoverishment, exploitation and misfortune. Born in Peshawar, he studied at Khalsa College, Amritsar, before moving to England where he attended University College London as an undergraduate and later Cambridge University, graduating with a PhD in 1929. During this time he forged friendships with members of the Bloomsbury Group. He spent some time in Geneva, lecturing at the League of Nations' School of Intellectual Co-operation. Anand's literary career was launched by family tragedy, instigated by the rigidity of the caste system. His first prose essay was a response to the suicide of an aunt, who had been excommunicated by her family for sharing a meal with a Muslim woman. His first main novel, Untouchable, published in 1935, was a chilling expose of the day-to-day life of a member of India's untouchable caste. It is the story of a single day in the life of Bakha, a toilet-cleaner, who accidentally bumps into a member of a higher caste. This simple book, which captured the puissance of the Punjabi and Hindi idiom in English, was widely acclaimed and Anand won the reputation of being India's Charles Dickens. The introduction was written by his friend, E. M. Forster, whom he met while working on T. S. Eliot's magazine Criterion. In it Forster writes: "Avoiding rhetoric and circumlocution, it has gone straight to the heart of its subject and purified it. Mulk Raj Anand, a significant figure in Indian English literature, is known for his deep exploration of human struggles, especially those of the marginalized and oppressed. His extensive body of work vividly illustrates the ways in which societal actions and attitudes contribute to human suffering. Anand's short stories encapsulate the essence of his broader literary pursuits, revealing a rich tapestry of significant themes.

Untouchable, Mulk Raj Anand's first novel is a highly charged intellectual discourse on the karmic illusion of work and untouchability. In Untouchable, the discourse between the young moderate poet Iqbal Nath Sarshar and the barrister R.N. Bashir recapitulates the western and the Gandhian ideologies of social and moral progress. Untouchable, Mulk Raj Anand's debut novel and magnum opus, is a unique novel. It, in the Joycean 'stream of consciousness' technique, describes the events in a single day in the life of Bakha, the protagonist in the novel, in the town of Balushah. Bakha, an untouchable boy, is a victim of the caste-ridden society. He belongs to the sweeper community. Bakha searches for a salve to the tragedy of the destiny into which he was born, talking with a Christian missionary, listening to a speech about untouchability by Mahatma Gandhi and a subsequent conversation by two educated Indians, but by the end of the book Anand suggests that it is technology, in the form of the newly

*Lecturer (English) Swami Vivekanand Govt. College, Khetri, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

introduced flush toilet that may be his savior by eliminating the need for a caste of toilet cleaners.

Humanity in Coolie (1936) Coolie is a humanistic discourse on the subject of human labour. Coolie, is a heartrending saga of human suffering. Munoo's travails and tribulations are sharp pointers to man's sadistic pleasure in torturing child domestics. Munoo represents those numberless children whose childhood is lost in endless physical labour. Love, care and fund are strange words for them. Mulk Raj Anand takes up the theme of human suffering again and again. Anand suggests that a little more sympathy and a little more tenderness on the part of the society could have turned Munoo into a happy individual, and also averted his tragic end.

There are many writers in Indian Writing in English who have dealt with the theme of untouchability and segregation. But nobody has been able even to come near Mulk Raj Anand. With his literary power and perspectives he has tried his best to spring up the healthy human values and radical social transformation in our human society in which the haves and have not both can enjoy happily the bliss of human life on the same footings and fraternity peace, love and justice. In the novel Coolie, Anand tries to depict the social reality of the conflict between the powerful and the powerless. The novel shows the unbridgeable gap between the exploiters and the exploited, the rulers and the riled. It narrates the life story of a young hill-boy Munoo, who is beaten from, pillar to post in his ill-fated search for liberation. Humanity in Two Leaves and a Bud (1937) The novel Two Leaves and a Bud is directed towards the evils of Class system and British exploitation. The novel is about the sufferings of the laborers in Assam Tea Plantations. It gives expression to the unending anguish of the tea plantation laborers under extremely selfish British masters who treat the male fold among the laborers as bonded slaves and their women and daughters as objects of sexual gratification. The central character in the novel Gangu loses his ancestral property is exploited by greedy money-lenders and had been lured to the British owned tea plantation in Assam, by Sardar Buta, the coolie catcher. Gangu hopes for a better future in the estate. But it does not take much time for him to realise that he has entered a veritable hell. The estate has no proper sanitation and water supply. The coolies are almost ever under the threat of dreadful diseases. Gangu comes to Assam to start a new life, but he loses life itself. The laborers are deprived of fundamental freedom and subjected to a cruel militaristic organization. They are overworked and ruthlessly exploited. Humanity in The Sword and the Sickle (1942) The novel The Sword and the Sickle deals with the exploitation of the Indian peasants by the British Colonialist and the Indian landlords. The sword is a symbol of force, born to suppress and defeat, whereas the sickle is a symbol of the suppressed, defeated peasants. As the novel deals with the theme of exploitation, the title is in concord with the theme of the novel. There are two plots running parallel to each HUMANITY 27 other throughout the novel. On one hand it is a struggle of Lai Singh a revolutionary who fights for the rights of the peasants and on the other it is a love story of Lalu and Maya. The story of Lai Singh as a revolutionary develops through four phases. The first period is the war-period which deals with Lai Singh's participation in the war, his capture by the enemy and his release. The second phase deals with Lalu's return to his native place. The third phase, which forms the major bulk of the story deals with Lalu's role in the agrarian agitation. The last phase is Lalu's imprisonment, when he starts dreaming about his future with his wife and his son. Gandhian impact on Anand, as in all his other social novels, is clearly visible in this novel too. In fact, this is the only novel in which there is an open encounter between Anand's principal character and Gandhi. Humanity in The Road (1963) The theme of Untouchable (1936) recurred twenty five years later in The Road. Though the setting and characters are changed, the theme of exploitation of the low caste by the high caste is the same. The Road deals with a single incident in the life of an untouchable in a small village. The incident of constructing the road to facilitate transportation of milk from Govardhan to Gurgaon, a town nearby creates a conflict between the caste Hindus and the low caste untouchables. The construction of the road shortens the distance between two places but widens the gap between the two classes.

The novel opens with the conflict between the high caste Hindu boys and Bhikhu the low caste untouchable on the issue of the untouchables going to the temple. The humiliation of his mother infuriates Bhikhu. When a kind hearted man intervenes, the boys run away muttering filthy abuses. The novel deals with the conflict between the high caste and the low caste.Anand also explores the conflict between tradition and modernity, a theme that resonates strongly in the context of a rapidly evolving Indian society. He delves into the tensions that arise when traditional values clash with modern ideals. Another critical theme in his work is the position of women in traditional Indian society. Anand reveals the patriarchal structures that restrict and oppress women, offering a critique of these societal norms. Through these varied themes, Mulk Raj Anand's short stories provide a poignant commentary on the sociocultural dynamics of his time. His work remains timeless and profoundly relevant, offering deep insights into the human condition and the societal factors that influence it.

Conclusion: Mulk Raj Anand, a socially committed novelist, has produced a good deal of literature. He has written more than a dozen novels and about seventy short stories and a host of essays and articles on a number of subjects. Mulk Raj Anand's novels Coolie and Two Leaves and a Bud, are directed mainly towards the evils of class system. These novels show that class is a greater evil than caste system. His novels fall into two categories namely social and autobiographical novels. He focused his attention on the sufferings, misery and wretchedness of the poor as a result of the exploitation of the downtrodden class of the Indian

society. Religious hypocrisy, feudal system, EastWest encounter, the place of woman in the society, superstitions, poverty, hunger and exploitation are his common themes.

References :–

1. Anand, Mulk Raj (1972). Coolie Australia: Penguin Books Ltd.
2. Anand, Mulk Raj (1956). Untouchable, Bombay: Jaico Publishing.
3. Anand, Mulk Raj (1972). Two Leaves and a Bud Australia: Hind Pocket Books
4. Anand, P. K. (1986). Studies in Mulk Raj Anand New Delhi.
5. Abhinav Publishers Singh, Amrik (2008).
6. Mulk Raj Anand: Role and Achievement New Delhi: National Book Trust Khan, S. A (2000).
7. Mulk Raj Anand The Novel of Commitment New Delhi: Atlantic Publishers Arora, Neena (2005).
8. The Novels of Mulk Raj Anand: A Study of his Hero New Delhi: Atlantic Publishers.

****

छत्तीसगढ़ में कलचुरि शासन की स्थापना-एक अध्ययन

डॉ. महेश कुमार शुक्ला*

प्रस्तावना – मध्यप्रान्त का पूर्वी हिस्सा महाभारत काल में महाकौशल कहलाता था और यहां के शासक हैहवंशीय थे। पुराणों में इस वंश का विवरण सविस्तार मिलता है। ब्रह्म के पुत्र अत्रि और पौत्र सोम से सम्बधित होने के कारण यह वंश सोमवंशी कहलाया। सोम का पुत्र बुद्ध और बुद्ध का पुत्र पुरूरवा हुआ, जिसके सात पुत्र सहत्रद और सहत्रद का पुत्र हैहय था। उसने नर्मदा नदी के तट पर राज्य स्थापित कर अपना वंश चलाया। इसी हैहय वंश में कोकल्लदेव नामक चेदि देश का प्रबल राजा हुआ, जिसके वंशज कलचुरि कहलाये।

भारत वर्ष के प्राचीन इतिहास में कलचुरि नरेशों का स्थान कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। सन् 550 से लेकर 1740 ई. तक लगभग बारह सौ वर्षो की अवधि में कलचुरि नरेशों ने भारत वर्ष उत्तर एवं दक्षिण स्थित किसी न किसी प्रदेश में अपना राज्य चलाया हैं। भारत वर्षा के इतिहास में ऐसा कोई भी राजवंश नही है, जिसने इतनी लम्बी अवधि तक राज काज चलाया हो, किन्तु इतनी दीर्घकाल तक शासन में बने रहना ही इस राजवंश की विशेषता नही है। इस राजवंश में अनेक महत्वपूर्ण राजा हुए है जिन्होंने अपने साम्राज्य का विस्तार तो किया ही साथ ही साथ धर्म और कला को उदारतापूर्वक प्रश्रय प्रदान किया और अपनी यए कीर्ति पताका दूर-दूर तक फहराई है। विस्तृत क्षेत्रों और विभिन्न शताब्दियों से सबंधित उत्कीर्ण लेखों में इस राजवंश का नाम कई प्रकार से आता है। यद्यपि कलचुरि अति प्राचीन नाम है और आधुनिक इतिहासकार इससे परिचित है तथापि कलचुरि, कल्चुरि, कलचुर्य, कलिचुरि, करचछुरि, कतचुरि, कुलचूरि, और अन्य नाम इसके रूपान्तर माने गए है।

कलचुरि नाम सुसंस्कृत जन्य प्रतीत नही होता है और वस्तुत: यह तुर्क शब्द कलचुर से सबंधित बताया गया है, जो एक उच्च पद का द्योतक है। अर्थात कलचुरि निश्चित रूप से उच्च कुल के रहे होंगें। चेदि प्रदेश पर शासन करने के कारण उन्हें चेदि, तथा चैद्य कुल भी कहा गया है।

हैहवंशीय अपनी उत्पत्ति अहिहय से मानते है जिसके अनुसार हैहवंशीय अपना पूर्वज अहि अर्थात् सर्प और हय अर्थात् घोड़ी से मानते है। इस मान्यता के अनुसार वे अपना पूर्वज नाग पिता और घोड़ी माता से मानते है। इससे इनकी मूल पुरूष सहस्त्रार्जुन या कीर्ति वीर्य के बारे में पता चलता है कि उसके एक हजार हाथ थे। इसका उल्लेख महाभारत में किया गया हैं।

डॉ. मिरासी ने एक स्थान पर कहा है कि कलचुरि नरेश अपने को हैहय सहस्त्रार्जुन कहाने में गौरव अनुभव करते थे, इसीलिए शिलालेखों में उनका उल्लेख हैहयवंश के रूप में हुआ है यह बात अनुमानत: ठीक हो सकती है पर साथ ही उसमें यह तथ्य स्पष्टत: निहित है कि कलचुरि आदि से हैहवंशी नही थे। अपितु केवल गौरव तथा महत्व अर्जन करने के लिए हैहवंशी बने हुए थे। वस्तुत: ई. की पांचवी-छठी शताब्दी के पश्चात् भारतीय राजागण पुराण कालीन सुप्रसिद्ध राजवंशों से अपना सबंध जोड़ने में विशेष सम्माननीय तथा प्रतिष्ठित अनुभव करने लगे थे। फलत: किसी ने सूर्य से, किसी ने चंद्रमा से, किसी ने दोनों से अपना सम्बंध जोडा तो कुछ नलवंशी बन गये, और कुछ पाण्डवों को अपना पूर्व पुरूष बताने लगे।

एक ऐतिहासिक वार्ता सहस्त्राजित कार्तवीर्य जिसने रावण को पकड़कर अपने राजमहल के खूंटे में बांधकर रखा था और जो चन्द्रवंशी राजा था उसी से हैहयों की उत्पत्ति हुई। इस संदर्भ में पौराणिक कथा का उल्लेख कुछ इस प्रकार मिलता है कि हैहय अर्थात् सहस्त्रार्जुन ने अपनी सहस्त्रबाहुओं से बांधकर नर्मदा का पानी रोका था। जिसके परिणामस्वरूप नदी तट पर शिव पुजा में बैठे रावण द्वारा भगवान शंकर को अर्पित पुष्प प्रवाह में बह गये थे। इस पर रावण क्रोधित हुआ और उसने सहस्त्रार्जुन से युद्ध छेड़ दिया, परन्तु युद्ध में वह पराजित हुआ फलस्वरूप कैलाश को कम्पित करने वाले बलशाली रावण को सहस्त्रार्जुन के बन्दीगृह में कुछ अवधि बितानी पड़ी थी।

10वीं शताब्दी पश्चात् ब्राह्मणवाद से प्रभावित होकर कलचुरियों ने अपना सबंध चन्द्रकुलोत्पन्न हैहवंशी राजा कार्तवीर्य के पुत्र अर्जुन अथवा सहस्त्रार्जुन के साथ जोड़ा कुछ अभिलेखों में दी गई कलचुरि वंशावली में क्षीर समुद्र से उत्तपन्न चन्द्र, उसके पुत्र बुध, उसके पुत्र पुरूरवा, उसके वंश में भरत चक्रवर्ती और चक्रवर्ती की चर्चा मिलती है, जिससे स्पष्ट है कि कलचुरि अपने को सामान्यत: सोमवंशी और विशेषत: हैहयवंशी मानते है। हांलकि कलचुरियों और हैहयों के प्रारंभिक लेखों में इस सबंध में कोई वर्णन नहीं है।

पुराणों में एक वंशावली के अन्तर्गत यदु सहस्त्राजित और हैहय का क्रमानुसार उल्लेख होने से तत्कालीन धारणा के अनुसार उन्हें यदुवंशी कहना तो ठीक है, लेकिन उन्हें किसी भी स्थल का यादव नही कहा गया है। इसका कारण यह है कि रूढ़ि के अनुसार बहुत पहले से 'यादव' नाम का सबंध यदु के द्वितीय पुत्र कोष्ट्रट के वंशजों से जोड़ा गया है। परन्तु इसमें सन्देह नही है कि त्रिपुरी के कलचुरि अपने को सोमवंशी मानते है।

कलचुरि या हैहयवंश का वृतांत पुराणों में मिलता है। पुराण से ज्ञात होता है कि, यह राजवंश अंधकार युगीन था। पुराण वस्तुत: इतिहास की कड़ी को जोडने में समय-समय पर बड़े सहायक सिद्ध हुए है।

प्राचीन दक्षिण कोसल की राजधानी रतनपुर के हैहयवंशी राजाओं ने अपना इतिहास लिखवाया उसके अनुसार इसका वंश विवरण इस प्रकार है :- ब्रम्ह्म के पुत्र अत्रि हुए और उसके पुत्र सोम हुए, जिनसे सोमवंशी हो गए। इस वंश का पुत्र हैहय था जिसने अपना राज्य नर्मदा तट पर माहिष्मति में स्थापित किया।

इतना स्पष्ट है, कि कलचुरि और हैहय एक ही थे। सातवीं एवं आठवीं

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

शताब्दी ई. के बादामी और वेंगी के चालुक्यों के कुछ अभिलेखों में महिष्मति के कलचुरियों का निर्देश हैहयनाम से किया गया है। त्रिपुरी के कलचुरि अपने को चन्द्रवंशी कहते थे और रतनपुर के कलचुरियों की वंश परम्परा सूर्य से आरम्भ होती है दोनों ही प्रकार से उनका सबंध कार्तवीर्य के पुत्र हैहय सहस्त्रार्जुन से पड़ता है।

चन्द्रबरदाई के 'पृथ्वीराज रासो' नामक ग्रंथ में यह वर्णन मिलता है, कि परमार प्रतिहार, चाहमान और चालुक्य इन चारों राजवंशों की उत्पत्ति अग्नि से हुई थी। उसी के आधार पर डॉ .देवदत्त पंत भांडारकर ने अपना विचार व्यक्त किया है, कि हिन्दू धर्म का संरक्षण करने वाला और अपने देश की स्वतंत्रता के लिए जी-जान से लड़ने वाला यह राजवंश मूलत: विदेशी था तथा उसे यंश संस्कार से हिन्दू धर्म में समाविष्ट किया गया।

डॉ .देवदत्त पंत भांडारकर ने विष्णुपुराण और हरिवंश पुराण के एक विधान के आधार पर यह विचार व्यक्त किया है कि हैहयवंश विदेशी था। उक्त विधान में कहा गया है कि एक, यवन, पारद, आदि जातियों की सहायता से हैहय ने भारतीय राजा बाहु के राज्य पर अपना अधिकार लिया था।

यह विडंबना की बात है, कि जिस राजवंश नें लगभग 750 वर्ष तक दक्षिण कोसल (प्राचीन छत्तीसगढ़) में अटूट राज्य किया था जो सन् 550 ई. से 1740 ई. अर्थात् लगभग 1190 वर्षो तक भारत वर्ष के उत्तर से लेकर दक्षिण में स्थिति किसी न किसी क्षेत्र में बिना किसी व्यवधान के राज्य करता रहा, जिसने इतनी लम्बी अवधि तक भारत वर्ष के किसी न किसी भाग में सत्तारूढ़ रह करके राजवंश के प्रति लोगों की निष्ठा की अद्वितीय मिसाल पेश कर दी, जिसने अपने साम्राज्य का विस्तार तो किया वह कलचुरि मुलत: कौन था? उसका निराकरण अभी तक यथार्थ में प्रमाणों के साथ नही हो पाया है।

महाभारत, रामायण और पुराण सभी में हैहय, कलचुरि या चेदि वंश का उल्लेख किया गया है। इस वंश के उदय के बारे में कुछ निश्चित नही कहा जा सकता, परन्तु यह सच है कि उन्होंने एक संवत् चलाई जिसका प्रारंभ 249 ई. सन् से होता है। कलचुरि वर्ष का आरंभ कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से होता हैं। मिराशी की मान्यता है कि यह संवत् कलचुरियों के द्वारा स्थापित किया हुआ नही हैं, अपितु वह मूलत: आभीरों द्वारा प्रारंभ किया हुआ है। चूंकि कलचुरियों ने उसे दीर्घकाल तक उपयोग में लाया, गया इसलिए उसे 'कलचुरि संवत्' नाम दे दिया गया।

उनका प्रादुर्भाव माहिष्मति नगरी में हुआ था इस नगरी का नाम 'माहिष्मति' इसलिए पड़ा क्योंकि इसे हैहयवंशी महिष्मान ने बसाया था। मुरारी कवि यह संकेत करते है कि कलचुरि नरेशों ने उत्तर और दक्षिण भारत में अपने साम्राज्य का विस्तार किया और कालंजर, त्रिपुरी, प्रयाग, काशी, रतनपुर, रायपुर, खल्वाटिका इत्यादि में उनकी राजधानियॉ सथापित हुई किन्तु माहिष्मति सर्वकलचुरि नरेशों की पटरानी थी, से यह बात स्पष्ट होती है कि उनके मूलत: माहिष्मति के होने की धारना लुप्त नही हुई थी। इसी प्रकार कुछ हैहयवंशी शासक जब परावर्तीकाल में दक्षिण के चालुक्यों के माण्डलिक रहे तब वे 'माहिष्मतिपुरवेश्वर' की उपाधि धारण करते थे।

प्राचीन कलचुरियों का उत्थान त्रैकुटक वंश के पतन के बाद होता है। छठवीं एताब्दी में कलचुरि काफी शक्तिशाली और समृद्ध हो गए थे। उन्होंने गुजरात, मालवा और महाराष्ट्र के प्रदेशों पर अपना अधिकार कर लिया था। इस समय तक कोंकण के मौर्य भी इस विख्यात वंश के अधीन आ गये थे। कलचुरियों की राजधानी माहिष्मती में थी।

इस शाखा के सबसे बड़े राजा अर्जुन कार्तवीर्य थे, जिसे सम्राट और चक्रवर्ती ये दोनों नाम से भी पुकारते थे। इसके बाद का महत्वपूर्ण राजा तलजन्घों कहते है:- वितिहोत्रास, सवांतास, भोजास, अवन्तिस, और तुण्डीकेरास, ये सभी तलजंघ थे। इसका मूल स्थान चेदिवंश था जो यमुना के दक्षिणी किनारे से चबंल नदी के उत्तर-पश्चिम जहां तक कि लगभग कावी (गुजरात) के उत्तर-पूर्व का दक्षिणी पूर्वी भाग है जहां तक इनका साम्राज्य फैला हुआ था।

हैहयों का उल्लेख बाद में विक्रमादित्य प्रथम के पुत्र विनयादित्य के (680 से 697 ई.) के लेख में मिलता है और विक्रमादित्य द्वितीय (737 से 747 ई.) ने हैहय राजकुमारी लोक महादेवी से विवाह किया था और उसकी छोटी बहन त्रिलोक महादेवी थी।

छठवीं एताब्दी में शक्तिशाली कलचुरियों ने संपूर्ण नर्मदा घाटी पर अपना अधिकार करने के बाद उन्होंने बुन्देलखण्ड की पहाड़ियों और बुन्देलखण्ड तक अपना अधिकार कर लिया संभवत: चेदि राज्य इसी स्थान पर था, परन्तु बाद के राजाओं ने साहसपूर्वक अन्य देशों का सामना कर अपने राज्य का विस्तार किया था।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. गुप्ता प्यारेलाल-1973 - छत्तीसगढ़ इतिहास - लीडर प्रेस इलाहाबाद।
2. गुप्त मदन लाल -1998 -छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन - भारतेन्दु हिन्दी साहित्य समिति मध्यप्रदेश।
3. पटेल हरि राम - 2018 -छत्तीसगढ़ विशिष्ट अध्ययन भाग दो - एच आर पब्लिकेशन।
4. मिश्र रमेन्द्र नाथ -1990 - छत्तीसगढ़ का इतिहास दीक्षित ब्रदर्स रायपुर।
5. डॉ. शुक्ल हीरालाल, डॉ. मिश्र रमेन्द्रनाथ, डॉ. प्रधान अशोक, डॉ. त्रिवेदी सुशील - 2018 - समग्र छत्तीसगढ़ - छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी रायपुर आई.एस.बी.एन.-978-93-82313-28-1

****

संत शिरोमणि बाबा गुरूघासीदास जी का जीवन परिचय एवं कार्य

डॉ. रीता बाजपेयी*

प्रस्तावना –संत शिरोमणि बाबा गुरूघासीदास जी का जन्म 18 दिसम्बर सन् 1756 ई. रायपुर जिला के ग्राम गिरौदपुरी तहसील बलौदाबाजार में हुआ था। उनका जन्म साधारण कृषक परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम मंहगुदास एवं माता का नाम अमरौतिन बाई था। युवावस्था में ही संत शिरोमणि बाबा गुरूघासीदास जी का विवाह सिरपुर निवासी माता सफुरा से हुआ जिनसे उन्हें तीन पुत्र व दो पुत्री हुई। प्रथम पुत्र का नाम गुरू आगरदास, द्वितीय पुत्र का नाम बालकदास एवं तृतीय पुत्र का नाम गुरू अमरदास था। प्रथम पुत्री का नाम सुभद्रा बाई एवं द्वितीय पुत्री का नाम आगरमती था। संत शिरोमणि बाबा गुरूघासीदास जी बचपन से ही छुआछूत, अंधविश्वास, कुप्रथाएं एवं वर्ण व्यवस्था के विरोधी थे। वे समाज में समानता का प्रभुत्व स्थापित करना चाहते थे। वे विषमताएं एवं उँच-नीच भेदभाव को कभी नहीं मानते इस कारण संत शिरोमणि बाबा गुरूघासीदास जी ने सात सिद्धांत का मार्ग दिया –

अहिंसा के मार्ग को अपनाना– संत गुरूघासीदास द्वारा हिंसा के मार्ग को त्याग कर अहिंसा के मार्ग पर चलने का संदेश दिया। उनके अनुसार अहिंसा वह मार्ग है जिसें मनुष्य धारण कर संपूर्ण मानवता को प्रेम व आत्म-शुद्धि की सहायता से कठिन से कठिन संकटो में सफलता प्राप्त कर सकता हैं। सत्य और अंहिसा मानव का आभूषण है जो मनुष्य अहिंसा का पालन करता है वह मन-वचन व कर्म से साहसी तथा शक्तिशाली बन जाता है। अहिंसा शब्द के भीतर असीम शक्ति छुपी हुई है जो भावना सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तीनो क्षेत्रों के लिये आवश्यक है। बाबा गुरूघासीदास के अनुसार अहिंसा सिर्फ उपदेश नहीं है, बल्कि जीवन की क्रियात्मक सिद्धांत है जिस मार्ग को मनुष्य अपनाकर सामाजिक व्यवस्था एवं व्यक्तिगत जीवन को बेहतर बना सकता है। अहिंसा व्यक्ति की अंर्तआत्मा आवाज है जिसे धारण कर मनुष्य असंभव को संभव में परिवर्तित करने की शक्ति प्राप्त कर लेता हैं। इस कारण ही बाबा द्वारा अहिंसा के मार्ग पर चलने के लिये सभी मनुष्यों को प्रेरित किया। अहिंसा रूपी मार्ग को धारण कर मनुष्य का सर्वांगींण विकास संभव है।

मूर्ति पूजा नहीं करना – संत गुरूघासीदास के व्यक्तित्व जीवन में दार्शनिक, योगी, धर्मसुधारक, समाजसुधारक, दया, करूणा, दृढ़ता, सत्यता, प्रेम-भाव, त्याग व हृदय की पवित्रता, समानता की भावना सभी गुण समाहित थे। और शिष्यों को भी अपने जीवन में धारण संदेश दिया, उनके द्वारा शुरू से ही कुरूतियों, पाखंड, बाह्य आंडबर का विरोध किया गया। मूर्ति पूजा को उन्होंने सनातन मत मूर्ति पूजा के विपरित एक परमात्मा की उपासना का अलग मार्ग मानव को दिया और उसी स्वरूप को धारण करने को कहा।

मनुष्य को मूर्ति पूजा न कर सत्यरूपी आभूषण को धारण करना चाहिये, और सत् से ही सृष्टि का निर्माण हुआ है तथा सृष्टि का मूलभूत आधार सत् ही है। सत् का शाब्दिक अर्थ शक्ति और सत्पुरूष का अर्थ अनादिशक्ति होता हैं अर्थात् जो सर्वशक्तिमान परमपिता सत्पुरूष है। सत्रूपी शब्द के उच्चारण से ही आत्मशांति एवं सत्बुद्धि की प्राप्ति होती है जिसका अनुसरण कर मानव सभी दुख, कठिनाई, उलझनों व समस्याओं आदि से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। बाबा सदैव एकपंथमार्गी व अद्वेतवादी थे जिस कारण वह हिन्दु धर्म में फैली कुरूतियों का विरोध किया करते थे। उनका विचार था कि प्रत्येक मानव का शरीर ही उस मानव का मंदिर है और मनुष्य को उसी मानवरूपी मंदिर की पूजा करनी चाहिये इन्हीं कारणों से बाबा द्वारा कंकड-पत्थर से बने मंदिरों में जाना अपने पंथमार्गीयों के लिये निषेध कर दिया और सभी मानवों को समानता के भाव से देखते हुये मानव-मानव एक समान का संदेश दिया।

चोरी नहीं करना – बाबा गुरूघासीदास के अनुसार मानव समानता ही जीवन की सर्वोकृष्ट अभिव्यक्ति का माध्यम है मनुष्य को सदैव ही लोभ, मोह-माया, छल-कपट, चोरी, मंदिरापान इत्यादि व्यवसनों का त्याग कर देना चाहिये एवं सत्य के मार्ग का अनुसरण करना चाहिये। मनुष्य को सदैव सीधा एवं सरल जीवन व्यतित करना चाहिये जिसमें दुष्कार्यों हेतु कोई भी स्थान नहीं होना चाहिये। संतोष की भावना प्रत्येक मनुष्य में व्याप्त होना चाहिये तथा इसी भावना के साथ अपने जीवन का निर्वाह करना चाहिये।

गुरूघासीदास का ध्येय सभी धर्मो के विपथगामियो को प्रेम व बंधुत्व के एक सूत्र में आबद्ध करना था इस कार्य हेतु बाबा द्वारा सतनाम पंथ की स्थापना की गयी। बाबा ने अपने शिष्यों को 7 सिद्धांत प्रतिपादित किया ताकि इन सभी उपदेशों को धारण कर मनुष्य अपने जीवन के अर्थ की वास्तविकता को समझ सके एवं शांतिप्रिय रूप से जीवन व्यापन कर सकें।

मांस मंदिरा का सेवन नही करना–संत गुरूघासीदास ने अपने उपदेशों के माध्यम से सर्वगुण संपन्न बनाने हेतु एकता सद्भाव की ज्योति जलाई, उनका एक ही धर्म था जिसमें मानव सेवा, प्रेम-भावना, करूणा, सम्मिलित थे जो बंधुत्व की प्रेरणा देते थे। सतनाम पंथियों के लिये मांस-मंदिरा का सेवन निषेध था और मनुष्यों को सदैव शाकाहारी भोजन ही करना चाहिये। मांसाहारी भोजन पूर्णत: वर्जित था। बाबा के अनुसार खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार एवं क्रिया कलापों में सदैव पवित्रता एवं शुद्धता होनी चाहिये गुरू द्वारा दिये गये मार्ग का अनुसरण कर सादा व सरल जीवन व्यतित करता है वह सभी परेशानी व तकलीफों से मुक्त हो जाता है यह

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

संदेश मात्र एक मानव विशेष या जाति विशेष के लिये न होकर सभी मानवों के लिये था और अनेक समुदायों द्वारा इस पंथ को स्वीकार किया गया एवं बाबा के विचारों को धारण व पालन व्यक्तियों द्वारा किया जाने लगा व साथ ही अध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने लगे।

बलि प्रथा का विरोध – संत गुरूघासीदास प्रकृति प्रेमी थे एवं उनके दृष्टि में सदैव प्रत्येक जीव समान थे चाहे वह मानव का रूप हो या जानवर का। वह सभी जीवो के प्रति करूणा, दया भावना व प्रेम भावना रखते थे वे पशुओं पर होने वाले अत्याचारों के प्रबल विरोधी थे यहाँ तक दोपहर में पशुओं को हल में जोतने के विरोधी थे उस समय फैली हुयी कुरूतियों का एक हिस्सा पशु बलि था जिसे लोगों द्वारा कई पाखंड मनोकामना पूर्ति हेतु मूक पशुओं का बलि दिया जाता था जिसका विरोध बाबा द्वारा किया गया। किसी भी जीव की हत्या करना पाप के समान है चाहे वह पशु हत्या हो या मानव हत्या। यह एक निंदनीय विषय था जिसे पूर्णत: बंद करने हेतु बाबा द्वारा प्रयास किया गया।

स्त्री को समान अधिकार व सम्मान देना – संत गुरूघासीदास का स्त्री उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान रहा, उस समय व्याप्त प्रथांओं में बाल विवाह, सती प्रथा एवं स्त्रियों का शोषण, विधवा प्रताड़ना प्रमुख थे उन्होंने प्रत्येक स्त्रियों को समान अधिकार व सम्मान देने को कहा तथा उनके द्वारा विधवा पुर्नविवाह हेतू प्रयास किया गया। उस समय व्याप्त समाजिक प्रथाएँ एवं कुरूतियाँ व्याभिचार तथा रूढ़िवादिता का भारतीय नारी पर गहरा प्रभाव पड़ा एवं उन्हें कमजोर बनाने में मुख्य भुमिका रहा। नारियों को सदैव पुरूषों पर सदैव आश्रित बना दिया गया इस वजह से नारी अधिकारों का हनन होने लगा। सती प्रथा, बाल–विवाह इन सब कारणों से स्त्रियाँ कमजोर होने लगी एवं विशिष्टता एवं समाज में उनका स्थान हीन होते गया तब संत कमजोर होने लगी एवं विशिष्टता एवं समाज में उनका स्थान हीन होते गया तब संत गुरूघासीदास द्वारा नारी के दशा के प्रति विचार किया एवं नारी उद्धार हेतू अनेक प्रयास किये ताकि नारी समाज में अपने आप को प्रतिष्ठित एवं अपना खोया सम्मान प्राप्त कर सके।

वर्ण व्यवस्था का विरोध – संत गुरूघासीदास बचपन से ही वर्ण व्यवस्था, कुप्रथा, छुआ–छुत, अंधविश्वास, पाखंड, मूर्ति पूजा के घोर विरोधी थे प्रत्येक प्रथा चाहे वह जो भी हो, एक मानव को दुसरे मानव में भेद बताती है उस प्रथा के घोर विरोधी थे। उस समय वर्ण व्यवस्था जारों से प्रचलित था जिसमें मनुष्यों को वर्ण व्यवस्था के आधार पर बांटा गया जिस कारण से उच्च वर्णो के लोगों द्वारा निम्न वर्णो के लोगों को धार्मिक व उनके सामाजिक कार्यो से दूर रखा जाता था। यहाँ तक मंदिरों, तालाबों में प्रवेश वर्जित था उच्च व निम्न की भावना इतनी अधिक व्याप्त थी कि निम्न वर्गो का अस्तित्व ही न था।

जाति प्रथा का प्रारंभ मनुष्य के जन्म से ही प्रारंभ हो जाता था कि वह मनुष्य उच्च जाति से परिभाषित होगा या निम्न जाति से। संत गुरूघासीदास द्वारा समाज सुधार के प्रयास एवं भेद–भाव के उन्नमूलन हेतू अनेकों कार्य किया गया उन्होंने मानव–मानव एक समान का संदेश प्रसारित किये जिसके अनुसार चाहे वह उच्च वर्ण का हो या निम्न वर्ण का, सभी मानव उनके लिये एक समान है। कोई किसी से छोटा या बड़ा नहीं होता। वर्ण व्यवस्था एक ऐसी प्रचलित व्यवस्था थी जिसके तहत किसी मनुष्य को दूसरे जाति में जाने की अनुमति नही थी यहाँ तक विवाह भी अपने जाति से किया जाता था अर्थात् सजातीय विवाह प्रचलित था। इन सभी कारणों से बाबा नें वर्ण व्यवस्था का घोर विरोध किया।

इसके पश्चात् समाज सेवा का कार्य प्रारंभ किया, जिसके अनुसार सभी मानव के लिए असमानताएँ एवं विषमताएँ की स्थिति को समाप्त कर सभी मानव–मानव में समानता की भावना लाने हेतु प्रयत्न किए। वे सभी जातियों के लोगों के प्रति सद्भावना रखने हुए निम्न वर्गों के लोगों के प्रति सामाजिक उत्थान का कार्य प्रारंभ किए, जिसके अनुसार मानव–मानव एक समान का संदेश प्रसारित किए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चंद्राकर अजय कुमार, 'छ0ग0 में अनुसूचित जाति की राजनितिक व्यवस्था में प्रभावशीलता सतनामी जाति की भूमिका में विशेष अध्ययन 1991'
2. चंदेल विवेक सिंह, 'गुरु घासीदास विश्वविश्द्धायलय के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के छात्रों के उच्च शिक्षा में ग्रंथालय की भूमिका: 1983 से 1996 तक'
3. सिंग आसना, 'सतनामी आत्मजोर और दलित सक्रियता: ग्रामीण छ0ग0 2013'
4. जोगलेकर कमलनारायण के अनुसार –'संत गुरु घासीदास एवं सतनाम पंथ का ऐतिहासिक अध्ययन 2015'

****